ब्रजभाषा सूर-कोश

(सातवाँ खंड)

निर्देशक

डा० दीनदयालु गुप्त, एम० ए०, एल-एल० बी०, डी०, लिट्०,
प्रोफेसर तथा अध्यक्ष हिन्दी-विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय

संपादक

डा० प्रेमनारायण टंडन, पी-एच० डी०
सहायक प्रोफ़ेसर, हिंदी-विभाग, लखनऊ विश्वविद्यालय

प्रकाशक

लखनऊ विश्वविद्यालय

सातवें खंड की शब्द-संख्या—६००८
सातों खंडों की शब्द संख्या—३६८८३

बसुला, बसूला—संज्ञा पुं. [सं. बासि+ला] **लकड़ी छीलने, तोड़ने या गढ़ने का एक औजार।**

बसूली—संज्ञा स्त्री. [हिं. बसूला] **छोटा बसूला।**

बसेंड़ा—संज्ञा पुं. [हिं. बाँस+ड़ा] **पतला बाँस।**

बसे—क्रि. अ. [हिं. बसना] **वास किया, रहे।** उ.—इहिं बिधि बन बसे रघुराइ। डासि कै तृन भूमि सोवत, द्रुमनि के फल खाइ—९-६०।

बसेरा—वि. [हिं बसना] **बसने या रहनेवाला।**

संज्ञा पुं.—(१) **रात को यात्री के टिकने का स्थान।** (२) **रात को पक्षियों के रहने का स्थान।**

मुहा०—बसेरा करना—(१) **रहना, निवास करना।** (२) **घर बनाकर बसना।** बसेरा लेना—**रहना, वास करना।** बसेरा देना—(१) **ठहराना।** (२) **आश्रय देना।**

(३) **बसने या रहने का भाव, आबाद होना।**

बसेरी—वि. [हिं. बसेरा] **रहनेवाला, निवासी।**

बसेरो, बसेरौ—संज्ञा पुं. [हिं. बसेरा] (१) **वह स्थान जहाँ टिककर रात बितायी जाती है, वासा।**

मुहा०—बसेरौ करै—**डेरा डाले, निवास करे, ठहरे।** उ.—बहुनै करी उद्यम परिहरै। निर्भय ठौर बसेरौ करै—३-१३। कीन्हौ बसेरौ—**घर बनाकर बस गये।** उ.—कहा भयौ जो देश द्वारका कीन्हौ दूर बसेरौ। लियो बसेरो—**वास किया, रहे।** उ.—कब हरि बालक भए गर्भ कब लियो बसेरौ।

बसैं—क्रि. अ. [हिं. बसना] **बसते हैं।**

मुहा०—मन बसैं—**ध्यान में बने रहते हैं।** उ.—सूरदास मन बसैं तोतरे वचन बर—१०-१५१।

बसैंगे—क्रि. अ. [हिं. बसना] **वास करेंगे, रहेंगे।** उ.—आजु बसैंगे रैनि तुम्हारे प्रान पियारी हौ तुम बाम—१९२९।

बसैया—वि. [हिं. बसना] **बसने या रहनेवाला।** उ.—कबहुँ कहत हरि माखन खायो, कौन बसैया कहत गाँव री।

बसैहैं—क्रि. स. [हिं. बसाना] **बसायेंगे, जन-पूर्ण करेंगे।** उ.—नंदहुँ तैं ये बड़े कहैहैं फेरि बसैहैं यह ब्रज नगरी—१०-३१९।

बसैहै—क्रि. स. [हिं० बसाना] **बसायेगी।** उ.—जाति पाँति के लोग न देखति, और बसैहै नैरी—१०-३२४।

बसोवास—संज्ञा पुं. [हिं. बास+आवास] **निवास स्थान।**

बसौं—क्रि. अ [हिं. बसना] **वास करूँ, रहूँ।** उ.—अपने नाम की बैरख बाँधौं, सुबस बसौं इहिं गाउँ—१-१८५।

बसौंधी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बास+औंधी] **सुगन्धित रबड़ी।**

बसौ—क्रि. अ. [हिं. बसना] **रहो, निवास करो।** उ.—पुहुप बेगि पठएँ बनै, जौ रे बसौ ब्रजपालि—५८९।

बस्तर—संज्ञा पुं. [सं. वस्त्र] **वस्त्र, कपड़ा।** उ.—तेल लगाइ कियौ रुचि-मर्दन, बस्तर मलि-मलि धोए—१-५२।

बस्ती—संज्ञा स्त्री. [सं. वसति] (१) **आबादी।** (२) **जनपद।**

बस्तु—संज्ञा स्त्री [सं. वस्तु] **चीज, वस्तु।**

बस्त्र—संज्ञा पुं. [सं. वस्त्र] **कपड़ा।**

बस्य—वि. [सं. वश्य] **वश में, अधीन।** उ.—(क) रीछ कीस बस्य करौं, रामहिं गहि ल्याऊँ—९-११८। (ख) जो जिहिं भाव भजै प्रभु तैसे। प्रेम बस्य दुष्टनि कौं नसे—३९१। (ग) आइ पहूँच्यौ काल बस्य, पग इतहिं चलायौ—५८९।

बस्यौ—क्रि. अ. [हिं. बसना] **बसा, रहा, निवास बनाया।** उ.—जनम तौ बादिहिं गयौ सिराइ। हरि सुमिरन नहिं गुरु की सेवा, मधुबन बस्यौ न जाइ—१-१५५। (२) **सुख लूटा, आनंद मनाया, मौज उड़ायी।** उ०—ज्यौं बिट पर-तिय सँग बस्यौ, (रे) भोर भए भई भीति—१-३२५।

बहँगा—संज्ञा पुं. [सं. वहन+अंग] **बड़ी बहँगी।**

बहँगी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बहँगा] **बोझा ढोने की काँवर।**

बहक—संज्ञा स्त्री [हिं. बहकना] (१) **मद में चूर होकर की गयी बात।** (२) **आवेशपूर्ण बात।**

बहकना—क्रि. अ. [हिं. बहना] (१) **भटकना, मार्ग भ्रष्ट होना।** (२) **चूक जाना।** (३) **बात या भुलावे में आना।** (४) **बहल जाना।** (५) **मद से चूर हो आपे में न रहना।**

बहकाइ, बहकाई—क्रि. स. [हिं. बहकाना] **भुलावे में डालकर।**

प्र०—बहकाइ दई (दियो)—**भुलावे में डाल दिया है।** उ.—(क) कौन बहकाइ दई है तुमकौं, ताहि पकरि लै जाहि—१५३। (ख) नई रीति इन अबै चलाई। काहू इन्है दियौ बहकाई।

बहकाना—क्रि. स. [हिं. बहकना] (१) **गलत रास्ते पर भटकाना** (२) **लक्ष्यभ्रष्ट करना।** (३) **भुलावा देना, फुसलाना।** (४) **(बच्चे को) बहलाना।**

बहत—क्रि. अ. [हिं. बहना] (१) **धारण करते हो, रखते हो, वहन करते हो।** उ.—सूर पतित कौं ठौर नहीं, तौ बहत बिरद कत भारौ—१-१३१। (२) **(वायु) संचालित होती है, (वायु) चलती है।** उ.—बहत पवन, भरमत ससि-दिनकर, फनपति सीस न डुलावै—१-१६३। (२) **बहता है, प्रवाहित होता है।** उ.—चहुँ दिसि कान्ह कान्ह करि टेरत अँसुवन बहत पनारे—३४४६।

बहति—क्रि. अ. [हिं. बहना] **सत्पथ से भटकती है।** उ.—सूर प्रभु कौ ध्यान चित धरि अतिहि काहे बहति।

बहती—वि. [हिं. बहना] **प्रवाहित होती हुई।**

मुहा०—बहती गंगा में हाथ धोना (पाव पखारना)-**एसी चीज या अवसर से लाभ उठाना जिससे सब लाभ उठा रहे हों।**

बहतोल—संज्ञा स्त्री. [हिं. बहता] **नाली।**

बहन—संज्ञा स्त्री. [हिं. बहिन] **भगिनी, सहोदरा।**

बहना—क्रि. अ. [सं. वहन] (१) **प्रवाहित होना।** (२) **धारा या प्रवाह में पड़कर उसी के साथ जाने लगना।** (३) **बूँद या धार के रूप में लगातार निकलना।** (४) **हवा का चलना।** (५) **लक्ष्य या स्थान से हट जाना।** (६) **मारे-मारे फिरना।** (७) **इधर उधर चला जाना।** (८) **चरित्र-भ्रष्ट होना।** (९) **अधम या बुरा होना।** (१०) **बहुत सस्ता होना।** (११) **(धन) डूब जाना।** (१२) **बोझा ढोना।** (१३) **(गाड़ी आदि) खींचकर ले चलना।** (१४) **धारण करना।** (१५) **(हाथ या वार) उठना या चलना।**

बहनापा—संज्ञा पुं. [हिं. बहिन+आपा] **बहिन का संबंध।**

बहनि, बहनी—संज्ञा स्त्री. [सं. बह्नि] **आग, अग्नि।** उ.—(क) वै कहियत उडुराज अमृत मैं तजि स्वभाव मोंहि बहनि बहत—२८५८। (ख) तुम कहियत उडुराज अमृतमय तजि सुभाउ बर्षत कह बहनी—१० उ०-९३।

बहनु—संज्ञा पुं. [सं. वहन] **सवारी।**

बहनोई—संज्ञा पुं. [सं. भगिनी-पति] **बहन का पति।**

बहनौता—संज्ञा पुं. [सं. भगिनी-पुत्र] **बहन का पुत्र।**

बहनौरा—संज्ञा पुं. [हिं. बहन+औरा] **बहन की ससुराल।**

बहरत—क्रि. अ. [हिं. बहरना] **बहलता है।** उ.—छिन-छिन बिरस करति है सुंदरि क्यों बहरत मन मोर—२२१४।

बहरना—क्रि. अ. [हिं. बहलना] (१) **दुख की बात भूलकर चित दूसरी ओर लगना।** (२) **चित्त प्रसन्न होना।**

बहरा—वि. [सं. बधिर, प्रा. बहिर] **न सुननेवाला।**

बहराइ—क्रि. स. [हिं. बहलाना] (१) **बहलाकर, भुलावे में डालकर।** उ.—सबै सखा बैठे रहौ, मैं देखौं धौं जाइ। बच्छ-हरन जिय जानि प्रभु, आपु गए बहराइ—४९२। (२) **चित्त प्रसन्न करके।**

प्र.—आवै मन बहराइ—**मन बहला आवे, (घूम-घाम कर) चित्त प्रसन्न कर ले।** उ.—मैं पठवत अपने लरिका को आवै मन बहराइ—५१०।

बहराई—वि. [हिं. बहलाना] **बहलायी हुई, जिसे भुलावे में डाला गया हो।** उ.—जनु सुरभी बन बसति बच्छ बिनु, परबस पसुपति की बहराई—१०-१६९।

क्रि. स.—**बहकाया, फुसला दिया।** उ.—उरहन देन ग्वालि जे आईं। तिन्हैं जसोदा दियौ बहराई।

बहराना—क्रि. स. [हिं. बहलाना] (१) **ऊबी हुई बात से चित्त हटाकर दूसरी ओर लगाना।** (२) **फुसलाना।**

बहरावत—क्रि. स. [हिं. बहियाना] (१) **बाहर करते हैं, निकालते हैं।** (२) **अलग करते हैं, (समाज से) पृथक्**

करते हैं। उ.—कह्यौ, हम जज्ञ-भाग नहिं पावत। बैद्य जानि हमकौं बहरावत—६-३।

क्रि. स. [हिं. बहलाना] **बहलाता है।**

बहरावति—क्रि. स [हिं. बहलाना] **बहलाती या भुलावे में डालती है।** उ.—बातैं बूझति यौं बहरावति—३४८५।

बहरिया—वि. [हिं. बाहर+इया] **बाहर का, बाहरी।**

संज्ञा पुं.—**वल्लभसंप्रदायी मंदिरों के छोटे कर्मचारी जो मंदिर के बाहर रहते हैं।**

बहरियाना—क्रि. अ. [हिं. बाहर+इयाना] **(१) बाहर या बाहर की ओर होना। (२) अलग होना।**

क्रि. स.—**(१) बाहर करना। (२) अलग करना।**

बहरी—संज्ञा स्त्री. [अ.] **एक शिकारी चिड़िया।**

वि. स्त्री. [हिं. बहरा] **जिसे सुनायी न दे।**

बहरो, बहरौ—वि. [हिं. बहरा] **न सुननेवाला।**

बहल—संज्ञा स्त्री. [सं. वहन] **रथ जैसी बैलगाड़ी।**

बहलना—क्रि. अ. [हिं. बहलाना] **(१) उबाने या दुख देने वाली बात से चित्त हटाकर दूसरी ओर लगाना। (२) चित्त प्रसन्न होना।**

बहलाना—क्रि. स. [फ़ा. बहाल] **(१) उबाने या दुख देने वाली बात से चित्त हटाकर दूसरी ओर ले जाना। (२) चित्त प्रसन्न करना। (३) भुलावा देना।**

बहलाव—संज्ञा पुं. [हिं. बहलना] **चित्त का रुचिकर या मनोरंजक काम में लगाना।**

बहली—संज्ञा स्त्री. [सं. वहन] **रथ-जैसी बैलगाड़ी।**

बहल्ला—संज्ञा पुं. [हिं. बहलना] **आनंद, प्रमोद।**

बहस—संज्ञा स्त्री. [अ.] **(१) वाद, तर्क। (२) विवाद, झगड़ा, तर्क-वितर्क। (३) होड़, बाजी, स्पर्धा।**

बहसना—क्रि. अ. [हिं. बहस] **(१) वाद-विवाद या तर्क-वितर्क करना। (२) होड़ या शर्त लगाना।**

बहाइ—क्रि. अ. [हिं. बहना] **(हवा) चलती है।** उ.—मंद सुगंध बयार बहाइ—१० उ०-१४३।

क्रि. स. [हिं. बहाना] **बहाकर।**

प्र०—देउ बहाइ—**बहा दो, प्रवाहित कर दो।** उ.—(क) प्रथमहि देउ गिरिहि बहाइ—९४३। (ख) मारौ स्याम राम दोउभाइ गोकुल देउ बहाइ—२५७८।

बहाई—क्रि. स. बहु. [हिं. बहाना] **प्रवाहित कीं।** उ.—परत फिराइ पयोनिधि भीतर, सरिता उलटि बहाई—९-१२४।

बहाउ—संज्ञा पुं. [हिं. बहाव] **बहा दे, नष्ट कर दे।** उ.—काम-क्रोध-बिषाद-तृष्ना सकल जारि बहाउ १-३१४।

बहाऊँ—क्रि. स. [हिं. बहाना] **प्रवाहित करूँ, बहा दूँ।** उ.—(क) पांडव-दल सन्मुख ह्वै धाऊँ, सरिता-रुधिर बहाऊँ—१-२७०। (ख) होइ सनमुख भिरौं, संक नहिं मन धरौं, मारि सब कटक सागर बहाऊँ—९-१२४।

बहाऊ—क्रि. स. [हिं. बहाना] **बहा दिया।**

प्र०—मारि बहाऊ—**मारकर बहा दिया, नष्ट कर दिया, समाप्त कर दिया, मिटा दिया।** उ०—भक्त हेत अवतार धरे, सब असुरनि मारि बहाऊ—१०-२२१।

बहादुर—वि. [फ़ा.] **(१) साहसी। (२) पराक्रमी।**

बहादुरी—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] **(१) साहस। (२) पराक्रम।**

बहाना—क्रि. स. [हिं. बहना] **(१) प्रवाहित करना। (२) प्रवाह के साथ छोड़ देना। (३) बूँद या धार के रूप में छोड़ना। (४) हवा चलाना। (५) व्यर्थ और अँधाधुंध खर्च करना। (६) फेंक देना, पास न रखना। (७) बहुत सस्ता बेच देना।**

संज्ञा पुं. [फ़ा. बहानः] **(१) झूठ बोलकर टालना, हीला। (२) झूठी बात। (३) निमित्त, कारण।**

बहानो, बहानौ—संज्ञा पुं. [हिं. बहाना] **बहाना, हीला।** उ.—इहै बहानो करि लियो हरि मन अनुराध्यो—१५४१।

बहायो, बहायौ—क्रि. स. [हिं. बहाना] **प्रवाहित किया।** उ.—सो (रस) यह परम उदार मधुप ब्रज बीथिनि माँझ बहायो—२९९८।

बहार—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] **(१) वसंत ऋतु। (२) आनंद, प्रफुल्लता। (३) यौवन का विकास। (४) शोभा, सुंदरता।**

बहारना—क्रि. स. [हिं. बुहारना] **झाड़ू देना।**

बहावत—क्रि. स. [हिं. बहाना] **बहाता है, दूर करता है, अलग करता है।** उ.—बंधन कर्म कठिन जे पहिले, सोऊ काटि बहावत—२-१७।

बहावहि—क्रि. स. [हिं. बहाना] **धारा में प्रवाहित कर**

दो ।उ.—प्रथम बहाइ देउ गोबर्धन ता पाछे ब्रज खोदि बहावहि – ९४७ ।

बहावहु—क्रि. स. [हिं. बहाना] **धारा में प्रवाहित कर दो ।** उ.— (क) ब्रज के लोगन धोइ बहावहु—९७० । (ख) गाइ गोप ब्रज सबै बहावहु—१०४६ ।

बहावैं—क्रि. स. [हिं. बहाना] **बहाती हैं, प्रवाहित करती हैं ।** उ.— जो रस ब्रह्मादिक नहिं पावैं । सो रस गोकुल गलिनि बहावैं — १०-३ ।

बहाल—वि. [फ़ा.] (१) **जैसा था वैसा ।** (२) **प्रसन्न ।**

बहाव—संज्ञा पुं. [हिं. बहना] (१) **बहने का भाव ।** (२) **प्रवाह ।** (३) **बहती हुई धारा ।**

बहि:—अव्य. [सं. वहिस्] **बाहर ।**

बहि—क्रि. अ. [हिं. बहना] **बह कर, नष्ट होकर ।**

प्र०—बहि जाइ—**दूर हो जाय, नष्ट हो जाय (स्त्रियों की गाली)** । उ.—(क) छाँड़ि देहु बहि जाइ मथानी सौंहदिवावति छोरहु आनी—३९१ । (ख) हार बहि जाइ अति गई अकुलाइ कै सुत के नाउँ इक उहै मेरैं—१५८६ । बहि गयो—**गया-बीता है, तुच्छ है ।** उ.—ऐसो को बहि गयो प्रजा ह्वै बसै तुम्हारैं — १०१४ ।

बहिअर—संज्ञा स्त्री. [सं. वधूवर] **स्त्री ।**

बहिए—क्रि. अ. [हिं. बहना] **धारा में प्रवाहित होइए, डूब जाइए** उ.—कबहुँक उपजै जिय में ऐसी जाइ जमुन बहिए—२८९२ ।

बहिकाई—कि. स. [हिं. बहकाना] **भुलावे में डाली ।**

प्र०—दियो बहिकाई—**भुलावे में डाल दिया ।** उ.—काहू इन्हैं दियो बहकाई—१०४१ ।

बहिक्रम—संज्ञा पुं. [सं. वयःकम] **अवस्था, उम्र ।**

बहित्र—संज्ञा पुं. [सं. वहित्र] **नाव, जहाज ।**

बहिन—संज्ञा स्त्री. [सं. भगिनी, प्रा. बहिणी] **भगिनी ।**

बहिनापा—संज्ञा पुं. [हिं. बहनापा] **बहन का संबन्ध ।**

बहिनी—संज्ञा. स्त्री [हिं. बहन] **भगिनी ।** उ.— सूर स्याम हमको बिरमावत खीझति बहिनी माई—११४४ ।

बहिबो, बहिबौ—संज्ञा (पुं.) [हिं. बहना] **बहने का भाव या कार्य ।** उ.— (क) जब ते गंग परी हरि पग तें बहिबो नहीं निवारै—३१८९ । (ख) अब न देह जरि जाइ सूर इन नैनन को बहिबो—३४१४ । (ग) सूर स्याम हम कहैं कहाँ लगि बचन लाज बहिबो—३४१५ ।

बहियाँ—संज्ञा स्त्री. [हिं. बाँह] **बाँह, हाथ, भुजा ।** उ.— (क) सूरदास हरि बोलि भक्त कौं, निरबाहत गहि बहियाँ—९-१९ । (ख) बहियाँ पकरि सूर के प्रभु की नंद की सौंह दिवाइ—३१८६ ।

बहिरंग—वि. [सं.] (१) **बाहरी ।** (२) **'अंतरंग' का विपकरीतार्थक ।** (३) **वर्ग या दल से बाहर ।**

बहिर—वि. [हिं. बहरा] **बहरा ।**

बहिरत—अव्य. [सं. वहिः] **बाहर ।**

बहिराना—क्रि. स. [हिं. बाहर+ना] **बाहर निकालना ।**

क्रि. अ.—**बाहर हो जाना ।**

बहिरी—वि. स्त्री. [हिं. बहरा] **बहरी (स्त्री)** । उ.—बहिरी पति सों बात करै सो तैसोइ उत्तर पावै—३०२६ ।

बहिरो, बहिरौ—वि. [सं. बधिर, प्रा० बहिर, हिं. बहरा] **जो कान से सुन न सके ।** उ.— बहिरो सुनै, मूक पुनि बोलै—१-१ । (ख) बहिरो तान स्वाद कहा जानै गूँगो खात मिठास ३३३९ ।

बहिर्गत—वि. [सं.] (१) **बाहर आया या निकला हुआ ।** (२) **जो सम्मिलित न हो ।**

बहिर्भूमि—संज्ञा स्त्री. [सं.] **बस्ती से बाहर की भूमि जहाँ नित्यक्रिया के लिए लोग जाते हों ।**

बहिर्मुख वि. [सं.] **बिमुख, विरुद्ध ।**

बहिला—वि. [हिं. बाँझ+ला] **बाँझ, बंध्या ।**

बहिष्कार—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **बाहर निकालना ।** (२) **दूर या अलग करना, त्यागना ।**

बहिष्कृत—वि. [सं.] (१) **बाहर निकला हुआ ।** (२) **अलग किया या त्यागा हुआ ।**

बहिहौं—क्रि. अ. [हिं. बहना] **बह जाऊँगी, धारा के साथ प्रवाहित हो जाऊँगी ।** उ.—अब हौं जाइ जमुन जल बहिहौं—२७०१ ।

बही—संज्ञा स्त्री. [सं. बद्ध] **हिसाब-किताब लिखने की पुस्तक ।** उ. - (क) सूर पतित जौ झूठ कहत है, देखौ खोजि बही—१-१३७ । (ख) अहंकार पटवारी कपटी झूठी लिखत बही—१-१८५ ।

मुहा०—बही में चढ़ना (टँकना) – **हिसाब में**

लिख लिया जाना। बही में चढ़ाना (टाँकना) - हिसाब में लिखना।

क्रि. अ. [हिं. बहना] (१) प्रवाहित हुई। उ.-(क) मनु बरषत भादौं मास नदी घृत-दूध बही—१०-२४। (२) मारी-मारी फिरी, भटकती घूमी। उ.—(क) घर तजिकै कोऊ रहत पराये मैं तबहीं ते फिरति बही री—१८६। (ख) सूरदास इन लोभिनि के संग बन-बन फिरति बही—पृ.३३२ (१५)।

बहीखाता - संज्ञा पुं. [हिं. बही + खाता] हिसाब-किताब लिखने की पुस्तक।

बहीर—संज्ञा स्त्री. [हिं. भीड़] (१) जन-समूह, भीड़। (२) सेना के साथ सेवक-समूह। (३) सेना की सामग्री।

अव्य० [हिं. बाहर] बाहर।

बहु—वि. [सं.] (१) बहुत (संख्यावाचक), एक से अधिक, अनेक। (२) ज्यादा, अधिक। उ. - जनम-मरन-काटन कौं कर्तरि तीछन बहु विख्यात—१-९०।

संज्ञा स्त्री. [हिं. बहू] बधू, बहू।

बहुज्ञ—वि. [सं.] बहुत जानकारी रखनेवाला।

बहुटनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बहूँटा] बाँह का एक गहना। उ.—बहु नग लगे जराव की अँगिया, भुजा बहुटनी बलय संग को।

बहुत—वि. [सं. बहुतर] (१) गिनती में अधिक, अनेक। (२) मात्रा में अधिक। (३) यथेष्ट, पर्याप्त।

मुहा० —बहुत अच्छा—(१) ऐसा ही किया जायगा (स्वीकृति-सूचक) (२) अच्छी बात है, समझ लेंगे (धमकाना)। बहुत करके—(१) प्रायः, बहुधा। (२) अधिक संभव तो यही है। बहुत-कुछ—(१) अधिकांश। (२) पर्याप्त, यथेष्ट। बहुत खूब—(१) बहुत बढ़िया (आश्चर्यसूचक)। (२) बहुत अच्छा (स्वीकृतिसूचक)। बहुत है - कुछ नहीं है (व्यंग्य)।

क्रि. वि.—अधिक, ज्यादा। उ.—(क) तुम प्रभु, मोसौं बहुत करी—१-११६। (ख) सूर रहे समुझाइ बहुत, पै कैकइ-हठ नहिं जाइ—९-३०१।

बहुतक—वि. [हिं. बहुत + एक] बहुत से, बहुतेरे। उ.—(क) बहुतक जन्म पुरीष-परायन, सूकर-स्वान भयौ—१-७८। (ख) बहुतक तपसी पचि पचि मुए—४-९।

क्रि. वि.—अधिक परिमाण में, ज्यादा। उ.—ता रिस मैं मोहिं बहुतक मारचो—२१-१५१।

बहुता, बहुताइ, बहुताइ,—संज्ञा स्त्री. [हिं. बहु + ता] अधिकता।

बहुतेरा—वि. [हिं. बहुत] बहुत, अधिक।

क्रि. वि.—अधिक परिमाण में, ज्यादा।

बहुतेरे—वि. [हिं. बहुत] संख्या में अधिक, अनेक।

बहुतै—वि. [हिं. बहुत] (१) बहुत अधिक, अधिक मात्रा में। उ.—भ्रमत भ्रमत बहुतै दुख पायौ, अजहुँ न टेव गई—१-२९९। (२) बहुत से, अनेक, अनगिनती। उ.—दाउँ-घात बहुतै कियौ, मरत नहीं जदुराइ—५८९।

क्रि. वि.—अधिक परिमाण में। उ. कमलनयन के कारन सजनी अपनो सो जतन रही बहुतै करि—२८१३।

बहुनायक, बहुनायकी—वि. [हिं. बहु + नायक] अनेक स्त्रियों से प्रेम रखनेवाला। उ.—नंदसुवन बहु-नायकी अनतहिं रहे जाई—२१५९।

बहुत्व—वि. [सं.] आधिक्य, अधिकता।

बहुदर्शी—वि. [सं.] बहुत जानकार।

बहुधा—क्रि. वि. [सं.] (१) अनेक प्रकार से। (२) प्रायः, बहुत करके, अक्सर।

बहुबाहु—संज्ञा पुं. [सं.] (१) रावण (२) सहस्रार्जुन।

बहुभाषी—वि. [सं. बहुभाषिन्] (१) बहुत बकवादी। (२) अनेक भाषाएँ बोलने में समर्थ।

बहुभुजा—संज्ञा स्त्री. [सं.] दुर्गा।

बहुमत—संज्ञा पुं. [सं.] (१) अनेक मत। (२) समूह में से अधिकांश का मत।

बहुमूल्य—वि. [सं.] अधिक मूल्य की, मूल्यवान।

बहुरंग, बहुरंगा—वि. [हिं. बहु + रंग] (१) अनेक रंगों का। (२) अनेक रूप धारण करनेवाला, बहुरूपिया। (३) मनमौजी।

बहुरंगी - वि. [हिं. पुं. बहुरंगा + ई [प्रत्य.]। (१) अनेक रूप धारण करने में समर्थ। उ.—नाथ अनाथनि ही के संगी। दीन दयाल परम करुनामय, जन-हित

हरि बहुरंगी—१-२१ । (२) **बहुरूपिया । (३) अनेक रंगों का ।**

बहुर—क्रि. वि. [हिं. बहुरना (बहुरि=फिरकर)] **पुनः, फिर ।** उ.—अब कैं तौ आपुन लै आयौ, बेर बहुर की और—१-१४६ ।

बहुरना—क्रि. अ. [सं. व्याघुट, प्रा. बाहुड़+ना] (१) **जाकर फिर वापस आना ।** (२ **खोकर फिर मिलना ।**

बहुराई—क्रि. स. [हिं. बहुरना] **लौटा देना, वापस कर देना ।** उ.—उरहन देत ग्वालि जे आई। तिन्हैं दियौ जसुदा बहुराई—३९१ ।

बहुरावहु—क्रि. स. [हिं. बहुराना] **लौटाओ, वापस बुलाओ ।** उ.—भई अबार गाइ बहुरावहु, उलटावहु, दै हाँक—४६४ ।

बहुरि—क्रि. वि. [हिं. बहुरना] (१) **पुनः, फिर, दोबारा ।** उ.—अंबरीष कौं साप देन गयौ, बहुरि पठायौ ताकौ—१-११३ । (२) **पश्चात्, उपरांत ।**

बहुरियाँ—संज्ञा स्त्री. बहु. [हिं. बहुरिया] (१) **नई बधुएँ ।** (२) **नवयुवतियाँ ।** उ.—आइ गए तिहिं समय कन्हाई । बाहँ गही लै तुरत दिखाई । तनक-तनक कर, तनक अँगुरियाँ । तुम जोबन भरीं नवल बहुरियाँ—७९९ ।

बहुरिया—संज्ञा स्त्री. [सं. बधूटी, बधूटिका, प्रा. बहूडिआ] **नववधू ।**

बहुरी—क्रि. अ. स्त्री. [हिं. बहुरना] **लौटी, वापस आयी, फिर कर आयी ।** उ.—आइ अजिर निकसी नँदरानी, बहुरी दोष मिटाइ—५४० ।

संज्ञा स्त्री. [हिं. भौरना=भूनना] **चबेना ।**

बहुरूप—वि. [हिं.बहु+रूप] **अनेक रूप धारण करने वाला, बहुतों के रूप धारण करनेवाला ।**

संज्ञा पुं.—(१) **विष्णु ।** (२) **शिव ।** (३) **गिरगिट ।**

बहुरूपा—संज्ञा स्त्री. [सं.] **दुर्गा ।**

बहुरूपिया, बहुरूपी—वि. [हिं. बहु+रूप] (१) **अनेक रूप धारण करनेवाला ।** (२) **स्वाँग बनाने या नकल करनेवाला ।**

बहुरे—क्रि. अ. [हिं. बहुरना] (१) **लौटे, वापस गये, फिरे ।** उ.—अस्तुति करत अमर-गन बहुरे, गए आपनैं लोक—५७९ । (२) **वापस आये, लौटे ।** उ.—गए सु गए फेरि नहिं बहुरे का धौं जियहि धरी—पृ० ३३२ (१४) ।

बहुरौ—क्रि. वि. [हिं. बहुरना (बहुरि=फिरकर)] **पुनः, फिर ।** उ.—(क) अब मेरी-मेरी करि बौरे, बहुरौ बीज बयौ—१—७८ । (ख) कब वह मुख बहुरौ देखौंगी कब वैसौ सचु पैहौं—२५५० ।

बहुल—वि. [सं.] **प्रचुर, अधिक ।**

बहुलता—संज्ञा स्त्री. [सं.] **अधिकता, प्रचुरता ।**

बहुला—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **गाय ।** (२) **एक देवी ।** (३) **राधा की एक सखी का नाम ।** उ.—कहि राधा, किन हार चुरायो ।···। सुमना बहुला चंपा जुहिला ज्ञाना भाना भाउ—१५८० । (४) **एक गाय जिसने बृंदावन के बहुलाबन में व्याघ्र के साथ सत्य व्रत का निर्वाह किया था ।**

बहुलाबन—संज्ञा पुं. [सं.] **बृंदाबन के ८४ बनों में एक जहाँ बहुला गाय ने व्याघ्र के साथ सत्य बचन का निर्वाह किया था ।**

बहुलि, बहुली—संज्ञा स्त्री. [सं. बहुला] **इलायची ।** उ.—बकुल, बहुलि, बट कदम पै ठाढ़ी ब्रजनारी—१८२२ ।

बहुवचन—संज्ञा पुं. [सं.] **'वचन' का एक भेद जो एक से अधिक वस्तुओं का बोधक होता है (व्याकरण) ।**

बहुव्रीहि—संज्ञा पुं. [सं.] **समास का एक भेद ।**

बहुश्रुत—वि. [सं.] **बहुत जानकार, बहुज्ञ ।**

बहूँटा—संज्ञा पुं. [हिं. बाहु] **बाँह का एक गहना ।**

बहू—संज्ञा स्त्री. [सं. बधू] (१) **नव विवाहिता ।** (२) **पुत्र-वधू ।** (३) **पत्नी ।**

बहूटनि—संज्ञा पुं. [हिं. बाहूँटा] **बाँह का एक गहना ।** उ.—बहु नग लगे जराव की अंगिया भुजा बहूटनि बलय संग को—१०४२ ।

बहूदक—संज्ञा पुं. [सं.] **एक वर्ग के संन्यासी ।**

बहेड़ा, बहेरा—संज्ञा पुं. [सं. बिभीतक, प्रा. बहेड़अ, हि. बहेड़ा] **एक जंगली पेड़ जिसका फल वैद्यक के अनुसार बहुत गुणकारी होता है ।** उ.—बाइबिरंग बहेड़ा हर्रैं कहुँ बैल गोंद व्यापारी—११०८ ।

बहेतू— वि. [हिं. बहना] **मारा-मारा फिरनेवाला ।**

बहेरी —संज्ञा स्त्री. [हिं. बहराना] **हीला-बहाना ।**

बहेलिया—संज्ञा पुं. [सं. वध+हेला] **शिकारी, व्याध ।**

बहै—क्रि. अ. [हिं. बहना] (१) **प्रवाहित हो ।** (२) **वायु चले ।** उ.—(क) सीतल मंद सुगंध पवन बहै रोम-रोम सुखदाई -- १८६६ । (ख) जैसी बयारि बहै तैसी ओढ़िए जू पीठि—२०२५ । (३) **मारी-मारी फिरे, खीजती फिरे ।** उ.—अपनो चाउ सारि उन लीन्हों तू काहै अब बृथा बहै री—१६६० ।

बहैया—क्रि. स. [हिं. बहाना[**बहायी, प्रवाहित की ।** उ.—जिनि चरननि छलियौ बलि राजा, नख गंगा जु बहैया—१०-१३१ ।

बहोर—संज्ञा पुं. [हिं. बहुरना] **फेरा, वापसी ।**

क्रि. वि.—**फिर, पुनः, दोबारा ।**

बहोरत—क्रि. स. [हिं. बहोरना] **(पशुओं को चराने के पश्चात) घर की ओर हाँकता है ।** उ.—कबहुँक रहसि देत आलिंगन कबहुँक दौरि बहोरति गाई—१३०० ।

बहोरना—क्रि. स. [हिं. बहोरना] (१) **लौटाना ।** (२) **(पशुओं) को चराकर घर की ओर हाँकना ।**

बहोरि, बहोरी—क्रि. वि. [हिं. बहोर] **पुनः, फिर ।** उ.—(क) जद्यपि हो त्रयलोक के ईश्वर परसि दृष्टि चितवति न बहोरी—२८६० । (ख) धोखे ही बिरवा लगाइ कै काटत नाहिं बहोरी—३३६८ ।

बहोरो, बहोरौ—क्रि. स. [हिं. बहोरना] **लौटाओ, (पशु को) घर की ओर हाँको ।** उ.—घर को गाय बहोरो मोहन ग्वालनि टेर सुनाए—९५८ ।

बहौं—क्रि. अ. [सं. वहन] **(भार) लाद कर ले चलता हूँ, भार ढोता हूँ, वहन करता हूँ ।** उ.—कबहुँक चढ़ौं तुरंग, महागज, कबहुँक भार बहौं—१-१६१ ।

क्रि. अ. [हिं. बहना] **बह जाऊँ, डूब मरूँ ।** उ.—मेरे जिय में ऐसी आवत जमुना जाइ बहौं २७७४ ।

बह्यौ—क्रि. अ. [हिं. बहना] (१) **बहा, प्रवाहित हुआ ।** उ.—सूरदास उमँगे दोउ नैना सिंधु प्रवाह बह्यौ—१-२४७ । (२) **भ्रम में पड़ा रहा, भटकता फिरा ।** उ.—धोखैं ही धोखैं बहुत बह्यो—१-३२७ ।

बाँ—संज्ञा पुं. [अनु.] **गाय की बोली ।**

संज्ञा पुं. [हिं. बार] **बार, दफा, मरतबा ।**

बाँक—संज्ञा पुं. [सं. बंक] (१) **बच्चों की बाँह का एक चन्द्राकार आभूषण ।** (२) **पैर का एक गहना ।** (३) **एक तरह की चौड़ी चूड़ी ।** (४) **धनुष ।** (५) **टेढ़ापन ।** (६) **टेढ़ी छुरी ।**

वि.—(१) **टेढ़ा ।** (२) **तिरछा, बाँका ।**

बाँकड़ा—वि. [हिं. बाँका] **वीर, साहसी ।**

बाँकड़ी—संज्ञा स्त्री. [सं. बंक+ड़ी] **बादले और कलाबत्तू का बना सुनहरा-रूपहला फीता जो साड़ियों में टाँका जाता है ।**

बाँकडोरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बाँक] **एक शस्त्र ।**

बाँकना—क्रि. स. [सं. बंक] **टेढ़ा-तिरछा करना ।**

मुहा०—बाल बाँकना—**हानि पहुँचाना, कष्ट देना ।**

क्रि. अ.—**टेढ़ा-तिरछा होना ।**

बाँकपन—संज्ञा पुं. [हिं. बाँका+पन] (१) **टेढ़े-तिरछे होने का भाव ।** (२) **छैलापन ।** (३) **सजावट ।**

बाँका—वि. [सं. बंक] (१) **टेढ़ा, तिरछा ।** (२) **वीर, साहसी ।** (३) **छैला, बना-ठना ।**

संज्ञा पुं.—(१) **लोहे का एक टेढ़ा हथियार ।** (२) **एक कीड़ा ।** (३) **सजाया-सँवारा युवक ।**

बाँकिया—संज्ञा पुं. [सं. बंक] **नरसिंहा नामक बाजा ।**

बाँकी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बाँका] **लोहे का एक औजार ।**

वि.—(१) **टेढ़ी ।** (२) **सजी-सजायी ।**

बाँकुर, बाँकुरा—वि. [हिं. बाँका] (१) **टेढ़ा, तिरछा ।** (२) **पैना, तेज धारवाला ।** (१) **चतुर ।**

बाँके—वि. बहु. [सं. बंक] (१) **टेढ़े, तिरछे, बाँकापन लिये हुए ।** उ.—ससि-गन गारि रच्यौ बिधि आनन, बाँके नैननि जोहै—१०-१५८ । (१) **वीर, साहसी ।** उ.—दुहूँ दिसि सुभट बाँके बिकट अति जुरे मनो दोउ दिसि घटा उमड़ि आई—१० उ०-५ ।

बाँकौ—वि. [सं. बंक] (१) **अत्यन्त साहसी, वीर ।** (२) **कठिन, कड़ा ।** उ.—नरहरि ह्वै हिरनाकुस मार्‌यौ, काम पर्‌यौ हो बाँकौ—१-५१३ ।

बाँग—संज्ञा स्त्री. [फा.] (१) **आवाज ।** (२) **पुकार ।** (३) **नमाज की अजान ।** (४) **मुर्गे का शब्द ।**

बाँगड़—वि. [हिं. बाँगर] **मूर्ख, दुर्बुद्धि ।**

बाँगर—संज्ञा पुं. [देश] **एक तरह का बैल ।**

बाँगुर—संज्ञा पुं. [देश] **जाल, फंदा ।**

बाँचत—क्रि. स. [हिं. बाँचना] **पढ़ता है ।** उ.—सोइ तिथि-बार-नछत्र-लगन-ग्रह सोइ जिहिं ठाट ठयौ । तिन अंकनि कोउ फिरि नहिं बाँचत गत स्वारथ समयौ—१-२६८ ।

बाँचना—क्रि. स. [सं. वाचन] **पढ़ना ।**

क्रि. स. [सं. बंचना] **शेष रहना, बच जाना ।**

क्रि. स. [हिं. बचाना] **छोड़ देना, बचा लेना ।**

बाँचि—क्रि. स. [हिं. बाँचना] **पढ़कर ।** उ.—(क) कर्म-कागद बाँचि देखौ, जौ न मन पतियाइ—१-२१६ । (ख) तब उन बाँचि सुनाई—२९७८ ।

क्रि. अ. [हिं. बचना] **बचकर, रक्षित रहकर ।** उ.—उरग तैं बाँचि फिरि ब्रजहिं आयौ—५९० ।

बाँचिहैं—क्रि. अ. [हिं. बचना] **बचेंगे, रक्षित रहेंगे ।** उ.—कोउ बरसत, कोउ अगिनि जरावत, दई पर्‌यौ है खोज हमारे । तब गिरधर कर धर्‌यौ कन्हैया, अब न बाचिहैं मारत जारे—५९५ ।

बाँची—क्रि. स. [हिं. बचाना] **बचायी, रक्षा की ।** उ.—(क) दुस्सासन करि बसन छुड़ावत सुमिरत नाम द्रौपदी बाँची—१-१८ । (ख) खरिक मिले की गोरस बेचत की बिषहर से बाँची—१४६८ ।

बाँचे—क्रि. स. [हिं. बचना] **बच गये, सुरक्षित रहे, चोट नहीं लगी ।** उ.—भली भई अबकैं हरि बाँचे, अब तौ सुरति सम्हारि—१०-७९ ।

बाँचौ—क्रि. स. [हिं बचना] **बचे रहे ।** उ.—(क) सुमिरन कथा सदा सुखदायक, बिषधर बिषम-बिषय-बिष बाँचौ—१-८३ । (ख) अब तुम नाम गहौ मन नागर । जातैं काल-अगिनि तैं बाँचौ, सदा रहौ सुख-सागर—१-९१ ।

बाँच्यौ—क्रि. अ. [हिं. बचना] **बच सका, छूट सका ।** उ.—कछु कुल-धर्म न जानई, रूप सकल जग राँच्यौ (हो) । बिनु देखैं, बिनु ही सुनैं, ठगत न कोऊ बाँच्यौ (हो)—१-४४ ।

क्रि. स. [सं. बंचना, हिं. बचना] **शेष रहा है, बाकी बचा है ।** उ.—इत-उत देखि द्रौपदी टेरी .... । सरबस दै अंबर तन बाँच्यौ, सोउ अब हरत, जाति पति मेरी—१-२५१ ।

बांछना—संज्ञा स्त्री. [सं. बाँछा] **इच्छा, अभिलाषा ।** उ.—यह बाँछना होइ क्यों पूरन दासी ह्वै बस ब्रज रहिए ।

क्रि. स.—(१) **इच्छा करना ।** (२) **छाँटना, चुनना ।**

बांछा—संज्ञा स्त्री [स. बाँछा] **इच्छा, कामना ।**

बांछित—वि. [सं. वांछित] **अभिलषित ।**

बांछी—संज्ञा पुं. [सं. वांछिन्] **इच्छा करनेवाला ।**

बांछै—क्रि. स. [हिं. बाँछना] **चाहता है, इच्छा करता है ।** उ.—महामुक्ति कोऊ नहिं बाँछै जदपि पदारथ चारी—३३१६ ।

बांछो—क्रि. स. [हिं. बाँचना] (१) **इच्छा की, चाहा ।** उ.—निरखि लोचन प्रनत मोचन कुँवरि फल बांछो सो पायो—१० उ०,१८ ।

बाँझ—संज्ञा स्त्री. [सं. बंध्या] **वह स्त्री जिसके संतान न जन्मी हो ।** उ.—(क) बाँझ सुत जनै उकठे काठ पल्लवै बिफल तरु फलै बिनु मेघ पानी—२२७३ । (ख) जानै कहा बाँझ ब्यावर दुख—३३२९ ।

बाँझपन, बाँझपना—संज्ञा पुं. [हिं. बाँझ + पन] **बांझ होने का भाव ।**

बाँट—संज्ञा पुं. [हिं. बाँटना] (१) **बाँटने की क्रिया या भाव ।** (२) **भाग, हिस्सा ।** उ.—याहू मैं कछू बाँट तुम्हारी—११२१ ।

प्र०—बाँट लेहु—**भाग ले लो, हिस्सा कर लो ।** उ.—बाँट न लेहु सबै चाहत है, यहै बात है थोरी—१०-२६७ ।

मुहा.—बाँट पड़ना—(१) **भाग या हिस्से में आना ।** (२) **अधिक परिमाण में होना ।**

बाँटचूँट—संज्ञा स्त्री. [हिं. बाँट + अनु. चूँट] (१) **भाग, हिस्सा ।** (२) **लेनदेन ।**

बाँटत—कि. स. [हिं. बाँटना] **भाग या हिस्सा करके देते हैं ।** उ.—सूर स्याम अपने कर लीन्हे बाँटत जूठनि भोग—९३५ ।

बाँटना—कि. स. [सं. वितरण] (१) **भाग या हिस्सा करना ।** (२) **अलग-अलग रखना ।** (३) **थोड़ा-**

थोड़ा करके (सबको) देना।

बाँटा—संज्ञा पुं. [हिं. बाँटना] **भाग, हिस्सा।**

बाँटि—क्रि. स. [हिं. बट्टा या बाट, बाटना] **पीसकर, चूर्ण करके, लेप बनाकर।** उ.—(क) उरजनि कौं बिष बाँटि लगायौ, जसुमति की गति पाई—१-१५८। (ख) सुन री सखी स्यामसुंदर बिन बाँटि बिषम बिष पीजै—२८६४।

क्रि. स. [हिं. बाँटना] **भाग या हिस्सा करके (दूसरों को) दिया।** उ.—(क) थाती प्रान तुम्हारी मोपै जनमत ही जो दीन्ही। सो मैं बाँटि दई पाँचनि कौ—१-१९६। (ख) चारो अंस बाँटि पुनि दिये—९-५।

बाँटी—क्रि. स. [हिं. बाँटना] **वितरण करके, (दूसरे को भाग या हिस्सा) देकर।** उ.—सिगरोइ दूध पियौ मेरे मोहन, बलहिं न दैहौं बाँटी—१०-२५६।

बाँड़ा—संज्ञा पुं. [देश.] (१) **पूँछहीन पशु।** (२) **संतानहीन पुरुष।**

बाँड़ी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बाँड़ा] **पूछहीन (मादा) पशु।**

बाँद—संज्ञा पुं. [फ़ा. बंदा] **सेवक, दास।**

बाँदर—संज्ञा पुं. [सं. वानर] **बंदर।**

बाँदी—संज्ञा स्त्री. [फ़ा. बंदा] **दासी, सेविका, लौंडी।**

बाँदू—संज्ञा पुं. [सं. बंदी] **कैदी, बंदी।**

बाँध—संज्ञा पुं. [हिं. बाँधना] **पानी रोकने का धुस्स।**

बाँधन—क्रि. स. [हिं. बाँधना] **बंधन में डालना।**

प्र०—बाँधन गये—**बंदी बनाने गये।** उ.—बाँधन गये बँधाये आपुन—८१५।

बाँधना—क्रि. स. [सं. बंधन] (१) **रस्सी, डोरी आदि से कसकर बंदी बनाना।** (२) **रस्सी, डोरी आदि लपेटकर गाँठ लगाना।** (३) **गाँठ जोड़कर कसना।** (४) **बंधन में डालना, कैद करना।** (५) **नियम या अधिकार आदि से मर्यादित रखना।** (६) **तंत्र-मंत्र आदि से शक्ति या गति [illegible]त करना।** (७) **प्रेम के बंधन में डालना।** (८) **निश्चित या नियत करना।** (९) **बाँध या धुस्स बनाना।** (१०) **चूर्ण आदि के पिंड बनाना।** (११) **रचना की सामग्री या विचार जोड़ना।** (१२) **क्रम या व्यवस्था बनाना** (१३) **मन में बैठाना।** (१४) **अस्त्र-शस्त्र साथ रखना।**

बाँधनि—संज्ञा स्त्री. [हिं. बाँधना] **बांधने की रीति, बंधन, गाँठ।** उ.—छूटे बंधन अरु पाग की बाँधनि छूटी, लटपटे पेच अटपटे दिये—२००९।

बाँधनीपौरि—संज्ञा स्त्री. [हिं. बाँधना+पौरि] **पशुशाला।**

बाँधनू—संज्ञा पुं. [हिं. बाँधना] (१) **योजना, उपक्रम।** (२) **मनगढ़ंत।** (३) **मिथ्यारोप।** (४) **लहरियादार रँगाई के लिए वस्त्र में बाँधा जानेवाला बंधन।** (५) **बंधन बाँधकर रँगा जानेवाला वस्त्र।**

बांधव—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **भाई-बंधु।** (२) **संबंधी, आत्मीय।** (३) **मित्र, सखा।**

बाँधि—क्रि. स. [हिं. बाँधना] **नियत करके, स्थिर करके, ठहराकर।** उ.—साँचौ सो लिखहार कहावै। काया-ग्राम मसाहत करिकै, जमा बाँधि ठहरावै—१-१४२।

बाँधी—क्रि. स. [हिं. बाँधना] **बाँध ली, लपेटकर गाँठ दी।** उ.—बाँधी मोट पसारि त्रिविध गुन, नहिं कहुँ बीच उतारौ—१-१५२।

बाँधौंगी—क्रि. स. [हिं. बाँधना] **बंधन में डालूँगी।** उ.—अब मैं याहि जकरि बाँधौंगी—१०-३३०।

बाँध्यौ—क्रि. स. [हिं. बँधना] **बँध गया, अटक गया, स्वच्छंद न रहा, प्रतिबंधित हुआ।** उ.—माया सबल धाम-धन बनिता बाँध्यौ हौं इहिं साज—१-१०८।

बाँबी, बाँमी—संज्ञा स्त्री. [सं. वल्मीक, हिं. बाँबी] (१) **दीमकों का भीटा।** (२) **साँप का बिल।** उ.—बाँबी पर अहि करत लराई—३९१।

बाँभन—संज्ञा पुं. [सं. ब्राह्मण] **ब्राह्मण।** उ.—बाँभन मारैं नहीं भलाई—१०-५७।

बाँस—संज्ञा पुं. [सं. वंश] **एक प्रसिद्ध गँठीली वनस्पति।**

मुहा०—बाँसों उछलना—**बहुत प्रसन्न होना।**

बाँसपूर—संज्ञा पुं. [हिं. बाँस+पूरना] **एक तरह का महीन कपड़ा।**

बाँसली, बाँसुरी, बाँसी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बाँस, बाँसुरी] **मुरली, बाँसुरी।**

बाँह—संज्ञा स्त्री. [सं. बाहु,] **भुजा, बाहु।** उ.—बाँह थको बायसहिं उड़ावत—२७६९।

मुहा०—बाँह गहना (पकड़ना)—(१) **सहारा देना।** (२) **विवाह करना।** बाँह की छाँह लेना—

शरण लेना। बाँह चढ़ाना—(१) **किसी बात के लिए तैयार होना।** (२) **लड़ने को मुस्तैद हो जाना।** बाँह देना—**सहारा देना।** देहु बाँह—**सहारा, आश्रय और शरण दो।** उ.—सुख सोऊँ सुनि बचन तुम्हारे देहु कृपा करि बाँह—१-५१। दै बाँह—**आश्रय देकर, छाया करके।** उ.—बर्षत में गोपाल बुलाए अभय किये दै बाँह—९५७। बाँह बुलंद होना—(१) **साहसी होना।** (२) **दानी और उदार होना।**

यौ०—बाँह-बोल—**सहायता का वचन।**

(२) **बल, शक्ति।** (३) **सहायक।**

मुहा०—बाँह टूटना—**सहायक न रह जाना।**

(४) **सहारा, भरोसा।** (५) **आस्तीन।**

बाँहाजोरी—क्रि. वि. [हिं. बाँह+जोड़ना] **गले में बाहें डाले हुए।** उ.—(क) बाँहाजोरी निकसे कुंज तें—पृ. ३१५ (४८)। (ख) बाँहाजोरी कुसुम चुनत दोउ—२८७१।

बाँही—संज्ञा स्त्री. [हिं. बाँह] **बाँह।** उ.—ऊखल सों बाँध्यौ सुत बाँही—३९१।

बा—संज्ञा पुं. [सं. वा=जल] **जल, पानी।** उ. (क) बा-बा-पति-अग्रज-अंबा के भानुथान सुत हीन हियो री। (ख) बा-निवास-रिपुधर-रिपु लै सर सदा सूल सुख पेरै। बा-ज्वर नीतन ते सारंग अति बार-बार झर लखै।

संज्ञा पुं. [फ़ा. बार] **दफा, मरतबा, बार।**

बाइ—संज्ञा स्त्री. [सं. वायु या वात] **वायु, हवा।** उ.—बारि मैं ज्यौं उठत बुदबुद लागि बाइ बिलाइ—१-३१६।

संज्ञा स्त्री. [सं. वापी] **छोटा जलाशय, बावली।** उ.—भानै मठ कूप बाइ सरवर कौ पानी—९-९६।

क्रि. स. [सं. व्यायन, हिं. बाना] (मुँह) **बा कर, खोलकर, फैलाकर।** उ.—मेरे कहैं नहीं तू मानति, दिखरावौं मुख बाइ—१०-२५५।

बाइगी—संज्ञा स्त्री. [सं. वार्त्ता या हिं. बाई ?] **व्यर्थ की बकवाद।**

बाइबिडंग—संज्ञा स्त्री. [सं. बिडंग] **बिडंग नामक औषधि जो पंसारी के यहाँ मिलती है।** उ.—बाइ-बिडंग बहेरा हरैं कहुँ बैल गोंद ब्यापारी—११०८।

बाई—संज्ञा स्त्री. [सं. वायु] **त्रिदोषों में वात दोष।**

मुहा०—बाई चढ़ना—(१) **वायु का प्रकोप होना।** (२) **घमंड की बातें करना।** बाई पचना—(१) **वायु का प्रकोप शांत होना।** (२) **घमंड टूटना।** बाई पचाना—**गर्व चूर करना।**

संज्ञा स्त्री. [हिं. बाबा] (१) **स्त्रियों के लिए आदरसूचक संबोधन।** (२) **वेश्या।**

बाईस—संज्ञा पुं. [सं. द्वाविंशति. प्रा. बाईसा] **बीस और दो की संख्या या अंक।**

बाईसी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बाईस] (१) **बाईस चीजों का समूह।** (२) **बाईस छंदों का संग्रह।**

बाउ, बाऊ—संज्ञा पुं. [सं. वायु] **हवा, पवन।**

बाउर, बाऊर—वि. [सं. बातुल] (१) **पागल।** (२) **भोला, सीधा।** (३) **मूर्ख।** (४) **गूँगा, मूक।** (५) **बुरा।**

बाएँ—क्रि. वि. [हिं. बाँयाँ] **बायीं ओर।**

बाए—क्रि. स. [हिं. बाना] **मुँह फैलाये या खोले हुए।** उ.—निसि दिन फिरत रहत मुँह बाए, अहमिति जनम बिगोइसि—१-३३३।

बाऐं—वि. [हिं. बायाँ] **बायीं ओर का, दाहिने की विपरीत दिशावाला।** उ.—बाऐं कर बाजि-बाग दाहिन हैं बैठे—१-२३।

बाक—संज्ञा पुं. [सं. वाक्य] **बात, बचन।**

बाकचाल—वि. [सं. वाक् + चल] **बातूनी, बकवादी।**

बाकना—क्रि. अ. [सं. वाक] **बकवाद करना।**

बाका—संज्ञा स्त्री. [सं. वाक] **वाक्शक्ति, वाणी।**

बाकी—वि. [अ. बाकी] **जो बच गया हो, शेष।**

अव्य.—**लेकिन, मगर, परन्तु।**

संज्ञा स्त्री.—**अंतर निकालने की रीति।**

संज्ञा स्त्री. [देश.] **एक तरह का धान।**

बाखर, बाखरि, बाखरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बखार] **मकान, घेरा, स्थान, बखार।** उ.—जानति हौं गोरस को लैबो याही बाखरि माँझ—१२१४।

बाग—संज्ञा पुं. [अ. बाग] **उपवन, वाटिका, उद्यान।** उ.—अद्भुत एक अनूपम बाग—१६६०।

संज्ञा स्त्री. [सं. वल्गा] **लगाम।** उ.—बाऐं कर

बाजि-बाग दाहिन हैं बैठे—१-२३।

मुहा०—बागा मोड़ना—किसी ओर जाने को होना।

बागडोर—संज्ञा स्त्री. [हिं. बाग+डोर] **लगाम।**

बागना—क्रि. अ. [सं. बक=चलना] **घूमना-फिरना।**

क्रि. अ. [सं. वाक्] **कहना, बोलना।**

बागवान—संज्ञा पुं. [फा.] **माली।**

बागवानी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बागबान] **माली का काम।**

बागा—संज्ञा पुं. [देश.] **अंगे-जैसा एक पहनावा, जामा।**

बागिया—क्रि. अ. [हिं. बागना] **घूमें-फिरे।**

बागर—संज्ञा पुं. [देश.] **नदी किनारे की ऊँची भूमि जहाँ पानी कभी नहीं पहुँचता।** उ.—अबिगत-गति जानी न परै।............। बागर तैं सागर करि डारै, चहूँ दिसि नीर भरै—१-१०५।

संज्ञा पुं. [हिं. बाँगर] **एक तरह का बैल।**

बागल—संज्ञा पुं. [सं. वक] **बक, बगुला।**

बागा—संज्ञा पुं. [हिं. बाग] **'जामा' नामक पहनावा।**

बागी—वि. [फ़ा. बागी] **विद्रोही, राजद्रोही।**

बागुर, बागुरि, बागुरी—संज्ञा पुं. [देश.] **पशु-पक्षी फँसाने का जाल।**

बागे—संज्ञा पुं. [हिं. बागा] **'जामा' नामक पहिनावा।** उ.—(क) सूरदास प्रभु प्यारी राजत आवत भ्राजत बने हैं मरगजे बागे—पृ. ३१५ (४६)। (ख) नाना रंग गए रँगि बागे—२४४४।

बागेसरी—संज्ञा स्त्री. [सं. वागीश्वरी] **सरस्वती।**

बाघंबर—संज्ञा पुं. [सं. व्याघ्रांबर] (१) **बाघ की खाल।** (२) **बाघ की खाल-जैसा कम्बल।**

बाघ—संज्ञा पुं. [सं. व्याघ्र] **सिंह, शेर।**

बाच—वि. [सं. वाच्य] **अच्छा, सुन्दर, बढ़िया।**

बाचना—क्रि. अ. [हिं. बचना] **सुरक्षित रहना।**

क्रि. स.—**सुरक्षित रखना।**

बाचा—संज्ञा स्त्री. [सं. वाचा] (१) **बोलने की शक्ति, वाक्शक्ति।** (२) **वचन, बातचीत, वाक्य।** उ.—मनसा-बाचा-कर्म अगोचर सो मूरति नहिं नैन धरी—१—११५। (३) **प्रण, प्रतिज्ञा।**

बाचाबंध, बाचाबद्ध—वि. [सं. वाचा+बद्ध] **वचन या प्रतिज्ञा बद्ध।**

बाची—क्रि. अ. [हिं. बचना] (१) **बच गयी, सुरक्षित रही।** (२) **भेद न खुला।** उ.—आजु बाची मौन धरि जो सदा होत बचाउ—१२८३।

बाचे—क्रि. प्र. [हिं. बचना] **बच सकता है, बच पाता है।** उ.—(माया) बिनु देखे समुझे सुने जग ठगत, न कोऊ बाचे हो—पृ. ३४९ (५९)।

बाछ, बाछड़ा, बाछा, बाछे—संज्ञा पुं. [सं. वत्स, प्रा. बच्छ, हिं. बाछा] (१) **गाय का बछड़ा।** (२) **पुत्र, बेटा, लाल।** उ.—(क) सूरदास प्रभु दोउ जननी मिलि, लेहिं बलाइ बोलि मुख बाछे—५०७। (ख) भवन जाहु तुम मेरे बाछे—१०१४।

बाज—संज्ञा पुं. [अ. बाज] (१) **एक शिकारी पक्षी।** उ.—बाज सों टूटि गजराज हाँकत परचौ मनो गिरि चरन धरि लपकि लीन्हे—२५९०। (२) **एक तरह का बगला।** (३) **तीर में लगा हुआ पर।**

वि. [फ़ा. बाज] **वंचित, रहित।**

मुहा०—बाज आना—(१) **खो देना।** (२) **अलग रहना।** न आयौ बाज—**दूर न हटा, अलग न हुआ, आदत न छोड़ी, संबंध न तोड़ा।** उ.—(क) और पतित आवत न आँखितर, देखत अपनौ साज। तीनौं पन भरि ओर निबाह्यौ, तऊ न आयौ बाज—१-९६। (ख) माया सबल धाम-धन-बनिता, बाँध्यौ हौं इहिं साज। देखत सुनत सबै जानत हौं, तऊ न आयौ बाज १-१०७। बाज करना—**रोकना, मना करना।** बाज रखना—**रोक लेना।** बाज रहना—**दूर रहना।**

प्रत्य०—**एक प्रत्यय जो 'रखने', 'खेलने', 'करने' आदि का अर्थ देता है।**

वि. [अ. बअज़] **कोई कोई या कुछ (लोग)।**

क्रि. वि. **बिना, बगैर।**

संज्ञा पुं. [हिं. बाजी] **घोड़ा, तुरंग।**

संज्ञा पुं. [सं. वाद्य] (१) **बाजा, वाद्य।** (२) **बाजे का शब्द।** (३) **बाजा बजाने की रीति।** (४) **सितार का पहला तार जो लोहे का होता है।**

क्रि. अ. [हिं. बजना] **बजते हैं।** उ.—घर घर तें मिष्ठान्न चले लै भाँति-भाँति बहु बाजन बाज—९२०।

बाजई—क्रि. अ. [हिं. बजना] बजता है। उ.—पाइनि नूपुर बाजई, कटि किंकिनि कूजै—१०-१३४।

बाजत—क्रि. अ. [हिं. बजना] **बजता है, बाजे से शब्द निकलता है।** उ.—महामोह के नूपुर बाजत, निंदा-सब्द-रसाल—१-१५३।

बाजते—क्रि. अ. [हिं. बजना] (बाजे) **बजाकर। (बाजे-गाजे) बजा बजाकर।**

मुहा०—बाजते नीसान—**डंके की चोट पर।** उ.—है हरि-भजन कौ परमान। नीच पावैं ऊँच पदवी, बाजते नीसान—१-२३५।

बाजन—संज्ञा पुं. बहु. [हिं. बाजा] **बाजे, वाद्य।** उ.—ज्यौं सहगमन सुंदरी कैं सँग, बहु बाजन हैं बाजत—९१३०।

क्रि. अ. [हिं. बजना] (१) **बजना, शब्द करना।** (२) **गरजना।**

प्र०—लागे बाजन—**गरजने लगा।** उ.—चहुँ दिसि ते दल-बादल उमड़े, सूने लागे बाजन—१० उ०-९६।

बाजना—क्रि. अ. [हिं. बजना] (१) **बाजा बजना।** (२) **लड़ना-झगड़ना।** (३) **प्रसिद्ध हो जाना।** (४) **आघात पहुँचना।**

वि.—**जो (बाजा) बजने में ठीक हो।**

क्रि. अ. [सं. व्रज्] **सामने उपस्थित हो जाना।**

बाजने—संज्ञा पुं. बहु. [हिं. बाजना] **बाजे।** उ.—बाजत नगर बाजने जहँ तहँ और बजत घरियार—२५६२।

बाजरा—संज्ञा पुं. [सं. वर्जरी] **एक मोटा अनाज।**

बाजा—संज्ञा पुं. [सं. वाद्य] **वाद्य।**

क्रि. अ. [हिं. बजना] **बजता है, बाजे से शब्द निकलता है, बाजा बोलता है।** उ.—हरि, हौं सब पति-तनि कौ राजा। निंदा पर-मुख पूरि रह्यौ जग, यह निसान नित बाजा—१-१४४।

बाजार—संज्ञा पुं. [फ़ा. बाजार] (१) **वह स्थान जहाँ सभी चीजें बेचने की दूकानें हों।**

मुहा०—बाजार गर्म होना—**खूब बिक्री या लेन-देन होना।**

(२) **निश्चित वार, तिथि आदि को लगने वाली हाट या पैंठ।**

बाजारी, बाजारू—वि. [हिं. बाजार] (१) **बाजार संबंधी।** (२) **मामूली।** (३) **अशिष्ट।**

बाजि—संज्ञा पुं. [सं. वाजिन्] (१) **घोड़ा।** उ.—बाऐं कर बाजि-बाग दाहिन हैं बैठे—१-२३। (२) **बाण।** (३) **पक्षी।**

वि.—**चलने वाला।**

बाजिहै—क्रि. अ. [हिं. बजना] **प्रहार होगा, आघात पड़ेगा, चोट लगेगी।** उ.—लादत, जोतत लकुट बाजिहै, तब कहँ मूड़ दुरैहौ—१-३३१।

बाजी—संज्ञा स्त्री. [फ़ा. बाजी] (१) **शर्त, दाँव।**

मुहा०—बाजी मारना—**दाँव जीतना।** बाजी ले जाना—**किसी बात में आगे बढ़ जाना।**

(२) **खेल।** उ.—सूर एक पौ नाम बिना नर फिरि-फिरि बाजी हारी—१-६०। (३) **खेल का दाँव।**

संज्ञा पुं. [सं. वाजिन्] **घोड़ा।**

संज्ञा पुं. [हिं. बाजा] **बाजा बजानेवाला।**

बाजीगर—संज्ञा पुं. [फ़ा. बाजीगर] **जादूगर, ऐंद्रजालिक।** उ.—कै कहुँ रंक, कहूँ ईस्वरता, नट-बाजीगर जैसे—१-२९३।

बाजीगरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बाजीगर] **जादू का खेल।**

बाजु—अव्य० [सं. वर्जन] (१) **बिना, बगैर।** उ.—सूरदास मन रहत कौन बिधि बदन बिलोकनि बाजु—३२३५। (२) **सिवा, अतिरिक्त।**

बाजू—संज्ञा पुं. [फ़ा. बाजू] (१) **भुजा, बाँह।** (२) **'बाजूबंद' नामक गहना।** (३) **सेना का कोई पार्श्व।** (४) **सहायक।** (५) **पक्षी का पंख।**

बाजूबंद—संज्ञा पुं. [हिं. बाजू+फा. बंद] **बाँह का एक गहना।** उ.—बाहु टाड़ कर कंकन बाजूबँद एते पर तौकी—१११२०।

बाजूबीर—संज्ञा पुं. [हिं. बाजू+बीर] **बाजूबंद।**

बाजैं—क्रि. अ. बहु. [हिं. बजना] **बजते हैं।** उ.—जाकौं दीनानाथ निवाजैं। भवसागर मैं कबहुँ न झूकै, अभय निसाने बाजैं—१-३६।

बाझन—संज्ञा स्त्री. [हिं. बझना] (१) **फँसने का भाव, फँसावट।** (२) **उलझन।** (३) **झंझट।** (४) **लड़ाई।**

नाथ माखन के काजै—१०-१४६ ।

बाण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) तीर, सायक । (२) गाय का थन । (३) लक्ष्य । (४) पाँच की संख्या । (५) राजा बलि का पुत्र जिसकी पुत्री अनिरुद्ध को ब्याही थी । (६) संस्कृत का एक प्रसिद्ध कवि ।

बाणिज्य—संज्ञा पुं. [सं.] व्यापार ।

बात—संज्ञा स्त्री, [सं. वार्ता] (१) बचन, कथन, बोल ।

मुहा०—बात को आँचल (गाँठ) में बाँधना—सदैव ध्यान रखना । बात उठाना—(१) कड़ी बातें सह लेना । (२) बचन का निर्वाह करना । (३) वचन न मानना । बात उलटना—(१) बात का जवाब देना । (२) कहकर फिर बदल जाना । बात कहते—तुरंत, तत्काल । बात कह न पाना—(१) प्रभुता, महत्ता आदि से इतना अभिभूत होना कि कुछ कह न पाना । उ.—सूर देखि वा प्रभुता उनकी कहि न आवै बात—२७८० । (२) इतना सरल या भोला होना कि बात का जवाब भी न दे पाना । (३) इतना मूर्ख होना कि उत्तर भी न दे पाना । बात करना—(१) किसी के बोलते समय बीच ही में बोल उठना । (२) आरोप या कथन का खंडन करना । बात के टेकी—बचन का निर्वाह करनेवाला । उ.—एतो अलि उनहीं के संगी अपनि बात के टेकी—३२८८ । बात कान में पड़ना—सुनना । बात की बात में—तुरंत, तत्काल । बात खाली जाना—कथन का माना न जाना । बात गढ़ना—झूठी बात कहना । बात गढ़त—झूठी बात कहता है । उ.—झूठैं कहत स्याम अंग सुन्दर बात (बातैं) गढ़त बनावत । बात घूँटना या पीना (घूँट या पी जाना)—(१) बात सुनकर भी ध्यान न देना । (२) अनुचित बात सुनकर भी उत्तर न देना । बात चबा जाना—कहते-कहते रुक जाना या दूसरे ढंग से कहने लगना । (मन में) बात जमना (बैठना)—कथन सत्य जान पड़ना । (मन में) बात जमाना (बैठाना)—निश्चय कराना कि कथन सत्य ही है । बात टालना—(१) पूछी हुई बात का उत्तर न देकर और बातें करने लगना । (२) कही हुई बात के अनुसार कार्य न करना । बात टूटना—पूरा वाक्य न बोल पाना । उ.—सीत-बात कफ कंठ बिरोधै, रसना टूटै बात १-३१३ । बात दुहराना—बात का उलटकर जवाब देना । बात न पूछना—बहुत तुच्छ समझकर बात तक न करना । बात न करना—घमंड के मारे न बोलना । बात नीचे डालना—(१) अपनी बात का खंडन होने देना । (२) दूसरे की बात का खंडन करना । बात पकड़ना—(१) बात या कथन में दोष निकालकर कायल करना । (२) तर्क-कुतर्क करना । (किसी की बात पर जाना—(१) कथन का बुरा-भला मानना । (२) कथन के अनुसार चलना । बात पलटना (बदलना) - एक बात कहकर फिर कुछ और कहना । बात पूछना—(१) सुख-सुविधा का ध्यान रखना । (२) आदर-सत्कार करना । बात पुछातौ—ध्यान नहीं देता, परवाह नहीं करता । उ.—जग में जीवित ही को नातौ । मन बिछुरैं तन छार होइगौ, कोउ न बात पुछातौ—१-३०२ । न पूछै बात—जरा भी ध्यान नहीं देता । उ.—मीन बियोग न सहि सकै, नीर न पूछै बात—१-३२५ । बात फूटना—बोलना, कहना । बात फेंकना—ताना मारना । बात फेरना—कही हुई बात को पूरा न करके कुछ और तात्पर्य समझना । बात बढ़ना—वाद-विवाद हो जाना । बात बढ़ाना—वाद-विवाद करना । बड़ी बात—अनुचित या अनुपयुक्त कथन । उ. छोटैं मुँह बड़ी बात कहत, अबहीं मरि जैहै—५८९ । बात बनाना—(१) झूठी-सच्ची बातें गढ़ना, हीला-हवाला करना । (२) व्यर्थ की बातें बकना । (३) चापलूसी या खुशामद करना । (४) डींग हाँकना । बात बनावन कौं है नीकौ खूब झूठी-सच्ची बातें गढ़ता है, झूठ बोलने में बहुत कुशल है । उ.—बात बनावन कौं है नीकौ, बचन-रचन समुझावै—१-१८६ । बात बनाइ—झूठ बोलकर । उ.—कोई कहै बात बनाई पचासक उनकी बात जो एक—३३६४ । बात बनाई—झूठ बोली । उ.—सूर स्याम मन हर्‌यौ तुम्हारौ हम जानी इह बात बनाई—११८६ । बहुत बनावत बात—खूब झूठ-सच बोलते हो । उ.—तुम जो राजनीति सब जानत बहुत बनावत बात । बात बात में—(१) प्रत्येक कथन में । (२) हर बार । बात

बाझना—क्रि. अ. [हिं. बझना] (१) **बंधन में पड़ना।** (२) **फँसना-उलझना।** (३) **हठ करना।**

बाझि—क्रि. अ. [हिं. बाझना] **फँसकर, बंधन में पड़कर।** उ.—नक बेसरि बंसी के संभ्रम भौंह मीन अकुलात। मनु ताटंक कमठ घूँघट उर जाल बाँझि अकुलात।

बाट—संज्ञा पुं. [सं. वाट=मार्ग] **मार्ग, रास्ता।** उ.—सीस धरि श्रीकृष्ण लीने चले गोकुल-बाट—१०-५।

मुहा०—बाट करना—**मार्ग या रास्ता बनाना।** बाट करि—**मार्ग बनाकर, रास्ता खोलकर।** जीत्यौ जरासंध बाँधि छोरी। जुगल कपाट बिदारि बाटि करि लतनि जही संधि जोरी—१० उ० ५२। बाट जोहना (देखना, निहारना)—**प्रतीक्षा करना।** बाट पड़ना—(१) **मार्ग में तंग करना या पीछे पड़ना।** (२) **डाका पड़ना, हरण होना।** बाट पारना—**डाका डालना, हरण करना।** बाट लगाना—(१) **मार्ग दिखाना।** (२) **ढंग बताना।** (३) **मूर्ख बनाना।**

यौ०—बाट-घाट—**मार्ग और घाट का।** उ.—बाहिर तरुन किसोर बयस बर, बाट-घाट का दानी—१०-३११।

संज्ञा पुं. [सं. वटक] **तौलने का बटखरा।**

संज्ञा स्त्री. [हिं. बटना] **रस्सी की ऐंठन या बटन।**

बाटिकी—संज्ञा स्त्री. [देश.] **बटलोई।**

बाटना—क्रि. स. [हिं. बट्टा] **पीसना, चूर्ण करना।**

क्रि. स. [हिं. बटना] **(डोरी आदि) बटना।**

बाटि—क्रि. स. [हिं. बाटना] **घिसकर, पीसकर।** उ.—कुच बिष बाटि लगाय कपट करि बालघातिनी परम सुहाई।

बाटिका—संज्ञा स्त्री. [सं.] **बाग, उद्यान।**

बाटी—संज्ञा स्त्री. [सं. बटी] (१) **अंगारों या उपलों पर सिकी मोटी छोटी रोटी, अंगाकड़ी, लिट्टी।** उ.—दूध, बरा, उत्तम दधि बाटी, गाल मसूरी की रुचि न्यारी—१०-२२७। (२) **गोली।**

संज्ञा. स्त्री. [सं. वर्तुल] **तसला।**

बाटे—संज्ञा पुं. [हिं. बाँट] **भाग, हिस्सा।** उ.—गुरुजन तेउ इहाँ इनि त्यागी मेरे बाटे परचौ जँजाल—पृ. ३२९ (८४)।

बाड़—संज्ञा स्त्री. [हिं. बाढ़] (१) **वृद्धि,** (२) **जोर।**

संज्ञा स्त्री. [देश.] **'टाड़' नामक गहना।**

बाड़व—संज्ञा पुं. [सं.] **समुद्र की आग।**

बाड़ा—संज्ञा पुं. [सं. वाट] (१) **चारो ओर से घिरा स्थान।** (२) **पशुशाला।**

बाड़ी—संज्ञा स्त्री. [सं. वारी] **बाटिका, उपवन।**

बाढ़—संज्ञा स्त्री. [हिं. बढ़ना] (१) **वृद्धि, अधिकता।** (२) **अधिक वर्षा आदि से नदी का पानी बढ़ना।** (३) **लाभ।** (४) **बंदूक, तोप आदि छूटना।**

बाढ़ई—संज्ञा पुं. [हिं. बढ़ई] **लकड़ी का काम करनेवाला, बढ़ई।** उ.—कन्हैया हालरु रे। गढ़ि-गुढ़ि ल्यायौ बाढ़ई, धरनी पर डोलाइ, बलि हालरु रे। ....। इक लख माँगै बाढ़ई, दुइ लख नंद जु देहिं, बलि हालरु रे—१०-४७।

बाढ़ना—क्रि. अ. [हिं. बढ़ना] **वृद्धि होना, बढ़ना।**

बाढ़ाली—संज्ञा स्त्री. [हिं.] **खड्ग, तलवार।**

बाढ़ि, बाढ़ी—क्रि. [हिं. बढ़ना] **बढ़ गयी, वृद्धि को प्राप्त हुई।** उ.—(क) कहा भयौ जौ संपति बाढ़ी, कियौ बहुत घर घेरौ—१-२६६। (ख) नैननि न बिचारि परत देखत रुचि बाढ़ी—१०-२०१।

वि०—**बढ़ी-चढ़ी।**

मुहा०—घर की बाढ़ी—**घर ही में बढ़ चढ़ कर बातें करने वाली।** उ.—ग्वालिनि है घर ही की बाढ़ी—७७४।

संज्ञा स्त्री. [हिं. बाढ़] (१) **वृद्धि।** (२) **लाभ।**

बाढ़ीवान—वि. [हिं बाढ़] **शस्त्र पर शान रखनेवाला।**

बाढ़े—वि. [हिं. बढ़ना] **बढ़े-चढ़े।**

मुहा०—घर के बाढ़े—**घर ही में लंबी-चौड़ी हाँकने वाले।** उ.—(क) घर के बाढ़े रावरे बातैं कहत बनाइ—११२९। (ख) अब जाने घर के बाढ़े हौ तुम ऐसे कहा रहे मुरझाई—२२६१।

बाढ़ै—क्रि. स. [हिं. बढ़ना] **बढ़े, वृद्धि को प्राप्त हो।** उ.—जाके पूजे बाढ़ै गोधन—१०१५।

बाढ़्यौ—क्रि. अ. [हिं. बढ़ना] (१) **बढ़ा, वृद्धि को प्राप्त हुआ।** (२) **फैल गया, व्यापक हुआ।** उ.—गावत गुन सूरदास, बाढ़्यौ जस भुव-अकास, नाचत त्रैलोक-

मारना— **ताना मारना**। बात में बात निकालना—**व्यर्थ के दोष दिखाना**। (किसी की) बात रखना—(१) **कहा मान लेना**। (२) **इच्छा पूरी कर देना**। (अपनी) बात रखना—(१) **जैसा कहा हो, वैसा ही करना**। (२) **हठ पकड़ना**। बात लगना—**किसी की बात का बुरा मानना**। बात लगाना—(१) **निंदा करना**। (२) **अनुचित बात का बुरा मानकर चिंतित या दुखी रहना**। बात (बातें) छाँटना (बघारना)—(१) **बहुत बोलना**। (२) **बहुत बढ़-बढ़कर बोलना**। (३) **डींग हाँकना**। बात (बातें) मिलाना— **'हाँ' में 'हाँ' मिलाना, समर्थन करना, चाटुकारी करना**। सीधे बात न कहना—**गर्व या अभिमान का व्यवहार करना**। सूधैं कहत न बात—**गर्व या अभिमान के कारण सज्जनता से बोलता भी नहीं**। उ.—हौं बड़ हौं बड़ बहुत कहावत सूधैं कहत न बात—२-२२। बात (बातें) सुनना—**अनुचित कथन भी सहन करना**। बातें सुनाना—**भला-बुरा कहना**। बात में आना—**दूसरे के कथन पर विश्वास कर लेना**। बात (बातों) की झड़ी बाँधना—**बराबर बोलते जाना**। बात (बातों) का धनी—**जो केवल बातें बनाने में ही कुशल हो, करे-धरे कुछ नहीं**। बात (बातों) पर जाना—(१) **बात पर ध्यान देना**। (२) **कहने के अनुसार चलना**। बात (बातों) में उड़ाना—(१) **हँसी में ही टाल देना**। (२) **बहानेबाजी करना**। बात (बातों) में फुसलाना (बहलाना, समझाना)—**खाली बातों से ही संतुष्ट कर देना**। बात (बातों) में लगाना—**दूसरी ओर से ध्यान हटाने के लिए रुचिकर प्रसंग छेड़कर बातें करने लगना**।

(२) **चर्चा, प्रसंग, विषय, जिक्र**।

मुहा०—बात आना (उठना, चलना छिड़ना)—**चर्चा चलाना**। बात उठाना (चलाना, छोड़ना)—**चर्चा चलना**। बात उठावति—**चर्चा चलाती है**। उ.—अब समझी मैं बात सबनि की झूठे ही यह बात उठावति—१२५०। बात चलावत—**चर्चा करते हैं**। उ.—फिरि फिरि नृपति चलावत बात। कहौ सुमंत कहाँ तैं पलटे प्रान जिवन कैसे बन जात—९-३८। (किसी की) बात चलाना—**(किसी का) दृष्टांत या उदाहरण देना**। बात चालना—**चर्चा चलाना**। बातैं चालीं—**चर्चा छेड़ी**। उ.—ऊधौ, कत ये बातैं चालीं। कछु मीठी कछु मधुरी हरि की, ते उर-अंतर साली—३८२३। बात पड़ना—**प्रसंग छिड़ जाना**। बात फेरना—**चालू विषय को किसी कारण से समाप्त करके नया प्रसंग छेड़ना**। बात मुँह पर लाना—**चर्चा या प्रसंग छेड़ बैठना**।

(३) **प्रसिद्ध या प्रचलित प्रसंग, किंवदंती, प्रवाद**।

मुहा०—बात उड़ना—**किसी बात का प्रसिद्ध हो जाना**। बात उड़ी है—**चर्चा फैल गयी है**। उ.—झूठी ही यह बात उड़ी है, राधा कान्ह कहत नर-नारी। (किसी पर) बात आना—**किसी को दोष या कलंक लगना**। बात फैलना (बहना)—**किसी विषय का प्रसिद्ध हो जाना**। बात बहानी—**चारों ओर चर्चा फैल गयी है**। उ.—जो हम सुनति रहीं सो नाहीं। ऐसी ही यह बात बहानी। बात फैलाना (बहाना)—**किसी विषय को सब पर प्रकट कर देना**। (किसी पर) बात रखना (लगाना, लाना)—**किसी पर दोष या कलंक लगाना**।

(४) **मामला, हाल, वस्तुस्थिति**।

मुहा०—बात का बतंगड़ करना—(१) **छोटी सी बात को खूब बढ़ा-चढ़ाकर कहना**। (२) **छोटी सी घटना को व्यर्थ ही बहुत पेचीदा बना देना**। बात ठहरना—**मामला तय हो जाना**। बात पर धूल डालना—**किसी घटना या झगड़े को भुलाने का यत्न करना**। बात बढ़ना—**जरा सी घटना या प्रसंग का झगड़े का रूप लेना**। बात बढ़ाना—**मामूली बात पर झगड़ा कर बैठना**। बात बनना (सँवरना) (१) **काम सिद्ध होना**। (२) **संयोग या घटना का अनुकूल होना**। बात बनाना (सँवारना)—(१) **काम सिद्ध करना**। (२) **संयोग या परिस्थिति को अनुकूल करना**। बात-बात पर (में)—**हर काम में**। बात बिगड़ना—**काम चौपट हो जाना, असफलता मिलना**। बात बिगाड़ना—**काम चौपट करना, असफल करना**।

(५) **स्थिति, दशा, प्राप्त संयोग**। (६) **संदेश,**

संदेशा। उ.—ऊधौ, हरि सों कहियौ बात। (७) **वार्तालाप, संलाप, कथोपकथन**। (८) **संबंध आदि निश्चित करने का वार्तालाप**।

मुहा०—बात ठहरना—**संबंध का निश्चित होना**। बात लगाना—**संबंध का प्रस्ताव करना**। बात लाना—**विवाह का प्रस्ताव लाना**।

(९) **छल-कपट का व्यवहार**।

मुहा०—बात में आना—**छल-कपट का व्यवहार न समझकर धोखा खा जाना**।

(१०) **झूठ या बनावटी वचन, बहाना**। (११) **वचन, निश्चय, प्रतिज्ञा, वादा**।

मुहा०—बात का धनी (पक्का, पूरा)—**दृढ़निश्चयी, दृढ़प्रतिज्ञ**। बात का कच्चा (हेठा)—**बात का निर्वाह न करनेवाला**। बात पक्की करना—**परस्पर दृढ़ निश्चय करना**। बात पक्की होना—**दृढ़ निश्चय होना**। (अपनी) बात रखना—**अपना निश्चय या वचन पूरा करना**। बात हारना—**वचन देना, प्रण करना**।

(१२) **वचन का विश्वास या उसकी प्रतीति**।

मुहा०—बात जाना—**विश्वास न रह जाना**। बात खोना—**विश्वास खोना**। बात बनी रहना—**विश्वास बना रहना**। बात हेठी होना—**विश्वास न रह जाना**।

(१३) **मान-मर्यादा, प्रतिष्ठा**।

मुहा०—बात खोना—**मान-मर्यादा नष्ट कर देना**। बात जाना—**मान-मर्यादा नष्ट हो जाना**। बात बनना—**मान-मर्यादा बनी रहना**। बात बना लेना—**मान-मर्यादा प्रतिष्ठित कर लेना**। बात बिगड़ना—**मान-मर्यादा न रह जाना**। बात बिगाड़ना—**मान-मर्यादा नष्ट कर देना**। बात रखना (रख लेना)—**मान-मर्यादा की रक्षा कर लेना**। बात रहना (रह जाना)—**मान-मर्यादा बनी रह जाना**।

(१४) **गुण, योग्यता, स्थिति संबंधी कथन**। (१५) **उपदेश, शिक्षा, सीख**। (१६) **रहस्य, गुप्त भेद**।

मुहा०—बात खुलना (फूटना)—**भेद ज्ञात होना**।

(१७) **प्रशंसा-योग्य विषय**। (१८) **चमत्कार पूर्ण उक्ति**। (१९) **गूढ़ उद्देश्य या अर्थ**। (२०) **विशेषता, खूबी**। (२१ **ढंग**। (२२) **समस्या, प्रश्न**। (२३) **आशय, विचार**। (२४) **इच्छा कामना**। (२५) **कार्य, व्यवहार**। (२६) **संबंध**। (२७) **लक्षण, प्रकृति**। (२८) **पदार्थ, वस्तु**। (२९) **दाम, मोल**। (३०) **कर्तव्य, उपयुक्त उपाय**।

बातचीत—संज्ञा स्त्री. [हिं. बात+चिंतन] **वार्तालाप**।

बातनि—संज्ञा स्त्री. बहु. [हिं. बात] **अनेक बातें**।

मुहा०—सौ बातनि की एक बात—**सारे वाद-विवाद या वार्तालाप का सारांश या तात्पर्य केवल इतना ही है**। उ.—(क) सौ बातनि की एकै बात। सूर सुमिरि हरि-हरि दिन रात—२-५। (ख) सौ बातनि की एकै बात। सब तजि भजौ जानकीनाथ—७-२। बातनि हीं—**बातों-बातों में, अनायास**। उ.—अजामील बातनि हीं तारयौ हुतौ जु मोतैं आधौ—१-१३९।

बाता—संज्ञा स्त्री. [हिं. बात] (१) **समस्या**। उ.—धाए गजराज-काज, केतिक यह बाता—१-१२३। (२) **कथन**। उ.—धृग तव जन्म जियन धृग तेरौ, कही कपट मुख बाता—९-४९।

बाती—संज्ञा स्त्री. [सं. वर्ती] (१) **बटी हुई रुई या कपड़ा**। (२) **कपड़े या रुई की बटी हुई सलाई के आकार की बत्ती जो दीपक में जलाने के काम आती है, बत्ती**। उ.—हरि जू की आरती बनी।······। मही सराव, सप्त सागर घृत, बाती सैल घनी—२-२८।

बातुल—वि. [सं. वातुल] **पागल, सनकी, बौड़म**।

बातूनिया, बातूनी—वि. [हिं. बात+ऊनी] **बकवादी**।

बातैं—संज्ञा स्त्री. बहु. [हिं. बात] (१) **कथन, बोल**।

मुहा०—बातैं न पूछना—**खोज-खबर न लेना**। न पूछी बातैं—**खोज-खबर तक न ली**। उ. ज्यों मधुकर अंबुज रस चाख्यो बहुरि न पूछी बातैं आइ—३०५३। बातैं बनाना—**झूठी-सच्ची बातें करना**। कहा बनावत बातैं—**क्यों झूठी-सच्ची बातें करते हो**। उ.—फिरि-फिरि कहा बनावत बातैं—३१२१। बातैं मिलाना—**प्रसन्न करने के लिए सुहाती बातें करना**। बातैं मिलवति जोरि—**प्रसन्न करने के लिए सुहाती**

बातें गड़गड़ कर कहता है। उ.—मैं जानति उनके ढँग नीके बातैं मिलवति जोरि—८६७।

(२) **चर्चा, प्रसंग, जिक्र।**

मुहा०—बात चलाना—**नया प्रसंग या विषय छेड़ना, चर्चा चलाना।** बातैं चालीं—**चर्चा छेड़ी।** उ.—ऊधौ, कत ये बात चालीं। कछु मीठी कछु करुई हरि की अन्तर में सब साली—३८२३।

बातौ—संज्ञा स्त्री. [हिं. बात] **कथन, वचन।** उ.—कहत अलि तेरे मुख बातौ—३३१९।

बाद—संज्ञा पुं. [सं. वाद] (१) **तर्क, बहस।** उ.—कहा एतौ बाद ठानै देखि गोपी भोग—३१२६। (२) **हुज्जत, विवाद, तर्क-कुतर्क।** उ.—बाद करति अबही रोवहुगी बार-बार कहि दई दई—१०४७।

(३) **शर्त, बाजी।**

यौ.—वाद-विवाद—**तर्क-वितर्क।** उ.—मिथ्या बाद-बिवाद छाँड़ि दै, काम-क्रोध-मद-लोभहिं परिहरि—१-३१२।

मुहा०—बाद मेलना—**शर्त बदना।**

अव्य.—**व्यर्थ, बिना मतलब।**

अव्य.—[अ.] **पीछे, अनंतर, पश्चात्।**

वि.—(१) **छोड़ा या अलग किया हुआ।** (२) **छूट, कमीशन।** (३ **अतिरिक्त।**

प्रत्य० [सं. वाद] **तत्व या सिद्धांत।** उ.—मिथ्यावाद उपाधि रहित ह्वै बिमल-बिमल जस गावत—१-३६०।

बादत—क्रि. अ. [हिं. बादना] **ललकारता है।** उ.—बादत बड़े सूर की नाईं अबहीं लेत हौं प्रान।

बादति—क्रि. अ. [हिं. बादना] **बहस करती है।** उ.—बादति है बिनु काज ही बृथा बढ़ावति रारि—५८९।

बादना—क्रि. अ. [सं. वाद] (१) **बरबाद करना।** (२) **बहस या हुज्जत करना।** (३) **ललकारना।**

बादबान—संज्ञा पुं [फा.] **(जहाज का) पाल।**

बादर—संज्ञा पुं. [सं. वारिद, विपर्यय से 'बादरि'] **बादल, मेघ।** उ.—(क) बादर-छाँह, धूम-धौराहर, जैसे थिर न रहाहीं—१-३१९। (ख) और सकल मैं देखे-ढूँढ़े, बादर की सी छाहीं—१-३२३।

वि. [देश.] **प्रसन्न, हर्षित।**

बादरायण—संज्ञा पुं. [सं.] **वेदव्यास का एक नाम।**

बादरिया, बादरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बदली] **बदली।**

बादल—संज्ञा पुं. [हिं. बादर] (१) **मेघ, घन।**

मुहा०—बादल उठना (घिरना, चढ़ना)—**घटा घिरना।** बादल गरजना—**मेघों का शब्द होना।** बादल छँटना (फटना)—**घटा का घिरा न रह जाना, मेघों का छितर-बितर हो जाना।** बादल (बादलों) से बात करना—**बहुत ऊँचा होना।**

बादला—संज्ञा पुं. [?] **सोने-चाँदी का तार।**

बादली—संज्ञा स्त्री. [हिं. बदली] **बदली।**

बादशाह—संज्ञा पुं. [फा.] (१) **शासक, राजा।** (२) **सरदार।** (३) **मनमौजी।** (४) **शतरंज का एक मोहरा।** (५) **ताश का एक पत्ता।**

बादाम—संज्ञा पुं. [फा.] **एक सूखा मेवा।**

बादामी—वि. [हिं. बादाम] **बादाम के रंग-रूप का।**

संज्ञा पुं.—**बादाम के रंग का घोड़ा।**

बादि—अव्य. [सं. वादि, हिं. वादि = हठ करके] **व्यर्थ, निष्फल, निष्प्रयोजन।** उ.—(क) माया-मद मैं मत्त, कत जनम बादि ही हारै—१-६३। (ख) छिन न चितत चरन अंबुज, बादि जीवन जाइ—१-३१५। (ग) बादि अभिमान जनि करौ कोई—८-१०।

बादित—वि. [सं. वादन] **बजाया हुआ।**

बादिहिं—क्रि. वि. [सं. वाद = व्यर्थ] **व्यर्थ, वृथा।** उ.—जनम तौ बादिहिं गयौ सिराइ—१-१५५।

बादी—वि. [फ़.] (१) **वायु-संबंधी।** (२) **वायु-विकार-संबंधी।** (३) **वायु को विवश करनेवाला।**

संज्ञा स्त्री.—**शरीर की वायु का विकार।**

संज्ञा पुं. [सं. वादिन्, वादी] (१) **अभियोग लगानेवाला।** (२) **शत्रु।** (३) **राग का प्रधान स्वर।**

बादुर—संज्ञा पुं. [देश.] **चमगादड़।**

बाध—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **रुकावट, अड़चन।** (२) **कष्ट।** (३) **कठिनता।** (४) **अर्थ का ठीक न बैठना।**

बाधक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **बाधा डालनेवाला।** (२) **हानिकारक।**

बाधकता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) **अड़चन।** (२) **कठिनता।**

बाधन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **विघ्न डालना । (२) कष्ट देना ।**

बाधना—क्रि. स. [सं. बाध] **विघ्न-बाधा डालना ।**

बाधा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) **रुकावट, अड़चन, विघ्न ।** उ.—चितैबौ छाँड़ि दै री राधा । हिलि-मिलि खेलि स्याम सुंदर सौं, करति काम कौ बाधा—७२१ । (२) **कष्ट, दुख ।** (३) **भय, आशंका ।** उ.—आजु ही प्रात इक चरित देख्यो नयो तबहिंतें मोहिं यह भई बाधा ।

बाधित—वि. [सं.] (१) **जिसके कार्य या साधन में बाधा पड़ी हो । (२) असंगत । (३) प्रभावहीन, ग्रस्त ।**

बाधी—वि. [सं. बाधिन्] **बाधा डालनेवाला ।**

बाधो—संज्ञा पुं. [हिं. बाधा] **अड़चन, रुकावट ।** उ.—मिलि ही में बिपरीत करी बिधि होत दरस को बाधो—२७५८ ।

बाध्य—वि. [सं.] **रोका या दबाया जानेवाला, विवश ।**

बान—संज्ञा पुं. [सं. बाण] (१) **बाण, तीर ।** उ.—अचरज कहा पार्थ जौ बेधै, तीन लोक इक बान—१-२६९ । (२) **एक तरह की आतशबाजी ।**

संज्ञा स्त्री. [हिं.बनना] (१) **सजधज । (२) टेव, आदत ।**

संज्ञा स्त्री. [सं. वर्ण] **रंग, आब, कांति ।**

वि.—**कांतियुक्त, तेजपूर्ण ।**

संज्ञा पुं. [सं. बाण] **बाणासुर ।** उ.—रुद्र भगवान अरु बान सांबुक भिरे कुंभाउ माँड़ी लराई - १० उ० —३५ ।

बानइत—वि. [हिं. बानैत] **बाना चलानेवाला ।**

वि. [हिं. बाण] (१) **बाण चलानेवाला । (२) वीर, योद्धा ।** (३) **पैदल सिपाही ।**

बानक—संज्ञा स्त्री. [हिं. बनाना] **वेष, सजधज ।** उ.—(क) या छबि की पटतर दीबे कौं सुकबि कहा टकटोहै ? देखत अंग-अंग-प्रति बानक, कोटि मदन-मन छोहै —१०-१५८ । (ख) तुमहीं देखि लेहु अँग बानक एते पर क्यौं सही परै—२०१७ । (ग) एक बयक्रम एकहिं बानक रूप-गुन की सींव—२०७२ । (घ) आयु बिषमता तजि दोऊ सम भ बानक ललित त्रिभंग—३३२७ ।

बानगी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बयाना] **माल का नमूना ।**

बानत—क्रि. स. [हिं. बाना] **किसी बात का निश्चय करता या ठानता है ।** उ.—मेरे हृदय नाहिं आवत हौ, हे गुपाल, हौं इतनी जानत । कपटी, कृपन, कुचील, कुदरसन, दिन उठि बिसय-बासना बानत—१-२१७ ।

बानना—क्रि. स. [हिं. बाना] (१) **किसी बात का बाना करना ।** (२) **कोई बात ठानना ।**

बानर—संज्ञा पुं. [सं. वानर] **बंदर ।**

बाना—संज्ञा पुं. [हिं. बनाना] (१) **पोशाक, पहनावा, वेश ।** उ. - माला-तिलक मनोहर बाना लै सिर छत्र धरै—६-६ । (२) **रीति, पद्धति, ढंग ।**

संज्ञा पुं. [सं. बाण] **एक हथियार ।**

संज्ञा पुं. [सं. वयन = बुनना] (१) **बुनावट ।** (२) (२) **बुनावट का तागा जो आड़े ताने में भरा जाता है, भरनी ।**

क्रि. [सं. व्यापन] **फैलाना, प्रसारित करना ।**

मुहा०—(किसी वस्तु के लिए) मुँह बाना—**उसे प्राप्त करने की इच्छा होना ।**

बानावरी—संज्ञा स्त्री, [हिं. बाण + फा. प्रत्य. आवरी] **बाण चलाने की विद्या या रीति ।**

बानि—संज्ञा स्त्री. [हिं. बनना] (१) **टेव, आदत, स्वभाव ।** उ.—(क) निरखि पतंग बानि नहिं छाँड़त, जदपि जोति तनु तावत—१-२१० । (ख) सबै जोरि राखति हित तुम्हरैं मैं जानति तुम बानि—४९४ । (ग) इहै करिहौं और तजिहौं परी ऐसी बानि—८९५ । (घ) सूपनखा ताड़का सँहारी स्याम सहज यह बानि । (२) **बनावट, सजधज ।** उ.—वा पट पीत की फहरानि । कर धरि चक्र चरन की धावनि नहिं बिसरति वह बानि—१-२७६ ।

संज्ञा स्त्री. [सं. वर्ण] **आभा, कांति, चमक ।**

संज्ञा स्त्री. [सं. वाणी] **बचन, वाणी ।** उ.—करति कछू न कानि, बकति है कटु बानि निपट निलज बैन बिलख हूँ ।

बानिक—संज्ञा स्त्री. [हिं. बानक] **बनाव-सिंगार, सजधज ।**

बानिज—संज्ञा पुं. [सं. वाणिज्य] **व्यापार, व्यवसाय ।**

बानिया—संज्ञा स्त्री. [सं. बणिक्] **वैश्य, बनिया ।**

बानी—संज्ञा स्त्री. [सं. वाणी] (१) **वचन, शब्द**। उ.—(क) जित देखति तित कोऊ नाहीं, टेरि कहति मृदु बानी—१-२५०। (ख) गर्ग कही यह बानी—१०-२५६। (२) **मनौती, प्रतिज्ञा**। (३) **सरस्वती**। (४) **उपदेश, शिक्षा**।

संज्ञा पुं. [सं. बणिक्] **बनिया**।

संज्ञा स्त्री. [सं. वर्ण] **आभा, कांति, चमक**।

संज्ञा स्त्री. [हिं. बान, बानि] **स्वभाव, आदत, टेव**। उ.—(क) मथति नंद-गृह सहस मथानी। ताकैं सुत चोरी की बानी—३९। (ख) यह नहिं भली तुम्हारी बानी—१००१।

बाने—संज्ञा पुं. [हिं. बाना] (१) **अंगीकृत या ठानी हुई रीति या चाल**। उ.—(क) जानिहौं अब बाने की बात। मोसौं पतित उधारौ प्रभु जौ, तौ बदिहौं निज तात—१-१७९। (ख) असुर-सँहारन, भक्तनि-तारन, पावन पतित कहावत बाने—३८०। (२) **बनाव-सिंगार, वेश, सजधज**। उ.—अंग-अंग सब सुभट सहायक बने बिबिध भूषन बाने बर—१९०६।

बानैं—संज्ञा पुं. [हिं. बाना] (१) **पहनावा, भेस**। (२) **रूप**। उ.—इनके गुन कैसै कोउ जानैं। औरै करत और धरि बानैं—७९९।

बानैत—संज्ञा पुं. [हिं. बान + ऐत (प्रत्य.)] (१) **'बाना' नामक हथियार फेरनेवाला**। (२) **तीर चलानेवाला**। (३) **योद्धा, सैनिक, वीर**। उ.—(क) बाजि मनोरथ, गर्ब मत्त गज, असत-कुमत रथ-सूत। पायक मन, बानैत अधीरज, सदा दुष्टमति दूत—१-१४१। (ख) जहाँ बरन बरन बादर बानैत अरु दामिनि करि करि बार—१० उ०-२।

संज्ञा पुं. [हिं. बाना] **वेश बनानेवाला**।

बानो, बानौ—संज्ञा पुं. [हिं. बाना] **अंगीकृत धर्म, रीति या स्वभाव**। उ.—(क) राम भक्त-बत्सल निज बानौ। जाति, गोत, कुल, नाम गनत नहिं रंक होय कै रानौ—१-११। (ख) भक्तबछल बानौ है मेरौ, बिरुदहिं कहा लजाऊँ—१०-४।

बाप—संज्ञा पुं. [सं. वाप = बीज बोनेवाला] **पिता, जनक**। उ.—(क) बीचहिं बोलि उठे हलधर तब याके माय न बाप—१०-२१४। (ख) बड़े बाप के पूत कहावत, हम वै बसत इक बगरी—१०-३१९।

मुहा० — बाप-दादा—**पूर्वज**। बाप तक जाना—**माँ-बाप को गाली देना**। बाप बनाना—(१) **आदर करना**। (१) **चापलूसी करना**। बाप-माँ—**पालक, रक्षक**।

बापिका—संज्ञा स्त्री. [सं. वापिका] **बड़ा चौड़ा कुआँ या जलाशय, वापी, बावली**। उ.—नैन कमल-दल बिसाल, प्रीति-बापिका-मराल, मदन ललित बदन उपर कोटि वारि डारे—१०-२०५।

बापी—संज्ञा पुं. [सं. वापी] **छोटा जलाशय, बावली**। उ.—सागर-सूर बिकार भरयौ जल, बधिक अजामिल बापी—१-१४०।

बापु—संज्ञा पुं. [हिं. बाप] **पिता**।

बापुरा—वि. [सं. बर्बर] (१) **तुच्छ, नगण्य**। (२) **दीन, असहाय, बेचारा**।

बापुरी—वि. स्त्री. [हिं. बापुरा] **दीन, असहाय**। उ.—वै जलहर हम मीन बापुरी कैसे जिवहिं निनारे—१० उ०-८३।

बापुरे—वि पुं. [हिं. बापुरा] **दीन, असहाय**। उ.—देखौ प्रीति बापुरे पसु की आन जनम मानत नहिं हारि—१८४६।

बापू—संज्ञा पुं. [हिं. बाप] **पिता**।

बाफता—संज्ञा पुं. [फा. बाफ़्ता] **एक रेशमी कपड़ा**।

बाबत—संज्ञा स्त्री. [अ.] (१) **संबंध**। (२) **विषय**।

बाबरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बबर = सिंह] **जुल्फ, पट्टा**।

बाबा—संज्ञा पुं. [तु.] (१) **पिता**। उ.—(क) कहन लागे मोहन मैया-मैया। नंद महर सौं बाबा बाबा, अरु हलधर सौं भैया—१०-१५५। (ख) मोसौं कहौ बात बाबा यह, बहुत करत तुम सोच-बिचार—५३०। (२) **दादा, पितामह**। (३) **साधु के लिए आदरसूचक संबोधन**। (४) **बूढ़ा व्यक्ति**। (५) **बच्चों के लिए प्यार का संबोधन या शब्द**।

बाबी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बाबा] **संन्यासिनी**।

बाबुल—संज्ञा पुं. [हिं. बाबा] (१) **बाबा**। (२) **बाबू**।

बाबू—संज्ञा पुं. [हिं. बापू] (१) **'पिता' के लिए संबोधन**।

(२) **आदरसूचक संबोधन।** (३) **'छैला' बने घूमने वाले लापरवाह व्यक्ति के लिए संबोधन (व्यंग्य)।**

बाभन—संज्ञा पुं. [सं. ब्राह्मण] **ब्राह्मण।**

बाम—वि. [सं. वाम] **बायाँ, दाहने का उलटा।** उ.—बाम कर सौं पकरि, गरुड़ पर राखि हरि, छीर कैं जलधि तट धरयौ ल्याई—८-८।

संज्ञा स्त्री. [सं. वामा] (१) **पत्नी, भार्या।** उ.—गंगा तट आए श्री राम। तहाँ पषान रूप पग परसे, गौतम रिषि की बाम—९-२०। (२) **स्त्री, नारी।** उ.—तीनि जने सोभा त्रिलोक की, छाँड़ि सकल सुर-धाम। सूरदास-प्रभु-रूप चकित भए, पंथ चलत नर-बाम—९-४४। (३) **कान का एक गहना।**

संज्ञा पुं. [फा.] (१) **कोठा, अटारी।** (२) **ऊपरी छत।** (३) **साढ़े तीन हाथ का मान।**

बामन—संज्ञा पुं. [सं. वामन] (१) **विष्णु का पाँचवाँ अवतार जो उन्होंने राजा बलि को छलने के लिए लिया था।** (२) **ब्राह्मण।**

वि.—**बौना, नाटा, छोटा।**

बामा—संज्ञा स्त्री. [सं. वामा] (१) **पत्नी।** (२) **नारी।**

बामी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बाँबी] **दीमकों के रहने का मिट्टी का भीटा, बँबीठा।** उ.—बामी ताकौं लियौ छिपाइ। तासौं रिषि नहिं देइ दिखाइ—९-३।

बाह्मन—संज्ञा पुं. [सं. ब्राह्मण] **ब्राह्मण।**

बायँ—वि. [सं. वाम] (१) **बायाँ।** (२) **चूका हुआ।**

मुहा०—बायँ देना—(१) **बचा जाना।** (२) **ध्यान न देना।** (३) **चक्कर देना।**

बाय—संज्ञा स्त्री. [सं. वायु] (१) **हवा, वायु।** (२) **वायु-विकार, बाई।**

संज्ञा स्त्री. [सं. वापी] **बावली, वापिका।**

बायक—संज्ञा पुं. [सं.] **कहने-बाँचनेवाला।**

बायन—संज्ञा पुं. [सं. वायन] **भेंट, उपहार।**

संज्ञा पुं. [अ. बयाना] **पेशगी, अगाऊ।**

मुहा०—बायन देना—**छेड़-कुछेड़ करना, छेड़ना।**

बायबिडंग—संज्ञा पुं. [सं. बिडंग] **एक औषध।**

बायब—संज्ञा पुं. [सं. वायव्य] **वायव्य (कोण)।**

बायबी—वि. [सं. वायवीय] (१) **अज्ञात।** (२) **नवागत।**

बायस—संज्ञा पुं. [सं. वायस] **काग, कौआ।**

बायाँ—वि. [सं. वाम] (१) **'दाहना' का उलटा।**

मुहा०—बायाँ देना—(१) **बचा जाना।** (२) **छोड़ना, त्यागना।** बायाँ पैर पूजना—**बचने के लिए हार मान लेना।**

(२) **जो सीधा न हो, उलटा।** (३) **प्रतिकूल, विरुद्ध।**

बायु—संज्ञा स्त्री. [सं. वायु] **पवन, हवा।**

बायें—क्रि. वि. [हिं. बायाँ] (१) **बायीं दिशा में।** (२) **विपरीत, विरुद्ध।**

मुहा०—बायें होना—(१) **रुष्ट होना।** (२) **विरुद्ध होना।**

बायौ—क्रि. स. [हिं. बाना] **बाया, फैलाया, विस्तृत किया।** उ.—ब्यास-नारि तबहीं मुख बायौ। तब तनु तजि मुख माहिं समायौ—१-२२६।

बारंबार, बारंबारी—क्रि. वि. [सं. वारंबार, हिं. बारंबार] **बार-बार, पुनः-पुनः।** उ.—सती सदा मम आज्ञा-कारी। कहति जो या बिधि बारंबारी। दीखति है कछु होवनहारी—४-५।

बार—संज्ञा स्त्री. [सं. वार] (१) **काल, समय।** (२) **विलंब, देर।** उ.—(क) घटै पल-पल, बढ़ै छिन-छिन, जात लागि न बार—१-८८। (ख) आवौ बेगि न लावौ बार-४-५। (ग) बान-बृष्टि सोनित करि सरिता, ब्याहत लगी न बार—९-१२४। (घ) भए भस्म कछु बार न लागी, ज्यौं ज्वाला पट-चीर—९-१५८। (३) **दफा, मरतबा।** उ.—अबकी बार मनुष्य-देह धरि कियौ न कछू उपाइ—१-१५५।

मुहा०—बार-बार—**फिर-फिर, पुनः-पुनः।**

संज्ञा पुं. [सं. वार] (१) **द्वार, दरवाजा।** उ.—बंदी-सूत अति करत कुतूहल बार—१०-२७।

यौ.—गृह बार—**घर-द्वार, वासस्थान, गृहस्थी।** उ.—मिथ्या तनु कौ मोह बिसार। जाहु रहौ भावैं गृह-बार—३-१३।

(२) **आश्रम, ठिकाना।** (३) **दरबार।**

संज्ञा पुं. [हिं. बाड़] (१) **चारो ओर का घेरा।** (२) **किनारा, छोर।** (३) **धार, बाढ़।**

संज्ञा पुं. [हिं. बाल] **केश, बाल।** उ.—(क) उर

बघनहाँ, कंठ कठुला, झंडूले बार—१०-१५१। (ख) बड़े बार सीमंत सीस के प्रेम सहित निरुवारति—७०४। (ग) सोहत घूँघरवारे बार—पृ. ३१५ (५०)।

मुहा०—बार खसना—**बाल बाँका होना, कष्ट मिलना, अनिष्ट होना**। जिनि बार खसै या बार खसो मत—**जरा भी कष्ट या अनिष्ट न हो**। उ.—(क) सूर असीस जाइ दैहौं जिनि न्हातहु बार खसै—२७०२। (ख) हम दिन देति असीस प्रात उठि बार खसो मत न्हातै—३०२४।

संज्ञा पुं. [फा.] **भार, बोझ**। उ.—जेहि जल तृन पशु बार बूड़ि अपने सँग बोरत। तेहि जल गाजत महाबीर सब तरत अंग नहिं डोलत।

संज्ञा पुं. [हिं. बाल] **बालक, वत्स**। उ.—मुख चूमति जसुमति कहि बार—४९७।

वि.—(१) **जो छोटा हो**। (२) **जिसका उदय हाल ही में हुआ हो**।

संज्ञा स्त्री. [सं. बाला] **युवती, बाला**।

बारक—क्रि. वि. [हिं. बार+एक] **एक बार**। उ.—(क) मृग-स्वरूप मारीच धरयौ तब, फेरि चल्यौ बारक जो दिखाई—९-५९। (ख) बारक जाइबो मिलि माधो—२७५८।

बारगह, बारगाह—संज्ञा स्त्री. [फा. बारगाह] (१) **डेवढ़ी**। (२) **तंबू**।

बारजा—संज्ञा पुं. [हिं. बार] **कोठा, अटारी, दालान**।

बारण—संज्ञा पुं. [सं. वारण] (१) **मनाही**। (२) **रुकावट**।

संज्ञा पुं. [सं. वारण:] **हाथी**।

बारता—संज्ञा स्त्री. [सं. वार्त्ता] (१) **वृत्तांत**। (२) **विषय, प्रसंग, मामला**। (३) **बातचीत**।

बारति—क्रि. स. [हिं. बालना] **जलाती-बलाती है**। उ.—नीराजन बहु बिधि बारति हैं ललितादि ब्रजनार।

बारन—संज्ञा पुं. [सं. वारण:] **हाथी**।

संज्ञा स्त्री. [हिं. वारना] **वारने की क्रिया या भाव**।

बारना—क्रि. अ. [सं. वारण] **रोकना, मना करना**।

क्रि. स. [हिं. बालना] **जलाना, बालना**।

बारनि—संज्ञा स्त्री. [हिं. पुं. बारी] **'बारी' जाति की स्त्री जो शुभ अवसरों पर बंदनबार आदि बाँधती है, मालिन**। उ.—अच्छत दूब लिये रिषि ठाढ़े, बारनि बंदनवार बँधाई—१०-१९।

बारबधू, बारबधूटी—संज्ञा स्त्री. [सं. वारवधू] **वेश्या**। उ.—कहुँ नर्तत सब बारबधू और कहुँ गँधरब गुन-गान—सारा० ६६८।

बारबारै—क्रि. वि. [हिं. बार] **पुनः पुनः, फिर फिर**। उ.—कबहुँ बैठत बारबारै—१८७२।

बारमुखी—संज्ञा स्त्री. [सं. बारमुख्या] **वेश्या**।

बारह—संज्ञा पुं. [सं. द्वादश, प्रा. वारस, अप० बारह] **दस और दो की संख्या**।

मुहा०—बारह बाट करना (घालना)—**तितर-बितर या छिन्न-भिन्न कर डालना**। बारह बाट जाना (होना)—**छिन्न-भिन्न या नष्ट-भ्रष्ट होना**।

बारहखड़ी, बारहखरी—संज्ञा स्त्री. [सं. द्वादश+अक्षरी] (१) **'अ' से 'अः' तक के स्वरों की मात्राओं से युक्त व्यंजन रूप**। (२) **प्रारंभिक अक्षर-ज्ञान**। उ.—सूर सकल षट दरसन वै हौं बारहखरी पढ़ाऊँ—३४६६।

बारहदरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बारह+फा० दर] **बैठक जिसमें बारह द्वार हों**।

बारहबान—संज्ञा पुं. [सं. द्वादशवर्ण] **एक तरह का सोना (स्वर्ण) जो बहुत बढ़िया होता है**।

बारहबाना—वि. [हिं. बारहबान] (१) **सूर्य के समान चमक-दमक वाला**। (२) **खरा, चोखा**।

बारहबानि, बारहबानी—वि. [हिं. बारहबान] (१) **सूर्य-सी कांति वाला**। (२) **खरा-चोखा**। उ.—सोहत लोह परसि पारस ज्यौं सुबरन बारहबानि। (३) **दोष या कलंक रहित**। (४) **पूर्ण, पक्का (व्यंग्य)**। उ.—हरि के चरित सबै उहि सीखे दोऊ हैं वे बारह-बानी—१२८४।

संज्ञा स्त्री.—**सूर्य की कांति या चमक**।

बारहबाने—वि. [हिं. बारहबाना] **खरे, चोखे**। उ.—सूरदास प्रभु हम हैं खोटी, तुम तौ बारहबाने हो—३००५।

बारहमासा—संज्ञा पुं. [हिं. बारह+मास] **वह गीत जिसमें बारह महीनों की दशा, स्थिति आदि का वर्णन हो**।

बारहमासी—वि. [हिं. बारह + मास] (१) **जो बारहों महीनों फूलता-फलता हो। (२) बारहों महीने चलता रहने या होनेवाला।** उ.—कुबिजा कमलनैन मिलि खेलत बारहमासी फाग—३०९५।

बारहवाँ—वि. [हिं. बारह] **गिनती में ११ के बादवाला।**

बारहसिंगा—संज्ञा पुं. [हिं. बारह + सींग] **एक पशु।**

बारहीं—संज्ञा स्त्री. [हिं. बारह] (१) **जन्म से बारहवाँ दिन।** (२) **मृत्यु से बारहवाँ दिन।**

बारहाँ—वि. [देश.] **वीर, बहादुर।**

बारहा—क्रि. वि. [फा.] **कई बार।**

बारहों—संज्ञा पुं. [हिं. बारह] (१) **जन्म से बारहवाँ दिन।** (२) **मृत्यु से बारहवाँ दिन।**

बारा—वि. [सं. बाल] **जो सयाना न हो, छोटा।**

संज्ञा पुं.—**बालक, लड़का।**

संज्ञा स्त्री. [सं. बार] (१) **काल, समय।** (२) **देर, विलंब।** उ.—अबहीं और की और होत कछु लागै बारा। (३) **बार, दफा, मरतबा।** उ.—यहि ब्रज जन्म लियौ कै बारा—१०७०।

बारात—संज्ञा स्त्री. [सं. वरयात्रा, प्रा. बरयत्ता] (१) **वरयात्रा।** (२) **सजे-धजे समाज की बाजे-गाजे के साथ यात्रा।**

बारादरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बारहदरी] **बैठक जिसमें बारह दर या खंभे हों।**

बारानसि, बारानसी—संज्ञा स्त्री. [सं. वाराणसी] **काशी का प्राचीन नाम जो वरुणा और असी नदियों के कारण अथवा 'पवित्र जल वाली' (वर + अनस् = जल) होने के कारण पड़ा था। 'उत्तम रथों वाली' होना भी इस नाम के पड़ने का कारण माना जाता है। 'बनारस' के स्थान पर 'काशी' का उक्त प्राचीन नाम पुनः प्रचलित हो गया है।** उ.—बन बारानसि मुक्ति-छेत्र है, चलि तोकौं दिखराऊँ—१-३४०।

बाराह—संज्ञा पुं. [सं. वाराह] (१) **सुअर (पशु)।** (२) **विष्णु का तीसरा अवतार।** उ.—मच्छ, कच्छ, बाराह बहुरि नरसिंह रूप धरि—२-३६।

बारि—संज्ञा पुं. [सं. वारि] **जल, पानी।**

संज्ञा स्त्री. [हिं. बारी] **अवसर, पारी, बारी।** उ.—दीनानाथ अब बारि तुम्हारी—१-११८।

संज्ञा स्त्री. [सं. प्रखर] (१) **बाग।** उ.—हरि भजन की बारि कर लै उबरै तेरौ खेत—१-३११। (२) **किनारा, तट।** (३) **पैनी चीज की धार।**

संज्ञा स्त्री. [सं. वारी] (१) **बाग।** (२) **क्यारी।**

बारिगर—संज्ञा पुं. [हिं. बारी + गर] **सान चढ़ानेवाला।**

बारिज—संज्ञा पुं. [सं. वारिज] **कमल।** उ.—मनु सीपज घर कियौ बारिज पर—१०-९३।

बारिद—संज्ञा पुं. [सं. वारिद] **मेघ, बादल।**

बारिधर—संज्ञा पुं. [सं. वारिधर] **बादल, मेघ।** उ.—(क) बरषि छबि नव बारिधर तन, हरहु लोचन प्यास—१०-२१८। (ख) हृदय हरिनख अति बिराजत, छबि न बरनी जाइ। मनौ बालक बारिधर नव चंद दियौ दिखाइ—१०-२३४।

बारिधि—संज्ञा पुं. [सं. वारिधि] **समुद्र।**

बारिश—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] (१) **वर्षा।** (२) **वर्षाऋतु।**

बारिबाह—संज्ञा पुं. [सं. वारि + वाह] **बादल।**

बारी—संज्ञा स्त्री. [सं. वाटी, हिं. बाटिका = बगीचा, घेरा, घर] (१) **वह स्थान जहाँ पेड़ लगाये गये हों, बगीचा।** उ.—जगत-जननी करी बारी, मृगा चरि चरि जाइ—९-६०। (२) **क्यारी।** (३) **घर।** (४) **खिड़की।**

संज्ञा स्त्री. [सं. अवार] (१) **तट, किनारा, छोर।** (२) **घेरा, बाड़ा।** (३) **पैनी चीज की धार।**

संज्ञा पुं.—**एक जाति जो दोने-पत्तल बनाती है।**

संज्ञा स्त्री. [हिं. बार] **अवसर, पारी।**

मुहा०—बारी बँधना—**क्रम निश्चित होना।** बारी बाँधना—**क्रम निश्चित करना।** बारी-बारी से—**क्रमशः।**

संज्ञा स्त्री. [हिं. बारा = छोटा] (१) **लड़की जो सयानी न हो।** उ.—अबै तनक तू भई सयानी, हम आगे की बारी—१२४४। (२) **बेटी, पुत्री।** उ.—कुँवर-कर गह्यौ बृषभानु-बारी—६८४। (३) **नवयौवना।**

वि. स्त्री.—**थोड़ी अवस्था की, छोटी।**

संज्ञा स्त्री. [हिं. बाली] **कान की बाली।**

संज्ञा स्त्री. [हिं. बाल] **जौ-गेहूँ आदि की बाली।**

संज्ञा पुं. [सं. वारि] जल, पानी।

बारीक—वि. [फ़ा.] (१) महीन, पतला। (२) छोटा, सूक्ष्म। (३) महीन कणवाला। (४) जिसमें बहुत सूक्ष्मता हो। (५) जिसमें बहुत गूढ़ता हो।

बारीकी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बारीक] (१) महीन या सूक्ष्म होने का भाव। (२) सूक्ष्म गुण या विशेषता।

बारीस—संज्ञा पुं. [सं. वारीश] समुद्र।

बारुणी, बारुनी—संज्ञा स्त्री, [सं. वारुणी] मदिरा। उ.—प्रेम पिये वर बारुनी बलकत बल न सँभार—११८२।

बारू—संज्ञा पुं. [हिं. बालू] रेत, बालू।

बारूत, बारूद—संज्ञा स्त्री. [तु. बारूत] एक तरह का चूर्ण जिसकी गोली बंदूक से चलती है और जिसकी आतिशबाजी आदि बनती है।

बारे—संज्ञा पुं. [सं. बाल] (१) पुत्र, बेटा। उ.—(क) परम प्रान-जीवन-धन मेरे तुम बारे—१०-२०५। (ख) नंद जू के बारे कान्ह छाँड़ि दै मथनियाँ—१०-१४५। (२) बचपन। उ.—बारे तैं सुत ये ढँग लाए, मनहीं मनहिं सिहात—१०-३२८।

वि.—अबोध, अज्ञान। उ.—बारौ ऐसी रिस जो करति सिसु बारे पर—३६२।

क्रि. वि. [फ़ा.] अंत को।

बारेक—संज्ञा पुं. [हिं. बार+एक] एक बार। उ.—बारेक हमैं दिखावौ अपने बालापन की जोरी—१० उ.-११५।

बारे में—अव्य. [फ़ा. बार:+हिं. में] विषय में।

बारो, बारौ—संज्ञा पुं. [सं. बाल] बालक, बच्चा। उ.—भक्त परीच्छित हरि कौ प्यारौ। गर्भ-मँझार हुतौ जब बारौ—१-२९०।

क्रि. स. [हिं. बालना] जलाओ, प्रज्वलित करो।

वि. छोटा, अबोध। उ.—(क) सखियनि संगन गवाइ, बहु बिधि बाजे बजाइ, पौढ़ायौ महल जाइ, बारौ रे कन्हैया—१०-४१। (ख) बालक दामिनि मानौ ओढ़े बारौ बारिधर—१०-१५१।

बाल—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बालक, लड़का। (२) पशु का बच्चा। (३) अबोध व्यक्ति।

संज्ञा स्त्री. [हिं. बाला] (१) युवती। (२) नारी।

वि.—(१) जो छोटा हो। (२) जो हाल ही में उगा या उदित हुआ हो।

संज्ञा पुं. [सं.] लोम, केश।

मुहा०—बाल बाँका न होना (न बाँकना)—कष्ट या हानि न होना। न्हात बाल न खसना (खिसना)—कष्ट या हानि न पहुँचना। बाल पकना—बूढ़ा या अनुभवी होना। (किसी काम में) बाल पकाना—काम करते-करते बूढ़ा या अनुभवी हो जाना। बाल बराबर—बहुत महीन। बाल बराबर न समझना—बहुत ही तुच्छ समझना। बाल-बाल बचना—कष्ट या विपत्ति आने में जरा सी ही कसर रह जाना।

संज्ञा स्त्री.—गेहूँ-जौ की बाली।

बालक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) पुत्र। (२) शिशु। (३) अबोध व्यक्ति। (४) (किसी) पशु का बच्चा।

बालकताइ, बालकताई—संज्ञा स्त्री. [सं. बालकता] (१) बाल्यावस्था। (२) नासमझी, लड़कपन।

बालकपन—संज्ञा पुं. [हिं. बालक+पन] (१) बालक होने का भाव। (२) नासमझी, लड़कपन।

बालकाल—संज्ञा पुं. [सं.] बाल्यावस्था, बचपन।

बालकृमि—संज्ञा पुं. [सं.] जूँ।

बालकृष्ण—संज्ञा पुं. [सं.] बाल्यावस्था के कृष्ण।

बालकेलि, बालक्रीड़ा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) बच्चों का खेल (२) बहुत सरल और साधारण काम।

बालखिल्य—संज्ञा पुं. [सं.] ब्रह्मा के रोएँ से उत्पन्न साठ हजार ऋषि जिनमें प्रत्येक एक अँगूठे के बराबर था।

बालगुपाल, बालगोपाल—संज्ञा पुं. [सं. बालगोपाल] (१) बाल्यावस्था के कृष्ण। (२) बाल-बच्चे।

बालगुबिंद, बालगुबिंदा, बालगोबिंद बालगोबिंदा—संज्ञा पुं. [सं. बालगोबिंद] कृष्ण का बालक-स्वरूप, बाल कृष्ण। उ.—खेलन चलौ बालगोबिंद—१०-२१८।

बालग्रह—संज्ञा पुं. [सं.] बालकों के प्राणघाती नौ ग्रह।

बालधि, बालधी—संज्ञा स्त्री. [सं. बालधि] पूँछ, दुम।

बालना—क्रि. स. [सं. ज्वलन] (१) जलाना, सुलगाना। (२) प्रज्वलित करना।

बालपन, बालपना, बालपनो, बालपनौ—संज्ञा पुं. [सं. बाल+हिं. पन] (१) बालक या अबोध होने का

भाव। (२) **बचपन, लड़कपन**। उ.—बालपनौ गए ज्वानी आवै—७-२।

बालब्रह्मचारी—संज्ञा पुं. [सं.] **बाल्यावस्था से ही ब्रह्मचर्य का पालन करनेवाला**।

बालभोग—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **प्रातःकाल का भोग**। (२) **जलपान, कलेवा**।

बालम—संज्ञा पुं. [सं. वल्लभ] (१) **पति**। (२) **प्रेमी**।

बालमुकुंद—संज्ञा पुं. [सं.] **बाल्यावस्था के श्रीकृष्ण, बालकृष्ण, घुटनों के बल चलती श्रीकृष्ण की मूर्ति**। उ.—सुभग बालमुकुंद की छबि बरनि कापै जाइ—१०-२२५।

बाललीला—संज्ञा स्त्री. [सं.] **बालकों की क्रीड़ा**।

बालसँघाती—संज्ञा पुं. [हिं. बाल्य+साथी] **बचपन का साथी**। उ.—सुनहु सूर ए बालसँघाती प्रेम बिसारि मिले हरि स्याम—१०६१।

बाला—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) **सोलह-सत्रह वर्ष की युवती**। उ.—आदि ब्रह्म-जननी सुर-देवी, नाम देवकी बाला। दई बिवाहि कंस बसुदेवहिं, दुख-भंजन, सुख-माला—१०-४। (२) **पत्नी, भार्या**। (३) **स्त्री, नारी**। (४) **पुत्री**।

वि. [फा.] **ऊँचा, ऊपर उठा आ**।

मुहा०—बाला-बाला—**अलग-अलग, चुपचाप**। बोल बाला होना—**आदर-सत्कार होना**।

वि. [हिं. बाल] **बहुत सीधा-सादा**।

बालापन, बालापनौ—संज्ञा पुं. [सं. बाल+हिं. पन] **लड़कपन, बचपन**। उ.—बालापन खेलत ही खोयौ, जुवा बिषय-रस मात—१-११८।

बालि—संज्ञा पुं. [सं.] **सुग्रीव का बड़ा भाई जो किष्किंधा का राजा था**।

संज्ञा स्त्री. [हिं. बाली] **गेहुँ-जौ आदि की 'बाली'**। उ.—बालि छाँड़ि कै सूर हमारे अब नरवाई को लुनै—३१५८।

बालिका—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) **कन्या**। (२) **पुत्री**।

बालिकुमार—संज्ञा पुं. [सं.] **बालि-पुत्र अंगद**।

बालिग—संज्ञा पुं. [अ.] **वयस्क**।

बालिश—वि. [सं.] **अबोध, अज्ञान**।

बाली—संज्ञा स्त्री. [सं. बालिका] **कान का एक गहना**।

संज्ञा स्त्री. [हिं. बाल] **जौ-गेहूँ आदि की बाल**।

संज्ञा पुं. [सं. बालि] **बानरराज बालि**।

बालुका—संज्ञा पुं. [सं.] **रेत, बालू**।

बालू—संज्ञा स्त्री. [सं. बालुका] **रेत, रेणुका**।

मुहा०—बालू की दीवार (भीत)—**ऐसी चीज जो शीघ्र ही ढह जाय**।

बालूसाही—संज्ञा स्त्री. [हिं. बालू+साही=अनुरूप] **एक मिठाई**।

बाल्य—वि. [सं.] (१) **बालक का**। (२) **बचपन का**।

बाल्यावस्था—संज्ञा स्त्री. [सं.] **लड़कपन**।

बाव—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **वायु**। (२) **बाई**।

बावड़ी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बावली] **बावली**।

बावन—संज्ञा पुं. [सं. वामन] (१) **विष्णु**। (२) **विष्णु का पाँचवाँ अवतार जो राजा बलि को छलने के लिए अदिति के गर्भ से हुआ था**। (३) **विष्णु के अवतार श्रीकृष्ण**। उ.—जसुमति धनि यह कोखि, जहाँ रहे बामन रे—१०-२८।

संज्ञा पुं. [सं. द्विपंचाशत, या द्विपण्णासा, प्रा. बिवण्णा] **पचास और दो की संख्या**।

मुहा०—बावन तोले पाव रत्ती—**सभी तरह से ठीक**। बावन वीर—**बड़ा वीर**।

बावना—वि. [हिं. बौना] **बौना, ठिगना**।

बावभक—संज्ञा स्त्री. [हिं. बाव+अनु. भक] **पागलपन**।

बावर, बावरा—वि. [हिं. बावला] (१) **पागल, सनकी**। (२) **मूर्ख, बुद्धिहीन**।

बावरि, बावरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बावली] (१) **बड़े चौड़े मुँह का कुआँ जिसमें सीढ़ियाँ बनी हों**। (२) **छोटा तालाब, जिसमें सीढ़ियाँ बनी हों**।

वि. [हिं. पुं. बावला] (१) **पगली, विक्षिप्त, सनकी**। उ.—(क) टेरि-टेरि मैं भई बावरी, दोउ भैया तुम रहे लुकाई—४६२। (ख) स्याम बिनु कछू न भावै रटत फिरत जैसे बकत बावरी—३४३२। (२) **मूर्ख, बुद्धिहीन**। उ.—कहा डर करौं इहिं फनिग कौ बावरी—५५१। (३) **मतवाली, उन्मत्त**। उ.—एक तौ लालन लाड़नि लड़ाइ दूजो यौवन बावरी—२७४९।

बावरे—वि. [हिं. बावरा] (१) **पागल** । (२) **मूर्ख** । उ.—बारन हीं करौ बारन सहित फटकिहौं बावरे बात कहि मुख सँभारौ—२५९० ।

बावला—वि. [सं. वातुल, प्रा० बाउल] **पागल, मूर्ख** ।

बावली—संज्ञा स्त्री. [सं. वाय+ली] **छोटा तालाब** ।

वि. स्त्री. [हिं. बावला] **पगली, मूर्ख** ।

बावाँ—वि. [सं. वाम] (१) **बायीं दिशा का** । (२) **विरुद्ध** ।

बाष्प—संज्ञा पुं. [सं. वाष्प] (१) **भाप** । (२) **आँसू** ।

बासंतिक—वि. [सं.] (१) **बसंत का, बसंत-संबंधी** । (२) **बसंत ऋतु में होनेवाला** ।

बासंती—वि. स्त्री. [हिं. बसंत] (१) **बसंत-संबंधी** । (२) **बसंत ऋतु में होनेवाली** ।

बास—संज्ञा पुं. [सं. वास] (१) **रहने-बसने की क्रिया या भाव** । (२) **रहने का स्थान** । (३) **गंध, महक** । उ.—(क) ज्यौं मृगा कस्तूरि भूलै, सु तौ ताकैं पास । भ्रमत हीं वह दौरि ढूँढ़ै, जबहिं पावै बास—१-७० । (ख) जोजन-गंधा काया करी । मच्छ-बास ताकी सब हरी—१-२२९ । (ग) पदुम-बास सुगंध सीतल लेत पाप नसाहिं—१-३३८ । (४) **वस्त्र** ।

संज्ञा स्त्री. [सं. वासना] **इच्छा, कामना** ।

संज्ञा स्त्री. [सं. वाशि:] (१) **आग, अग्नि** । (२) **एक अस्त्र** । (३) **छुरी, चाकू** ।

बासकसज्जा—संज्ञा स्त्री. [सं. वासकसज्जा] **वह नायिका जो शृंगार करके शैया सजाकर नायक की प्रतीक्षा करती हो** ।

बासन—संज्ञा पुं. [सं.] **बरतन, पात्र** । उ.—जल-बासन कर लै जु उठावति, याही मैं तू (=चंद्र) तन धरि आवै—१०-१९१ ।

बासना—संज्ञा स्त्री. [सं. वासना] (१) **इच्छा** । (२) **महक** ।

क्रि. स. [सं. वास] **सुगंधित करना** ।

बासमती—संज्ञा पुं. [हिं. बास+मती] (२) **एक बढ़िया चावल** ।

बासर—संज्ञा पुं. [सं. वासर] **दिन** । उ.—(क) रजनीगत बासर मृगतृष्ना रस हरि कौ न चयौ—१-७८ । (ख) बासर संग सखा सब लीन्हें टेरि न धेनु चरैहौं—२६५० । (२) **प्रातःकाल** । (३) **प्रातःकाल गाया जानेवाला राग** ।

बासव—संज्ञा पुं. [सं.] **इंद्र** ।

बासवी दिशा—संज्ञा पुं. [सं.] **पूर्व दिशा** ।

बाससी—संज्ञा पुं. [सं.] **कपड़ा, वस्त्र** ।

बासा—संज्ञा पुं. [सं. वास, हिं. बास] (१) **रहने की क्रिया या भाव, निवास** । उ.—(क) देवहूति कह, भक्ति सो कहियै । जातैं हरि-पुर बासा लहियै—३-१३ । (ख) करहु मोहिं ब्रज रेनु देहु बृंदाबन बासा—४९२ । (२) **स्थिति, उपस्थिति, विद्यमानता** । उ.—सर्ब तीर्थ कौ बासा तहाँ, सूर हरि-कथा होवै जहाँ—१-२२४ ।

बासित—वि. [सं. वासित] **सुगंधित किया हुआ** ।

बासी—वि. [हिं. बासर या बास] (१) **बहुत देर का पकाया हुआ** । (२) **बहुत समय का रखा हुआ** । (३) **बहुत पहले का तोड़ा हुआ** । (४) **जो हरा-भरा न हो** ।

मुहा०—बासी कढ़ी में ज्यादा उबाल आता है—**वृद्धावस्था में अधिक काम-वासना होती है (व्यंग्य)** । बासी मुँह—**प्रातःकाल बिना कुछ खाये-पिये** ।

वि. [सं. वासिन्] **रहने-बसनेवाला** ।

बासु—संज्ञा पुं. [हिं. बास] (१) **निवास** । (२) **निवास-स्थान** ।

बासुकि, बासुकी—संज्ञा पुं. [सं. वासुकि] **आठ नाग राजाओं में से दूसरा जिसको 'नेति' बनाकर समुद्र-मंथन किया गया था** । उ.—कह्यौ भगवान, अब बासुकी ल्याइयै''''नेति करि अचल कौं सिंधु नायौ—८-८ ।

बासुदेव—संज्ञा पुं. [सं. वासुदेव] **वासुदेव के पुत्र श्रीकृष्ण** ।

बासू—संज्ञा पुं. [सं. वासुकि] **वासुकि नाग** ।

संज्ञा पुं. [हिं. बास] (१) **निबास** (२) । **निवास स्थान** ।

बासौंधी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बास+औंधी] **सुगंधित और लच्छेदार रबड़ी** । उ.—बासौंधी सिखरनि अति सोंधी—२३२१ ।

बाहँ—संज्ञा स्त्री. [सं. बाहु] **हाथ, बाहु, भुजा** ।

मुहा०—बाहँ लै—**सहारा देकर, हाथ पकड़कर, आश्रय में लेकर** । उ.—(क) बचन बाँह लै चलौ गाँठि दै, पाऊँ सुख अति भारी—१-१४६ । (ख) नूपुर-

कलरव मनु हंसनि-सुत रचे नीड़ दै बाँह बसाये—१० १०४।

बाहक—संज्ञा पुं. [हिं. वाहक] **यान या सवारी हाँकने वाला, सारथी।** उ.—कह पांडव कैं घर ठकुराई, अर्जुन के रथ-बाहक—१-१९।

बाहकी—संज्ञा स्त्री. [सं. वाहक+ई] **पालकी ढोनेवाली।**

बाहन—संज्ञा पुं. [सं. वाहन] (१) **सवारी।** (२) **वह जिस पर कोई चीज चढ़ायी जाय।**

बाहना—क्रि. स. [सं. वहन] (१) **ढोना, लादना, चढ़ाना।** (२) **(शस्त्र) चलाना।** (३) **(वाहन) हाँकना।** (४) **पकड़ना।** (५) **बहाना, प्रवाहित करना।** (६) **हल चलाना।**

बाहनी—संज्ञा स्त्री. [सं. वाहिनी] **सेना।**

बाहर—क्रि. वि. [सं. बाह्य] (१) **'भीतर' या 'अंदर' का उलटा।** उ.—तू जिहिं हित नहिं बाहर आवै। सो हमसों कहि क्यों न सुनावै—१-२२६। (ख) नाहिंन मीन जियत जल बाहर जो घृत मैं सजियो—३१४७। **मुहा०**—बाहर-बाहर—**बिना किसी को सूचित किये।** (२) **अन्य स्थान पर।** (३) **प्रभाव, संबंध आदिसे परे।**

बाहरजामी—संज्ञा पुं. [सं. बाह्ययामी] **ब्रह्म का सगुणरूप, ब्रह्म के अवतार।**

बाहरी—वि. [हिं. बाहर] (१) **जो घर का न हो, पराया।** (२) **अपरिचित।** (३) **केवल बाहर का, ऊपरी।**

बाहाँजोरी—क्रि. वि. [हिं. बाँह+जोड़ना] **हाथ में हाथ डाल कर।** उ.—(क) बाहाँजोरी निकसे कुंज तैं। (ख) राजत हैं दोउ बाहाँजोरी दंपति अरु ब्रज बाल।

बाहिज—संज्ञा पुं. [सं. बाह्य] **ऊपर से, देखने में।**

बाहिनी—संज्ञा स्त्री. [सं. वाहिनी] (१) **सेना।** (२) **सवारी, यान।** (३) **नदी।**

बाहिर—क्रि. वि. [हिं. बाहर] (१) **'भीतर' या 'अंदर' का उलटा।** (२) **घर से दूर, अन्य किसी जगह पर।** उ.—जाति-पाँति सबकी हौं जानौं, बाहिर छाक मँगाई। ग्वालनि कैं सँग भोजन कीन्हौं, कुल कौं लाज लगाई—१-२४४। (३) **ऊपर से देखने में।** उ.—तुम जो कहति हौ मेरो कन्हैया, गंगा कैसो पानी। बाहिर तरुन किसोर बयस बर, बाट घाट कौ दानी—१०-३११।

बाहिरी—वि. [हिं. बाहर] **व्यक्त, अपरिचित जैसी।** उ.—सुजन-बंधु ते भई बाहिरी अब कैसे वै करत बड़ाई—पृ. ३४२ (१०)।

बाहिरैं—क्रि. वि. [हिं. बाहर] **बाहर की ओर।** उ.—छरीदार बैराग बिनोदी, झिरकि बाहिरैं कीन्हें—१-४०।

बाहीं—संज्ञा स्त्री. [हिं. बाँह] **हाथ, बाँह, भुजा।**

मुहा०—कहत पसारे बाहीं—**हाथ उठाकर, दृढ़ता पूर्वक, पूर्ण विश्वास और निश्चय के साथ।** उ.—अजहूँ चेति, कह्यौ करि मेरौ, कहत पसारे बाहीं। सूरदास सरबरि को करिहै, प्रभु-पारथ द्वै नाहीं—१-२६९।

बाहु—संज्ञा स्त्री. [सं.] **भुजा, हाथ।**

बाहुज—वि. [सं.] **जो बाहु से उत्पन्न हो।**

बाहुबल—संज्ञा पुं. [सं.] **पराक्रम, वीरता।** उ.—भए भस्म कछु बार न लागी, ज्यौं ज्वाला पट चीर। सूरदास प्रभु आपु बाहुबल कियौ निमिष मैं कीर—९-१५८।

बाहुमूल—संज्ञा पुं. [सं.] **कंधे और बाँह का जोड़।**

बाहुयुद्ध—संज्ञा पुं. [सं.] **कुश्ती।**

बाहुल्य—संज्ञा पुं. [सं.] **अधिकता।**

बाहेर—क्रि. वि. [हिं. बाहर] (१) **'अंदर' या 'भीतर' का उलटा।** उ.—बाहेर जिनि कबहूँ खैये सुत, डीठि लगैगी काहू—१००४। (२) **पद संबंध आदि से च्युत।**

बाह्मन—संज्ञा पुं. [सं.] **ब्राह्मण।**

बाह्य—वि. [सं.] **बाहर का, बाहरी।**

बाह्याचरण—संज्ञा पुं. [सं.] **दिखावा, आडंबर।**

बिंग—संज्ञा पुं. [सं. व्यंग्य] (१) **व्यंग्य।** उ.—करत बिंग ते बिंग दूसरी जुक्त अलंकृत माहीं। (२) **ताना।**

बिंजन—संज्ञा पुं. [सं. व्यंजन] **भोजन के पदार्थ।**

बिंद—संज्ञा पुं. [सं. बिंदु] (१) **पानी की बूँद।** (२) **भँवों के बीच का स्थान।** (३) **वीर्य की बूँद।** (४) **बिंदी।** उ.—(क) चिबुक मध्य मेचक रुचि राजत बिंद कुंद रदनी—पृ. ३१६ (५४)। (ख) कंठश्री दुलरी बिराजति चिबुक स्यामल बिंद—पृ. ३४४ (२९)। (५) **माथे का गोल तिलक।**

बिंदा—संज्ञा पुं. [सं. विंदु] (१) **गोल चिन्ह या बिंदु ।** (२) **गोल बड़ा टीका, बड़ी बिंदी ।** उ.—(क) मृगमद-बिंदा तामैं राजै । निरखत ताहि काम सत लाजै—३-१३ । (ख) मसि-बिंदा दियौ भ्रू पर—१०-९२ ।

संज्ञा स्त्री. [सं. वृन्दा] **राधा की सखी एक गोपी का नाम ।** उ.—इंदा बिंदा राधिका स्यामा कामा नारि—११०२ ।

बिंदी—संज्ञा स्त्री. [सं. विंदु] (१) **शून्य, सिफर ।** (२) **छोटा गोल टीका ।** (३) **माथे पर लगाने का गोल छोटा टीका ।**

बिंदु—संज्ञा स्त्री. [हिं. बूँद] **बूँद ।** उ.—स्याम हृदय अति बिसाल माखन-दधि बिंदु-जाल—१०-२७५ ।

संज्ञा पुं. [सं. विंदु] **गोल टीका, बिंदा ।** उ.—भाल तिलक मसि बिंदु बिराजत, सोभित सीस लाल चौतनियाँ—१०-१०६ ।

बिंदुलि, बिंदुली—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिंदी] **बिंदी ।**

बिंदुका—संज्ञा पुं. [सं. विंदु] (१) **बड़ी बिंदी, बिंदा, गोल टीका ।** उ.—(क) कठुला कंठ बज्र केहरि-नख, मसि बिंदुका सु मृग-मद भाल—१०-८४ । (ख) लट कनि मोहन मिस-बिंदुका तिलक भाल सुखकारी । (ग) गोरोचन कौ तिलक निकटहीं काजर बिंदुका लाग्यौ री—१०-१३९ ।

बिंदुरी, बिंदुली—संज्ञा स्त्री. [सं. विंदु] (१) **बिंदी ।** (२) **माथे का छोटा गोल टीका ।** उ.—बंदन बिंदुली भाल की भुज आप बनाए—३१३९ ।

बिंद्राबन—संज्ञा पुं. [सं. वृंदावन] **मथुरा का निकटवर्ती एक उपनगर जो श्रीकृष्णचन्द्र का क्रीड़ास्थल होने के कारण उनके भक्तों के लिए एक तीर्थ है ।**

बिंध, बिंध्य—संज्ञा पुं. [सं. विंध्याचल] **विंध्य पर्वत ।**

बिंधना—क्रि. अ. [सं. वेधन] (१) **बींधा या छेदा जाना ।** (२) **फँसना, उलझना ।**

बिंधिया—संज्ञा पुं. [हिं. बींधना] **मोती छेदनेवाला ।**

बिंब, बिंबा—संज्ञा पुं. [सं. बिंब] (१) **प्रतिबिंब, छाया ।** उ.—(कान्ह) मनिमय कनक नंद कैं आँगन बिंब पकरिबैं धावत—१०-११० । (२) **प्रतिमूर्ति ।** (३) **कुँदरू नामक लाल फल ।** उ.—(क) गति मराल अरु बिंब अधर-छबि, अहि अनूप कबरी—९-६३ । (ख) मनौ सुक फल बिंब कारन, लेन बैठ्यौ आइ—१०-२३४ । (४) **चंद्र या सूर्य-मंडल ।** (५) **झलक, आभास ।**

संज्ञा पुं. [हिं. बाँबी] **बाँबी ।**

बिंबित—वि. [सं.] **जिसकी छाया पड़ती हो ।**

बि—वि. [सं. द्वि] **दो ।**

बिआज—संज्ञा पुं. [हिं. ब्याज] **ब्याज ।**

बिआधि—संज्ञा स्त्री. [सं. व्याधि] **रोग, व्याधि ।**

बिआधु—संज्ञा पुं. [सं. व्याध] **बहेलिया, व्याध ।**

बिआना—क्रि. स. [हिं. ब्याना] **बच्चा जनना ।**

बिआस—संज्ञा पुं. [सं. व्यास] (१) **कथा कहनेवाला ।** (२) **व्यास देव ।**

बिआहना—क्रि. स. [हिं. ब्याहना] **विवाह करना ।**

बिओग—संज्ञा पुं. [सं. वियोग] **बिछोह, वियोग ।**

बिओगी—वि. [सं. वियोगी] **जिसके प्रियजन का वियोग हुआ हो, वियोगी ।**

बिकट—वि. [सं. विकट] (१) **बिकराल, भयंकर, डरावना ।** उ.—बिकट रूप अवतार धरचौ जब सो प्रहलाद बचाऊ—१०-२२१ । (२) **बक्र, टेढ़ा ।** उ.—भृकुटी बिकट निकट नैनन के राजत अति बर नारि । (३) **कठिन, मुश्किल ।** उ.—नित-प्रति सबै उरहने के मिस आवत हैं उठि प्रात । अनसमुझे अपराध लगावति बिकट बनावति बात—१०-३२६ ।

बिकना—क्रि. अ. [सं. विक्रय] **बेचा जाना, बिक्री होना ।**

मुहा०—किसी के हाथ बिकना—(१) **दास होना ।** (२) **आसक्त होना ।**

बिकरम—संज्ञा पुं. [सं. विक्रम] (१) **पराक्रम ।** (२) **विक्रमादित्य ।**

बिकरार—वि. [सं. विकराल] (१) **भयानक, डरावना ।** उ.—चले सब मिलि जाइ देख्यौ अगम तन बिकरार-४२७ । (२) **घोर, घमासान ।** उ.—कियौ जुद्ध अतिहीं बिकरार—१-२७६ ।

वि. [फा. बेकरार] **व्याकुल, बेचैन, विकल ।** उ.—गोसुत-गाइ फिरत बिकरार—१०५५ ।

बिकराल—वि. [सं. विकराल] **भयानक ।**

बिकल—वि. [सं. विकल] **व्याकुल, घबराया हुआ,**

बेचैन। उ.—(क) बारह बरष नींद है साधी, तातैं बिकल सरीर—९-१४५। (ख) मीड़त हाथ सकल गोकुलजन बिरह बिकल बेहाल—२५३६।

बिकलाई—संज्ञा स्त्री. [सं. बिकल+आई] **बेचैनी।**

बिकलाना—क्रि. अ. [सं. विकल] **घबराना।**

क्रि. स.—**व्याकुल या बेचैन करना।**

बिकलानी—क्रि. स. [हिं. बिकलाना] **व्याकुल हुई।** उ.—(क) यह सुनि तरुनी बिकलानी ११६१। (ख) निठुर बचन सुनि स्याम के जुवती बिकलानी—पृ. ३४१ (४)। (ग) धरनी परे अचेत नहीं सुधि सखी देखि बिकलानी—२२०८।

बिकलाने—क्रि. अ. [हिं. बिकलाने] **व्याकुल होकर।** उ.—फिरि सब चले अतिहिं बिकलाने—१०६०।

बिकली—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिकल] **व्याकुलता।**

बिकवाना—क्रि. स. [हिं. बिकना] **बेचने को प्रवृत्त करना।**

बिकवाल—संज्ञा पुं. [हिं. बेचना] **बेचनेवाला।**

बिकसना—क्रि. स. [सं. विकसन] (१) **फूलना, खिलना।** (२) **प्रसन्न या हर्षित होना।**

बिकसाना—क्रि. अ. [हिं. बिकसना] (१) **खिलना, फूलना।** (२) **प्रसन्न या प्रफुल्लित होना।**

क्रि. स.—(१) **खिलाना** (२) **प्रसन्न करना।**

बिकसाने—क्रि. अ. [हिं. बिकसना] **विकसित हुए, खिल गये, फूले।** उ.—रबि-छबि कैधौं निहारि, पंकज बिकसाने—६४२।

बिकसावै—क्रि. अ. [हिं. बिकसाना] **खिला दे, प्रस्फुटित कर दे।** उ.—पाहन-बीच कमल बिकसावै, जल मैं अगिनि जरै—१-१०५।

बिकसाहिं, बिकसाहीं—क्रि. अ. [हिं. बिकसना] **खिलते हैं, विकसित होते हैं, फूलते हैं।** उ.—(क) चलि सखि, तिहिं सरोवर जाहिं। जिहिं सरोवर कमल कमला, रवि बिना बिकसाहिं—१-३३८। (ख) पाहन बीच कमल बिकसाहीं जल मैं अगिनि जरै।

क्रि. स.—(१) **खिलाते हैं।** (२) **प्रसन्न करते हैं।**

बिकाउँ, बिकाऊँ—क्रि. अ. [हिं. बिकना] **बिक जाऊँ, बिक्री हो जाय।** उ.—कलुषी अरु मन मलिन बहुत मैं सेंत-मेंत न बिकाउँ—१-१२८।

बिकाऊ—वि. [हिं. बिकना+आऊ] **जो बिकने को हो।**

बिकात—क्रि. अ. [हिं. बिकना] **बिकता है।** उ.—(क) सूरदास स्वामी के बिछुरे कौड़ी भरि न बिकात—२५४१। (ख) सुजस बिकात बचन के बदले क्यों न बिसाहत आजु—२८५१।

मुहा०—चित्त बिकात—**चित्त वशीभूत हो जाता है।** उ.—इक सायक इक चाप चपल अति चिबुक मैं चित्त बिकात—१६८२।

बिकाना—क्रि. अ. [हिं. बिकना] **बेचा जाना।**

बिकानीं—क्रि. अ. [हिं. बिकना] (१) **बिक गयीं।** (२) **अति मुग्ध हो गयीं, वशीभूत हो गयीं।** उ.—(क) स्याम अंग जुवती निरखि भुलानीं। कोउ निरखति कुंडल की आभा, इतनेहिं माँझ बिकानी—६४४। (ख) उन सो तन मैं उन तन चितयो तब ही ते उन हाथ बिकानी—८५०। (ग) बिबस भइ तनु न सँभारै री गोरस सुधि बिसरि गई आपु बिकानी बिनु मोलैं—११८४। (घ) बिकानी हरि-दुख की मुसकानी—११९७।

बिकाने—क्रि. अ. [हिं. बिकना] **बिके, बिक गये।** उ.—जो राजा-सुत होइ भिखारी, लाज परे ते जाइ बिकाने—१-२१७।

मुहा०—जसुमति हाथ बिकाने—**यशोदा के वश में हो गये, उसके अनुचर या सेवक हो गये।** उ.—सूरदास प्रभु भाव-भक्ति के, अति हित जसुमति हाथ बिकाने—३८०।

बिकानौ—क्रि. अ. [हिं. बिकना] **बिका हूँ, बिक गया हूँ।**

मुहा०—हाथ बिकानौ—**दास हो गया हूँ, गुलाम हूँ।** उ.—(क) अब हौं माया-हाथ बिकानौ। परबस भयौ, पसू ज्यौं रजु-बस, भज्यौ न श्रीपति रानौ—१-४७। (ख) नंद-नंदन-पद-कमल छाँड़ि कै माया-हाथ बिकानौ—१-६३। (ग) तदपि सूर मैं भक्तबछल हौं, भक्तनि हाथ बिकानौ—१-२४३।

बिकान्यौ—क्रि. अ. [हिं. बिकना] **बिक गया।**

मुहा०—हाथ बिकान्यौ—**वशीभूत हो गया, मुग्ध हो गया, दास हो गया।** उ.—ठाढ़े स्याम रहे मेरे आँगन तब ते मन उन हाथ बिकान्यौ—१४६०।

बिकाय—क्रि. अ. [हिं. बिकाना.] **बिकती है।** उ.—प्रानन के बदले न पाइयत सेंति बिकाय सुजस की ढेरी—२८५२।

बिकायौ—क्रि. अ. [हिं. बिकना] **बिका, बेचा गया।**

मुहा०—हाथ बिकायौ—**दास हो गया, वश में हो गया।** उ.—द्विजकुल-पतित अजामिल बिषयी, गनिका हाथ बिकायौ—१-१०४।

बिकार—संज्ञा पुं. [सं. विकार] (१) **दोष, बुराई, अवगुण।** उ.—सागर सूर भर्यौ बिकार-जल, बधिक-अजामिल बापी—१-१४०। (२) **बिगड़ा हुआ रूप, विकृति।** (३) **रोग।** (४) **पाप।** उ.—कमलनैन की लीला गावत कटत अनेक बिकार—२-२। (५) **कुवासना।** (६) **हानि, कुप्रभाव।** उ.—सहसौ फन फनि फुंकरै, नैंकु न तिन्हैं बिकार—५८९।

बिकारी—वि. [हिं. विकारी] (१) **कामी, वासनावाला, दुष्ट मनोवृत्ति का।** उ.—रे रे अंध बीसहू लोचन, पर-तिय-हरन बिकारी। सूनैं भवन गवन तैं कीन्हौ, सेष-रेख नहिं टारी—९-१३२। (२) **बिगड़े हुए या विकृत रूपवाला।** (३) **बुरा, हानिकारक।**

संज्ञा स्त्री. [सं. वंक] **टेढ़ी पाई।**

बिकारैं—संज्ञा पुं. [सं. विकार+ऐं (प्रत्य.)] **दोष से, ऐब से, बुराई से, अवगुण से।** उ.—जौ प्रभु मेरे दोष बिचारैं। करि अपराध अनेक जन्म लौं, नख-सिख भरौ बिकारैं—१-१८३।

बिकासना—क्रि. स. [सं. विकासन] (१) **विकसित करना।** (२) **फूल खिलाना।**

क्रि. अ.—(१) **विकसित होना।** (२) **(फूल) खिलना।**

बिकैहै—क्रि. अ. [हिं. बिकना] **बिकेगी।** उ.—ऊधौ, जोग ठगौरी ब्रज न बिकैहै—३१०५।

बिक्रम—संज्ञा पुं. [सं. विक्रम] (१) **बल, शौर्य या शक्ति की अधिकता, पराक्रम।** उ.—करि दंडवत बिनय उच्चारी। तुम अनंत बिक्रम बनवारी—७-२। (३) **विक्रमादित्य।**

बिक्रमी—संज्ञा पुं. [सं. वैक्रमीय] **विक्रम-संबंधी।**

बिक्री—संज्ञा स्त्री. [सं. विक्रय] (१) **बेचे जाने की क्रिया या भाव।** (२) **धन जो बेचे जाने से मिले।**

बिख—संज्ञा पुं. [सं. विष] **जहर।**

बिखम—वि. [सं. विषम] (१) **जो सम न हो।** (२) **कठिन।** (३) **तीव्र, भयंकर।** (४) **जो दो से न विभाजित हो।** (५) **जिस (छंद) के चारों चरणों में समान क्षर या मात्राएँ न हों।**

बिखरना—क्रि. अ. [सं. विकीर्ण] **फैलना, छितरना।**

बिखराए—क्रि. स. [हिं. बिखराना] **छितरा दिये, इधर-उधर फैला दिये।** उ.—चोली, चीर, हार बिखराए। आपुन भागि इतहिं कौं आए—७६६।

बिखराना—क्रि. स. [हिं. बिखरना] **फैलाना, छितराना।**

बिखरैहैं—क्रि. स. [हिं. बिखराना] **तोड़े-फोड़ेंगे, इधर-उधर फैलायँगे, तितर-बितर करेंगे, छितरायँगे।** उ.—जिन पुत्रनिहिं बहुत प्रतिपाल्यौ, देवी-देव मनैहै। तेई लै खोपरी बाँस दै सीस फोरि बिखरैहैं—१-८६।

बिखाद—संज्ञा पुं. [सं. विषाद] **दुख, खेद।**

बिखान—संज्ञा पुं. [सं. विषाण] **पशु के सींग।**

बिखेरना—क्रि. स. [हिं. बिखरना] **फैलाना, छितराना।**

बिख्यात—वि. [सं. विख्यात] **जिसे सब जानते हों, प्रसिद्ध।** उ.—(क) जनम-मरन-काटन कौं कर्तरि तीछन बहु बिख्यात—१-९०। (ख) तिनके काज अंस हरि प्रगटे ध्रुव जगत बिख्यात। (ग) दच्छ के उपजीं पुत्री सात। तिनमें सती नाम बिख्यात—४-४।

बिख्याता—वि. [सं. विख्यात] **प्रसिद्ध, विख्यात।** उ.—(क) सुमिरत तुम आए तहँ त्रिभुवन बिख्याता—१-१२३। (ख) रिष्यमूक परबत बिख्याता—९-६८।

बिगड़ना—क्रि. अ. [सं. विकृत] (१) **खराब होना।** (२) **दोष आ जाना।** (३) **बुरी दशा होना।** (४) **आचरण खराब होना।** (५) **क्रुद्ध होना।** (६) **विद्रोह करना।** (७) **स्वामी या रक्षक की आज्ञा या अधिकार में न रह जाना।** (८) **लड़ाई-झगड़ा होना।** (९) **व्यर्थ खर्च होना।** (१०) **सतीत्व नष्ट होना।**

बिगड़ैल—वि. [हिं. बिगड़ना] (१) **बहुत जल्दी क्रुद्ध हो जानेवाला, जरा सी बात में बिगड़ जाने या लड़ पड़नेवाला।** (२) **हठी।** (३) **बुरे आचरणवाला।**

बिगत—वि. [सं. विगत] (१) **जो गत हो गया हो, जो बीत चुका हो।** उ.—उगत अरुन बिगत सर्वरी, ससांक

किरन हीन—१०-२०५ । (२) **रहित, विहीन** । उ.—(क) करि बल-बिगत उबारि दुष्ट तैं, ग्राह ग्रसत बैकुंठ दियौ—१२६ । (ख) प्रमुदित जनक निरखि अंबुज-मुख बिगत नयन मन पीर ।

बिगर—क्रि. वि. [अ. बग़ैर] **बिना, रहित** ।

बिगरना—क्रि.अ. [हिं. बिगड़ना] **बिगड़ना** ।

बिगराइल, बिगरायल—वि. [हिं बिगड़ैल] (१) **क्रोधी** । (२) **हठी** । (३) **बुरे आचरणवाला** ।

बिगरि—क्रि. अ. [हिं. बिगड़ना] **बिगड़ कर** ।

प्र०—जैहैं बिगरि—**खराब हो जायँगे, अच्छे नहीं रहेंगे** । उ.—जैहैं बिगरि दाँत ये आछे—१०-२२२ । बिगरि परे—**विद्रोही हो गये** । उ.—(क) ए (नैन) मेरे होहिं नहीं सखि हरि-छबि बिगरि परे—पृ. ३३२ (१९) । (ख) मधुकर, ए मन बिगरि परे—३१५० ।

बिगरी—क्रि. अ. [हिं. बिगड़ना] **बिगड़ गयी, नष्ट हो गयी** । उ.—(क) कृपा-सिंधु, अपराध अपरिमित, छमौ, सूर तैं सब बिगरी—१-११५ । (ख) जग मैं जनमि, पाप बहु कीन्हें, आदि-अंत लौं सब बिगरी—१-११६ ।

संज्ञा स्त्री—**वह बात जो बिगड़ गयी हो, बात जो नष्ट हो रही हो** । उ.—दीनानाथ अब बारि तुम्हारि । पतित उधारन बिरद जानि कै, बिगरी लेहु सँवारि—१-११८ ।

बिगरै—क्रि.अ. [हिं. बिगड़ना] **बिगड़ जाय, नष्ट हो जाय, खराब हो जाय** । उ.—माधौ जू, जौ जन तैं बिगरै । तउ कृपाल, करुनामय केसव, प्रभु नहिं जीय धरै—१-११७ ।

बिगरैगौ—क्रि. अ. [हिं. बिगड़ना] **दुरवस्था को प्राप्त होगा, अच्छी दशा न रहेगी** । उ.—सब वे दिवस चारि मन-रंजन अंतकाल बिगरैगौ—१-७५ ।

बिगरौ—क्रि. स. [हिं. बिगड़ना] **बिगड़ गया, दुरवस्था को प्राप्त हुआ, बुरी दशा को पहुँच गया** । उ.—तन माया, ज्यौं ब्रह्म कहावत, सूर सु मिलि बिगरौ—१-२२० ।

बिगलना—क्रि. अ. [सं. बिगलन] (१) **सड़ना-गलना** ।(२) **सूखना** । (३) **शिथिल होना** । (४) **अलग होना** ।

बिगलित—स्त्री. [हिं. बिगलना] **रूखा-सूखा** । उ.—बिगलित कच कुस काँस पुलिन पर पंक जु काजल सारी—२७२८ ।

बिगसति—क्रि. अ. [हिं. बिकसना] (१) **खिलती है, प्रस्फुटित होती है** । (२) **चमकती है, प्रकाशित होती है** । उ.—ईषद हास दंत-दुति बिगसति, मानिक-मोती धरे जनु पोइ—१०-२१० ।

बिगसना—क्रि. अ. [हिं. विकसना] (१) **विकास को प्राप्त करना** । (२) **कली खिलना** । (३) **मन प्रसन्न होना** ।

बिगसाऊँ—क्रि. स. [हिं. बिकसाना] **प्रकाशित करूँ** । उ.—सोरह कला को ससि कुहुँ बिगसाऊँ—२२५८ ।

बिगसाना—क्रि. अ. [हिं. बिकसना] (१) **खिलना, फूलना** । (२) **प्रसन्न होना** । (३) **प्रकाशित होना** ।

क्रि. स.—(१) **खिलाना** । (२) **प्रकाशित करना** ।

बिगसावहु—क्रि. स. [हिं. बिकसाना] **खिलाओ, बिकसित करो** । उ.—घोष-सरोज भए हैं संपुट, होइ दिनमनि बिगसावहु—३१८७ ।

बिगसित—वि. [हिं. बिकसना] **प्रसन्न, खिली हुई** । उ.—बिगसित गोपी मनहुँ कुमुद सर रूप-सुधा लोचन-पुट घटकनि—६१८ ।

बिगहा—संज्ञा पुं. [हिं. बीघा] **नापने का एक मान जो बीस बिसवे का होता है** ।

बिगाड़—संज्ञा पुं. [हिं. बिगड़ना] (१) **बिगड़ने की क्रिया या भाव** । (२) **दोष, बुराई** । (३) **लड़ाई-झगड़ा** ।

बिगाड़ना—क्रि. स. [सं. विकार] (१) **रूप, गुण या उपयोगिता नष्ट करना** । (२) **दोष ला देना, दूषित कर देना** । (३) **बुरी दशा को पहुँचा देना** । (४) **कुमार्ग में लगा देना** । (५) **सतीत्व नष्ट करना** । (६) **स्वभाव खराब करना** । (७) **बहकाना** । (८) **व्यर्थ खर्च करना** ।

बिगाना—वि. [फा. बेगाना] (१) **पराया** । (२) **अनजान** ।

बिगार—संज्ञा पुं. [हिं. बिगाड़] **दोष, बुराई** । उ.—कहा बिगार कियौ हम वाको ब्रज काहे अवतार दियो री—१४०६ ।

बिगारत—कि. स. [हिं. बिगाड़ना] **नष्ट करती है** । उ.—(क) सूर स्याम बिनु ब्रज पर बोलत हठि अगिलेउ जनम बिगारत—२८४९ । (ख) ज्ञानी लोभ करत

नहिं कबहूँ, लोभ बिगारत काजा—१० उ०-२७ ।

बिगार—संज्ञा स्त्री. [हिं. बेगार] **काम जो बिना मजदूरी दिये या पाये जबरदस्ती कराया या किया जाय ।**

बिगारना—क्रि. स. [हिं. बिगड़ना] **बिगाड़ना ।**

बिगारि, बिगारी—क्रि. स. [हिं. बिगाड़ना] **नष्ट कर दी ।** उ.—याकैं बस मैं बहु दुख पायौ, सोभा सबै बिगारी—१-१७३ ।

संज्ञा स्त्री. [हिं. बेगार] **वह काम जो बिना मजदूरी दिये या पाये जबरदस्ती किया या कराया जाय ।**

बिगारे—क्रि. स. [हिं. बिगाड़ना] **बिगाड़ दिये, नष्ट किये ।** उ.—पाँच-पचीस साथ अगवानी, सब मिलि काज बिगारे—१-१४३ ।

बिगारै—क्रि. स. [हिं. बिगाड़ना] **भ्रष्ट करता है, कुमार्ग में लगाता है, बिगाड़ता है ।** उ.—तुव सुत कौं पढ़ाइ हम हारे । आपु पढ़ै नहिं, और बिगारै—७-२ ।

बिगार्‌यौ—क्रि. स. [हिं. बिगाड़ना] **नष्ट कर दिया ।** उ.—मैं अपनौ सब काज बिगार्‌यौ—४-१२ ।

बिगास—संज्ञा पुं. [सं. विकास] (१) **फैलाव, विस्तार ।** (२) **(फूल का) खिलना ।** (३) **उन्नत दशा को पहुँचना ।**

बिगिर—क्रि. वि. [अ. बग़ैर] **बिना, रहित ।**

बिगुन—वि. [सं. विगुण] **जिसमें गुण न हो ।**

बिगुरचिन—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिगूचना] **बाधा, कठिनाई ।**

बिगुरदा—संज्ञा पुं. [देश.] **एक तरह का हथियार ।**

बिगुर्चन—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिगूचन] **बाधा, कठिनाई ।**

बिगूचन, बिगूचनि—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिगूचन] (१) **दुबिधा, असमंजस ।** (२) **कठिनाई, बाधा ।** उ.—सूरदास अब होत बिगूचन, भजि लै सारँगपानि—१-३०४ ।

बिगूचना, बिगूतना—क्रि. अ. [सं. विकुंचन] (१) **दुबधा या असमंजस में पड़ना ।** (२) **संकट या कठिनाई में पड़ना ।** (३) **दबाया या पकड़ा जाना ।**

क्रि. स.—**दबोचना, धर दबाना ।**

बिगोइ—क्रि. स. [हिं. बिगोना] **नष्ट करता है, विनाशता है ।** उ.—कमल-नयन कौं कपट किए माई, इहिं ब्रज आवै जोइ । पालागौं बिधि ताहि बकी ज्यौं, तू तिहिं तुरत बिगोइ—१०-५६ ।

बिगोइसि—क्रि. स. [हिं. बिगोना] **नष्ट किया, बिगाड़ा, विनाश किया ।** उ.—निसि दिन फिरत रहत मुँह बाए, अहमिति जनम बिगोइसि—१-३३३ ।

बिगोउ, बिगोऊ—क्रि. स. [हिं. बिगोना] **नष्ट करे, विनाश करे ।** उ.—सूर सनेह करै जो तुमसौं सो पुनि आप बिगोऊ—३३५३ ।

बिगोए—क्रि. स. [हिं. बिगोना] **नष्ट किये, बिगाड़ दिये ।** उ.—किते दिन हरि-सुमिरन बिनु खोए । पर-निंदा रसना के रस करि, केतिक जनम बिगोए—१-५२ ।

बिगोना—क्रि. स. [सं विगोपन] (१) **नष्ट या विनाश करना ।** (२) **छिपाना, दुराना ।** (३) **तंग या दुखी करना ।** (४) **भ्रम या बहकावे में डालना ।** (५) **बिताना, व्यतीत करना ।**

बिगोयो, बिगोयौ—क्रि. स. [हिं. बिगोना] (१) **भ्रम में डाला, बहकाया ।** उ.—हरि, तुव माया को न बिगोयौ—१-४३ । (२) **नष्ट किया, विनाश किया, बिगाड़ा ।** उ.—(क) इहिं राजस को-को न बिगोयौ । हिरनकसिपु, हिरनाच्छ आदि दै , कुंभकरन कुल खोयौ—१-५४ । (ख) रंचक सुख कारन तैं, अंत क्यौं बिगोयौ—१-३३० । (ग) सूर लोभ कीनो सो बिगोयौ—१०उ०-२७ । (३) **तंग या दुखी किया ।** उ.—अबला कहा जोग मत जानै मनमथ व्यथा बिगोयो—२५८२ । (४) **छिपाया, दुराया ।**

बिगोवति—क्रि. स. [हिं. बिगोना] (१) **तंग करती है, दुख देती है, पीड़ा पहुँचाती है ।** उ.—सील-सँतोष सखा दोउ मेरे, तिन्हैं बिगोवति भारी—१-१७३ । (२) **बिताती है, व्यतीत करती है, काटती है ।** उ.—कबहूँ भवन कबहूँ आँगन ह्वै ऐसै रैनि बिगोवति—१९४९ ।

बिगोवै—क्रि. स. [हिं. बिगोना] **नष्ट करती है, बिनाशती है, बिगाड़ती है ।** उ.—(क) एकनि लै मंदिर चढ़ै, एकनि बिरचि बिगोवै (हो)—१-४४ । (ख) राजहि जाहि सनक अरु संका बिरचै ताहि बिगोवै—२२७५ ।

बिग्रह संज्ञा पुं. [सं. विग्रह] (१) **शरीर ।** (२) **कलह, विरोध ।** (३) **बिभाग ।** (४) **युद्ध ।** (५) **देव-मूर्ति ।**

बिघटना—क्रि. स. [सं. विघटन] **तोड़ना-फोड़ना ।**

बिघन, बिघिन—संज्ञा पुं. [सं. विघ्न] **विघ्न, बाधा, रुकावट, अड़चन, व्याघात।** उ.—(क) राख्यौ गोकुल बहुत बिघन तैं कर नख पर गोबर्धन धारी—१-२२। (ख) पांडु-सुत के बिघन जेते गए टरि टरि टरि—१-३०९।

बिघनहरन, बिघिनहरन—वि. [सं. विघ्नहरण] **बाधा दूर करनेवाला।**

संज्ञा पुं.—**गणेश, गणपति।**

बिच—संज्ञा पुं. [हिं. बीच] (१) **मध्य भाग, बीच।** उ.—उन तौ करी पाछिले की गति गुन तोर्‌यौ बिच धार—१-१७५। (२) **अंतर, दूरी।** उ.—केतिक बिच मथुरा औ गोकुल आवत जो हरि नहीं—२७९७।

क्रि. वि.—**में, अंदर।** उ.—खेल मच्यौ ब्रज के बिच भारी—२४०८।

बिचकना—क्रि. अ. [अनु.] (१) **भड़कना, चौंकना।** (२) **(मुँह का) टेढ़ा होना।**

बिचकाना—क्रि. अ. [अनु.] **(मुँह) बिराना या चिढ़ाना।**

बिचच्छन—वि. [सं. विलक्षण] **निपुण, पंडित।**

बिचरतौ—क्रि. अ. [हिं. बिचरना] (१) **चलता-फिरता, घूमता।** उ.—इहिं बिधि उच्च-अनुच तन धरि-धरि देस-बिदेस बिचरतौ—१-२०३।

बिचरना—क्रि. अ. [सं. विचरण] (१) **घूमना-फिरना।** (२) **यात्रा करना।**

बिचलना—क्रि. अ. [सं. विचलन] (१) **चंचल होना, हिलना-डोलना।** (२) **साहस छोड़ना।** (३) **कहकर मुकरना।**

बिचला—वि. [हिं. बीच] **बीच का, बीचवाला।**

बिचलाना—क्रि. स. [सं. विचलन] (१) **हिलाना-डोलाना।** (२) **तितर-बितर करना।** (३) **चित्त डिगाना।**

बिचले—क्रि. अ. [हिं. बिचलना] **व्याकुल या विचलित हो गये।** उ.—आतुर ह्वै धाईं उत नागरि इत बिचले सब ग्वाल—२४२७।

बिचलै—क्रि. अ. [हिं. बिचलन] **विचलित हो, हट जाय।** उ.—जौ सीता सत तैं बिचलै तौ श्रीपति काहि सँभारै—६-७८।

बिचवई—संज्ञा पुं. [हिं. बीच] **झगड़नेवालों के बीच में पड़कर झगड़ा निबटानेवाला, मध्यस्थ।**

संज्ञा स्त्री.—**मध्यस्थता।**

बिचवान, बिचवाना—संज्ञा पुं. [हिं. बीच+वान] **बीच-बचाव करनेवाला, मध्यस्थ।**

बिचवानी—संज्ञा स्त्री. [हिं बिचवान] **मध्यस्थता करने वाली।** उ.—राधा आधा देह स्याम की तू उनकी बिचवानी—१४८४।

बिचहुत—संज्ञा पुं. [हिं. बीच] (१) **अंतर।** (२) **संदेह।**

बिचार—संज्ञा पुं. [सं. विचार] **संकल्प, ध्यान, विचार।** उ.—जौ पै यहै बिचार परी। तौ कत कलि-कलमष लूटन कौं, मेरी देह धरी—१-२११।

क्रि. अ. [हिं. बिचारना] **विचारकर।** उ.—को तू, को यह, देखि बिचार—६-५।

बिचारत—क्रि. अ. [हिं. बिचारना] **सोचते हो, गौर करते हो, विचार रहे हो।** उ.—(क) मोकौं मुक्ति बिचारत हौ प्रभु, पचिहौ पहर-घरी—१-१३०। (ख) तुमहिं देखि मैं अति सुख पायौ, तुम जिय कहा बिचारत—१०-२६५।

बिचारना—क्रि. अ. [सं. विचार] (१) **सोचना।** (२) **प्रश्न पूछना।**

बिचारा—क्रि. अ. [हिं. बिचारना] **सोचा, ध्यान किया।**

प्र०—करत बिचार—**सोचते हैं, ध्यान करते हैं।** उ.—सुक-सारद से करत बिचारा। नारद से पावहिं नहिं पारा—१०-३। करति बिचारा—**विचार करती है।** उ.—नर-नारी घर घर सबै इह करति बिचारा—१० उ०-८१।

वि. [हिं. बेचारा] **निरीह, असहाय।**

संज्ञा पुं. [हिं. विचार] **ध्यान, संकल्प।**

बिचारि—क्रि. अ. [हिं. बिचारना] **सोचकर।**

प्र.—रहीं बिचारि-बिचारि—**सोच-सोच कर रह गयीं।** उ.—हम नहीं घर गईं तबते रहीं बिचारि बिचारि—११६९।

बिचारी—क्रि. अ. [हिं. बिचारना] (१) **विचार किया, सोचा।** उ.—(क) इन पतितनि मो अपति बिचारी—१-२४८। (ख) सुरपति तब यह देखि बिचारी—६-५। (२) **विचारकर, सोचकर, गौर करके।** उ—

(क) दुरबासा दुरजोधन पठयौ पांडव-अहित बिचारी—१-१२२ । (ख) अंतहु सिखवन सुनहु हमारी कहियत बात बिचारी—**३३१३** ।

प्र.—जाति बिचारी—**सोचा-विचारा या समझा जा सकता है** । उ.—सूरदास स्वामी की महिमा कापै जाति बिचारी—३८६ ।

संज्ञा पुं.[सं. विचारिन्] **विचार करनेवाला** । उ—मारग छाँड़ि कुमारग सौं रत बुधि बिपरीति बिचारी।

वि. स्त्री. [हिं. बेचारा] **दीन, निरीह, असहाय** । उ.—बाँध्यौ बैर दया भगिनी सौं, भागि दुरी सु बिचारी—**१-१७३** ।

बिचारे—वि. [फा. बेचारा] (१) **दीन, गरीब, निस्सहाय** । (२) **तुच्छ, हीन** । उ.—गीध, ब्याध, गनिकारु अजामिल, ये को आहिं बिचारे—१-१७९ ।

बिचारैं—क्रि. अ. [हिं. बिचारना] (१) **विचार करें, ध्यान दें, सोचें** । उ.—जौ प्रभु, मेरे दोष बिचारैं—१-१८३ । (२)**मानते या समझते हैं** । उ.—हाँसी मैं कोउ नाम उचारै । हरि जू ताकौं सत्य बिचारैं—६-४ ।

बिचारौं—क्रि. अ. [हिं. बिचारना] **मानता-समझता हूँ** । उ.—जीतैं जीति भक्त अपनै के, हारैं हारि बिचारौं—१-२७२ ।

बिचारौ—क्रि. अ. [हिं. बिचारना] **विचार करो, सोचो, ध्यान दो** । उ.—प्रभु, मेरे गुन-अवगुन न बिचारौ—१-१११ ।

वि. [हिं. बेचारा] (१) **दीन, असहाय, अनाथ, बेचारा** । (२) **तुच्छ, हीन** । उ.—पतितनि मैं बिख्यात पतित हौं, पावन नाम तुम्हारौ । बड़े पतित पासंगहु नाहीं, अजामिल कौन बेचारौ—**१-१३१** ।

बिचित्र—वि. [सं. विचित्र] (१) **आश्चर्यजनक, विस्मयकारी** । उ.—हरि जू की आरती बनी । अति बिचित्र रचना करि राखी, परति न गिरा गनी—२-२८ । (२) **सुंदर** । उ.—उर मनि-माला पहिराई, बसन बिचित्र दिये—**१०-२४** ।

बिचेत—वि. [सं. विचेतस्] (१) **अचेत** । (२) **अधीर** ।

बिचौनी, बिचौहाँ—संज्ञा पुं. [हिं. बीच] **मध्यस्थ** ।

बिच्छित्ति—संज्ञा स्त्री. [सं.] **शृंगार का एक हाव जिसमें किंचित श्रृंगार से ही पुरुष का मुग्ध होना वर्णित हो** ।

बिच्छी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिच्छू] **एक जहरीला कीड़ा** ।

बिच्छू—संज्ञा पुं. [सं. वृश्चिक] **एक जहरीला कीड़ा** ।

बिच्छेप—संज्ञा पुं. [सं. विक्षेप] (१) **चित्त शांत या संयत न रहना** । (२) **विघ्न-बाधा** ।

बिछइयै—क्रि. स. [हिं. बिछाना] (१) **(विस्तर या कपड़े को) जमीन पर फैलाता है** । (२) **(पलँग, खाट तखत आदि को) जमीन पर फैलाता है** । उ.—टूटी छानि, मेघ जल बरसै, टूटो पलँग बिछइयै—**१-२३९** ।

बिछड़ना—क्रि. अ. [सं. विच्छेद] **अलग होना** ।

बिछना—क्रि. अ. [सं. विस्तरण] (१) **बिछाया या फैलाया जाना** । (२) **बिखेरा या छितराया जाना** । (३) **(मारकर) गिराया जाना** ।

बिछलना—क्रि. अ. [हिं. फिसलना] **फिसलना** ।

बिछलाना—क्रि. स. [हिं. फिसलाना] **फिसलाना** ।

बिछवाना—क्रि. स. [हिं. बिछाना से प्रे.] **बिछाने को प्रवृत्त करना या प्रेरणा देना** ।

बिछाई—क्रि. स. [हिं. बिछाना] **(सेज पर बिस्तर) आदि बिछाया, (सेज) तैयार की** । उ.—पौढ़िये मैं रचि सेज बिछाई—१०-२४२ ।

बिछान—संज्ञा पुं. [हिं. बिछौना] **बिस्तर, बिछौना** ।

बिछाना—क्रि. स. [सं. विस्तरण] (१) **(जमीन पर) फैलाना** । (२) **बिखराना** । (३) **(मारकर) लिटाना** ।

बिछायत—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिछाना] **बिछौना** ।

बिछावत—क्रि. स. [हिं. बिछाना] **बिखेरता या बिखराता है** । उ.—पीछे ललिता आगे स्यामा प्यारी ता आगे पिय मारग फूल बिछावत जात—२०६८ ।

बिछावन—संज्ञा पुं. [हिं. बिछौना] **बिस्तर, बिछौना** ।

बिछावना—क्रि. स. [हिं. बिछाना] (१) **फैलाना** । (२) **बिखराना** । (३) **(मारकर) लिटाना** ।

बिछावहीं—क्रि. स. [हिं. बिछाना] **बिखेरते या बिखराते हैं** । उ.—मारग सुमन बिछावहीं पग निरखि तिहारे—२०६७ ।

बिछावैं—क्रि. स. [हिं. बिछावन] **(जमीन पर बिस्तर आदि) फैलावें** । उ.—इह जोग कथा ओढ़ैं कि बिछावैं—३४४२ ।

बिछिअन—संज्ञा स्त्री॰ बहु॰ [हिं॰ बिछिआ] **पैर की उँगलियों में पहनने के छल्ले।** उ॰—पग जेहरि बिछिअन की झमकनि चलत परस्पर बाजत—पृ॰ ३१३ (२६)।

बिछिआ—संज्ञा स्त्री॰ [हिं॰ बिच्छू+इआ] **पैर की उँगलियों में पहनने का छल्ला।**

बिछिप्त—वि॰ [सं॰ विक्षिप्त] **पागल।**

बिछिया—संज्ञा स्त्री॰ [हिं॰ बिछिआ] **पैर की उँगलियों में पहनने का छल्ला।** उ॰—छुद्रघंटिका पग नूपुर जेहरि बिछिया सब लेखौ—११२०।

बिछुआ—संज्ञा पुं॰ [हिं॰ बिच्छू] (१) **पैर का एक गहना।** (२) **छुरी की तरह का एक शस्त्र।**

बिछुड़न—संज्ञा स्त्री॰ [हिं॰ बिछुड़ना] (१) **अलग होने का भाव।** (२) **विरह, वियोग।**

बिछुड़ना—क्रि॰ अ॰ [सं॰ विच्छेद] (१) **अलग होना।** (२) **वियोग होना।**

बिछुरंता—संज्ञा पुं॰ [हिं॰ बिछुड़ना+अंता] **बिछुड़नेवाला।**

बिछुरत—क्रि॰ अ॰ [हिं॰ बिछुड़ना] **बिछुड़ते ही, अलग होते ही।** उ॰—(क) रघुनाथ पियारे, आजु रहौ (हो)।····। बिछुरत प्रान पयान करैंगे, रहौ आजु पुनि पंथ गहौ (हो)—९-३३। (ख) हरि बिछुरत फाट्यौ न हियौ—२५४५।

बिछुरन, बिछुरनि—संज्ञा स्त्री॰ [हिं॰ बिछुड़ना] (१) **बिछुड़ने या अलग होने का भाव।** उ॰—(क) यह सुनि भूप तुरत तनु त्याग्यौ, बिछुरन ताप तयौ—९-४६। (ख) जुग-जुग जनम मरन अरु बिछुरनसब समुझत मत भेव—१-१००। (ग) बिछुरन-मिलन रच्यौ बिधि ऐसौ, यह संकोच निवारौ—२६५३। (घ) कहाँ वह प्रीति कहाँ वह बिछुरन कहाँ मधुबन की रीति—२७१६।

बिछुरना—क्रि॰ अ॰ [हिं॰ बिछुड़ना] (१) **अलग होना।** (२) **वियोग होना।**

बिछुरी—क्रि॰ अ॰ [हिं॰ बिछुड़ना] **बिछुड़ गयी, अलग हुई।** उ॰—(क) बिछुरी मनौ संग तैं हिरनी—९-७२। (ख) जौ पै पतिब्रता ब्रत तेरैं, जीवति बिछुरी काइ—९-७७।

बिछुरे—क्रि॰ अ॰ [हिं॰ बिछुड़ना] **अलग होने या बिछुड़ने पर।** उ॰—(क) बिछुरे श्री बृजराज आजु इन नैननि की परतीति गई—२५३७। (ख) सूरदास स्वामी के बिछुरे लागे प्रेम झई—२७७३।

बिछुरैं—क्रि॰ अ॰ [हिं॰ बिछुड़ना] **बिछुड़ जाने पर, अलग होने पर।** उ॰—(क) जग मैं जीवत ही कौ नातौ। मन बिछुरैं तन छार होइगौ, कोउ न बात पुछातौ—१-३०२। (ख) सूरदास रघुपति के बिछुरैं मिथ्या जनम भयौ—९-४६।

बिछुरौं—क्रि॰ अ॰ [हिं॰ बिछुड़ना] **अलग होऊँ।** उ॰—सूरदास याही ब्रत मेरे हरि मिलि नहिं बिछुरौं—३०२७।

बिछुवा—संज्ञा पुं॰ [हिं॰ बिछुआ] **पैर का एक गहना।**

बिछूना—वि॰ [हिं॰ बिछुड़ना] **जो बिछुड़ गया हो।**

बिछोई—वि॰ [हिं॰ बिछोह+ई] (१) **जो बिछुड़ा हुआ हो।** (२) **जिसका प्रिय बिछुड़ गया हो, विरही।**

बिछोड़ा—संज्ञा पुं॰ [हिं॰ बिछुड़ना] (१) **बिछुड़ने की क्रिया या भाव।** (२) **विरह, वियोग।**

बिछोय—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विच्छेद] **वियोग, विरह।**

बिछोह—संज्ञा पुं॰ [हिं॰ बिछुड़ना] **विरह, वियोग।**

बिछोही—क्रि॰ अ॰ [हिं॰ बिछुड़ना] **बिछुड़ गयी है, वियोग हुआ है।** उ॰—अहो बिहंग, कहौ अपनौ दुख, पूछत ताहि खरारि। किहिं मति मूढ़ हत्यौ तनु तेरौ, किधौं बिछोही नारि—९-६५।

बिछौन, बिछौना—संज्ञा पुं॰ [हिं॰ बिछाना] **बिस्तरा।**

बिजड़—संज्ञा स्त्री॰ [हिं॰] **तलवार।**

बिजन—संज्ञा पुं॰ [सं॰ व्यजन] **पंखा, बेना।**

वि॰ [सं॰ विजन] **जनरहित या एकांत (स्थान)।**

बिजय—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ विजय] **जीत, विजय।**

संज्ञा पुं॰—**विष्णु के पार्षद जो ब्रह्मशाप से असुर हो गये थे।** उ॰—जय अरु बिजय पारषद दोइ। बिप्र-सराप असुर भए सोइ—१०-२।

बिजयठे—संज्ञा पुं॰ बहु॰ [हिं॰ बिजायठ] **हाथ का एक आभूषण, अंगद, बाजूबंद।** उ॰—कुच कंचुकी हार मोतिनि अरु भुजन बिजयठे सोहत—१०७९।

बिजली—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ विद्युत] (१) **विद्युत (शक्ति)।** (२) **(आकाश में चमकनेवाली) चपला।** (३) **आम**

की गुठली। (४) गले का एक गहना। (५) कान का एक गहना।

वि.—(१) बहुत चंचल। (२) बहुत चमकीला।

बिजाती—वि. [सं. विजातीय] (१) दूसरी जाति का। (२) जाति से निकाला हुआ।

बिजान—संज्ञा पुं. [सं. वि+ज्ञान] अनजान, अज्ञान।

बिजायठ—संज्ञा पुं. [सं. विजय] बाजूबंद (गहना)।

बिजार—संज्ञा पुं. [देश.] (१) बैल। (२) साँड़।

बिजुकानी—क्रि. अ. [हिं. बिझुकना] भड़क गयी, बिझुक गयी, डराने लगी, मारने दौड़ी। उ.—ब्यानी गाइ बछरुवा चाटति, हौं पय पियत पतूखिनि लैया। यहै देखि मोकौं बिजुकानी, भागि चल्यौ कहि दैया-दैया—१०-३३५।

बिजुरी, बिजुली—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिजली] (१) विद्युत। (२) चपला। (३) गले का एक गहना। (४) कान का एक गहना।

बिजूका, बिजूखा—संज्ञा पुं. [देश.] (१) (खेत का बनावटी) धोखा। (२) छल-कपट।

बिजै—संज्ञा पुं. [सं. विजय] विजय।

बिजोग—संज्ञा पुं. [सं. वियोग] बिरह, वियोग।

बिजोना—क्रि. स. [हिं. जोवना] भली-भाँति देखना।

बिजोर—वि. [सं. वि+फा. जोर] निर्बल, अशक्त।

बिजौरा—संज्ञा पुं. [सं. बीजपूरक] एक वृक्ष।

बिजौरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बीज+औरी] उड़द की पीठी और पेठे की बड़ी, कुम्हड़ौरी।

बिज्जल, बिज्जु—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिजली] बिजली, विद्युत। उ.—(क) इंद्रजीत लीन्ही तब सक्ती, देवनि हहा कर्‍यौ। छूटी बिज्जु-रासि वह मानौ, भूतल बंधु पर्‍यौ—९-१४४।

बिज्जुपात—संज्ञा पुं. [सं. विद्युत्पात] बिजली का गिरना।

बिज्जुल—संज्ञा पुं. [सं. विज्जुल] छिलका।

संज्ञा स्त्री. [सं. विद्युत] बिजली, दामिनि। उ.—हँसत दसननि चमक बिज्जुल लसति कठिन कठोर—पृ. ३१० (३)।

बिज्जुलता—संज्ञा स्त्री. [सं. विद्युल्लता] विद्युत, बिजली। उ.—गोद लिए जसुदा नंद-नंदहिं। पीत झँगुलिया की छबि छाजति, बिज्जुलता सोहति मनु कंदहिं—१०-१०७।

बिज्जू—संज्ञा पुं. [देश.] एक जंगली पशु।

बिझरा—संज्ञा पुं. [हिं. बेझर] मिला हुआ अन्न।

बिझुरना—क्रि. अ. [हिं. झोंका] (१) भड़कना। (२) डरना। (३) तनना, टेढ़ा होना।

बिझुकाना—क्रि. स. [हिं. बिझुकना का सक.] (१) भड़काना। (२) डराना। (३) टेढ़ा करना, तानना।

बिझुकि—क्रि. अ. [हिं. बिझुकना] भड़ककर। उ.—बिडुरत बिझुकि जानि रथ ते मृग जनु ससंकि ससि-लंगर सारे—१३३३।

बिट—संज्ञा पुं. [सं. विट्] (१) कामुक और लंपट। उ.—खान-पान-परिधान मैं (रे) जोबन गयौ सब बीति। ज्यौं बिट पर-तिय सँग बस्यौ (रे) भोर भए भई भीति—१-३२५। (२) नायक का चतुर सखा। (३) वैश्य। (४) पक्षियों की बाट।

बिटप—संज्ञा पुं. [सं. विटप] पेड़, वृक्ष।

बिटनियाँ—संज्ञा स्त्री. [हिं. बेटी] (१) पुत्री। (२) लड़की। उ.—सो आगे की महरि बिटनियाँ कहा करै वह मान—१८७६।

बिटरना—क्रि. अ. [हिं. बिटारना] घँघोला जाना।

बिटारना—क्रि. स. [सं. बिलोडन] घँघोलकर गंदा करना।

बिटिनियाँ, बिटिया—संज्ञा स्त्री. [हिं. बेटी] (१) बेटी, पुत्री। (२) लड़की, बालिका। उ.—एक बिटिनियाँ संग मेरे ही, कारैं खाई ताहि तहाँ री—६९५।

बिट्ठल—संज्ञा पुं. [सं. विष्णु, महा० बिठोबा] (१) विष्णु का एक नाम। (२) पंढरपुर की प्रधान देवमूर्ति जिसे जैन तीर्थंकर की और हिन्दू विष्णु की मूर्ति मानते हैं।

बिठलाना—क्रि. स. [हिं. बैठाना] बैठने को प्रवृत्त करना।

बिठाइ—क्रि. स. [हिं. बैठाना] बैठाकर, स्थिर करके। उ.—निकट बुलाइ बिठाइ, निरखि मुख, अंचर लेत बलाइ—९-८३।

बिठाना—क्रि. स. [हिं. बैठाना] बैठाना।

बिडंब, बिडंबन—संज्ञा पुं. [सं. विडंब] आडंबर, दिखावा।

बिडंबना—संज्ञा स्त्री. [सं. बिडंबन] (१) नकल। (२) उपहास।

बिडर—वि.[हिं. बिडरना] **छितरा हुआ।**
वि. [हिं. बि+डर] (१) **निर्भय।** (२) **ढीठ।**

बिडरत—क्रि. अ. [हिं. बिडरना] **भयभीत होकर बिचकता है।** उ.—बिडरत बिझुकि जानि रथ ते मृग जनु ससंकि ससि लंगर सारे—१३३३।

बिडरना—क्रि. अ. [सं. विद्] (१) **तितर-बितर होना।** (२) **भयभीत होकर (पशु का) बिचकना।**

बिडराना—क्रि. स. [हिं. बिडरना] (१) **तितर-बितर करना।** (२) **(पशु को) भयभीत करके बिचकाना।**

बिडरि—क्रि. अ. [हिं. बिडरना] **भयभीत होकर, बिचककर।** उ.—बिडरि चले घन प्रलय जानि कै, दिगपति दिग-दंतीनि सकेलत—१०-६३।

बिडरीं—क्रि. अ. [हिं. बिडरना] (१) **भयभीत होकर बिचक गयीं।** (२) **तितर-बितर हो गयीं।** उ.—भीर भई सुरभी सब बिडरीं मुरली भली सम्हारी—६९३।

बिडरे—क्रि. अ. [हिं. बिडरना] **तितर-बितर हो गये।** उ.—बिडरे गज-जूथ सील, सैन-लाज भाजी—६५०।

बिडरै—वि. [हिं. बि+डरना] **निर्भय, निडर।** उ.—वह निसंक अतिहिं ढीठ, बिडरै, नहिं भाजै—९-९६।
क्रि. अ. [बिडरना] **भयभीत होता है, बिचलित होता है।** उ.—अजामिल द्विज सौं अपराधी, अंतकाल बिडरै। सुत सुमिरत नारायन-बानी, पार्षद धाइ परै—१-८२।

बिडवत—क्रि. स. [हिं. बिडवना] **तोड़ता है।** उ.—घूँघट पट बागर (बागुर) ज्यौं बिडवत जतन करत ससि हारे—२१९०।

बिडवना—क्रि. स. [सं. बिट्] **तोड़ना-फोड़ना।**

बिडारना—क्रि. स. [हिं. बिडरना] **भयभीत करके भगाना।**

बिडारी—क्रि. स. [हिं. बिडारना] **भगाना, निकाल देना।** उ.—धर्म-सत्त मेरे पितु-माता, ते दोउ दिये बिडारी—१-१७३।

बिड़ाल—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **बिलाव।** (२) **एक दैत्य।**

बिड़ालक—संज्ञा पुं. [सं.] **आँख का गोलक।**

बिढ़तो—संज्ञा पुं. [हिं. बढ़ना] **लाभ, नफा।**

बिढ़वना, बिढ़ाना—क्रि. स. [हिं. बढ़ाना] (१) **कमाना।** (२) **इकट्ठा करना।**

बित—संज्ञा पु. [सं. वित्त] **धन, द्रव्य।** उ.—जनम सिरानौ अटकैं-अटकैं। राज-काज सुत-बित की डोरी, बिनु बिबेक फिर्‌यौ भटकैं—१-२९२।

बितई—क्रि. स. [हिं. बिताना] **बिता दी, व्यतीत की।** उ.—होत कहा अबकैं पछिताऐं, बहुत बेर बितई—१-२९९।

बितत—वि. [सं. व्यतीत] **समाप्त, व्यतीत, विगत।** उ.—भारत जुद्ध बितत जब भयौ। दुरजोधन अकेल रहि गयौ—१-२८६।

बितताइ—क्रि. अ. [हिं. बितताना] **व्याकुल होकर, बिलख कर।** उ.—खेलत में तुम बिरह बढ़ायौ गई कहा बितताइ—पृ. ३१२ (२०)।

बितताति—क्रि. अ. [हिं. बितताना] **व्याकुल होकर, घबराकर।** उ.—मैं तौ चकित भई हौं सुनि कै, अति अचरज यह बात। सूर स्याम गारुड़ी कहाँ कौ, कहँ आई बितताति—७५३।

बितताना—क्रि. अ. [हिं. बिलखना] **व्याकुल, अधीर या संतप्त होना, बिलखना।**

बिततानी—क्रि. अ. स्त्री. [हिं. बितताना] **बिलखने लगी, व्याकुल हुई, संतप्त हुई।** उ.—(क) कोउ निरखति दुति चिबुक चारु की, सूर तरुनि बिततानी—६४४। (ख) रोवति महरि फिरति बिततानी—७५९। (ग) घर-घर तरुनी सब बिततानी—पृ. ३३८ (७५)।

बिततानै—वि. [हिं. बितताना] **व्याकुल।** उ.—फिरत लोग जहँ तहँ बिततानै—१०५०।

बितताये—क्रि. स. [हिं. बितताना] **दुखी या संतप्त किये।** उ.—अपने सुख ब्रज जन बितताये—१०५६।

बितना—संज्ञा पुं. [हिं. बित्ता] **बित्ता, बालिश्त।**

बितनु—वि. [सं. वितनु] (१) **तन या शरीर रहित।** (२) **बहुत छोटा, सूक्ष्म।**
संज्ञा पुं.—**कामदेव।**

बितपन्न—वि. [सं. व्युत्पन्न] **ज्ञाता, पंडित।** उ.—सूरज प्रभु बितपन्न कोकगुन ताते हरिहर ध्यावत-१५९४।

बितरना—क्रि. स. [सं. वितरण] **बाँटना।**

बितवत—क्रि. स. [हिं. बितवना] **बिताते हैं, व्यतीत करते**

हैं । उ. –(क) कल्प समान एक छिन राघव, क्रम-क्रम करि हैं बितवत—९-८७ । (ख) जब तैं रूप ठगौरी लागी, जुग समान पल बितवत—७३० ।

बितवति—क्रि. स. [हिं. बितवना] **बिताती है** । उ.—दिवस बितवति सकल जन मिलि कथति गुन बल-बीर—३४७६ ।

बितवना—क्रि. स. [हिं. बिताना] **बिताना** ।

बिता—संज्ञा पुं. [हिं. बित्ता] **बित्ता, बालिश्त** ।

बिताई—क्रि. स. स्त्री. [हिं. बिताना] **व्यतीत की, समय काटा** । उ.—(क) काहू सौं यह कहि न सुनाई । उहाँ जाइ सब रैनि बिताई । (ख) नृपति निज आयु इहिं बिधि बिताई- ८-१६ ।

बिताना—क्रि. स. [हिं. बीतना का सक०] **(समय) काटना** ।

बितायो, बितायौ—क्रि. स. [हिं. बिताना] **(समय) काटा** । उ.—रिषि मग-जोवत वर्ष बितायौ—९-५ ।

बितावना—क्रि. स. [हिं. बिताना] **(समय) काटना** ।

बिती—क्रि. अ. [हिं. बीतना] **घटित हुई, पड़ी** । उ.—अंतर्यामी यहौ न जानत जो मो उरहिं बिती—१० उ०-१०३ ।

बितीतना—क्रि. अ. [सं. व्यतीत] **बीतना, व्यतीत होना** ।
क्रि. स.—**बिताना, व्यतीत करना** ।

बितीतै—क्रि. अ. [हिं. बितीतना] **व्यतीत हो, बीते** । उ.—कछु बालापन ही मैं बीतै । कछ बिरधापन माहिं बितीतै—७-२ ।

बितु—संज्ञा पुं. [सं. बित्त] **धन, द्रव्य** ।

बितैहै—क्रि. स. [हिं. बिताना] **व्यतीत करेगी** । उ.—मेरौ कह्यौ मानिहै नाहीं ऐसे हीं भ्रुमि भ्रुमि द्योस बितैहै—११९२ ।

बित्त—संज्ञा पुं. [सं. वित्त] (१) **धन, द्रव्य** । (२) **स्थिति, हैसियत** । (३) **शक्ति, सामर्थ्य** ।

बित्ता—संज्ञा पुं. [देश.] **बालिश्त** ।

बिथकना—क्रि. अ. [हिं. थकना] (१) **थक जाना** । (२) **चकित या स्तब्ध होना** । (३) **आसक्त होना** ।

बिथकाना—क्रि. स. [हिं. बिथकना] (१) **थकाना** । (२) **चकित करना** ।

बिथकित—क्रि. अ. [हिं. बिथकना] **चकित या स्तब्ध होकर** । उ.—गोपीजन बिथकित ह्वै चितवतिं सब ठाढ़ी—४४१ ।

बिथकीं—क्रि. अ. [हिं. बिथकना] **मुग्ध या आसक्त हुईं** । उ.—सूर अमर ललनागन बिथकीं अमरलोक बिसारी ।

बिथक्यो, बिथक्यौ—क्रि. अ. [हिं. बिथकना] **थक गया** । उ.—समुझाई समुझत नहीं सिख दै बिथक्यो गाउँ—११८२ ।

बिथरना—क्रि. अ. [सं. वितरण] (१) **बिखरना** । (२) **अलग होना** ।

बिथराइ—क्रि. स. [हिं. बिथराना] **अलग-अलग करके** ।
प्र० - बिथराइ दियौ—**अलग-अलग करके बिखरा दिया** । उ.—हार तोरि बिथराइ दियो—१०५१ ।

बिथराना—क्रि. स. [हिं. बिथरना] (१) **बिखेरना** । (२) **अलग करना** ।

बिथरै—क्रि. अ. [हिं. बिथराना] **छितराकर, बिखेरकर** । उ.—धर बिधंसि नल करत किरषि हल, बारि, बीज बिथरै—१-११७ ।

बिथर्यौ—क्रि. स. [हिं. बिथारना] **छिटकाया, बिखेरा** । उ.—इहिं ढोटा लै ग्वाल भवन मैं कछु बिथरयौ कछु खायौ—१०-३३६ ।

बिथा—संज्ञा स्त्री. [सं. व्यथा] **दुख, पीड़ा, क्लेश, कष्ट** । उ.—(क) बिनु गोपाल बिथा या तन की कैसैं जाति कटी—१-६८ (ख) ब्यावर बिथा न बंध्या जानै—३४४२ ।

बिथारना—क्रि. स. [हिं. बिथरना] **बिखेरना** ।

बिथित—वि. [सं. व्यथित] **पीड़ित, दुखित** ।

बिथुरना—क्रि. अ. [हिं. बिथरना] (१) **छितरना** । (२) **अलग होना** ।

बिथुराइ, बिथुराई—क्रि. अ. [हिं. बिथरना] **फैलकर, छिटककर** । उ.—सोभित चिकुर ललाट बदन पर कुंचित कुटिल अलक बिथुराई—२११६ ।

बिथुराना—क्रि. अ. [हिं. बिथुरना] (१) **बिखरना** । (२) **अलग होना** ।
क्रि. स.—(१) **बिखेरना** । (२) **अलग करना** ।

बिथुरि—क्रि. अ. [हिं. बिथुरना] **छितराकर, बिखरकर** ।

उ.—बिथुरि अलक रहीं मुख पर बिनहिं बपन सुभाइ —१०-२२५ ।

बिथोरना—क्रि. स. [हिं. बिथराना] (१) **बिखराना** । (२) **अलग करना** ।

बिद—वि. [सं. विद्] **जाननेवाला, ज्ञाता** ।

बिदकना—क्रि. अ [सं. विदारण] (१) **फटना** । (२) **भड़कना** । (३) **घायल होना** ।

बिदकाना—क्रि. स. [हिं. बिदकना] (१) **फाड़ना** । (२) **भड़काना** । (३) **घायल करना** ।

बिदमान—वि. [सं. विद्यमान] **वर्तमान या उपस्थित (होने पर या होकर)** । उ.—(क) फोर्‌यौ नयन, काग नहिं छाड़्यौ सुरपति के बिदमान—९-८३ । (ख) जिहिं बल बिप्र तिलक दै माथ्यौ, रच्छा करी आप बिदमान—१०-१२७ ।

बिदर—संज्ञा पुं. [सं. विदर्भ] **बिदर्भ देश** ।

बिदरन—संज्ञा स्त्री. [सं. विदीर्ण] **दरार, दरज** ।

वि.—**फाड़ने या चीरनेवाला** ।

बिदरना—क्रि. अ. [सं. विदारण] **फटना, चिरना** ।

बिदराना—क्रि. स. [हिं. बिदरना] **फड़वाना, चिरवाना** ।

बिदरि—क्रि. अ. [हिं. बिदरना] **फटकर** । उ.—मेरी बज्र की छाती बिदरि करि नहिं जाति—२५४३ ।

बिदर्भ—संज्ञा पुं. [सं. विदर्भ] **आधुनिक बरार प्रदेश का प्राचीन नाम । प्रसिद्धि है कि इस प्रदेश को यह संज्ञा इसी नाम के एक राजा के कारण मिली थी** ।

बिदलना—क्रि. स. [हिं. वि+दलना] (१) **कुचलना** । (२) **कष्ट या पीड़ा देना** ।

बिदली—क्रि. स. [हिं. बिदलना] **दलित की, कम कर दी** । उ.—कीर-कपोत-मीन-पिक-सारँग-केहरि-कदली-छबि बिदली । सूरदास प्रभु पास दुहावति, धनि-धनि श्री बृषभानु-लली—१०-७३९ ।

बिदा, बिदाई, बिदायगी—संज्ञा स्त्री. [अ. बिदाअ] (१) **प्रस्थान, गमन** । उ.—साधु-साधु कहि श्रीमुख बानी । बिदा भए इहिं भाँति बखानी—३९१ । (२) **जाने की आज्ञा** । उ.—दीजै बिदा, जाउँ घर अपनैं, कालिह साँझ की आई—१०-१६ । (३) **गौना, द्विरागमन** । (४) **वह धन जो बिदा के समय मिले** ।

बिदारति—क्रि. स. [हिं. बिदारना] **फाड़ती या कुरेदती है** । उ.—सूरदास प्रभु मान धर्‌यो दृढ़, धरनी नखत बिदारति—पृ. ३१२ (१७) ।

बिदारना—क्रि. स. [सं. विदारण] (१) **चीरना, फाड़ना, कुरेदना** । (२) **बिगाड़ना, नष्ट करना** ।

बिदारी—क्रि. स. [हिं. बिदारना] **चीर डाली, फाड़ दी** । उ.—हिरनकसिपु की देह बिदारी—१-२८ ।

बिदारै—क्रि. स. [हिं. बिदारना] **नष्ट करे, नाश करे** । उ.—केतिक जीव कृपिन मम बपुरौ, तजै कालहू प्रान । सूर एक हीं बान बिदारैं, श्री गोपाल की आन—१-२७५ ।

बिदारौं—क्रि. स. [हिं. बिदारना] **चीर दूँ, फाड़ डालूँ** । उ.—कहौ तौ असुर लँगूर लपेटौं, कहौ तौ नखनि बिदारौं—९-१०७ ।

बिदार्‌यो, बिदार्‌यौ—क्रि. स. [हिं. बिदारना] **चीर-फाड़ डाला** । उ.—हिरनकसिपु बपु नखनि बिदार्‌यौ—१०-२२१ ।

बिदित—वि. [सं. विदित] **प्रसिद्ध, ज्ञात, अवगत, जानी हुई** । उ.—(क) जीव न तजै स्वभाव जीव कौ लोक बिदित दृढ़ताई—१-२०७ । (ख) जौ नाहीं अनुसरत नाम जग, बिदित बिरद कत कीन्हौं—१-२११ ।

बिदिसि—संज्ञा स्त्री. [सं. विदिश्] **दो दिशाओं के बीच का कोना** । उ.—रघुपति कहि प्रिय नाम पुकारत । हाथ धनुष लीन्हें, कटि भाथा, चकित भए दिसि-बिदिसि निहारत—९-६२ ।

बिदीरना—क्रि. स. [सं. विदीर्ण] **फाड़ना** ।

बिदुराना—क्रि. अ. [सं. विदुर] **मुसकराना** ।

बिदुरानी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिदुराना] **मुसकराहट** ।

क्रि. अ.—**मुसकरायी, हँसने लगी** ।

बिदूषना—क्रि. स. [हिं. दोष] (१) **दोष या कलंक लगाना** । (२) **बिगाड़ना** ।

बिदेस—संज्ञा पुं. [सं. विदेश] **दूसरा देश, परदेश** । उ.—इहिं बिधि उच्च-अनुच तन धरि-धरि देस-बिदेस बिचरतौ—१-२०३ ।

बिदेह—वि. [सं. विदेह] (१) **जिसे शरीर का ध्यान या उसकी चिंता हो** । (२) **देहरहित** । (३) **बेसुध** ।

संज्ञा पुं.—(१) राजा जनक। (२) मिथिला का प्राचीन नाम।

बिदोख, बिदोष—संज्ञा पुं. [सं. विद्वेष] **बैर, झगड़ा।**

बिदोरना—क्रि. स. [सं. विदारण] **(दाँत) खोलकर दिखाना।**

बिद्यमान—वि. [सं. विद्यमान] **उपस्थित, विद्यमान, वर्तमान।** उ.—माधौ जू, मन हठ कठिन पर्‌यौ। जद्यपि बिद्यमान सब निरखत, दुःख सरीर भर्‌यौ—१-१००।

बिद्या—संज्ञा स्त्री. [सं. विद्या] **विद्या, शिक्षा, जानकारी।** उ.—संदीपन-सुत तुम प्रभु दीने, बिद्या-पाठ करचौ—१-१३३।

बिधँसना—क्रि. स. [हिं. बिध्वंसन] **नाश करना।**

बिधंसि—क्रि. स. [हिं. बिधँसना] **नष्ट करके, नाश करके, विध्वंस करके।** उ.—धर बिधंसि नल करत किरषि हल, बारि, बीज बिथरै। सहि सन्मुख तउ सीत-उष्न कौं, सोई सुफल करै—१-११७।

बिध—संज्ञा स्त्री. [सं. विधि] (१) **भाँति।** (२) **रीति।**

संज्ञा पुं.—**ब्रह्मा, विधाता।**

संज्ञा स्त्री. [सं. विधा = लाभ] **आय-व्यय का लेखा।**

बिधना—संज्ञा पुं. [सं. विधि+ना (प्रत्य.)] **ब्रह्मा, विधि, विधाता।** उ.—(क) कंसराइ जिय सोच परी। कहा करौं, काकौं ब्रज पठवौं, बिधना कहा करी—१०-४८। (ख) बड़ौ निठुर बिधना यह देख्यौ। जब तैं आजु नंदनंदन छबि बार-बार करि देख्यौ—६४३। (२) **ब्रह्म, ईश्वर।** उ.—सूरजदास भरम जनि भूलौ करि बिधना सौं हेत—१-३२२।

संज्ञा स्त्री.—**होनी, भवितव्यता।**

क्रि. स. [हिं. बिंधना] (१) **बींधा या छेदा जाना।** (२) **फँसना, उलझना।**

बिधये—क्रि. अ. [हिं. बिधना] **छिद गये, आहत हुए।** उ.—थके चरन सुनि सूर मनो गुन मदन बान बिधये री—१३४८।

बिधवत—क्रि. अ. [हिं. बिधना] **बेधता है।** उ.—जैसेबधिक अधिक मृग बिधवत राग रागिनी ठानि—३२५०।

बिधवा—वि. [सं. विधवा] **राँड़ (स्त्री)।**

बिधवाना—क्रि. स. [हिं. बिंधवाना] (१) **छिदवाना।** (२) **फँसवाना।**

बिधाँसना—क्रि. स. [सं. विध्वंसन] **नष्ट करना।**

बिधाई—संज्ञा पुं. [सं. विधायक] **विधान करनेवाला।**

बिधाता—संज्ञा पुं. [हिं. विधाता] **ब्रह्मा।**

बिधातैं—संज्ञा पुं. सवि. [हिं. विधाता] **ब्रह्मा ने।** उ.—सूरदास बिपरीत बिधातैं यहि तनु फेरि ठटे—३०६९।

बिधान—संज्ञा पुं. [सं. विधान] (१)**आयोजन।** (२)**प्रबंध।** (३) **प्रणाली।** (४) **निर्माण।** (५) **नियम, आज्ञा।**

बिधाना—क्रि. अ. [हिं. बिंधाना] **छिदवाना, बिंधवाना।**

बिधानी—संज्ञा पुं. [सं. विधान] **विधान करनेवाला।**

बिधि—संज्ञा पुं. [सं. विधि] (१) **ब्रह्मा, विधाता।** उ.—जोरि कर बिधि सौं मनावति आसीसै दै नाम—२५५५।

संज्ञा स्त्री. (१) **रीति, प्रणाली।** (२) **प्रकार, भाँति।** उ.—(क) इहि बिधि इहिं डहके सबै, जल-थल-नभ जिय जेते (हो)—१-४४। (ख) अब भ्रम-भँवर पर्‌यौ ब्रजनायक निकसन की सब बिधि की—१-२१३। (ग) स्रवन सुजस सारंग-नाद बिधि, चातक-बिधि मुख नाम—२-१२२। (३) **व्यवस्था।** (४) **शास्त्रीय विधान।** (५) **नियम, कानून।**

बिधिना—संज्ञा पुं. [सं. विधि] **विधाता, ब्रह्मा।** उ.—मनहीं मन अनुमान कियौ यह बिधिना जोरी भली बनाई—७६१।

बिधि-बाहन—संज्ञा पुं. [सं. विधि+हिं. बाहन] **विधाता का वाहन, हंस।**

बिधिवाहन-भच्छन—संज्ञा पुं. [सं. विधि+वाहन+भक्षण] **ब्रह्मा की सवारी (हंस) का भोजन, मोती।** उ.—बिधि-बाहन-भच्छन की माला, राजत उर पहिराए—४१७।

बिधिवत—क्रि. वि. [सं. विधिवत्] **विधि से, विधिपूर्वक, पद्धति के अनुसार।** उ.—बैठे नंद करत हरि-पूजा बिधिवत और बहु भाँति—१०-२६०।

बिधुंसना—क्रि. स. [हिं. बिधंसना] **नाश करना।**

बिधु—संज्ञा पुं. [सं. विधु] (१) **चन्द्रमा।** उ.—बिकसति ज्योति अधर-बिच, मानौ बिधु मैं बिज्जु उज्यारी—१०-९१। (२) **विधिना।**

बिन—अव्य. [हिं. बिना] **छोड़कर, बगैर, बिना।** उ.—

जैसैं मगन नाद-रस सारँग, बधत बधिक बिन बान—१-१६६ ।

बिनई—संज्ञा पुं. [सं. विनयी] (१) **नम्र, विनीत** । (२) **विनती या प्रार्थना करनेवाला** ।

बिनउ—संज्ञा स्त्री. [सं. विनय] (१) **प्रार्थना** । (२) **नम्रता** ।

बिनति, बिनती—संज्ञा स्त्री. [सं. विनय] **प्रार्थना, निवेदन** । उ.—(क) सूरदास बिनती कह बिनवै, दोषनि दहे भरी—१-१३० । (ख) बिनती करत डरत करुनानिधि, नाहिँन परत रह्यौ—१-१६२ ।

बिनन—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिनना = चुनना] (१) **चुनने की क्रिया या भाव** । (२) **बीनने की क्रिया या भाव** । (३) **बीनने पर निकला हुआ कूड़ा करकट** । (४) **बुनने की क्रिया या भाव** ।

बिनना—क्रि. स. [सं. वीक्षण] (१) **चुनना, छाँटना** । (२) **संग्रह करना** ।

क्रि. स. [हिं. बींधना] **डंक मारना** ।

क्रि. स. [हिं. बुनना] **बुनना** ।

बिनय—संज्ञा स्त्री. [सं. विनय] **बिनती, प्रार्थना** । उ.—बिनय कहा करै सूर, कूर, कुटिल कामी—१-१२४ ।

बिनवति—क्रि. अ. [हिं. बिनवना] **विनय करती है** । उ.—उडुपति सों बिनवति मृग नैनी—१०उ०-९३ ।

बिनवना—क्रि. अ. [सं. विनय] **बिनती-प्रार्थना करना** ।

बिनवहु—क्रि. अ. [हिं. बिनवना] **विनय करो** । उ.—कहत बचन बिचारि बिनवहु सोधि हो मन माँहि—३२७५ ।

बिनवै—क्रि. अ. [हिं. बिनवना] **विनय करती है, प्रार्थना करे, बिनती करे** । उ.—(क) सूरदास बिनती कह बिनवै, दोषनि देह भरी—१-१३० । (ख) सूर कर जोरि अंचल छोरि बिनवैं, बचैं ए आजु बिधि इहै माँगे—२५०३ ।

बिनशत, बिनसत—क्रि. अ. [सं. विनाश] **नष्ट होता है, नाश या बरबाद होता है** । उ.—पुनि कह्यौ, जीव दुखित संसार । उपजत-बिनसत बारंबार—७-२ ।

बिनशना, बिनसना—क्रि. अ. [सं. विनाश या विनष्ट] **नष्ट या बरबाद होना** ।

क्रि. स.—**नाश होना, चौपट होना** ।

बिनशाना, बिनसाना—क्रि. स. [सं. विनाश] **नष्ट करना** ।

क्रि. अ.—**विनष्ट होना** ।

बिनशै, बिनसै—क्रि. अ. [हिं. बिनसना] **नष्ट हो** । उ.—अबिनाशी बिनशै (बिनसै) नहीं, सहज जोति परगास—३४४३ ।

बिना—अव्य. [सं. विना] **छोड़कर, बगैर** ।

बिनाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. बीनना] (१) **बीनने की क्रिया, भाव या मजदूरी** । (२) **बुनने की क्रिया या भाव** ।

बिनाती—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिनती] **प्रार्थना, विनय** ।

बिनाना—क्रि. स. [हिं. बुनवाना] **बुनवाना** ।

बिनानी—वि. [सं. विज्ञानी] **अज्ञानी, अनजान** । उ.—(क) रोवन लागे कृष्न बिनानी । जसुमति आइ गई लै पानी—१०-५७ । (ख) पाहन सिला निरखि हरि डार्‌यौ, ऊपर खेलत कृष्न बिनानी—१०-७८ । कबहुँक आर करत माखन की कबहुँक भेष दिखाइ बिनानी । (ग) भवन-काज को गई नँदरानी । आँगन छाँड़े स्याम बिनानी—३९१ ।

संज्ञा स्त्री. [सं. विज्ञान] **विचार, गौर** । उ.—चितै रहे तब नंद जुवति-मुख मन-मन करत बिनानी—१०-२५६ ।

बिनाश, बिनास—संज्ञा पुं. [सं. विनाश] **नाश, ध्वंस, मिटना, बरबादी** । उ.—चोर न चित चोरी तजै (रे) सरबस सहै बिनास—१-३२५ ।

बिनाशन, बिनासन—**नष्ट करने, नाश करने, बिगाड़ने** । उ.—काहे कौं छल करि-करि आवत, धर्म बिनासन मोर—९-८३ ।

संज्ञा पुं. [सं. विनाशन] **विनाश करनेवाले** । उ.—(क) सुनि देवकी को हितू हमारे । असुर कंस अपबंस बिनासन, सिर ऊपर बैठे रखवारे—१०-१० । (ख) सूरदास प्रभु दुष्ट बिनाशन गोकुल ते मथुरा आए—२५९८ ।

बिनाशना, बिनासना—क्रि. स. [सं. विनाश] **नष्ट करना** ।

बिन, बिनि, बिनु—अव्य. [हिं. बिना] **छोड़कर, बगैर** । उ.—बिनु बदलैं उपकार करत हैं स्वारथ बिना करत मित्राई—१-३ ।

बिनूठा—वि॰ [हिं॰ अनूठा] **अनोखा, विचित्र।**

बिनै—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ विनय] **बिनती, प्रार्थना, बिनय।** उ॰—सरन आए की प्रभु, लाज धरिऐ। सध्यौ नाहिं धर्म सुचि, सील, तप, ब्रत कछू, कहा मुख लै तुम्हैं बिनै करिऐ—१-११०।

बिनैका—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विनायक] **पकवान या भोजन का भाग जो गणेश जी के लिए निकाल दिया जाता है।**

बिनोद—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विनोद] **प्रमोद, परिहास, हँसी, आनन्द।** उ॰—सुत-तनया-बनिता-बिनोद-रस इहिं जुर-जरनि जरायौ—१-१५४।

बिनोदी—वि॰ [हिं॰ विनोदी] **आनंदी, जिसका स्वभाव आमोद-प्रमोद का हो।** उ॰—छरीदार बैराग बिनोदी झिरकि बाहिर कीन्हें—१-४०।

बिनौला—संज्ञा पुं॰ [देश॰] **कपास का बीज।**

बिपच्छ—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विपक्ष] **शत्रु, बैरी।**

वि॰—(१) **अप्रसन्न।** (२) **बिमुख, विरुद्ध।**

बिपच्छी—संज्ञा पुं [सं॰ विपक्षिन्] (१) **विरोधी।** (२) **शत्रु।**

बिपता, बिपति, बिपत्त, बिपत्ति, बिपत्ती—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ विपत्ति] **संकट, मुसीबत।**

बिपद, बिपदा—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ विपद] **संकट, मुसीबत।**

बिपर—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विप्र] **ब्राह्मण।**

बिपरीत, बिपरीति—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ विपरीत] (१) **विरोध-भावना, प्रतिकूलता की भावना।** उ॰—मंत्री काम क्रोध निज दोऊ अपनी अपनी रीति। दुबिधा दुंद रहै निसिबासर, उपजावत बिपरीति—१-१४१। (२) **उलटी रीति-नीति या पद्धति।** उ॰—तिनकी बड़ी बिपरीति। जिम्मे उनके, माँगैं मोतैं, यह तौ बड़ी अनीति—१-१४३। (३) **उलटी या विरोधी बात।** उ॰—कहँ मेरौ कान्ह, कहाँ तुम ग्वारिनि, यह बिपरीत न जानी—१०-३११।

बिपाक—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विपाक] (१) **पूर्णता को पहुँचना, चरम उत्कर्ष।** (२) **दुर्दशा, कष्ट, संकट।** उ॰—प्रगट पाप-संताप सूर अब, कापर हठै गहौं? और इहाँउ बिवेक-अगिनि के बिरह-बिपाक दहौं—३-२।

बिपुल—वि॰ [सं॰ विपुल] **लम्बा, बड़ा** उ॰—नव-धनु, नील सरोजबरन बपु, बिपुल बाहु, केहरि कल-काँधे-९-५८।

बिफर—वि॰ [सं॰ विफल] (१) **निष्फल।** (२) **फलरहित।**

बिफरना—क्रि॰ अ॰ [सं॰ विप्लवन] (१) **बिद्रोही होना।** (२) **अप्रसन्न या क्रुद्ध होना, बिगड़ना।**

बिफल—वि॰ [सं॰ विफल] (१) **निष्फल, मिथ्या, असत्य।** उ॰—या सपने कौ भाव सिया सुनि, कबहुँ बिफल नहिं जाइ—९-८३। (२) **फलरहित, जिसमें फल न लगें।** उ॰—मुरली सुनत अचल चले। द्रवित ह्वै जल झरत पाहन बिफल बृक्ष फले–पृ॰ ३४७ (५४)।

बिबछना—क्रि॰ अ॰ [सं॰ विपक्ष] (१) **विरोधी होना।** (२) **फँसना, उलझना।**

बिबरन—वि॰ [सं॰ विवर्ण] (१) **खराब रंगवाला।** (२) **मलिन कांतिवाला।**

संज्ञा पुं॰ [सं॰ विवरण] **वृत्तांत, वर्णन।**

बिबरनि—संज्ञा पुं॰ सवि॰ [सं॰ विवर+हिं॰ नि॰ (प्रत्य॰)] **बिलों में, छिद्रों में।** उ॰—भुज भुजंग, सरोज नैननि, बदन बिधु जित लरनि। रहे बिबरनि, सलिल, नभ, उपमा अपर दुरि डरनि—१०-१०९।

बिबस—वि॰ [सं॰ विवश] (१) **मजबूर, विवश।** (२) **पराधीन, लीन।** उ॰—(क) कामी, बिबस कामिनी कैं रस, लोभ लालसा ब्यापी—१-१४०। (ख) तहाँ परासर रिषि चलि आए। बिबस होइ तिहिं कैं मद छाए—१-२२९।

क्रि॰ वि॰—**विवश होकर, लाचारी से।**

बिबर्जित—वि॰ [हिं॰ विवर्जित] **मना है, निषेध है।** उ॰—निराहार जलपान बिबर्जित—१००२।

बिबस्त्र—वि॰ [सं॰ वि=रहित+वस्त्र] **वस्त्ररहित, नग्न।** उ॰—करत बिबस्त्र द्रुपद-तनया कौं सरन सब्द कहि आयौ—१-१९०।

बिबहार—संज्ञा पुं॰ [सं॰ व्यवहार] **व्यवहार, बर्ताव।**

बिबाई—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ विपादिका] **एक रोग जिसमें तलुए का चमड़ा फटने से घाव हो जाते हैं।**

बिबाकी—संज्ञा स्त्री॰ [अ॰ बेबाकी] (१) **हिसाब की सफाई।** (२) **समाप्ति।**

बिबाद—संज्ञा पुं॰ [सं॰ विवाद] **वितर्क।** उ॰—अबिहित बाद-बिबाद सकल मत इन लगि भेष धरत—१-५५।

बिबि—वि॰ [सं॰ द्वि॰] **दो।**

बिबुध—संज्ञा पुं. [सं. विबुध] **देवता।**

बिबुधनि—संज्ञा पुं. सवि. [सं. विबुध+नि] **देवों का, देवताओं का।** उ.—बिबुधनि मन तर मान रमत ब्रज, निरखत जसुमतिसुखछिन-पल-घरि—१०-१२०।

बिभंजन—संज्ञा पुं. [हिं. भंजन] **तोड़ने या भंग करने का भाव या क्रिया।**

बिभंजना—क्रि. स. [हिं. भंजन] **तोड़ना, भंग करना।**

बिभंज्यो, बिभंज्यौ—क्रि. स. [हिं. बिभंजना] **तोड़ा।** उ.—रजक मारि कै दंड बिभंज्यो खेल करत गज प्रान लियो—२६१६।

बिभचार—वि. [सं. व्यभिचार] **उलटा, विपरीत।**

संज्ञा पुं.—**व्यभिचार।**

बिभव—संज्ञा पुं. [सं. विभव] **धन, संपत्ति, ऐश्वर्य।** उ.—(क) रोर कै जोर तैं सोर घरनी कियौ, चल्यौ द्विज द्वारिका-द्वार ठाढ़ौ। जोरि अंजलि मिले, छोरि तंदुल लए, इन्द्र के बिभव तैं अधिक बाढ़ौ—१-५। (ख) तीनि लोक बिभव दियौ तंदुल के खाता—१-१२३।

बिभाग—संज्ञा पुं. [सं. विभाग] **भाग, खंड।**

बिभागना—क्रि. स. [सं. विभाग] **भाग करना।**

बिभागि—क्रि. स. [हिं. विभागना] **भाग करके।** उ.—माखन पिंड बिभागि दुहुँ कर, मेलत मुख मुसुकाइ—१०-१७८।

बिभाना—क्रि. अ. [सं. विभा] **चमकाना।**

बिभावन—संज्ञा पुं. [सं. विभावन] **धारणा, विचार।**

वि.—**रुचिकर, प्रिय लगनेवाला।**

बिभिचारी—वि. [सं. व्यभिचारी] **व्यभिचारी।**

बिभीषन—संज्ञा पुं. [सं. विभीषण] **रावण का भाई जिसने लंका की विजय में श्रीराम की सहायता की थी।**

बिभूति—संज्ञा स्त्री. [सं. विभूति] (१) **राख या भस्म।** उ.—रावन तुरत बिभूति लगाए, कहत आइ, भिच्छा दै माई—९-५९। (२) **वैभव।** (३) **धन-संपत्ति।**

बिभूषन—संज्ञा पुं. [सं. विभूषण] (१) **भूषण, अलंकार।** उ.—हरिहर संकर नमो, नमो। अहिसायी, अहि-अंग-बिभूषन, अमित दान, बल-बिष-हारी—१०-१७१। (२) **सजाने की क्रिया या भाव, अलंकरण।**

बिभूषित—वि. [सं. विभूषित] **अलंकृत।** उ.—सुरभि-रेनु-तन, भस्म बिभूषित, बृष-बाहन, बन-बृषचारी—१०-१७२।

बिभोर—वि. [सं. विभोर] (१) **मग्न, लीन।** (२) **मस्त।**

बिभ्रम—संज्ञा पुं. [सं. विभ्रम] (१) **भ्रम, भ्रांति, धोखा।** उ.—कनक-कुंडल-स्रवन बिभ्रम कुमुद निसि सकुचाइ—१०-३५२। (२) **संदेह, संशय।**

बिमन—वि. [सं. विमनस्] **दुखी, उदास, चिंतित।**

क्रि. वि.—**अनमना होकर, बेमन से।**

बिमल—वि. [सं. विमल] (१) **स्वच्छ, निर्मल, पावन।** उ.—बेद बिमल नहिं भाख्यौ—१-१११। (२) **निर्दोष, निष्कलंक।** उ.—पारथ बिमल बभ्रुबाहन कौं सीस-खिलौना दीनौ—१-२९।

बिमात, बिमाता—संज्ञा स्त्री. [हिं. विमाता] **सौतेली माँ, विमाता।** उ.—सुर अरु असुर कस्यप के पुत्र। भ्रात-बिमात आपु मैं सत्रु—३-९।

बिमान—संज्ञा पुं. [सं. विमान] (१) **देवताओं का यान जो आकाश में चलता है।** (२) **वायुयान।** (३) **मृत पुण्यात्माओं को स्वर्ग ले जाने के लिए आनेवाला कल्पित यान।** उ.—सुवा पढ़ावत जीभ लड़ावति ताहि बिमान पठायौ—१-१८८। (४) **रथ आदि यान।** उ.—पाछे चढ़ो बिमान मनोहर बहुरो जदुपति होत अँधेरौ—२५३२।

वि.—**मान या प्रतिष्ठाहीन, गर्व-गौरवहीन।** उ.—जिहिं बल कमठ-पीठि पर गिरिधरि सजल सिंधु मथि कियौ बिमान—१०-१२७।

बिमानी—वि. [सं. वि+मान] **अभिमानरहित।**

बिमुख, बिमुखा—वि. [सं. विमुख] (१) **जो किसी के प्रतिकूल हो, विरोधी।** उ.—(क) मानी हार बिमुख दुरजोधन, जाके जोधा हे सौ भाई—१-२४। (ख) दान-धर्म बहु कियौ भानु-सुत, सो तुव बिमुख कहायौ—१-१०४। (२) **जो अनुरक्त न हो, जिसने मन न लगाया हो, उदासीन।** उ.—(क) ऐसैंहि जनम बहुत बौरायौ। बिमुख भयौ हरि-चरन-कमल तजि, मन संतोष न आयौ—१-२७। (ख) तुमहिं बिमुख रघुनाथ, कौन बिधि जीवन कहा बनै—९-५३।

बिमुद—वि. [सं. वि+मोद] **मोदरहित, खिन्न, चिंतित।**

बिमोहन—वि. [हिं. विमोहन] **मोहनेवाली, ध्यान आकृष्ट करनेवाली**। उ.—उर बनमाल बिचित्र बिमोहन, भृगु-भँवरी भ्रम कौं नासै—१-६९।

बिमोहना—क्रि. स. [हिं. बिमोहना] **लुभाना, मुग्ध करना**।
क्रि. अ.—**मुग्ध या आसक्त होना**।

बिमोहीं—क्रि. अ. [हिं. बिमोहना] **मुग्ध, आकृष्ट या आसक्त हुईं**। उ.—नाद सुनि बनिता बिमोहीं बिसारे उर-चीर—६५८।

बिय—वि. [सं. द्वि] (१) **दो**। (२) **दूसरा**।
संज्ञा पुं. [हिं. बीज] **बीज**।

बियहुता—वि. [हिं. विवाहित] **जिसके साथ विवाह हो**।

बिया—संज्ञा पुं. [हिं. बीज] **बीज**।
वि. [सं. द्वि] **दूसरा, अन्य**।
संज्ञा पुं.—(१) **शत्रु**। (२) **विरोधी**।

बियाज—संज्ञा पुं. [सं. व्याज] **ब्याज, सूद**।

बियाजू—वि. [सं. व्याज+युक्त] (धन) **जो ब्याज पर लगा या लगाने को हो**।

बियाध—संज्ञा पुं. [सं. व्याध] **बहेलिया**।

ब्याधा—संज्ञा पुं. [सं. व्याध] **बहेलिया**।
संज्ञा स्त्री. [सं. व्याधि] (१) **रोग**। (२) **विपत्ति**।

बियान—संज्ञा पुं. [हिं. बियाना] **प्रसव, जनन**।

बियाना—क्रि. स. [सं. विजनन] **बच्चा जनना**।

बियापना—क्रि. स. [सं. व्यापना] **फैलना, व्याप्त होना**।

बियाबान—संज्ञा पुं. [फा.] **उजाड़ स्थान, जंगल**।

बियारी, बियारू—संज्ञा स्त्री. [सं. बि+अद] **रात का भोजन, ब्यालू**। उ.—साँझ भई घर आवहु प्यारे।....। सूर स्याम कछु करौ बियारी, पुनि राखौं पौढ़ाइ—१०-२२६।

बियाल—संज्ञा पुं. [सं. व्याल] **सर्प, भुजंग**।

बियालू—संज्ञा स्त्री. [स. वि+अद] **रात का भोजन**।

बियावर—वि. स्त्री. [हिं. ब्याना] **ब्याने या बच्चा देनेवाली**।

बियाह—संज्ञा पुं. [सं. विवाह] **विवाह**।

बियाहता—वि. स्त्री. [सं. विवाहित] (१) **जिसके साथ विवाह हो**। (२) **जिसका विवाह हो चुका हो**।

बियाहन—क्रि. स. [हिं. ब्याहना] **विवाह करने, ब्याहने**। उ.—तेरी सौं, मेरी सुनि मैया, अबहिं बियाहन जैहौं—१०-१९३।

बियाहा—वि. पुं. [हिं. ब्याह] **विवाहित**।

बियो—संज्ञा पुं. [हिं.] **बेटे का बेटा, पोता**।

बियोग—संज्ञा पुं. [सं. वियोग] (१) **संयोग का अभाव, विच्छेद**। (२) **पृथकता, अलगाव**। उ.—नैंकु बियोग मीन नहिं मानत, प्रेम-काज बपु हारचौ—१-२१०।

बियौ—वि. [सं. द्वितीय, प्रा. वीय, हिं. बियौ] **दूसरा, अन्य**। उ.—(क) सूरदास प्रभु भक्त-बछल हैं, उपमा कौं न बियौ—१-३८। (ख) इनतैं नहिं प्रभु और बियौ—१-८५।

बिरंग, बिरंगा—वि. [हिं. बि+रंग] (१) **कई रंगों का**। (२) **बिना रंग का**।

बिरंचि—संज्ञा पुं. [सं. विरंचि] **सृष्टि रचनेवाला, ब्रह्मा, विधाता**। उ.—सिव-बिरंचि, सुर-असुर, नाग-मुनि, सुतौ जाँचि मन आयौ—१-२००।

बिरक्त—वि. [सं. बिरक्त] **जो सांसारिकता में लीन न रहता हो, वैरागी, संसार से उदासीन**। उ.—(क) बिषयी भजे, बिरक्त न सेए, मन धन-धाम धरे—१-१९८।(ख) कौरव-पति ज्यौं बन कौं गयौ। धर्मपुत्र बिरक्त पुनि भयौ—१-२८४।

बिरचना—क्रि. अ. [सं. वि+रुचि] (१) **विरक्त या उदासीन होना**। (२) **अप्रसन्न होना**।

बिरचि—क्रि. स. [हिं. बिरचना] **रचकर, बनाकर, निर्माण करके**। उ.—(क) एकनि लै मंदिर चढ़ै, एकनि बिरचि बिगोवै (हो)—१-४४। (ख) बर सिंगार बिरचि राधा जू चली सकल ब्रज-बालिका—८०९।

यौ०—रचि-बिरचि—**सजधजकर, बना-सँवारकर**। उ.—रचि-बिरचि मुख-भौंह-छबि लै चलति चित्त चुराइ—१-५६।

बिरच्यौ—क्रि. स. [हिं. बिरचना] (१) **रचा, बनाया**। (२) **अलंकृत किया, सजाया**। उ.—रहचौ मन सुमिरन कौ पछितायौ। यह तन राँचि-राँचि करि बिरच्यौ, कियौ आपनौ भायौ—१-६७।

बिरछ—संज्ञा पुं. [सं. वृक्ष] **पेड़, वृक्ष**।

बिरछिक, बिरछीक—संज्ञा स्त्री· [सं. वृश्चिक] **बिच्छू।**

बिरझना—क्रि. अ. [सं. विरुद्ध] **उलझना, झगड़ना।**

बिरतंत, बिरतांत—संज्ञा पुं. [सं. वृत्तांत]। **विवरण, वर्णन।**

बिरत—वि. [सं. विरत] **जो सांसारिकता में लिप्त न हो, विरक्त, वैरागी।** उ.-रे मन, गोबिंद के ह्वै रहिये। इहिं संसार अपार बिरत ह्वै, जम की त्रास न सहियै-१-६२।

बिरता—संज्ञा पुं. [सं. वृत्ति] **शक्ति, सामर्थ्य।**

बिरताना—क्रि. स. [सं. वर्त्तन] **बाँटना, वितरण करना।**

बिरति—संज्ञा स्त्री· [सं. विरति] **सांसारिकता से जी हटना, विरक्ति, वैराग्य।** उ.—(क) अजहूँ लौ मन मगन काम सौं बिरति नाहिं उपजाई—१-१८७। (ख) जौ तू सूर सुखहिं चाहत है, तौ करि बिषय बिरति—१-३००। (ग) बाल दसा अवलोकि सकल मुनि, जोग-बिरति बिसरावैं—१०-९७।

बिरतिया—संज्ञा पुं. [सं. वृत्ति + इया] **बरेखी करनेवाला।**

बिरथा—क्रि. वि. [सं. व्यर्थ] **निरर्थक, व्यर्थ, वृथा, बेकाम।** उ.—(क) बिरथा जन्म लियौ संसार—१-२९४। (ख) बिरथा जनम गँवायौ—७६५।
वि. **बेकाम, निरर्थक, व्यर्थ।**

बिरद—संज्ञा पुं. [सं. विरुद] **बड़ाई, यश, कीर्ति।**

बिरदैत—संज्ञा पुं. [हिं. बिरद + ऐत] **नामी वीर।**
वि.—**नामी, प्रसिद्ध, विख्यात।**

बिरध—वि. [सं. वृद्ध] **बूढ़ा, वृद्ध।** उ.—(क) बिरध भएँ कफ कंठ बिरोध्यौ—१-३२९। (ख) एक बिरध-किसोर-बालक एक जोबन जोग—१०-२६।

बिरधना—क्रि. अ. [हिं. बढ़ना] **बढ़ना, वृद्धि होना।**

बिरधाई—संज्ञा स्त्री· [हिं. बिरध + आई] **बुढ़ापा।**

बिरधापन—संज्ञा पुं. [सं. वृद्ध + हिं. पन] **बुढ़ापा, वृद्धावस्था।** उ.—कछु बालापन ही मैं बीतै। कछु बिरधापन माँहि बितीतै—१-२।

बिरधै—क्रि. अ. [हिं. बढ़ना] **बढ़ती है, वृद्धि को प्राप्त होती है।** उ.—कह्यौ सुक श्रीभागवत बिचारि। हरि की भक्ति जुगै जुग बिरधै, आन धर्म दिन चारि—२-२।

बिरधौ—वि. [सं. वृद्ध] **जो वृद्ध हो, जो बूढ़ा हो।** उ.—सिसु, किसोर, बिरधौ तनु होइ। सदा एकरस आतम सोइ—७-२।

बिरमत—क्रि. अ. [हिं. बिरमना] **ठहरता है, रुकता है।** उ.—मैं तो अपनी कही बड़ाई। अपने कृत तै हौं नहिं बिरमत, सुनि कृपालु जदुराई—१-२०७।

बिरमना—क्रि. अ. [सं. विलंबन] **(१) रुकना। (२) सुस्ताना। (३) आसक्त होकर रम जाना।**

बिरमहिं—क्रि. अ. [हिं. बिरमना] **मुग्ध होकर रम गये हैं।** उ.—हमहिं छाँड़ि बिरमहिं कुबजा सँग, आए न रिपु रन जीति—३०५४।

बिरमाइ—क्रि. अ. [हिं. बिरमना] **ठहरे, रुके।** उ.—कोउ गए ग्वाल गाइ बन घेरन, कोउ गए बछरू लिवाइ।........। सूर स्याम तहँ बैठि बिचारत, सखा कहाँ बिरमाइ—५००।

बिरमाई—क्रि.अ.[हिं. बिरमाना] **रोक कर, फँसाकर, बहलाकर।** उ.-कहाँ लौं रखिए मन बिरमाई—२८०५।

बिरमाए—क्रि. स. [हिं. बिरमाना] **मुग्ध करके फँसालिया।** उ.—(क) अरुझि काम की बेलि सौं कौने बिरमाए—(ख) को जानै काहे ते सजनी कहुँ बिरहिनि बिरमाए—२८५४। (ग) सीतल पंथ जोवति हम निसिदिन कित बिरहिनि बिरमाए—३०८३।

बिरमाना—क्रि. स. [हिं. बिरमना] **(१) रोकना। (२) व्यतीत करना। (३) मुग्ध करके फँसा रखना।**

बिरमायो—क्रि. अ. [हिं. बिरमना] **शांति पाते हैं, धीरज होता है।** उ.—सूरस्याम पहिले गुन सुमिरिहि प्रान जात बिरमायो—२८४०।

बिरमावत—क्रि. स. [हिं. बिरमाना] **(१) ठहर जाते हैं, रुक जाते हैं।** उ.—भीतर तैं बाहर लौं आवत।....। अहुँठ पैग बसुधा सब कीनी, धाम अवधि बिरमावत—१०-१२५। **(२) मुग्ध होकर फँस जाता है।** उ.—जेहि जु अंग अवलोकन कीन्हौ सो तन-मन तहँ ही बिरमावत—२३४७।

बिरमाँहिं—क्रि. अ. [हिं. बिरमना] **(१) आराम करते हैं, विश्राम करते हैं, सुस्ताते हैं।** उ.—पदुम-बास सुगंध-सीतल लेत पाप नसाहिं।........। सघन-गुंजत बैठि उन पर भौंरहूँ बिरमाहिं—१-३३८। **(२) ठहरते हैं, रुकते हैं।** उ.—सूरदास स्वामी सौं कहियौ, अब बिरमाँहि नहीं—९-९१।

बिरमि—क्रि. अ. [हिं. बिरमना] **ठहरकर, रुककर।** उ.—तातैं बिरमि रहे रघुनंदन, करि मनसा-गति पंग—९-२३।

बिरला—वि. [सं. विरल] **कोई-कोई, इक्का-दुक्का, एक-आध।** उ.—(क) हरि, हरि-भक्त एक, नहिं दोइ। पै यह जानत बिरला कोइ—१-२९०। (ख) नटवत करत कला सकल, बूझै बिरला कोइ—२-३६।

बिरवा—संज्ञा पुं. [सं. विरुह] (१) **वृक्ष।** (२) **पौधा।** उ.—धोखे ही बिरवा लगाइ कै काटत नाहिं बहोरी—३३४८।

बिरवाहीं—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिरवा+ही] **बाग या स्थान, जहाँ छोटे पौधे लगे हों।**

बिरषभ—संज्ञा पुं. [सं. वृषभ] **बैल।**

बिरस—वि. [सं. विरस] **रसरहित, रसहीन।**

संज्ञा पुं.—(१) **प्रेम का अभाव।** (२) **अनबन।**

बिरसन—संज्ञा पुं. [हिं.] **जहर, बिष।**

बिरसना—क्रि. अ. [सं. विलास] **भोग-बिलास करना।**

बिरह, बिरहा—संज्ञा पुं. [सं. विरह] **बियोग।** उ.—मीड़त हाथ सकल गोकुल जन बिरह बिकल बेहाल—२५३६।

बिरहा—संज्ञा पुं. [देश.] **एक तरह का लोक-गीत।**

बिरहाना—क्रि. अ. [हिं. बिरह] **बिरह से दुखी होना।**

बिरहानी—क्रि. अ. [हिं. बिरह] **बिरह से दुखी हुई।**

बिरही—वि. [हिं. बिरह] **वियोगी।**

बिरहुला—संज्ञा पुं. [पा. विरूल्हक=नाग] **साँप, सर्प।**

बिरहुली—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिरहुला] **साँपिनि, नागिनि।**

बिरहो, बिरहौ—संज्ञा पुं. सवि. [हिं. बिरह] **बिरह भी, विरह की स्थिति भी।** उ.—ऊधौ, बिरहौ प्रेम करै—३३५८।

बिराग—संज्ञा पुं. [सं. विराग] (१) **इच्छा का अभाव।** (२) **विरक्ति, वैराग्य।**

बिराज—क्रि. अ. [हिं. विराजना] **शोभित होकर, शोभा बढ़ाकर।** उ.—भीषम, द्रोन, करन दुरजोधन, बैठे सभा बिराज—१-२५५।

बिराजत—क्रि. अ. [हिं. बिराजना] **शोभित होता है।** उ.—(क) भाल-तिलक मसि-बिंदु बिराजत—१०-१०६। (ख) हृदय हरि-नख अति बिराजत—१०-२३४।

बिराजन—संज्ञा पुं. [हिं. बिराजना] **शोभित होने की क्रिया या भाव।** उ.—यहै शब्द सुनियत गोकुल मैं मोहन-रूप बिराजत—६२२।

बिराजना—क्रि. अ. [सं. वि+रंजन] (१) **शोभित होना।** (२) **बैठना।**

बिराजा—क्रि. अ. [हिं. बिराजना] **शोभित हुआ।** उ.—रविबंसी भयौ रैवत राजा। ता सम जग दुतिया न बिराजा—९-४।

बिराजैं—क्रि. अ. [हिं. बिराजना] **शोभित हैं, शोभा देते हैं, विराजते हैं।** उ.—(क) लंका राज बिभीषन राजैं, ध्रुव आकास बिराजैं—१-३६। (ख) उर पर पदिक कसुम बनमाला, अंगद खरे बिराजैं—४५१।

बिराट—संज्ञा पुं. [सं. विराट] (१) **ब्रह्म का वह स्थूल स्वरूप जिसके अंदर संपूर्ण विश्व है।** (२) **विश्व।**

वि.—**बहुत बड़ा या भारी।** उ.—इक इक रोम बिराट किए तन कोटि-कोटि ब्रह्मांड—४८७।

बिरादरी—संज्ञा स्त्री. [फा.] **जातीय समाज।**

बिरान, बिराना—वि. [फा. बेगाना] (१) **जो अपने से अलग हो, पराया।** उ.—सूरदास गोपिनि परतिज्ञा छुवहि न जोग बिरान—३३५७। (२) **दूसरे का।**

बिराना—क्रि. अ. [अनु.] **मुँह बनाना या चिढ़ाना।**

बिरानी—वि. स्त्री. [हिं. बिराना (पुं.)] (१) **दूसरे की, अन्य की।** (२) **भिन्न, दूसरी, परिवर्तित, बदली हुई।** उ.—नाहिं रही कछु सुधि तन-मन की, भई जु बात बिरानी—१-३०५।

बिराने—वि. [हिं. बिराना] (१) **दूसरों के, अन्य व्यक्ति के।** उ.—भक्ति बिनु बैल बिराने ह्वैहौ—१-३३१। (२) **पराये।** उ.—को है अपने कौन बिराने—१०४१।

बिरानो—वि. [हिं. बिराना] **पराया, अन्य।** उ.—बाप रिसाइ माइ घर मारै हँसै बिरानो लोग री—१२०३।

बिराम—संज्ञा पुं. [सं. विराम] **आराम, विश्राम।** उ.—धेनु-काज नहिं विराम—६१९।

बिरावना—क्रि. स. [सं. विरव] **मुँह चिढ़ाना।**

बिरासी—वि. [हिं. विलासी] **विलास में लीन रहनेवाला।**

बिरिख—संज्ञा पुं. [सं. वृक्ष] **वृक्ष।**
संज्ञा पुं. [सं. वृष] **बैल, साँड़।**

बिरिछ—संज्ञा पुं. [सं. वृक्ष] **वृक्ष।**

बिरिध—वि. [सं. वृद्ध] **बूढ़ा।**

बिरियाँ—संज्ञा स्त्री. [हि. बेला] **समय, वक्त, वेला।** उ.—साँझ की बिरियाँ बिरद भई सखी री—६०५।
संज्ञा स्त्री. [सं. वार, हि. बाद] **बार, पारी, बेर।** उ.—(क) सूर कूर कहै मेरी बिरियाँ, बिरद कितै बिसरायौ—१-१८८। (ख) सूर की बिरियाँ निठुर भए प्रभु मोतैं कछु न सर्यौ—

बिरिया—संज्ञा स्त्री. [हि. बाली] **कान का एक गहना।**

बिरी—संज्ञा स्त्री. [हि. बीड़ा] **पान का बीड़ा।** उ.—पीरे पान-बिरी मुख नावति—५१४।

बिरुँधना—क्रि. अ. [हि. रुँधना] (१) **मार्ग रुकना।** (२) **उलझना।** (३) **घेरा जाना।**
क्रि. स.—**मार्ग रोकना या अवरुद्ध करना।**

बिरुँध्यौ—क्रि. अ. [हि. बिरुँधना] **रुँध गया।** उ.—पलित केस, कफ कंठ बिरुँध्यौ, कल न परति दिन-राती—१०-११८।

बिरुझना—क्रि. अ. [हि. उलझना] **झगड़ना।**

बिरुझाई—क्रि. अ. [हि. बिरुझना] **क्रुद्ध या अप्रसन्न होकर।** उ.—कब तुमकौं मैं बोलि बुलाई। केहि कारन तुम धाई आईं। यह सुनि बहुरि चली बिरुझाई—३९१।

बिरुझाति—क्रि. अ. [हि. बिरुझाना] **झगड़ती या अप्रसन्न होती है।** उ.—हठ करति बिरुझाति तब जिय जननि जानति बारि—७७७।

बिरुझाना—क्रि. अ. [हि. उलझना] **अप्रसन्न होना।**

बिरुझानी—क्रि. अ. [हि. बिरुझाना] (१) **क्रुद्ध होकर, बिगड़कर, झुँझलाकर।** उ.—को निरदई रहै तेरैं घर, को तेरैं सँग बैठै आनी। सुनहु सूर कहि-कहि पचिहारीं, जुवती चलीं घरनि बिरुझानी—३६८। (२) **अप्रसन्न हुई।** उ.—बार बार सुत सों बिरुझानी—१०१०।

बिरुझाने—क्रि. अ. [हि. बिरुझाना] (१) **रूठ गये, खीझे, झगड़ने लगे, उलझने लगे।** उ.—बरजत-बरजत बिरुझाने। करि क्रोध मनहिं अकुलाने—१०-१८३। (२) **खीझकर, झगड़कर।** उ.—सूर स्याम बिरुझाने सोए—१-१९६।

बिरुझानौ—क्रि. अ. [हि. बिरुझाना] **खीझा, अप्रसन्न हुआ।** उ.—(क) मेरौ आजु अतिहिं बिरुझानौ—१०-१९७। (ख) साँझहिं तैं अतिहीं बिरुझानौ—१०-२००।

बिरुझावत—क्रि. अ. [हि. बिरुझावना] **खीझता-मचलता है।** उ.—लागी भूख, चंद मैं खैहौं, देहि-देहि रिस करि बिरुझावत—१०-१८८।

बिरुझावना—क्रि. अ. [हि. बिरुझाना] **खीझना, झुँझलाना, मचलना, झगड़ना, अप्रसन्न होना।**

बिरुझै—क्रि. अ. [हि. बिरुझाना] **खीझता, मचलता या रूठता है।** उ.—जो बालक जननी से बिरुझै माता ताको लेइ मनाइ—९७९।

बिरुझैहै—क्रि. अ. [हि. बिरुझना] (१) **झगड़ेगा, उलझेगा।** (२) **रूठ जायगा, बिगड़ जायगा, बिरुझावेगा।** उ.—मेरे लाल के प्रेम खिलौला, ऐसौ को लै जैहै री।........। आवतहीं लै जैहै राधा, पुनि पाछैं पछितैहै री। सूरदास तब कहति जसोदा, बहुरि स्याम बिरुझैहै री—७११।

बिरुद—संज्ञा पुं. [सं. विरुद] **यश, कीर्ति।**

बिरुदावलि—संज्ञा पुं. [सं. विरुद+अवली] (१) **सविस्तार गुण-कथन, यश-वर्णन, प्रशंसा।** (२) **यश, विरुद, प्रशस्ति।** उ.—दीन कौ दयाल सुन्यौ, अभय-दान-दाता। साँची बिरुदावली, तुम जग के पितु-माता—१-१२३।

बिरुदैत—संज्ञा पुं. [हि. बिरदैत] **प्रसिद्ध वीर।**

बिरुद्ध—वि. [सं. विरुद्ध] **जो विरोधी है, प्रतिकूल, जो अनुकूल न हो।** उ.—बेद-बिरुद्ध सकल पांडव-कुल, सो तुम्हरैं मन भायो—१-१०४।

बिरुधाई—संज्ञा स्त्री. [सं. वृद्ध] **बुढ़ापा।**

बिरूप—वि. [सं. विरूप] **रूपहीन, कुरूप।** उ.—रे रे चपल, बिरूप, ढीठ, तू बोलत बचन अनेरौ—९-१३२।

बिरोग—संज्ञा पुं. [सं. वियोग] (१) **बिछोह।** (२) **दुख।**

बिरोधना—क्रि. अ. [सं. विरोध] **विरोध करना।**

बिरोधी—वि. [सं. विरोधी] **विरोध करनेवाला**। उ.—सूरदास सुनि भक्त-बिरोधी चक्र सुदरसन जारौं—१-२७२।

बिरोधे—क्रि. अ. [हिं. बिरोधना] **विरोध किया, बैर ठाना, द्वेष रखा**। उ.—ज्ञान-बिवेक बिरोधे दोऊ, हते बंधु हितकारी—१-१७३।

बिरोधैं—संज्ञा पुं. सवि. [सं. विरोध] **विरोध के द्वारा**। उ.—मुक्ति-हेत जोगी स्रम साधैं, असुर बिरोधैं पावैं—१-१०४।

बिरोधै—क्रि. अ. [हिं. रुँधना] **रुँधता है**। उ.—सीत-बात-कफ कंठ बिरोधै, रसना टूटै बात—१-३१३।

बिरोध्यौ—क्रि. अ. [हिं. रुँधना] **रुँध गया**। उ.—बिरध भऐं कफ कंठ बिरोध्यौ, सिर धुनि धुनि पछितान्यौ—१-३२६

बिलंगी—संज्ञा स्त्री. [देश०] **अरगनी, अलगनी**।

बिलंब—संज्ञा [सं. विलंब] **देरी, बहुत समय**। उ.—अब जौ तुम्हरी आज्ञा होइ। छाँड़ि बिलंब करौं मैं सोइ—४ ५।

बिलंबना—क्रि. अ. [सं. विलंब] (१) **देर करना**। (२) **रुकना**।

बिल—संज्ञा पुं. [सं. विल] (१) **छेद**। (२) **जमीन या दीवार में (चूहे आदि द्वारा) बनाया गया विवर या छेद**।

बिलकुल—क्रि. वि. [अ.] (१) **पूरा**। (२) **आदि से अन्त तक**।

बिलख—संज्ञा पुं. [हिं. बिलखना] **विलाप, दुख**। उ.—मति हिय बिलख करौ सिय, रघुबर हतिहैं कुल दैयत कौ—९-८४।

बिलखत—क्रि. अ. [हिं. बिलखना] **विलाप करते हैं, रोते हैं**। उ.—हँसैं हँसत, बिलखैं बिलखत हैं, ज्यौं दरपन मैं झाईं—१-१९५।

बिलखति—क्रि. अ. [हिं. बिलखना] **दुखी होती हैं**। उ.—अतिही सुन्दर कुमार जसुमति रोहिणि बार बिलखति यह कहति सबै लोचन जल ढोरैं—२६०४।

बिलखना—क्रि. अ. [सं. विलाप] (१) **रोना, बिलापना**। (२) **दुखी होना**। (३) **संकुचित होना**।

बिलखात—क्रि. अ. [हिं. बिलखना] (१) **रोता है**। उ.—देखि री देखि हरि बिलखात—३६०। (२) **दुखी होता है**। उ.—कबहूँ मग-मग धूरि बटोरत भोजन कौं बिलखात—२-२२।

बिलखाना—क्रि. अ. [हिं. बिलखना] (१) **दुखी या खिन्न होना**। (२) **रोना, विलाप करना**।

क्रि. स.—(१) **दुखी करना**। (२) **रुलाना**।

बिलखानी—क्रि. अ. [हिं. बिलखाना] **दुखी हुई**। उ.—(क) यह सुनि कै जुवती बिलखानी—२६०६। (ख) दुसह सँदेस सुनत माधो को गोपीजन बिलखानी—२९८८।

बिलखाने—क्रि. अ. [हिं. बिलखना] **दुखी हुए**। उ.—भ्रात-मुख निरखि राम बिलखाने—९-५२।

बिलखान्यौ—क्रि. अ. [हिं. बिलखना] **दुखी हुआ, चिंचित हुआ**। उ.—इंद्र हँस्यौ, हर हिय बिलखान्यौ, जानि बचन कौ भंग—९-१५८।

बिलखावै—क्रि. अ. [हिं, बिलखाना] (१) **विलाप करता है, रोता है**। (२) **दुखी होता है**। उ.—उग्रसेन की आपदा सुनि-सुनि बिलखावै—१-४।

बिलखि—क्रि. अ. [हिं. बिलखना] **दुखी होकर**। उ.—करति कछू न कानि, बकति है कटु बानि, निपट निलज बैन बिलखि सहूँ—१०-२९५।

बिलखैं—क्रि. अ. [हिं. बिलखना] **बिलखते देखकर, दुखी होने पर**। उ.—हँसैं हँसत बिलखैं बिलखत हैं ज्यौं दरपन मैं झाईं—१-२९५।

बिलख्यो, बिलख्यौ—क्रि. अ. [हिं. बिलखना] **दुखी हुए**। उ.—देखि अक्रूर नर-नारि बिलखे—२५०३।

बिलग—वि. [हिं. वि+लगना] **अलग, पृथक**।

संज्ञा पुं.—(१) **पृथकता**। (२) **बुरा (भाव), दुख**। उ.—बिलग मति मानौ ऊधौ प्यारे—पृ. ३१७५।

बिलगाना—क्रि. अ. [हिं. बिलग+आना] **अलग होना**।

क्रि. स.—(१) **अलग या दूर करना**। (२) **छाँटना**।

बिलगानी—क्रि. अ. [हिं. बिलगाना] **दूर हो गयी**। उ.—अब ब्रज सूनो भयौ गिरिधर बिनु गोकुल-मति बिलगानी—२६९६।

वि.—**अलग, पृथक**। उ.—हम एक ही संग, एक ही मत सब कोउ, नहि बिलगानी—१८३०।

बिलगी—संज्ञा पुं. [देश.] **एक संकर राग**।

बिलगु—संज्ञा पुं. [हिं बिलग] (१) **पृथकता।** (१) **बुरा या अनुचित (भाव)।**

बिलच्छन—वि.[सं. विलक्षण] **अनोखा, अद्भुत।**

बिलछना—क्रि. अ. [सं. लक्ष] **ताड़ जाना, लक्ष करना।**

बिलना—क्रि. अ. [हिं. बेलना] **बेला जाना।**

बिलनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिल] **काली भ्रमरी।**

संज्ञा स्त्री.—**पलक पर होनेवाली फुंसी।**

बिलपति—क्रि. अ. [हिं. बिलपना] **रोती है।** उ.—कबहुँ बिहँसति,कबहुँ बिलपति,सकुचि रहति लजाइ—६७८।

वि.—**रोती-बिलखती।** उ.—त्रेता जुग एक पत्नी व्रत किए सोऊ बिलपति छोरी—२८६३।

बिलपना—क्रि. अ. [सं. विलाप] **रोना-कलपना।**

बिलबिलाना—क्रि. अ. [अनु.] (१) **(कीड़ों का) रेंगना।** (२) **बहुत व्याकुल और दुखी होना।** (३) **रोना-चिल्लाना।** (४) **भूख से बेचैन हो जाना।**

बिलम—संज्ञा स्त्री. [सं. बिलंब,] **विलंब, देर।** उ.—(क) हरषवंत ह्वै चले तहाँ तैं मग मैं बिलम न लाई—९-१०२। (ख) आवहु बेगि बिलम जनि लावहु, गैया दूरि गई—४४३।

बिलमना—क्रि. अ. [सं. विलंब] (१) **विलंब करना।** (२) **रुकना।** (३) **मुग्ध होकर रम जाना।**

बिलमाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिलंब+आई] **देर।** उ.—नेक करहु अब जिनि बिलमाई—१००४।

बिलमाना—क्रि. स. [हिं. बिलमना का सक.] (१) **रोकना, ठहरना।** (२) **मुग्ध करके रोक लेना।**

बिलमि—क्रि. अ. [हिं. बिलमना] **रुक या ठहर कर।**

प्र०—बिलमि रहे—**रुक गये, ठहरे, रम गये।** उ.—(क) माधव बिलमि बिदेस रहे। (ख) कहाँ धौं बिलमि रहे, नैन मरत दरसन की साधौ—१८०९।

बिललाइ—क्रि. अ. [हिं. बिललाना] **दुखी होकर, बिलख कर।** उ.—जहाँ जहाँ दुहि बन चराइ, मरत तहाँ बिललाइ—३४२४।

बिललाउ—क्रि. अ. [हिं. बिललाना] **दुखी होता है।** उ.—सूर स्याम हैं पलक धाम मैं लखि चित कत बिललाउ—३४७२।

बिललाति—क्रि. अ. [हिं. बिललाना] **व्याकुल होकर असंबद्ध बातें कहती है, बिलखती है, दुखी होती हैं, रोती है।** उ.—(क) पाँच बरष को मेरो नन्हैया, अचरज तेरी बात। बिनहीं काज साँटि लै धावति, ता पाछैं बिललात—१०-२५७। (ख) धेनु फिरत बिललाति बच्छ थन कोउ न लगावै—५८९।

बिललाते—क्रि. अ. [हिं. बिललाना] **दुखी होते हैं।** उ.—भवन ते बिछुरे मीन मकर बिललाते—३४६१।

बिललाना—क्रि. अ. [हिं. बिलखना] (१) **बिलखना, बिलाप करना।** (२) **बहुत दुखी होकर असंबद्ध बातें करना या बकना।**

बिललायो, बिललायौ—क्रि. प्र. [हिं. बिललाना] **बिलखा, दुखी हुआ, विलाप किया।**

बिलवाना—क्रि. स. [सं. वि+लय] (१) **नष्ट करने को प्रवृत्त करना,** (२) **छिपवाना, लुप्त कराना।**

क्रि. स. [हिं. बेलना] (१) **बेलने में सहायता करना।** (२) **बेलने को प्रवृत्त करना।**

बिलसत—क्रि. स. [हिं. बिलसना] **भोग करते हैं, भोगते हैं।** उ.—(क) निसि दिन बिषय-बिलासनि बिलसत फूटि गईं तव चारचौ—१-१०१। (ख) इंद्रासन बैठे सुख बिलसत दूर किये भुव-भार। (ग) जो रस नंद-जसोदा बिलसत, सो नहिं तिहूँ भुवनियाँ—१०-२३८।

क्रि. अ.—**विशेष रूप से शोभित होता है, बहुत भला जान पड़ता है।** उ.—सूरदास स्वामी की लीला, अति प्रताप बिलसत नँदरैया—१०-११५।

बिलसना—क्रि. अ. [सं. बिलसन] **भला लगना, शोभित होना।**

क्रि. अ. **भोगना, सुख उठाना।**

बिलसहु—क्रि. अ. [हिं. बिलसना] **भोग करो, सुख उठाओ।** उ.—राम रस रचौ मिलि संग बिलसहु सबै बिहँसि हरि कह्यौ यों निगम बानी—पृ. ३४३(२१)।

बिलसात—क्रि. अ. [हिं. बिलसना] **सुखी होता है।** उ.—लोचन सफल करौ प्रभु अपने हरि मुखकमल देखि बिलसात—१० उ०-५९।

बिलसाना—क्रि. स. [हिं. बिलसना] (१) **भोग करना, काम में लाना।** (२) **भोगने को प्रवत्त करना।**

बिलसि—क्रि. स. [हिं. बिलसना] **भोग करो, काम में लाओ, उपभोग करो।** उ.—बिधि संजोग टरत नहिं टारैं, बन दुख देख्यौ आनि। अब रावन घर बिलसि सहज सुख, कह्यौ हमारी मानि - ९-७७।

बिलसैं—क्रि. स. [हिं. बिलसना] **भोग करें, काम में लाएँ, बरतें।** उ.—कै तन देउँ मध्य पावक के, कै बिलसैं रघुराइ—९-७७।

बिलसै—क्रि. स. [हिं. बिलसना] **भोगे, (सुख) लूटे।** उ.—जीवै तौ सुख बिलसै जग मैं कीरति लोकनि गावै—९-१५२।

बिलहरा—संज्ञा पुं. [हिं. बेल+हरा] **पान का डिब्बा।**

बिला—अव्य. [अ.] **बिना, बगैर।**

बिलाइ—क्रि. अ. [हिं. बिलाना] **नष्ट होते हैं, रह नहीं जाते, विलीन होते हैं।** उ.—बारि मैं ज्यौं उठत बुद-बुद लागि बाइ बिलाइ—१-३१६।

बिलाई—क्रि. अ. [हिं. बिलाना] **नष्ट हो (गये)।** उ.—पूर्व पाप सब गए बिलाई—४-१२।

संज्ञा स्त्री. [हिं. बिल्ली] (१) **बिल्ली नामक पशु।** (२) **सिटकिनी।**

बिलान—क्रि. अ. [हिं. बिलाना] **लुप्त हुआ, अदृश्य हुआ। छिप गया।** उ.—फोर्‌यौ नयन, काग नहिं छाड़्यौ सुरपति के बिदमान। अब वह कोप कहाँ रघुनन्दन, दससिर-बेर बिलान—९-८३।

बिलाना—क्रि. अ. [सं. विलयन] (१) **नष्ट या विलीन होना।** (१) **छिपना, अदृश्य होना।**

बिलाप—संज्ञा पुं. [सं. विलाप] **बिलखकर रोना, क्रंदन, रुदन।** उ.—घरी इक सजन-कुटुँब मिलि बैठें, रुदन-बिलाप कराहीं—१-३१९।

बिलापना—क्रि. अ. [हिं. बिलाप] **बिलाप करना।**

बिलार—संज्ञा पुं. [सं. बिडाल] **बिल्ला, मार्जार।** उ.—मन सुवा तन पींजरा, तिहिं माँझ राखै चेत। काल फिरत बिलार-तनु धरि, अब घरी तिहिं लेत—१-३११।

बिलारी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिलार] **बिल्ली, मंजारी।**

बिलाव—संज्ञा पुं. [हिं. बिलार] **बिल्ला, मार्जार।** उ.—जैसैं घर बिलाव के मूसा, रहत बिषय-बस वैसौ—२-१४।

बिलावल—संज्ञा पुं. [सं.] **एक राग।** उ.—भरति रंग रति नागरि राजति मानहु उमँगि बिलावल फोरी—२४०६।

बिलास—संज्ञा पुं. [सं. विलास] (१) **हर्ष, आनन्द, विनोद।** उ.—(क) अपनैं-अपनैं रस-बिलास काहू नहिं चीन्हौ—३९४। (ख) सूरदास ग्वारिनि सँग मिलि हरि लागे करन बिलास—४१०। (२) **सुख-भोग।**

बिलासना—क्रि. स. [सं. बिलसन] **भोग करना।**

बिलासी—वि. [सं. विलासी] **सुख भोगनेवाला, विनोद प्रिय।** उ.—सो प्रभु घर घर घोष-बिलासी—३९१।

बिलुठना—क्रि. अ. [सं. लुंठन] **(दुख, पीड़ा आदि से व्याकुल होकर) जमीन पर लेटना।**

बिलुद्धना—क्रि. अ. [सं. विलुप्त] **नष्ट हो जाना।**

बिलैया—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिल्ली] **बिल्ली।**

बिलोकना—क्रि. स. [सं. विलोकन] (१) **देखना।** (२) **जाँचना, खोज करना।**

बिलोकनि—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिलोकना] (१) **देखने की क्रिया, चितवन।** (२) **कटाक्ष।**

बिलोचन—संज्ञा पुं. [सं. लोचन] **आँख, नेत्र।**

बिलोड़ना—क्रि. स. [सं. विलोड़न] (१) **मथना।** (२) **अच्छी तरह मिलाना।**

बिलोन—वि. [सं. वि=रहित+लावण्य] **कुरूप, असुन्दर।**

वि. [सं. वि+लवण] **बिना नमक का, अलोना।**

बिलोना—क्रि. स. [सं. विलोड़न] (१) **मथना।** (२) **अच्छी तरह मिलाना।**

बिलोरना—क्रि. स. [हिं. बिलोड़ना] (१) **मथना।** (२) **अस्तव्यस्त करके मिलाना।**

बिलोलना—क्रि. स. [सं. विलोलन] **हिलना-डोलना।**

बिलोवना—क्रि. स. [हिं. बिलोना] **मथना।**

बिलौटा—संज्ञा पुं. [हिं. बिल्ली+औटा] **बिल्ली का बच्चा।**

बिलौर—संज्ञा पुं. [हिं. बिल्लौर] **स्फटिक पत्थर।**

बिल्ला—संज्ञा पुं. [सं. बिडाल] **नर बिल्ली, मार्जार।**

बिल्लाना—क्रि. अ. [अनु.] **बिलाप करना।**

बिल्ली—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिलार] **मार्जार नामक पशु।**

बिल्लूर, बिल्लौर—संज्ञा पुं. [सं. वैदूर्य, प्रा. वेलुरिय, हिं. बिल्लौर] (१) **स्फटिक पत्थर।** (२) **स्वच्छ शीशा।**

बिल्लौरी—वि. [हिं. बिल्लौर] (१) **स्फटिक पत्थर का। (२) स्फटिक जैसा स्वच्छ।**

बिवर—संज्ञा पुं. [सं. बिवर] (१) **बिल।** उ.—मानहुँ बिवर गए चलि कारे तजि केचुरि भए निररे री—पृ. ३२७ (६०)। (२) **गुफा।**

बिवरना—क्रि. अ. [हिं. विवरना] (१) **गुथी या उलझी वस्तु का सुलझना।** (२) **उलझे बालों का सुलझना।**

बिवराना—क्रि. स. [हिं. बिवरना] **उलझे बालों को सुलझाना या सुलझवाना।**

बिवश—वि. [सं. विवश] (१) **विवश।** (२) **विकल।**

बिवशानी—क्रि. अ. [सं. विवश] **विकल हो रही है।** उ.—ह्याँ तुम बिवश भए हौ ऐसे ह्वाँ तौ वै बिवशानी—२२०८।

बिवसाइ—संज्ञा पुं. [सं. व्यवसाय] **व्यापार, व्यवसाय।**

बिवाइ, बिवाई, बिवाय—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिबाई] **'बिबाई' नामक रोग।**

बिवाह—संज्ञा पुं. [सं. विवाह] **विवाह, शादी।**

बिवाहना—क्रि. स. [हिं. विवाह] **विवाह करना।**

बिवाहि—क्रि. स. [हिं. बिवाहना] **विवाह करके।**

प्र.—देहु बिवाहि—**विवाह कर दो।** उ.—हलधर कौं तुम देहु बिवाहि—१०-४।

बिष—संज्ञा पुं. [सं. विष] **जहर, गरल।** उ.—माया बिषम भुजंगिनि कौ बिष—२-३२।

बिषम—वि. [सं विषम] (१) **भयंकर।** उ.—जहाँ न काहू कौ गम, दुसह दारुन तम, सकल बिधि बिषम, खल-मल खानि—१-७७। (२) **तेज, तीव्र।** (३) **भयंकर।** उ.—माया बिषम भुजंगिनि कौ बिष उतर्‌यौ नाहिंन तोहि—२-३२। (४) **बहुत कठिन।** (५) **जो 'सम' न हो।**

बिषय—संज्ञा पुं. [सं. विषय] (१) **वर्णित या विवेचित प्रसंग।** (२) **भोग, संभोग, बिलास।** (३) **वह जिसे इंद्रियाँ ग्रहण करें।**

बिषया—संज्ञा स्त्री. [सं. विषया] **भोग की वासना।** उ.—तू तौ बिषया-रंग रँग्यौ है—१-६३।

बिषहर—संज्ञा पुं. [सं. विषधर] **साँप, भुजंग।** उ.—खरिक मिले की गोरस बेंचत की बिषहर तैं बाँची—१४३८।

बिषाद—संज्ञा पुं. [सं. विषाद] **इच्छा पूरी न होने का खेद या दुख।** उ.—(क) काम-क्रोध-विषाद-तृष्ना, सकल जारि बहाउ—१-३१४। (ख) ताकौ बिषम बिषाद अहो मुनि मोपै सह्यौ न जाई—९-७। (२) **निश्चेष्टता।**

बिषान—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **पशुओं का सींग।** (२) **सींग का बाजा।** उ.—कोउ गावत, कोउ मुरलि बजावत कोउ बिषान, कोउ बेनु—४४८।

बिषै—संज्ञा पुं. [सं. विषय] **भोग, संभोग, विलास।** उ.—बिषै-भोग सब तन मैं होइ—७-२।

बिष्णु, बिष्नु—संज्ञा पुं. [सं. विष्णु] **परब्रह्म विष्णु।**

बिसंच—संज्ञा पुं. [सं. वि+संचय] (१) **असावधानी, लापरवाही।** (२) **कार्य की बाधा।** (३) **अमंगल का भय।**

बिसंभर—संज्ञा पुं. [सं. विश्वंभर] **परमेश्वर।**

वि. [सं. वि+हिं. सँभार] (१) **जो सँभल न सके।** (२) **असावधान।**

बिसँभार—वि. [सं. वि+हिं. सँभार] **बेखबर, असावधान।**

बिस—संज्ञा पुं. [सं. विष] **गरल, जहर।**

बिसखपरा, बिसखापर, बिसखोपड़ा—संज्ञा पुं. [सं. विष+खर्पर] **एक विषैला जंतु।**

बिसतरना—क्रि. अ. [सं. विस्तरण] **बढ़ना, विस्तार होना।**

बिसतार—संज्ञा पुं. [सं. विस्तार] **फैलाव, विस्तार।**

बिसतारना—क्रि. स. [हिं बिस्तारना] **बढ़ाना, विस्तारकरना**

बिसद—वि. [सं. विशद] (१) **स्वच्छ, सुन्दर।** उ.—भूषन बिबिध बिषद अंबर जुत सुंदर स्याम सरीर——९-२६। (२) **विस्तृत।** उ.—बृंदा बिपिन बिषद जमुना-तट, सुचि ज्यौनार बनाई—४१६।

बिसन—संज्ञा पुं. [सं. व्यसन] (१) **भोग-विलास की वासना।** (२) **बुरी लत या आदत।** (३) **शौक।**

बिसनी—वि. [हिं. व्यसनी] (१) **भोग-विलास में रत रहनेवाला।** (२) **बुरी लतवाला।** (३) **शौकीन।**

बिसमउ, बिसमय—संज्ञा पुं. [सं. विस्मय] **अचरज।**

बिसमरना—क्रि. स. [सं. विस्मरण] **भूल जाना।**

बिसमरै—क्रि. स. [हिं. बिसमरना] **भूले, भूल जाय।** उ.—सुत-तिय धन की सुधि बिसमरै—३-१३।

बिसमव, बिसमौ—संज्ञा पुं. [सं. विस्मय] **आश्चर्य।**

बिसयक—संज्ञा पुं. [सं. विषय] (१) **देश**। (२) **राज्य**।

बिसरत—क्रि. स. [हिं. बिसरना] **भूलता है**। उ.—गोबिंद गुन उर ते नहिं बिसरत—२७४१।

बिसरना—क्रि. अ. [सं. विस्मरण, प्रा. बिम्हरण, बिस्सरण] **भूलना, याद न रखना**।

बिसराई—क्रि. स. [हिं. बिसराना] **भुला दिया, ध्यान में रखा**। उ.—(क) अपनी को चालै सुनि सूरज पिता-जननि बिसराई—३०१९। (ख) कबहुँक स्याम करत यहाँ को मन कैधौं चित सुध्यौ बिसराई—३११८।

बिसराए—क्रि. स. [हिं. बिसराना] **भुला दिये**। उ.—अहंकार तैं तुम बिसराए—१-२०८।

बिसराना—क्रि. स. [हिं. बिसरना] **भुलाना, ध्यान में न रखना**।

बिसरानी—क्रि. स. [हिं. बिसरानी] **भुला दी, ध्यान में नहीं रखी विस्मरण कर दी**। उ.—देव-काज की सुधि बिसरानी—१००१।

बिसराम—संज्ञा पुं [सं. विश्राम] **आराम, चैन, सुख**।

बिसरामी—वि. [सं. विश्राम]। (१) **जिसे सुख मिले**। (२) **किसी के साथ सुख भोगनेवाली**।

बिसरावत—क्रि. स. [हिं बिसरावना] **भुलाते या भुलवाते हैं**। उ.—मुरली बजाय बिसरावत भौना—२४२१।

बिसरावति—क्रि. स. [हिं. बिसरावना] **भुलाती है**। उ.—सुंदर स्याम कृपालु दयानिधि कैसे हो बिसरावति—३१२८।

बिसरावन—वि. [हिं. बिसरावना] **भुलाने वाले, ध्यान छुड़ानेवाले**। उ.—(क) महा पतित कुल तारन, एक नाम अघ:जरन, दारुन दुख बिसरावन—१०-२५१। (ख) बेगि सुबचन सुनाइ मधुप जी मोहिं ब्यथा बिसरावन—३१०१।

बिसरावना—क्रि. अ. [हिं. बिसरावना] **भुलाना**।

बिसरावहु—क्रि. स. [हिं. बिसरावना] **भुलाओ, ध्यान से हटाओ**। उ.—ग्वाल सखा कर जारि कहत हैं, हमहिं स्याम तुम जनि बिसरावहु—४५०।

बिसरावहुगे—क्रि. स. [हिं. बिसरावना] **भुला दोगे**। उ.—सूर स्याम अति चतुर कहावत चतुराई बिसरावहुगे—१९७८।

बिसराहि—क्रि. स. [हिं. बिसराना] **भुलाया जा सके**। उ.—हरि सौं प्रीतम क्यों बिसराहि—२७५७।

बिसर्जन—संज्ञा पुं. [सं. विसर्जन] **छोड़ना, परित्याग**। उ.—ध्यान बिसर्जन कियौ नंद जब मूरति आगैं नाहीं—१०-२६३।

बिसवा—संज्ञा स्त्री. [सं. वेश्या] **वेश्या**।

संज्ञा पुं. [हिं. बिस्वा] **एक बीघे का बीसवाँ भाग**।

बिसवास—संज्ञा पुं. [सं. विश्वास] **विश्वास, यकीन**।

बिसवासिनी—वि. स्त्री. [हिं. विश्वासी] (१) **विश्वास करनेवाली**। (२) **जिस पर विश्वास हो**।

वि. स्त्री. [हिं. अविश्वासी] (१) **जिस पर विश्वास न हो**। (२) **विश्वासघातिनी**।

बिसवासी—वि. [हिं. विश्वासी] (१) **जो विश्वास करे**। (२) **जिस पर विश्वास हो**।

वि. [हिं. अविश्वासी] (१) **जिस पर विश्वास न हो**। (२) **विश्वासघात करनेवाला**। (३) **जिसका ठीक न हो कि कब क्या करेगा या करायेगा**।

बिससना—क्रि. स. [सं. विश्वसन] **विश्वास करना**।

क्रि. स. [सं. विशसन] (१) **मारना**। (२) **चीरना-फाड़ना**।

बिसहना—क्रि. स. [हिं. बिसाह] (१) **खरीदना, मोल लेना**। (२) **अपने साथ लेना या लगाना**।

बिसहर—संज्ञा पुं. [सं. विषधर, प्रा. बिसहर] **सर्प**।

बिसहरू—वि. [हिं. बिसहना + रू] **खरीदार**।

बिसाँयँध—वि. [सं. वसा + गंध] **सड़े माँस-सी गंध**।

बिसात—संज्ञा स्त्री. [अ.] (१) **हैसियत, औकात**। (२) **जमा, पूँजी**। (३) **सामर्थ्य**। (४) **शतरंज, चौपड़ आदि खेलने का खानेबना कपड़ा या पट्ठा**।

बिसाती—संज्ञा पुं. [अ.] **मामूली चीजें बेचनेवाला**।

बिसाना—क्रि. अ. [सं. वश] **वश चलना**।

क्रि. अ. [हिं. बिस + ना] **विष-सा प्रभाव करना**।

बिसारत—क्रि. स. [हिं. बिसारना] **भुलाते हैं, ध्यान से हटाते हैं**। उ.—जे नख-चंद्र महामुनि नारद पलक न कबहुँक बिसारत—१३४२।

बिसारद—संज्ञा पुं. [सं. विशारद] (१) **पंडित**। (२) **कुशल**।

बिसारना—क्रि. स. [हिं. बिसरना] **भुला देना।**

बिसारा—वि. [सं. विषालु] **विषैला, विषभरा।**

बिसारी—क्रि. स. [हिं. बिसारना] **भुला दी, ध्यान से हटा दी।** उ.—श्रीपति हूँ की सुधि बिसारी याही अनुराग —६५३।

बिसारे—क्रि. स. [हिं. बिसारना] **भुला दिये, ध्यान से हटा दिये।** उ.—(क) जे पद-पदुम परसि ब्रजभामिनि सरबस दै सुत-सदन बिसारे—१-६४। (ख) नाद सुनि बनिता बिमोहीं, बिसारे उर-चीर—६५८।

वि. [सं. विषालु] **विषभरे, विषैले।** उ.—लागे हैं बिसारे बान स्याम बिनु युग याम घायल ज्यौं घूमैं मनौ बिषहर खाई है—२८२७।

बिसाल—वि. [सं. विशाल] **बड़ा।** उ.—भए अति अरुन बिसाल कमल-दल-लोचन मोचत नीर—६-१४५।

बिसास—संज्ञा पुं. [सं. विश्वास] **यकीन, विश्वास।**

बिसासिन, बिसासिनि, बिसासिनी—वि. [सं. अविश्वासिनी] **जिस पर विश्वास न किया जा सके, विश्वासघातिनी।**

बिसासी—वि. [सं. अविश्वासी] **जिस पर विश्वास न किया जा सके, विश्वासघाती।** उ.—तुम देखे बहु स्याम बिसासी—१८१२।

बिसाह—संज्ञा पुं. [सं. व्यवसाय] **खरीद, मोल लेने का कार्य।**

बिसाहत—क्रि. स. [हिं. बिसाहना] **खरीदता है, मोल लेता है।** उ.—सुजस बिकात बचन के बदले क्यों न बिसाहत आजु—२८५१।

बिसाहन—संज्ञा पुं. [हिं. बिसाहना] (१) **मोल लेने की वस्तु, सौदा।** (२) **मोल लेने की क्रिया, खरीद।**

बिसाहना—क्रि. स. [हिं. बिसाह+ना] (१) **खरीदना, मोल लेना।** (२) **साथ लगाना।**

संज्ञा पुं.—(१) **मोल लेने की वस्तु, सौदा।** (२) **मोल लेने की क्रिया, खरीद।**

बिसाहनो—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिसाहना] **मोल लेने की वस्तु, सौदा।**

बिसाहा—संज्ञा पुं. [हिं. बिसाहना] **सौदा।**

क्रि. स. भूत.—**खरीदा, मोल लिया।**

बिसाही—क्रि. स. [हिं. बिसाहना] **खरीदी, मोल ली।** उ.—लाज बेंचि कूबरी बिसाही सँग न छाँड़त एक घरी—२६७७।

बिसिख—संज्ञा पुं. [सं. विशिख] **बाण, तीर।**

बिसियर—वि. [सं. विषधर] **विषैला, विषभरा।**

बिसुकर्मा—संज्ञा पुं. [सं. विश्वकर्मा] **विश्वकर्मा।**

बिसुनना—क्रि. अ. [हिं. सुनकना] **खाते समय किसी वस्तु का अंश नाक की ओर चढ़ जाना।**

बिसूरना—क्रि. अ. [सं. विसूरण] **चिंता या दुख करना।**

संज्ञा स्त्री.—**चिंता, दुख, सोच।**

बिसूरी—क्रि. अ. [हिं. बिसूरना] **दुख या चिंता करके।** उ.—मधुबन बसत आस हुती सजनी, अब मरिहैं जु बिसूरी—१० उ.-८२।

बिसूरे—क्रि. अ. [हिं. बिसूरना] **दुख या चिंता करके।** उ.—तुम पुनि कहत स्रवन नहिं समुझत, दुख अति मरत बिसूरे—३०४२।

बिसेख—वि. [सं. विशेष] **विशेष।**

बिसेखता—संज्ञा स्त्री. [सं. विशेषता] **विशेष गुण या स्वभाव।**

बिसेखना—क्रि. अ. [सं. विशेष] (१) **विशेष रीति से कहना या वर्णन करना।** (२) **निर्णय या निश्चय करना।** (३) **विशेष रूप से होना।**

बिसेषि—वि. [सं. विशेष] **विशेष प्रकार या रीति के।** उ.—सिव सौं बोली बचन बिसेषि—४-५।

बिसेसर—संज्ञा पुं. [सं. विश्वेश्वर] **परमेश्वर।**

बिस्तर—संज्ञा पुं. [फा. विस्तर] (१) **बिछौना।** (२) **विस्तार।**

बिस्तरना—क्रि. अ. [सं. विस्तरण] **फैलना, बढ़ना।**

क्रि. स.—(१) **फैलाना, बढ़ाना।** (२) **बढ़ाकर कहना या वर्णन करना।**

बिस्तरा—संज्ञा पुं. [हिं. बिस्तर] **बिछौना, बिछावन।**

बिस्तरी—क्रि. स. [हिं. बिस्तरना] **विस्तार से कही या वर्णन की।** उ.—गर्भ परीच्छित रच्छा करी। सोई कथा सकल बिस्तरी—१-२८९।

बिस्तरैं—क्रि. स. [हिं. बिस्तारना] **विस्तार करें।** उ.—इंद्री दासी सेवा करैं। तृप्ति न होइ, बहुरि बिस्तरैं —४-१२।

दिवस बिहात—३४६० ।

बिहान—संज्ञा पुं. [सं. विभात, प्रा. विहाड, विहाण] **सबेरा, प्रातःकाल।** उ.—मोह-निसा कौ लेस रह्यौ नहिं भयौ बिबेक-बिहान—२-३३ ।

क्रि. वि.—**आनेवाला दूसरा दिन, कल ।**

बिहाना—क्रि. स. [सं. वि + हाना] **छोड़ना, त्यागना ।**

क्रि. अ. – **बीतना, व्यतीत होना ।**

बिहानी—क्रि. अ. [हिं. बिहाना] **व्यतीत हुई, बीती ।** उ.—चिरई चुहचुहानी चंद की ज्योति परानी रजनी बिहानी प्राची पियरी प्रबान की—१६०६ ।

बिहाने—संज्ञा पुं. [हिं. बिहान] **सबेरा, प्रातःकाल।** उ.—सूरदास प्रभु जान देहु अब बहुरि कहौगे कालि बिहाने—११३६ ।

क्रि. वि.—**आनेवाला दिन, कल ।** उ.—सूरदास गोबर्धन पूजा कीने कर फल लेहु बिहाने ९५१ ।

बिहानै—संज्ञा पुं. [हिं. बिहान] **प्रातःकाल।** उ.—सूरदास ऐसे लोगन को नाउँ न लीजै होत बिहानै—१५०० ।

बिहार—संज्ञा पुं. [सं. बिहरण] **केलि, क्रीड़ा, लीला ।** उ.—देखि-देखि किलकत दँतियाँ द्वै राजत क्रीड़त बिबिध बिहार—१०-८४ ।

बिहारना—क्रि. अ. [सं. बिहरण] **बिहार या क्रीड़ा करना ।**

बिहारे—क्रि. अ. [हिं. बिहारना] **केलि-क्रीड़ा की ।** उ.—तिन युवती बन बननि बिहारे—२४५९ ।

बिहाल, बिहाला—वि. [फ़ा. बेहाल] **व्याकुल, बेचैन।** उ.—(क) सूरदास प्रभु मन हरि लीन्हौं हँसत ही ग्वारिनि भई बिहाला—१०३४ । (ख) तरुनाई तनु आवन दीजै कित जिय होत बिहाला—१०३८ ।

बिहीन, बिहून—वि. [सं. विहीन] **रहित, बिना ।** उ.—(क) बारि-बिहीन मीन ज्यौं व्याकुल त्यौं ब्रजनारि सबै । (ख) सूरदास सोभा क्यौं पावै, पिय बिहीन धनि मटकै—१-२६२ ।

बिहोरना—क्रि. अ. [हिं. बिहरना = फूटना] **बिछुड़ना।**

बिह्वल—वि. [सं. विह्वल] **व्याकुल, विकल।** उ.—(क) जादौपति जदुनाथ, छाँड़ि खगपति-साथ जानि जन विह्वल, छुड़ाइ लीन्हौ पल मैं—८-५ । (ख) बिह्वल तन-मन, चकृत भई सो, यह प्रतच्छ सुपनाए—९-३१ ।

बींड़, बींड़ा—संज्ञा पुं. [हिं. बींडी] (१) **गेंडुरी, इँडुरी ।** (२) **पिंडी ।**

बीड़ी—संज्ञा स्त्री. [सं. वेणी] (१) **गेंडुरी ।** (२) **पिंडी ।**

बींधना—क्रि. अ. [सं. विद्ध] (१)**फँसना, उलझना ।** (२) **छिदना, बिंध जाना ।**

क्रि. स. – **छेदना, बेधना ।**

बींधि—क्रि. अ. [हिं. बींधना] **फँसकर, उलझकर ।** उ.—ज्यौं कुञ्जरारि रस बींधि हारि गथु सोचति पटकि चिती—१०उ०-१०३ ।

बींधे—क्रि. अ. [हिं. बींधना] **फँसे, उलझे ।** उ.—नैना बींधे दोऊ मेरे—पृ. ३२५ (४७) ।

बीका—वि. [सं. वक्र] **टेढ़ा ।**

बीख—संज्ञा पुं. [सं. बीखा] **पद, कदम, डग ।**

बीग—संज्ञा पुं. [सं. वृक] **भेड़िया ।**

बीगना—क्रि. स. [सं. विकीरण] **बिखराना, गिराना ।**

बीघा—संज्ञा पुं. [सं. विग्रह, प्रा. बिग्गह] **जमीन की एक नाप जो ३०२५ वर्ग गज की, और एकड़ के पाँचवें भाग के बराबर होती है ।**

बीच—संज्ञा पुं. [सं. विच = अलग करना] **किसी परिधि, सीमा, वस्तु आदि का मध्य भाग ।**

मुहा०—बीच खेत—**सबके देखते देखते ।** बीच-बीच में—(१) **रह-रह कर ।** (२) **थोड़ी-थोड़ी दूर पर ।**

(२) **भेद, अन्तर ।** उ.—धन्य हो धन्य हो तुम घोष नारी । मोहिं धोखा गयौ, दरस तुमकौ भयौ तुमहिं मोहिं देखौ री बीच भारी ।

मुहा०—बीच करना—(१) **लड़नेवालों को रोकना ।** (२) **झगड़ा निबटाना ।** उ.—बीच करन जो आवै कोऊ ताको सौंह दिवाऊँ—१५१२ । बीच न कियो—**रक्षा नहीं की, बचाया नहीं ।** उ.—बीच न काहू तब कियौ (जब) दूतनि दीन्हीं मार—१-३२५ । बीच पड़ना—(१) **अन्तर या परिवर्तन हो जाना ।** (२) **झगड़ा निबटाने के लिए मध्यस्थ बनना ।** बीच डालना (पारना)—**अन्तर, भेद या परिवर्तन करना ।** बीच में पड़ना—(१) **मध्यस्थ होना ।** (२) **जिम्मेदार या प्रतिभू बनना ।** बीच रखना—**दुराव या भेद रखना ।** बीच में कूदना—**दूसरे के काम में व्यर्थ ही पड़ना ।**

बिस्तर्‌यौ—क्रि. अ. [हिं. बिस्तरना] **फैला, बढ़ा**। उ.—जाकौ जस सब जग बिस्तरचौ—६-४।

बिस्तार—संज्ञा पुं. [सं. विस्तार] **बढ़ा-चढ़ा रूप, विस्तार से कहा या वर्णन किया हुआ रूप**। उ.—जय अरु बिजय कथा नहिं कछुवै दसमुख-बध बिस्तार—१-२१५।

वि.—**खूब फैले हुए, विस्तृत**। उ.—देखि तरु सब अति डराने हैं बड़े बिस्तार—३८७।

बिस्तारना—क्रि. स. [सं. विस्तरण] **बढ़ाना, विस्तार करना**।

बिस्तारा—वि. [सं. विस्तार] **फैला हुआ, विस्तृत**। उ.—ऐसौ नीप-वृच्छ बिस्तारा, चीर हार धौं कितिक हजारा—७९९।

बिस्तार्‌यौ—क्रि. स. [हिं. बिस्तारना] (१) **फैलाया, बढ़ाया**। उ.—सुमिरत नाम, द्रुपद-तनया कौ पट अनेक बिस्तारचौ—**१-१७**। (२) **विस्तार के साथ आरंभ किया**। उ.—बिप्रनि जज्ञ बहुरि बिस्तारचौ—४-५।

बिस्तुइया—संज्ञा स्त्री. [हिं. विष+चूना] **छिपकली**।

बिस्मरना—क्रि. स. [सं. विस्मरण] **भूल जाना**।

बिस्मरौ—क्रि. स. [हिं. बिस्मरना] **भुलाओ**। उ.—हरि हरि हरि हरि सुमिरन करौ। आधे पलकहुँ जनि बिस्मरौ—६-१।

बिस्राम—संज्ञा पुं. [सं. विश्राम] **आराम, चैन, सुख**। उ.—(क) दासी तृस्ना भ्रमत टहल-हित लहत न छिन बिस्राम—**१-१५१**। (ख) नंद लिये आवत हरि देखे, तब पायौ बिस्राम—**६७९**।

बिस्वंभर—संज्ञा पुं. [सं. विश्वंभर] **परमेश्वर**। उ.—बिस्वंभर सब जग कौं भरै—२-२०।

बिस्वांसी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिस्वा] **बिस्वे का बीसवाँ भाग**।

बिस्वा—संज्ञा पुं. [हिं. बीसवाँ] **बीघे का बीसवाँ भाग**।

मुहा०—बीस बिस्वा—**निसंदेह, निश्चय ही**।

बिस्वास—संज्ञा पुं. [सं. विश्वास] **यकीन, प्रतीति**। उ.—तौ बिस्वास होइ मन मेरैं—१-१४६।

बिहंग, बिहंगा—संज्ञा पुं. [सं. विहंग] **पक्षी**। उ.—मनो मुख मृदुल पानि पंकरुह गुरु गति मनहुँ मराल बिहंगा—१९०५।

बिहंडन—संज्ञा पुं. [सं. विघटन, प्रा. बिहंडन] (१) **नष्ट करने की क्रिया या भाव**। (२) **नष्ट या दूर करने वाले**। उ.—बाल-सखा की बिपति-बिहंडन संकट हरन मुरारे—**१० उ.-६०**।

बिहंडना—क्रि. स. [सं. विघटन, प्रा. बिहंडना] (१) **खंडना, तोड़ना, काटना**। (२) **मारना, नष्टना**।

बिहँसना—क्रि. अ. [सं. बिहसन] **मंद-मंद मुस्कराना**।

बिहँसाना—क्रि. स. [हिं. बिहँसना] **हँसना, प्रसन्न करना**।

क्रि. अ.—**मंद-मंद हँसना, मुस्कराना**।

बिहँसीं—क्रि. अ. [हिं. बिहँसना] **मंद-मंद मुस्करायीं**। उ.—हँसत नंद गोपी सब बिहँसीं—१०-१८०।

बिहँसौहा—वि. [हिं. बिहँसना] **हँसता हुआ**।

बिहग—संज्ञा पुं. [सं. विहंग] (१) **पक्षी**। (२) **बाण**।

बिहद—वि. [फ़ा. बेहद] **बहुत अधिक, असीम**।

बिहबल—वि. [सं. विह्वल] **व्याकुल**। उ.—(क) जादौपति जदुनाथ खगपति साथ जन जान्यौ बिहबल तब छाँड़ि दियौ थल मैं। (ख) प्रात खरिकहिं गई आइ बिहबल भई, राधिका कुँवरि कहुँ डस्यौ कारौ—**७५१**।

बिहरत—क्रि. अ. [सं. विहरण] **घूमता-फिरता है**। उ.—घुटुरुनि चलत अजिर महँ बिहरत, मुख मंडित नवनीत—१०-९७।

बिहरना—क्रि. स. [सं. विघटन, प्रा. विहडन] (१) **फटना, दरकना**। (२) **टूटना-फूटना**।

क्रि. अ. [सं. विहरण] **सैर करना, घूमना-फिरना**।

बिहराना—क्रि. अ. [हिं. बिहरना] (१) **फटना**। (२) **टूटना**।

बिहाइ, बिहाई—क्रि. अ. [हिं. बिहाना] **बीतती है**। उ.—सब निसि याही भाँति बिहाइ—४-१२।

क्रि. स.—**छोड़कर, त्यागकर**। उ.—(क) भरत गयौ बन राज बिहाइ—६-२। (ख) अंसुमान मुनि राज बिहाइ, गंगा हेतु कियौ तप जाइ—९-९।

बिहाग—संज्ञा पुं. [देश.] **आधी रात के बाद गाया जाने-वाला एक राग**।

बिहागड़ा—संज्ञा पुं. [हिं. बिहाग] **रात को गाया जाने-वाला एक राग**।

बिहात—क्रि. अ. [हिं. बिहाना] **बीतता है, व्यतीत होता है**। उ.—सुनहु स्याम तुम बिनु उन लोगनि जैसे

किसी को बीच में देना—**मध्यस्थ या साक्षी बनाना।**
किसी को बीच में रखकर कहना—**उसकी शपथ खाकर कहना।**

(३) **दो वस्तुओं के बीच का अन्तर या अवकाश।** (४) **अवसर, मौका।** उ.—पायौ बीच इंद्र अभिमानी हरि बिनु गोकुल आयौ—२८२०।(५) **भेद, अन्तर।** उ.—तुमसौं उनसौं बीच नहीं कछु तुम दोऊ बर नारि—१४२२।

क्रि. वि. (१) **बीच ही में, लगभग मध्य भाग में, आधी दूर पर।** उ.—मगन हौं भव-अंबुनिधि मैं कृपासिंधु मुरारि।.........। थक्यौ बीच बिहाल बिह्वल, सुनौ करुना-मूल। स्याम, भुज गहि काढ़ि लीजै, सूर ब्रज कै कूल—१-९९। (२) **अन्दर से, भीतर से।** उ.—(क) निकसे खंभ-बीच हैं नरहरि, ताहि अभय-पद दीन्हौ—१-१०४। (ख) पाहन-बीच कमल बिकसावै, जल में अगिनि जरै—१-१०५।

बीचहिं—क्रि. वि. [हिं. बीच+हिं (प्रत्य.)] (१) **इसी काल के मध्य में।** उ.—कहत हे, आगे जपिहैं राम।बीचहिं भई और की औरै परचौ काल सौं काम—१-५७। (२) **बीच में ही, बात काट कर।** उ.—सखा कहत हैं स्याम खिसाने।.........। बीचहिं बोलि उठे हलधर तब याके माइ न बाप—१०-२१४।

बीचि, बीची—संज्ञा स्त्री. [सं. वीचि] **लहर, तरंग।**

बीचु—संज्ञा पुं. [हिं. बीच] (१) **अवसर।** (२) **अन्तर।**

बीचोबीच—क्रि. वि. [हिं. बीच] **ठीक मध्य भाग में।**

बीछना—क्रि. स. [सं. विचयन] (१) **पसंद करके चुनना।** (२) **अलग करके देखना।**

बीछी—संज्ञा स्त्री. [सं. वृश्चिक] **बिच्छू।**

बीछू—संज्ञा पुं. [सं. वृश्चिक] (१) **बिच्छू।** (२) **'बिछुआ' नामक शस्त्र।**

बीज—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **बिया या दाना जिससे पौधा अंकुरित होता है।** उ.—(क) बीज मन माली मदन चूर आलबाल बयौ—३३०७। (ख) जैसौ बीज बोइए तैसौ लुनिए लोग कहत सब बावरी—३३३१। (२) **मूल प्रकृति या कारण।** (३) **वीर्य।** (४) **किसी देवता का मूलमंत्र।**

संज्ञा स्त्री. [हिं. बिजली] **बिजली।**

बीजक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **सूची।** (२) **बीज।** (३) **कबीर का एक पद-संग्रह।**

बीजगणित—संज्ञा पुं. [सं.] **गणित का एक भेद।**

बीजन—संज्ञा पुं. [सं. व्यजन] **पंखा, बेना।**

बीजना—क्रि. स. [हिं. बीज] **बीज बोना।**

बीजमंत्र—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **किसी देवता का मूलमंत्र।** (२) **किसी कार्य की सिद्धि का गुर।**

बीजरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिजली] **बिजली।** उ.—एक दिशा मनो मकर चाँदिनी, एक दिशा सघन बीजरी ऐसे हरि मन मोहैं—पृ. ३१६ (५७)।

बीजा—वि. [हिं. दूजा] **दूसरा।**

संज्ञा पुं. [हिं. बीज] **बीज।**

बीजाक्षर—संज्ञा पुं. [सं.] **किसी बीजमंत्र का पहला अक्षर।**

बीजी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बीज+ई] (१) **गिरी।** (२) **गुठली।**

संज्ञा पुं. [सं. बीजिन्] **पिता।**

बीजु—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिजली] **बिजली, विद्युत।** उ.—(क) निसि अँधेरी, बीजु चमकै, सघन बरसै मेह—१०-५। (ख) चमकत बीजु सैल कर मंडित गरजि निसान बजायौ—२८४०।

बीजुपात—संज्ञा पुं. [सं. वज्र+पात] **बिजली गिरना।**

बीजुरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिजली] **बिजली।**

बीजू—वि. [हिं. बीज+ऊ] **जो बीज से उगा हो।**

संज्ञा स्त्री. [हिं. बिजली] **बिजली।**

बीझ—वि. [सं. विद्ध] **सघन, घना।**

बीझना—क्रि. अ.[सं. बिद्ध, प्रा. बिज्झ] **फँसना, लिप्तहोना।**

बीझा—वि. [सं. विजन] **निर्जन, एकान्त।**

बीट—संज्ञा स्त्री. [सं. विट] **पक्षी की विष्ठा।**

बीठल—संज्ञा पुं. [सं. विट्ठल] **विष्णु के अवतार एक देवता जिनका मंदिर पंढरपुर में है।**

बीड़ा—संज्ञा पुं. [सं. बीटक] **पान की गिलौरी।**

मुहा०—बीड़ा उठाना—(१) **किसी काम को करने का निश्चय करना।** (२) **तत्पर होना।** बीड़ा डालना (रखना)-(१) **किसी काम को करने का दायित्व लेने के लिए उपस्थित जन-समूह को चुनौती-सी देना।**

बीड़ा देना—(१) **काम करने का भार सौंपना।** (२) **बयाना या साई देना।**

बीड़िया—वि. [हिं. बीड़ा+इया] **बीड़ा उठानेवाला, कार्य-संपादन का भार लेनेवाला।**

बीड़ी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बीड़ा] (१) **छोटा बीड़ा।** (२) **गड्डी।**

बीतत—क्रि. अ. [हिं. बीतना] **व्यतीत होते हैं, समय बीतता है, वक्त कटता है।** उ.—(क) दिन बीतत माया कैं लालच, कुल-कुटुंब कैं हेत—१-१२५। (ख) छिन इक माँहि कोटि जुग बीतत नर की केतिक बात—१-३१३।

बीतना—क्रि. अ. [सं. व्यतीत] (१) **समय कटना या व्यतीत होना।** (२) **छूट जाना, दूर होना।** (३) **घटित होना, पड़ना।**

बीता—क्रि. अ. [हिं. बीतना] **समाप्त हो गया।** उ.—भारत युद्ध होइ जब बीता। भयौ जुधिष्ठिर अति भयभीता—१-२६१।

संज्ञा पुं. [बित्ता] **बालिश्त।**

बीती—क्रि. अ. [हिं. बीतना] (१) **समाप्त हो गयी, बीत गयी।** उ.—भयौ अकाज अर्द्धनिसि बीती, लछिमन-काज नसायौ—६-१५५। (२) **घटित हुई, पड़ी।** उ.—हमरे मन की सोई जानै जापै बीती होई—३२०९।

संज्ञा स्त्री.—**घटित या मन पर पड़ी हुई बात का प्रभाव।** उ.—ऊधौ सों समुझाइ प्रगट करि अपने मन की बीती—२९४२।

बीते—क्रि. अ. [हिं. बीतना] (१) **व्यतीत हुए, विगत हुए।** उ.—(क) जनमत मरतहिं बहुत जुग बीते, अजहूँ लाज न आइ—१-३१७। (ख) कछु दिन पत्र भक्ष करि बीते कछु दिन लीन्हौ पानी। (२) **पड़े, घटित हो।**

बीतैं—क्रि. वि. [हिं. बीतना] **बीतने पर, व्यतीत होने पर, समाप्ति के बाद।** उ.—भारत के बीतैं पुनि आयौ। लोगनि सब वृत्तांत सुनायौ—१-२८४।

क्रि. अ. [हिं. बीतना] **बीतते हैं, व्यतीत होते हैं।** उ.—बाद-बिबाद सबै दिन बीतैं, खेलत ही अरु खात—२-२२।

बीतै - क्रि. अ. [हिं. बीतना] **पड़, संघटित हो।** उ.—सूर स्याम केबस्यभए जेहिबीतै सो जानै—पृ. ३२७ (६४)

बीतैगी—क्रि. अ. [हिं. बीतना] **पड़ेगी, संघटित होगी।** बीतैगी तबहीं जानौगे महा कठिन है नेह—३०६८।

बीत्यौ—क्रि. अ. [हिं. बीतना] **छूट गया, दूर हो गया।** उ.—उलटा नाम जपत अघ बीत्यौ मुनि उपदेस करायौ।

बीथित—वि. [सं. व्यथित] **दुखी, पीड़ित।**

बीथिन, बीथिनि—संज्ञा स्त्री. [हिं. वीथी] **मार्ग, गलियाँ, पथ।** उ.—(क) बरन-बरन पट परत पाँवड़े, बीथिनि सकल सुगंध सिंचाई—९-१६६। (ख) बारक इन बीथिनि ह्वै निकसेमैंदूरि झरोखनि झाँक्यौ—२५४६।

बीध—क्रि. वि. [सं. विधि] **विधिपूर्वक।**

बीधना—क्रि. अ. [सं. विद्ध] **फँसना, उलझना।**

क्रि. स. [हिं. बीधना] **छेदना, बेधना।**

बीधे—क्रि. अ. [हिं. बीधना] **फँसे, उलझे।** उ.—नैना बीधे दोऊ मेरे—ना० २८९७।

बीन—संज्ञा स्त्री. [सं. वीण] **वीणा।**

बीनऊँ—क्रि. अ. [हिं. बिनवना] **बिनती करता हूँ, प्रार्थना करता हूँ।** उ.—गौरि गनेस्वर बीनऊँ (हो) देवी सारद तोहिं—१०-४०।

बीनति—क्रि. स. [हिं. बीनना] **चुनती है।** उ.—ब्रज-बनिता मृग सावक नैनी बीनति कुसुमकली—२०७१।

बीनती—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिनती] **प्रार्थना, निवेदन।** उ.—(क) सूरदास की बीनती कोउ लै पहुँचावै—१-४। (ख) सूरदास की यहै बीनती दस्तक कीजै माफ—१-१५३। (ग) सूरदास की बीनती नीकैं पहुँचाऊँ—९-४२।

बीनना—क्रि. स. [सं. विनयन] (१) **चुनना।** (२) **छाँटना।**

क्रि. स. [हिं. बीधना] **बेधना, छेदना।**

क्रि. स. [हिं. बुनना] **बुनना।**

बीनि—क्रि. स. [हिं. बीनि] **छाँटकर।** उ.—कठिन-कठिन कलि बीनि करत न्यारी प्यारी के चरन कोमल जानि सकुच अति गड़िबेहि डरात—२०६८।

बीबी—संज्ञा स्त्री. [फा.] (१) **पत्नी।** (२) **कुलीन स्त्री।**

बीभत्स—वि. [सं.] (१) **घृणित।** (२) **पापी।**

संज्ञा पुं.—काव्य के नौ रसों में एक जिसमें रक्त, मांस आदि का वर्णन रहता है।

बीमार—वि. [फा.] रोगी।

बीमारी—संज्ञा स्त्री. [फा.] (१) रोग। (२) बुरी लत।

बीय, बीया—वि. [हिं. दूजा] दूसरा।

संज्ञा पुं. [सं. बीज] बीज, दाना।

बीर—वि. [सं. वीर] वीर, साहसी। उ.—तुम्हैं पहिचानति नाहीं बीर—९-८६।

संज्ञा पुं. [हिं. बीरन] भाई, भ्राता। उ.—सबै ब्रज है जमुना कैं तीर। कालिनाग के फन पर निरतत संकर्षन कौ बीर—५७५।

संज्ञा स्त्री.—(१) सखी, सहेली। (२) कान का एक आभूषण। उ.—हाथ पहुँची बीर कंगन जरित मुँदरी भ्राजई।

बीरउ—संज्ञा पुं. [हिं. बिरवा] बिरवा, पौधा।

बीरज—संज्ञा पुं. [सं. वीर्य्य] शुक्र, वीर्य।

बीरन—संज्ञा पुं. [हिं. बीरन] भाई।

बीरनि—संज्ञा स्त्री. [देश.] कान का एक गहना।

बीरबहूटी—संज्ञा स्त्री. [सं. वीर+बधूटी] एक छोटा लाल कीड़ा जिसके मखमली रोएँ होते हैं।

बीरभद्र—संज्ञा पुं. [सं. वीरभद्र] शिव जी के एक गण जो उनके पुत्र और अवतार माने जाते हैं। इनकी उत्पत्ति शिव जी के मुख से दक्ष प्रजापति का यज्ञ नष्ट करने के लिए हुई थी। सूरदास जी ने इनकी उत्पत्ति शिव जी की जटा से लिखी है। उ.—सिव ह्वै क्रोध इक जटा उपारी। बीरभद्र उपज्यौ बलभारी—४-५।

बीरा—संज्ञा स्त्री. [हिं. बीड़ा] (१) पान का बीड़ा। उ.—जेंइ उठे अँचवन लियौ, दुहुँकर बीरा देत-४३७।

मुहा०—बीरा दीन्हौ—कार्य-भार सौंपा। उ.—यह सुनि नृपति हरष मन कीन्हौं, तुरतहिं बीरा दीन्हौं—१०-६१। बीरा लै आयौ—कार्य-संपादन करने का भार लिया। उ.—बीरा लै आयौ सन्मुख तैं, आदर करि नृप कंस पठायौ—५९१।

(२) वह फूल-फल जो देव-प्रसाद-रूप में भक्तों को दिया जाता है। उ.—कह अपनी परतीति नसावत, मैं पायौ हरि हीरा। सूर पतित तबहीं उठिहै, प्रभु जब हँसि दैहौ बीरा—१-१३४।

बीरी—संज्ञा पुं. [हिं. बीड़ा] (१) पान का छोटा बीड़ा। उ.—तब बीरी तनक मुख नायौ—१०-१८३। (२) कान का एक गहना।

बीरो—संज्ञा पुं. [हिं. बिरवा] वृक्ष, पेड़।

बीर्य—संज्ञा पुं. [सं. वीर्य] शरीर की सात धातुओं में से एक जिसका निर्माण सबके अन्त में होता है। उ.—रुद्र कौ बीर्य खसि कै परचौ धरनि पर, मोहिनी रूप हरि लियौ दुराई—८-१०।

बीस—वि. [सं. विंशति, प्रा. वीशति, बीसा] (१) संख्या में दस का दूना हो। (२) श्रेष्ठ, उत्तम।

बीसहूँ बिसौ—निश्चय ही। उ.—जपत अठारहो भेद उनईस नहिं बीसहूँ बिसौ तै सुखहिं पैहै—१२७८।

संज्ञा स्त्री.—(१) बीस की संख्या। (२) बीस (स्त्रियाँ)। उ.—ब्याहौ बीस धरौ दस कुबिजा अंतहु स्याम हमारे—३३४२।

बीसक—वि. [हिं. बीस+एक] लगभग बीस। उ.—बेसन के दस-बीसक दोना—३९६।

संज्ञा स्त्री., पुं.—बीस (स्त्री या पुरुष)। कबहुँक मिलि दस-बीसक धावति लेति छिड़ाइ मुरलि झकझोरी-२४०३।

बीसी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बीस] (१) बीस चीजों का समूह। (२) आठ संवत्सरों के तीन विभागों—पहली, ब्रह्म बीसी; दूसरी, विष्णु; और तीसरी रुद्र बीसी—में से कोई एक।

बीसों—वि. [हिं. बीस] (१) कई (बार) बीस। (२) बीस से अधिक।

बीहड़—वि. [सं. विकट] (१) ऊबड़-खाबड़। (२) जो सम या सुगम न हो, बिकट।

वि. [सं. विलग] अलग, पृथक।

बुंद—संज्ञा स्त्री. [सं. विंदु] बूँद। उ.—नाग-नर-पसु सबनि चाह्यौ सुरसरी कौ बुंद—९-१०।

वि.—थोड़ा या जरा सा।

बुँदका—संज्ञा पुं. [सं. विंदुक] (१) बड़ा और गोल धब्बा। (२) माथे का गोल टीका।

बुँदकी—संज्ञा स्त्री. [सं. विंदु+हिं. की] (१) छोटी गोल

बिंदी । (२) **किसी चीज पर बनी, पड़ी या कढ़ी छोटी गोल बिंदी ।**

बुंदा—संज्ञा पुं. [सं. बिंदु] (१) **कान का एक गहना ।** (२) **बड़ी बिंदी ।** उ.—उर बघनहाँ, कंठ कठुला, झँडूले बार, बेनी लटकन मसि-बुंदा मुनि-मनहर—१०-१५१ ।

बुँदिया—संज्ञा स्त्री. [हिं. बूँदी] (१) **बूँद ।** (२) **एक मिठाई जो बेसन की बूँदों से बनायी जाती है ।**

बुँदेला—संज्ञा पुं. [हिं. बूँद+एला (प्रत्य.)] **क्षत्रियों की एक जाति ।**

बुंदोरी, बुँदौरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बूँद+ओरी] **'बूँदी' नामक मिठाई ।**

बुआ—संज्ञा स्त्री. [देश.] **पिता की बहन ।**

बुकनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बूकना] **महीन चूर्ण ।**

बुकुन—संज्ञा पुं. [हिं. बूकना] (१) **महीन चूर्ण, बुकनी ।** (२) **पाचक चूर्ण, चूरन ।**

बुक्का—संज्ञा पुं. [हिं. बूकना] **अभ्रक का चूर्ण ।**

बुखार—संज्ञा पुं. [अ. बुखार] (१) **भाप, वाष्प ।** (२) **ज्वर ।** (३) **दुख, क्रोध आदि का आवेग ।**

मुहा०—जी (दिल) का बुखार निकालना—**दुख, शोक आदि की बात कहकर जी शान्त करना ।**

बुजदिल—वि. [फा. बुजदिल] **कायर ।**

बुजुर्ग—संज्ञा पुं. [फा. बुजुर्ग] (१) **बाप-दादा ।** (२) **व्यक्ति जो अवस्था में बड़ा हो ।**

बुजुर्गियत, बुजुर्गी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बुजुर्ग] **बड़प्पन ।**

बुझति—क्रि. अ. [हिं. बुझना] **(अग्नि) बुझती या शांत होती है ।** उ.—दारुन दुख दवारि ज्यौं तृन-बन, नाहिनँ बुझति बुझाई—९-५२ ।

बुझना—क्रि. अ. [देश.] (१) **जलती हुई चीज का जलना बंद हो जाना ।** (२) **तपी या गरम चीज का ठंढा होना ।** (३) **किसी गरम चीज का पानी में डालने से ठंढा होना ।** (४) **पानी से आग का शांत होना ।** (५) **उमंग या उत्साह में कमी आना ।** (६) **तृप्ति या संतोष का अनुभव होना, शांत होना ।**

बुझाइ—क्रि. अ. [हिं. बुझना] (१) **तृप्त हुई ।** उ.—माधौ, नैंकु हटकौ गाइ ।........। अष्ट-दस-घट नीर अँचवति, तृषा तउ न बुझाइ—१-५६ । (२) **आवेग आदि में कमी आई ।** उ.—मुख तन चितै, बिहँसि हरि दीन्हौ, रिस तब गई बुझाइ—१०-२९७ ।

क्रि. स. [हिं. बुझाना] **समझाकर ।** उ.—(क) बार बार बुझाइ हारी भौंह मोपर तानति—पृ. ३२६ (५४) । (ख) ज्ञान बुझाइ खबरि दै आवहु एक पंथ द्वै काज—२९२५ ।

बुझाई—क्रि. स. [हिं. बुझाना] (१) **अग्नि बुझाने या शांत करने से ।** उ.—दारुन दुख दवारि ज्यौं तृन-बन नाहिनँ बूझति बुझाई—९-५२ । (२) **समझाकर ।** उ.—सूर स्याम लिए हँसति जसोदा नंदहिं कहति बुझाई—१०-१८९ ।

क्रि. अ. [हिं. बुझना] (१) **तृप्त या शांत हुई ।** उ.—जोग सिखाये क्यों मन मानै क्यौंऽब ओसकन प्यास बुझाई—३३१० । (२) **दुख, क्रोध आदि के आवेग में कमी हुई ।** उ.—नैननि निरखि दुख निमेष न खंडित प्रेम ब्यथा न बुझाई—२९७६ ।

संज्ञा स्त्री. [हिं. बुझाना] **बुझाने की क्रिया, भाव या मजदूरी ।**

बुझाऊँगो—क्रि. स. [हिं. बुझाना] **तृप्त या शांत करना ।** उ.—सुनहु सूर अधरन रस अँचवो दहुँ मन तृषा बुझाऊँगो—१९४४ ।

बुझान—क्रि. स. [हिं. बुझाना] **शांत करने (दे) ।**

प्र०—बुझा दे—**बुझाने दे, शांत करने दे ।** उ.—गोपालहिं माखन खान दै ।........। गहि बहियाँ हौं लैकै जैहौं, नैननि तपति बुझान दै—१०-२७४ ।

बुझाना—क्रि. स. [हिं. बुझना] (१) **जलती चीज की आग ठंढी करना ।** (२) **तपी हुई धातु आदि को पानी में डालकर ठंढा करना ।** (३) **किसी चीज को तपाकर उसका गुण पानी में लाने के लिए उसे पानी में डालना ।** (४) **पानी आदि से शांत करना ।** (५) **आवेग, उत्साह आदि शांत करना ।**

क्रि. स. [हिं. बूझना] (१) **बूझने को प्रवृत्त करना ।** (२) **समझाना ।** (३) **संतोष देना ।**

बुझानी—क्रि. अ. [हिं. बुझना] (१) **तृप्त हुई, शांत हुई ।** उ.—निसि-दिन दुखित मनोरथ करि करि, पावत

हूँ तृष्णा न बुझानी—१-१४९ । (२) **ताप में कमी आयी।** उ.—(क) लोचन तृप्त भए दरसन तैं उर की तपति बुझानी—७७८। (ख) ग्वालिनि बिकल देखि प्रभु प्रगटे हर्ष भयो तन तपति बुझानी—८४७। (३) **आवेग या उत्तेजना में कमी हुई।** उ.—यह सुनि सुनि रिस कछुक बुझानी—१०४५।

बुझायौ—क्रि. स. [हिं. बुझाना] **अग्नि शांत की।** उ.—काम-क्रोध-मद-लोभ-अगिनि तैं कहूँ न जरत बुझायौ—१-१५४।

बुझावन—क्रि. स. [हिं. बुझाना] **पूछने या बूझने (लगे)।**

प्र०—बुझावन लागे—**पूछने या बुझने लगे।** उ.—फल कौ नाम बुझावन लागे हरि कहि दियो अमोरि—२३७७।

बुझावै—क्रि. स. [हिं. बुझाना] **अग्नि शांत करता है।** उ.—पग तर जरत न जानै मूरख, घर तजि घूर बुझावै—२-१३१

क्रि. स. [हिं. बूझना] **समझावे।** उ.—चतुर काम फँग परे कन्हाई अब धौं इनहिं बुझावै को री—१५६३।

बुट—संज्ञा स्त्री. [हिं. बूटी] **जड़ी-बूटी, वनस्पति।**

बुटना—क्रि. अ. [देश.] **भाग जाना।**

बुड़की—संज्ञा स्त्री. [हिं. डुबकी] **डुबकी, गोता।** उ.—(क) करति स्नान सब प्रेम बुड़की देहि। (ख) चकृत होइ नीर तैं बहुरि बुड़की देइ—२५७०।

बुड़ना—क्रि. अ. [हिं. डूबना] **बूड़ना, डूबना।**

बुड़बुड़ाना—क्रि. अ. [अनु.] **कुढ़कर या भुँझलाकर बड़-बड़ाना।**

बुड़ाई—क्रि. स. [हिं. बुड़ाना] **डूबने को प्रवृत्त किया।**

प्र.—देउँ बुड़ाई—**डुबो दूँ।** उ.—राखौं नहीं इन्हैं भूतल मैं गोकुल देउँ बुड़ाई—९००।

बुड़ाना—क्रि. स. [हिं. डुबाना] (१) **पानी में गोता देना।** (२) **पानी में गोता देकर प्राण लेना।**

बुड़ाव—संज्ञा पुं. [हिं. डुबाव] **पानी आदि की गहराई जो थाह या ऊँचाई से अधिक हो।**

बुढ़वा, बुढ़ा—वि. [सं. वृद्ध] **बूढ़ा, वृद्ध।**

बुढ़ाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. बूढ़ा+आई (प्रत्य.)] **बुढ़ापा।** उ.—(क) त्राहि त्राहि करि नंद पुकारत, देखत ठौर गिरे भहराई। लोटत धरनि, परत जल भीतर, सूर स्याम दुख दियौ बुढ़ाई—५४४। (ख) नंद पुकारत रोइ बुढ़ाई मैं मोहिं छाड़्यौ—५८९।

बुढ़ाना—क्रि. अ. [हिं. बूढ़ा] **बूढ़ा होना।**

बुढ़ानी—क्रि. अ. [हिं. बुढ़ाना] **बूढ़ी हुई।** उ.—अब मैं जानी, देह बुढ़ानी। सीस, पाउँ, कर कह्यौ न मानत, तन की दसा सिरानी—१-३०५।

बुढ़ाने—क्रि. अ. [हिं. बुढ़ाना] **बूढ़े हो गये, शक्ति शिथिल या समाप्त हो गयी।** उ.—सात दिवस जल बरषि बुढ़ाने—१०६०।

बुढ़ापा, बुढ़ापौ—संज्ञा पुं. [हिं. बूढ़ा+पा] (१) **बूढ़े होने का भाव।** (२) **वृद्धावस्था।** उ.—बहुरौ ताहि बुढ़ापौ आवै। इंद्री-सक्ति सकल मिटि जावै—३-१३।

बुढ़ायौ—क्रि. अ. [हिं. बुढ़ाना] **बूढ़ा हो गया।** उ.—देखि बिधि कौ कह्यौ, यह बुढ़ायौ—८-८।

बुढ़ौती—संज्ञा स्त्री. [हिं. बूढ़ा+औती] **वृद्धावस्था।**

बुत—संज्ञा पुं. [फ़ा.] (१) **मूर्ति, प्रतिमा।** (२) **प्रियतम।**

वि.—**जो प्रतिमा की तरह चुप-चाप हो।**

बुतना—क्रि. अ. [हिं. बुझना] **बुझना।**

बुतपरस्त—संज्ञा पुं. [फ़ा.] **मूर्तिपूजक।**

बुताना—क्रि. अ. [हिं. बुतना] **बुझना।**

क्रि. स.—**बुझाना।**

बुत्ता—संज्ञा पुं. [देश.] (१) **धोखा, झाँसा।** (२) **बहाना।**

बुदबुद, बुदबुदा—संज्ञा पुं. [सं.] **पानी का बुलबुला, बुल्ला।** उ.—(क) बारि मैं ज्यौं उठत बुदबुद, लागि बाइ बिलाइ—१-३१६। (ख) मनहुँ बुदबुदा उपजत अमी—२३२१।

बुद्ध—संज्ञा पुं. [सं.] **बौद्ध-धर्म के प्रवर्तक जो शाक्यवंशी राजा शुद्धोधन की रानी महामाया के गर्भ से जन्मे थे। हिंदू शास्त्रों के अनुसार ये दस अवतारों में नवें, और चौबीस अवतारों में तेईसवें माने जाते हैं।** उ.—बासुदेव सोई भयौ, बुद्ध भयौ पुनि सोइ। सोई कल्की होइहै, और न द्वितिया कोइ—२-३६।

बुद्धि—संज्ञा स्त्री. [सं.] **समझ, बिवेक-शक्ति।** उ.—चतुराई अँग-अंग भरी है, पूरन ज्ञान न बुद्धि (बुधि) की मोटी—१४७९।

बुद्धिचक्षु—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **प्रज्ञाचक्षु**। (२) **धृतराष्ट्र**।

बुद्धिजीवी—संज्ञा पुं. [सं. बुद्धिजीविन्] **वह जो बौद्धिक कार्य करके जीविकोपार्जन करता हो**।

बुद्धिपर—वि. [सं.] **जिस तक बुद्धि न पहुँच सके**।

बुद्धिमत्ता—संज्ञा स्त्री. [सं.] **समझदारी**।

बुद्धिमान—वि. [सं.बुद्धिमान्] **समझदार**।

बुध—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **सौर जगत का एक ग्रह**। (२) **ज्योतिष के नौ ग्रहों में से चौथा जिसकी उत्पत्ति बृहस्पति की स्त्री तारा के गर्भ से और चन्द्रमा के वीर्य से हुई थी। किसी किसी का मत है कि इसने वैवस्वत मनु की कन्या ईला से विवाह किया था जिससे पुरुरवा का जन्म हुआ था**। उ.—(क) सूरज कैं बैवस्वत भयौ।....। इला सुता ताकैं गृह जाई।....। बुध कैं आस्रम सो पुनि आयौ। तासौं गंधरब-ब्याह करायौ। बहुरौ एक पुत्र तिन जायौ। नाम पुरुरवा ताहि धरायौ—६-२। (ख) पँचएँ बुध कन्या कौ जौ है, पुत्रनि बहुत बढ़ैहैं—१०-८६। (३) **बुद्धिमान पुरुष**। उ.—तातैं बुध हरि-सेवा करैं। हरि-चरननि नितही चित धरैं—९-८।

बुधवान—वि. [सं. बुद्धिमान] **समझदार**।

बुधवार—संज्ञा पुं. [सं.] **सात वारों में से एक जो मंगलवार के बाद और बृहस्पतिवार के पूर्व पड़ता है। यह वार बुद्धग्रह का माना जाता है**।

बुधि—संज्ञा स्त्री. [सं. बुद्धि] **बुद्धि, समझ, विचार-शक्ति**। उ.—बरज्यौ आवत तुम्हैं, असुर-बुधि इन यह कीनी—३-११।

बुधिवंत—वि. [सं. बुद्धि+वंत] **बुद्धिमान, समझदार**। उ.—बुधिवंत पुरुष यह सब सँभारैं—१०उ०-४६।

बुनना—क्रि. स. [सं. वयन] **सूत, ऊन या अन्य तारों से कपड़ा तैयार करने या अन्य कोई वस्तु बिनने की क्रिया या भाव**।

बुनाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. बुनना] **बुनने की क्रिया, भाव या मजदूरी**।

बुनावट—संज्ञा स्त्री. [हिं. बुनना+आवट] **बुनने का ढंग या रीति**।

बुनियाद, बुन्यादि—संज्ञा स्त्री. [फा. बुनियाद] (१) **जड़, मूल, नींव**। उ.—बृन्दाबन आदि, ब्रज आदि, गोकुल आदि, आदि बुन्यादि सब अहिर जारौं—५९०। (२) **वास्तविकता**। उ.—आदि-बुन्यादि सबै हम जानति काहे को सतरात—११२४।

बुन्यौ—क्रि. स. [हिं. बुनना] **बुनकर तैयार किया**। उ.—घनो बाँस गत बुन्यौ खटोला, काहू कौ पलँग कनक पाटी को—१०उ०-७१।

बुबुकना—क्रि. अ. [अनु.] **जोर से रोना**।

बुबुकारी—संज्ञा स्त्री. [अनु.] **जोर से रोने की क्रिया**।

बुभुक्षा—संज्ञा स्त्री. [सं.] **खाने की इच्छा, भूख**।

बुभुक्षित—वि. [सं.] **जिसे भूख हो, भूखा**।

बुरकना—क्रि. स. [अनु.] **महीन पिसी चीज को छिड़कना**।

बुरका—संज्ञा पुं. [अ. बुरका] (१) **मुसलमानियों का एक ढीलाढाला पहनावा**। (२) **झिल्ली जिसमें गर्भ का बालक लिपटा रहता है**।

बुरा—वि. [सं. विरूप] **जो अच्छा न हो, खराब**।

मुहा०—बुरा मानना—(१) **अप्रसन्न होना**। (२) **बैर रखना**।

यौ०—बुरा-भला—(१) **हानि-लाभ**। (२) **डाँट-फटकार**। (३) **गाली-गलौज**।

बुराई—संज्ञा स्त्री. [हिं. बुरा] (१) **खराबी**। (२) **खोटापन, नीचता**। (३) **अवगुण, दोष**। (४) **निंदा**।

बुरादा—संज्ञा पुं. [फा.] (१) **चूर्ण**। (२) **लकड़ी का चूर्ण**।

बुरौ—वि. [हिं. बुरा] (१) **जो अच्छा या उत्तम न हो, खराब**। उ.—भैया, बहुत बुरौ बलदाऊ—४८१। (२) **अनुचित**। उ.—(क) कह्यौ ब्रह्मा सिव-निन्दा जहाँ। बुरौ कियौ तुम बैठे तहाँ—४-५। (ख) तैं जु बुरौ कर्म कियौ, सीता हरि ल्यायौ—९-११८।

मुहा०—बुरौ मानैंगे—**अप्रसन्न होंगे**। उ.—नंद बाबा बुरौ मानैंगे और जसोदा मैया—४४५।

बुर्ज—संज्ञा पुं. [अ.] (१) **दीवारों के कोनों पर आगे की ओर निकला हुआ भाग**। (२) **मीनार का ऊपरी भाग**। (३) **गुम्बद**।

बुलंद—वि. [फ़ा. बलंद] (१) **भारी**। (२) **ऊँचा**।

बुलबुल—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] **एक गानेवाली चिड़िया**।

बुलबुला—संज्ञा स्त्री. [हिं. बुदबुद] **बुदबुदा**।

बुलवाना—क्रि. स. [हिं. बुलाना] **बुलाने को प्रवृत्त करना।**

बुलाइ—क्रि. स. [हिं. बुलाना] **अपने पास आने को कहकर, निकट बुलाकर।** उ.—निकट बुलाइ बिठाइ निरखि मुख, अंचर लेत बलाइ—९-८३।

बुलाइकै—क्रि. स. [हिं. बुलाना] **बुलाकर, पुकारकर।** उ.—जोइ जोइ माँग्यौ जिनि, सोइ सोइ पायौ तिनि, दीजै सूरदास दर्स भक्तनि बुलाइकै—१०-३१।

बुलाई—क्रि. स. [हिं. बुलाना] (१) **बुलाये, लौटाये, वापस कर लिये।** उ.—अस्वत्थामा अस्त्र चलायौ। अर्जुन हूँ ब्रह्मास्त्र पठायौ। उन दोउनि सो भई लराई। अर्जुन तब दोउ लिए बुलाई—१-२८९। (२) **बुलाकर।** उ.—काकैं सत्रु जन्म लीन्यौ है, बूझै मतौ बुलाई—१०-४।

बुलाऊँ—क्रि. स. [हिं. बुलाना] **बुलाकर एकत्र करूँ, इकट्ठा करूँ।** उ.—तौ बिस्वास होइ मन मेरैं, औरौं पतित बुलाऊँ—१-१४६।

बुलाक—संज्ञा पुं. [तु. बुलाक] **वह लम्बा मोती जिसे स्त्रियाँ नाक में पहनती हैं।**

बुलाकी—संज्ञा पुं. [तु. बुलाक़] **घोड़ों की एक जाति।**

बुलाना—क्रि. स. [हिं. बोलना] (१) **पुकारना।** (२) **पास आने को कहना।** (३) **बोलने को प्रवृत्त करना।**

बुलायौ—क्रि. स. [हिं. बुलाना] **निमंत्रण दिया।** उ.—दच्छ प्रजापति जज्ञ रचायौ। महादेव कौं नाहिं बुलायौ—५-४।

बुलावत—क्रि. स. [हिं. बोलना] (१) **कहलाते हो, प्रसिद्ध हो।** उ.—(क) दीनदयाल, पतित पावन प्रभु, बिरद बुलावत कैसौ—१-१२९। (ख) तुम कब मो सौं पतित उधार्‌यौ। काहे कौं हरि बिरद बुलावत, बिन मसकत को तार्‌यौ—१-१३२। (२) **बोलने को प्रेरित करते हैं, बुलवाते हैं।** उ.—(नंद) बार-बार बकि स्याम सौं कछु बोल बुलावत—१०-१२२। (३) **पुकारते हैं, बुलाते हैं।** उ.—खेलन चलौ बालगोविंद। सखा प्रिय द्वारैं बुलावत घोष बालक बृन्द—१०-२१८।

बुलावति—क्रि. स. [हिं. बुलाना] **पुकारती है, आवाज देकर बुलाती है।** उ.—छाक लिए सिर स्याम बुलावति—४५९।

बुलावते—क्रि. स. [हिं. बुलाना] **पुकारते हैं, आवाज देकर बुलाते हैं।** उ.—कबहुँक लै लै नाम मनोहर धवरी धेनु बुलावते—२७३५।

बुलावहु—क्रि. स. [हिं. बुलाना] (१) **बुलाओ, पुकारो।** उ.—बाँह उचारि काल की नाईं धौरी धेनु बुलावहु—१०-१७९। (२) **निमंत्रण दो, न्योता भेजो।** उ.—जसुमति नंदहिं बोलि कह्यौ तब, महर, बुलावहु जाति—१०-८९।

बुलावा—संज्ञा पुं. [हिं. बुलाना] **निमंत्रण।**

बुलावैं—क्रि. स. [हिं. बुलाना] **कहते हैं, घोषणा करते हैं।** उ.—पतित उधारन बिरद बुलावैं, चारौं बेद पुकारैं—१-१८३।

बुलावै—क्रि. स. [हिं. बुलाना] **बुलाता है, पुकारता है, आने को कहता है।** उ.—नैन मूँदि, कर जोरि, नाम लै बारहिं बार बुलावै—१०-२४९।

बुलाहट—संज्ञा स्त्री. [हिं. बुलाना] **बुलावा।**

बुलैहै—क्रि. स. [हिं. बुलाना] **बुलाएगी, अपने पास आने को कहेगी।** उ.—कबहुँक कृपावंत कौसिल्या, बधू-बधू कहि मोहिं बुलैहै—९-८१।

बुलौआ, बुलौवा—संज्ञा पुं. [हिं. बुलावा] **निमंत्रण।**

बुहारत—क्रि. अ. [हिं. बुहारना] **बुहारता है।** उ.—पवन बुहारत द्वार सदा संकर कुतवारी—११२८।

बुहारति—क्रि. स. [सं. बुहारना] **झाड़ू देती है, साफ करती है।** उ.—द्वार बुहारति फिरति अष्टसिद्धि—१०-३२।

बुहारना—क्रि. स. [सं. बहुकर] **झाड़ू देना।**

बुहारा—संज्ञा पुं. [हिं. बुहाना] **बड़ा झाड़ू।**

बुहारी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बुहारना] **छोटी झाड़ू, बढ़नी।**

बूँद—संज्ञा स्त्री. [सं. विंदु] **जल जैसे तरल पदार्थ का बहुत ही थोड़ा अंश जो गिरते समय छोटे दाने की तरह जान पड़ता है।** उ.—करन-मेघ बान-बूँद भादौं-झरि लायौ—१-२३।

मुहा०—बूँद गिरना (पड़ना)—**हल्की वर्षा होना।** बूँद भर—**बहुत थोड़ा।**

बूँदन, बूँदनि—संज्ञा स्त्री. सवि. [हिं. बूँद] **बूँदों (में)।** उ.—नान्हीं नान्हीं बूँदन में ठाढ़ो री—८३८।

बूँदाबाँदी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बूँद+बाँद (अनु.)] **हल्की वर्षा ।**

बूँदी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बूँद] (१) **बेसन के दानों की एक मिठाई।** (२) **वर्षा की बूँद ।**

बू—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] (१) **गंध ।** (२) **दुर्गंध ।**

बूआ—संज्ञा स्त्री. [देश.] **पिता की बहन ।**

बूकना—क्रि. स. [देश.] (१) **खूब महीन पीसना ।** (२) **अपनी योग्यता की धाक जमाने को बातें गढ़ना ।**

बूका—संज्ञा पुं. [हिं. बुक्का] **अभ्रक का चूर्ण जो गुलाल में मिलाकर होली में उड़ाया जाता है ।** उ.—बूका सुरँग अबीर उड़ावत भरि-भरि झोरी—२४०८ ।

बूगा—संज्ञा पुं. [देश.] **भूसा ।**

बूचा—वि. [सं. बुस] (१) **कनकटा ।** (२) **अंगहीन ।**

बूजना—क्रि. स. [देश.] **धोखा देना, छिपाना ।**

बूझ—संज्ञा स्त्री. [सं. बुद्धि] (१) **समझ ।** (२) **पहेली ।**

बूझत—क्रि. स. [हिं. बूझना] (१) **खोजता है ।** उ.—जौ लौं सत-सरूप नहिं सूझत । तौ लौं मृग-मद नाभि बिसारे, फिरत सकल बन बूझत—२-२५ ।(२) **जानता-समझता है ।** उ.—राजा, इक पंडित पौरि तुम्हारी । अपद-दुपद पसु भाषा बूझत अविगत अल्प अहारी —८-१४ । (३) **पूछता है ।** उ.—बार-बार हरि मातहिं बूझत, कहि चौगान कहाँ है—१०-२४३ ।

बूझन—संज्ञा स्त्री. [हिं. बूझ] (१) **बुद्धि ।** (२) **पहेली ।**
क्रि. स. [हिं. बूझना] **पूछने (लगे) ।** उ.—सखा बृंद लै तहाँ गए बूझन तेहि लागे—२५७५ ।

बूझना—क्रि. स. [हिं. बूझ] (१) **जानना, समझना ।** (२) **पूछना, प्रश्न करना ।** (३) **खोजना, ढूँढ़ना ।**

बूझहु—क्रि. स. [हिं. बूझना] **पूछो ।** उ.—यह तौ नाहिं बदी हम उनसौं बूझहु धौं यह बात—११९० ।

बूझि—क्रि. स. [हिं. बूझना] **समझकर, जानकर ।** उ.—जानि-बूझि मैं होत अजान—१-३४२ ।
संज्ञा स्त्री. [हिं. बूझ] **समझदारी ।** उ.—जसुदा यह न बूझि कौ काम । कमल नैन की भुजा देखि धौं, तैं बाँधे हैं दाम—३६७ ।

बूझिए, बूझिये—क्रि. स. [हिं. बूझना] **पूछिए ।** उ.—उठौ महरि कुसलात बूझियै आनन्द उमँगि भरी—२९६२ ।

बूझी—क्रि. स. [हिं. बूझना] **पूछी ।** उ.—ते मोहिं मिले जात घर अपनैं, मैं बूझी तब जाति—१०-३६ ।
मुहा०—न बूझी बातें—**खोज-खबर भी न ली ।** ज्यों मधुकर अम्बुज रस चाख्यौ बहुरि न बूझी बातैं आइ—३०५३ ।

बूझै—क्रि. स. [हिं. बूझना] (१) **समझता है, जानता है ।** उ.—अज, अबिनासी, अमर प्रभु, जनमैं-मरै न सोइ । नटवर करत कला सकल, बूझै बिरला कोइ—२-३६ । (२) **पुकारता है ।**

बूझौ—क्रि. स. [हिं. बूझना](१) **पूछो ।** उ.—(क) याकै चरित कहा कोउ जानै, बूझौ धौं संकर्षन भैया—१०-३३५ । (ख) जंत्र-मंत्र कह जानैं मेरौ । यह तुम जाइ गुनिनि कौं बूझौ, इहाँ करति कत झेरौ—७५३ ।

बूझ्यौ—क्रि. स. [हिं. बूझना] (१) **समझा, जाना ।** उ.—सूरदास अब कहति जसोदा, बूझ्यौ सबकौ ज्ञान—३३५ । (२) **पूछा, प्रश्न किया ।** उ.—तहँ के बासी नृपति बुलाइ । बूझ्यौ, तब तिन कही सुनाइ—९-३ ।

बूट—संज्ञा पुं. [सं. विटप] (१) **चने का हरा पौधा ।** (२) **चने का हरा दाना ।** (३) **पेड़, पौधा ।**

बूटनि—संज्ञा स्त्री. [हिं. बहूटी] **'बीरबहूटी' कीड़ा ।**

बूटा—संज्ञा पुं. [सं. विटप] (१) **पौधा ।** (२) **बड़ी बूँटी ।**

बूटी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बूटा] (१) **जड़ी, वनस्पति ।** (२) **भाँग ।** (३) **छोटी बूटी ।**

बूड़—संज्ञा स्त्री. [हिं. डूब] **डुबाव ।**

बूड़त—क्रि. अ. [हिं. बूड़ना] (१) **डूबता है, निमज्जित होता है ।** उ. (क) मोह-समुद्र सूर बूड़त है, लीजै भुजा पसारि—१-१११ । (ख) सूरदास प्रभु गोकुल बूड़त काहे न लेत उबारे—२७७४ । (२) **नष्ट होता है ।** उ.—ताकी कहा कहौं सुनि सूरज बूड़त कुटुँब समेत —२-१५ ।

बूड़न—क्रि. अ. [हिं. बूड़ना] **डूबना, निमंत्रित होना ।**
यौ०—बूड़न लग्यौ—**डूबने लगा ।** उ.—मंदराचल समुद्र माँहि बूड़न लग्यौ, तब सबनि बहुरि अस्तुति सुनाई—८-८ ।

बूड़ना—क्रि. अ. [सं. बुड] (१) **(जल या पानी आदि में) डबना ।** (२) **लीन या निमग्न होना ।**

बूड़ा—संज्ञा पुं. [हिं. डूबना] **(जल की) बाढ़ ।**

बूड़ि—क्रि. अ. [हिं. डूबना] **डूबकर ।** उ.—बूड़ि मुए कै कहुँ उठि गए—१-२८४ ।

बूड़ी—क्रि. अ. [हिं. बूड़ना] **डूब गयी ।** उ.—सोक-सिंधु बूड़ी नँदरानी—५४७ ।

बूड़ै—क्रि. अ. [हिं. बूड़ना] (१) **डूबता है, निमज्जित होता है ।** उ.—कबहुँक तृन बूड़ै पानी में, कबहुँक सिला तरै—१-१०५ ।

बूड़्यौ—क्रि. अ. [हिं. बूड़ना] **डूब गया, निमज्जित हो गया ।** उ.—सूरदास कहै, सब जग बूड़्यौ, जुग-जुग भक्त तरचौ—१-२९१ ।

बूढ़—वि. [हिं. बुड्ढा] **बूढ़ा ।**

संज्ञा पुं. [देश] । (१) **लाल रंग ।** (२) **बीरबहूटी ।**

बूढ़ा—संज्ञा पुं. [हिं. बुड्ढा] **बूढ़ा ।**

संज्ञा स्त्री.—**बुड्ढी स्त्री ।**

बूत, बूता, बूते—संज्ञा पुं. [हिं. बित्त, बूता] **बल, पराक्रम, शक्ति ।** उ.—प्रेम न रुकत हमारे बूते—३३०५ ।

बूरना—क्रि. अ. [हिं. डूबना] **डूबना ।**

बूरा—संज्ञा पुं. [हिं. भूरा] (१) **कच्ची चीनी ।** (२) **साफ चीनी ।** (३) **महीन चूर्ण ।**

बृंद—संज्ञा पुं. [सं. बृंद] **समूह, झुंड ।** उ.—(क) कुमुद-बृंद सँकुचित भए, भृंगलता भूले—१०-१०२ । (ख) मनौ बेद बंदीजन सूत-बृंद मागध-गन, बिरद बदत जै-जै जै जैति कैटभारे—१०-२०५ ।

बृंदावन—संज्ञा पुं. [सं. वृंदावन] **वृन्दावन ।**

बृंदाबन, चंद—संज्ञा पुं. [सं. वृंदावन+चंद्र] **वृन्दावन के चंद श्रीकृष्ण ।** उ.—देखन दै बृंदावन-चंदहिं—८०३ ।

बृत्तांत—संज्ञा पुं. [सं. वृत्तांत] **विवरण, समाचार, हाल, सूचना ।** उ.—भारत के बीतैं पुनि आयौ । लोगनि सब बृत्तांत सुनायौ—१-२८४ ।

बृथा, बृथाई—क्रि. वि. [सं. वृथा] **व्यर्थ, निष्फल, निष्प्रयोजन ।** उ.—(क) सूर प्रभु जिहिं करैं कृपा, जीतैं सोई, बिनु कृपा जाइ उद्यम बृथाई—८-८ । (ख) आजु कहा उद्यम करि आए । कहै, बृथा भ्रमि भ्रमि स्रम पाए—४-१२ ।

बृष—संज्ञा पुं [सं. वृष] (१) **साँड़, बैल ।** (२) **बारह राशियों में से दूसरी जिसमें १४१ तारे हैं एवं कृत्तिका नक्षत्र के अंतिम तीन पाद, पूरा रोहिणी नक्षत्र और मृगशिरा नक्षत्र के पहले दो पाद हैं ।** उ.—बृष है लग्न, उच्च के निसिपति, तनहिं बहुत सुख पैहैं—१०-८६ ।

बृषपर्वा—संज्ञा पुं. [सं. वृषपर्व्वा] **एक दैत्य का नाम जिसने शुक्राचार्य को अपना पुरोहित बनाया था । शर्मिष्ठा इसकी पुत्री थी ।**

बृषभ—संज्ञा पुं. [सं. वृषभ] (१) **बैल ।** (२) **एक असुर ।** उ.—अघ, बक, बृषभ, बकी, धेनुक हति, भव जल-निधि तैं जु उबारे—१-२७ ।

बृषभानु—संज्ञा पुं. [सं. वृषभानु] **श्रीराधिका जीके पिता । ये पद्मावती के गर्भ से उत्पन्न सुरभानु के पुत्र थे । पहले ये रावल ग्राम में रहते थे और यहीं राधा का जन्म हुआ था; पश्चात् कंस के उपद्रवों से ऊबकर ये बरसाने जा बसे थे ।**

बृषभास—संज्ञा पुं. [सं. वृषभ+असुर] **एक दैत्य ।** उ.—बकी, बकासुर, सकट, तृनाव्रत, अघ, प्रलंब, बृषभास । कंस-केसि कौं वह गति दीनी, राखे चरन निवास—४८७ ।

बृषली—संज्ञा स्त्री. [सं. वृषली] **वृषल या शूद्र जाति की स्त्री ।** उ.—(क) क्यों दासी-सुत कैं पग धारे ? ...... । सुनियत हीन, दीन, बृषली-सुत, जाति-पाँति तैं न्यारे—१-२४२ । (ख) अजामिल बिप्र कनौज-निवासी । सो भयौ बृषली कौ गृहवासी—६-४ ।

बृष्टि—संज्ञा स्त्री. [सं. वृष्टि] (१) **वर्षा, बरसना ।** (२) **ऊपर से बहुत सी चीजों का एक साथ गिरना ।** उ.—बान-बृष्टि स्रोनित करि सरिता, ब्याहत लगी न बार—९-१२४ ।

बृहत, बृहद—वि. [सं. बृहत्] (१) **बहुत बड़ा, विशाल ।** (२) **बली, दृढ़ ।** (३) **ऊँचा ।**

बृहदारण्यक—संज्ञा पुं. [सं.] **एक उपनिषद् ।**

बृहद्भानु—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **अग्नि ।** (२) **सूर्य ।** (३) **सत्यभामा के एक पुत्र का नाम ।**

बृहद्रथ—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **इन्द्र ।** (२) **शतधन्वा के पुत्र का नाम ।** (३) **जरासंध के पिता का नाम ।**

बृहन्नल—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **अर्जुन का एक नाम।** (२) **बाँह, बाहु।**

बृहन्नला—संज्ञा स्त्री. [सं.] **अर्जुन का वह नाम जो अज्ञातवासकाल में राजा विराट की पुत्री को नाच-गाना सिखाने के लिए रखा गया था।**

बृहस्पति—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **देव-गुरु जिनके पिता अंगिरस थे और माता श्रद्धा थीं।** (२) **सौर जगत का पाँचवाँ ग्रह।**

बंग—संज्ञा पुं. [सं. भेक] **मेढक।** उ.—जैसैं ब्याल बेंग कौ ढूके बेंग पखारी ताके हो।

बेंचति—क्रि. स. [हिं. बेचना] **बेंचती है।** उ.—घर घर बेंचति फिरति दही री—१०-२९।

बेंचनहारी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बेंचना+हारी] **बेचनेवाली।** उ.—नंद ग्राम को मारग बूझै है कोउ दधि बेचनहारी —१२१२।

बंचना—क्रि. स. [हिं. बेचना] **मूल्य लेकर देना।**

बेंचि—क्रि. स. [हिं. बेचना] **बेचकर, विक्रय करके।** उ.—(क) विद्या बेंचि जीविका करिहौ—४-५। (ख) लाज बेंचि कूबरी बिसाही संग न छाँड़त एक घरी—२६७७।

मुहा०—बेंचि खाई—**खो दी, गवाँ दी।** उ.—पुरुष केरी सबै सोहै कूबरी के काज। सूर प्रभु की कहा कहिए बेंच खाई लाज—२७२७।

बेंट—संज्ञा स्त्री. [देश.] **औजार की मूठ।**

बेंड़—संज्ञा स्त्री. [हिं. बेड़ा=आड़ा] **गिरती वस्तु को रोकने के लिए नीचे लगाई जानेवाली टेक या चाँड।**

बेंड़ा—वि. [हिं. आड़ा] (१) **तिरछा।** (२) **कठिन।**

बेंत—संज्ञा पुं. [सं. वेतस्] **एक लता के डंठल की बनी हुई छड़ी।** उ.—छोरि उदर तैं दुसह दाँवरी, डारि कठिन कर बेंत—१०-३४९।

मुहा०—बेंत की तरह काँपना—**बहुत डर कर काँपना।**

बेंदली—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिंदी] **बिंदी, टिकुली।**

बेंदा—संज्ञा पुं. [सं. बिंदु] (१) **गोल तिलक या टीका।** (२) **माथे की बड़ी बिंदी।** (३) **स्त्रियों के माथे का एक आभूषण।** उ.—नाना बिधि सिंगार बनाये बेंदा दीन्हौ भाल।

बेंदी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिंदी] (१) **टिकली।** (२) **शून्य।** (३) **माथे की बिंदी।** उ.—बेंदी भाल नैन नित आँजति निरखि रहति तनु गोरी। (४) **माथे का बेंदी नामक गहना।** उ.—(क) गुरुजन में बैठी आये हरि बेंदी सँवारन मिस पाइ लागी—११५४। (ख) बदन बिंद जराइ की बेंदी तापर बनै सुधारत —२०८०।

बे—अव्य० [फा.] **बिना, बगैर।**

अव्य. [हिं. हे] **तिरस्कारसूचक संबोधन।**

मुहा०—बे ते करना—**तिरस्कार के ढंग से बात करना।**

बेअदब—वि. [फा. बे + अ. अदब] **अशिष्ट।**

बेआब—वि. [फा. बे + आब] **जिसमें चमक न हो।**

बेआबरू—वि. [फा.] **अप्रतिष्ठित।**

बेइंसाफी—संज्ञा स्त्री. [फा.] **अन्याय।**

बेइज्जत—वि. [फा. बे+अ. इज्जत] (१) **अप्रतिष्ठित।** (२) **अपमानित।**

बेइज्जती—संज्ञा स्त्री. [हिं. बेइज्जत] (१) **अप्रतिष्ठा।** (२) **अपमान।**

बेइलि—संज्ञा पुं. [हिं. बेला] **बेला पुष्प।**

संज्ञा स्त्री. [हिं. बेल] **लता, बेल।**

बेईमान—वि. [फा. बे+अ. ईमान] (१) **अधर्मी।** (२) **अनाचारी।** (३) **जो विश्वास योग्य न हो।**

बेईमानी—वि. [हिं. बेईमान] (१) **अधर्म।** (२) **अनाचार, अन्याय।**

बेकरार—वि. [फा. बे+करार] **विकल, व्याकुल।**

बेकल—वि. [सं. विकल] **बेचैन, व्याकुल।**

बेकली—संज्ञा स्त्री. [हिं. बेकल] **बेचैनी।**

बेकस—वि. [फा.] **दीन, असहाय।**

बेकाज—वि. [फा. बे+काज (कार्य)] **जिसे कोई काम न हो, निकम्मा, निठल्ला।** उ.—माधौ जू, मोहिं काहे की लाज। जनम-जनम यौं ही भरमायौ, अभिमानी, बेकाज—१-१५०।

क्रि. वि.—**बेमतलब, वृथा, व्यर्थ।** उ.—(क) हित की कहत कुहित की लागत इहाँ बेकाज अरौ

—३०३६। (ख) रे अलि चपल मूढ़ रस-लंपट कतहिं बकत बेकाज—३१६१।

बेकाम—वि. [हिं. बे+काम] **निकम्मा, निठल्ला।**

क्रि. वि.—**व्यर्थ, निरर्थक।** उ.—कतहिं बकत बेकाम काज बिन होहि न ह्याँ तें हातौ—३१३२।

बेकायदे—वि. [हिं. बे+फा. कायदा] **नियमविरुद्ध।**

बेकार—वि. [हिं. बे+कार्य] **निठल्ला, निकम्मा।**

क्रि. वि.—**व्यर्थ, निरर्थक।**

बेकारी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बेकार] **बेकार होने का भाव।**

बेकसूर—वि. [हिं. बे+अ. कुसूर] **निरपराध।**

बेखटक—वि. [हिं. बे+खटका] **निस्संकोच।**

क्रि. वि.—**बिना किसी संकोच के।**

बेख़ता—वि. [हिं. बे+अ. खता] **निरपराध।**

बेख़बर—वि. [हिं. बे+फा. खबर] **बेसुध।**

बेख़ौफ—वि. [हिं. बे+फा. खौफ] **निडर।**

बेग—संज्ञा पुं. [सं. वेग] (१) **प्रवाह, बहाव।** (२) **तेजी, जोर।** (३) **जल्दी, शीघ्रता।**

बेगम—संज्ञा स्त्री. [तु.] **रानी, राज्ञी।**

बेगरज—वि. [हिं. बे+अ. गरज] **बिना मतलब के।**

बेगाना—वि. [फ़ा.] (१) **पराया।** (२) **अनजान।**

बेगार—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] (१) **बिना मजदूरी दिये जबरदस्ती लिया गया काम** (२) **बेमन से किया गया काम।**

मुहा०—बेगार टालना—**जैसे-तैसे बेमन से काम पूरा कर डालना।**

बेगि—क्रि. वि. [सं. वेग] **चटपट, तुरन्त, शीघ्रता से, जल्दी से।** उ.—(क) लीजै बेगि निबेरि तुरत हीं सूर पतित कौ टाँड़ौ—१-१४६। (ख) पठवहु बेगि गोहार लगावन सूरदास जिहि नाम—२७२६।

बेगुनाह—वि. [फ़ा.] **निरपराध, निर्दोष।**

बेचक—संज्ञा पुं. [हिं. बेचना] **बेचनेवाला।**

बेचन—संज्ञा पुं. [हिं. बेचना] **बेचने के लिए।** उ.—मथुरा जाति हौं बेचन दहियौ—१०-३१३।

बेचनहारि—संज्ञा स्त्री. [हिं. बेचना+हारी (प्रत्य.)] **बेचनेवाली, वह स्त्री जो कोई वस्तु बेचती हो।**

मुहा०—हाट की बेचनहारी—**गली-गली बेचनेवाली, क्षुद्र प्रकृति की नारी जो हाट-बाट में (वस्तु) बेचती फिरती हैं।** उ.—ब्रज की ढीठी गुवारि, हाट की बेचनहारि सकुचै न देत गारि झगरत हूँ।

बेचना—क्रि. स. [सं. विक्रय] **मूल्य लेकर देना।**

बेचारा—वि. [फ़ा.] **दीन, गरीब, असहाय।**

बेचैन—वि. [फ़ा.] **बिकल, व्याकुल।**

बेचैनी—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] **बिकलता, बेकली।**

बेजबान—वि. [हिं. बे+फ़ा. जबान] (१) **गूँगा।** (२)**दीन।**

बेजा—वि. [फ़ा.] (१) **बुरा।** (२) **अनुचित।**

बेजान—वि. [फा.] (१) **मुरदा।** (२) **जिसमें बहुत कम दम या शक्ति हो।** (३) **निर्बल।** (४) **मुरझाया हुआ।**

बेजोड़—वि. [हिं. बे+जोड़] (१) **जिसमें जोड़ न हो।** (२) **जिसके समान दूसरा न हो, अनुपम।**

बेझर, बेझरा—संज्ञा पुं. [हिं. मझरना=मिलाना] **गेहूँ, जौ, चना आदि मिले हुए अनाज।**

बेझा—संज्ञा पुं. [सं. बेध] **निशाना, लक्ष्य।**

बेटकी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बेटी] **पुत्री, बेटी।**

बेटला, बेटवा, बेटा, बेटौना, बेटुटा—संज्ञा पुं. [सं बटु=बालक, हिं. बेटा] **पुत्र, सुत, लड़का।**

यौ०—बेटा-बेटी—**संतान।**

बेटी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बेटी] **पुत्री, लड़की।** उ.—बूझत स्याम, कौन तू गोरी। कहाँ रहति, काकी है बेटी—६७३।

बेठन—संज्ञा पुं. [सं. बेष्टन] **लपेटने का कपड़ा या कागज।**

बेठिकाने—वि. [हिं. बे+ठिकाना] (१) **जो अनुचित स्थान पर हो।** (२) **ऊल-जलूल।** (३) **व्यर्थ, निरर्थक।**

बेड़—संज्ञा पुं. [हिं. बाढ़] **वृक्ष के चारों ओर लगायी गयी बाड़, मेंड़।**

बेड़ना—क्रि. स. [हिं. बेड़] **मेंड़ या थाला बाँधना।**

बेड़ा—संज्ञा पुं. [सं. बेष्टन] (१) **लकड़ी, लट्ठों को बाँधने से बना ढाँचा जिस पर बैठकर नदी पार की जा सके।**

मुहा०—बेड़ा पार करना (लगाना)—**संकट से पार करना।** बेड़ा पार लगना (होना)—**संकट से छुटकारा मिलना।** बेड़ा डूबना—**संकट से नाश हो जाना।**

(२) **नावों या जहाजों का समूह।**

वि. [हिं. आड़ा का अनु.] (१) **आड़ा।** (२) **कठिन।**

बेड़िन, बेड़िनी—संज्ञा स्त्री. [देश.] **नट जाति की स्त्री।**

बड़ी—संज्ञा स्त्री. [सं. वलय] लोहे की जंजीर जो कैदियों को पहनायी जाती है, निगड़ ।
संज्ञा स्त्री. [हिं. बेड़ा] छोटा बेड़ा ।

बेडौल—वि. [हिं. बे+डौल] भद्दे डीलडौल का ।

बेढ़ंग, बेढंगा—वि. [हिं. बे+ढंग] (१) जिसका ढंग ठीक न हो । (२) जो ठीक ढंग से लगाया या रखा न गया हो । (३) भद्दे रूप-रंग का ।

बेढ—संज्ञा पुं. [देश.] नाश, बरबादी ।

बेढ़न—संज्ञा पुं. [सं. वेष्टन] बेठन, घेरा ।

बेढ़ना—क्रि. स. [हिं. बेढ़न] घेरना ।

बेढब—वि. [हिं. बे+ढब] (१) बेढंगा, भद्दा । (२) बेधड़क बात कहनेवाला ।

बेढ़ा—संज्ञा पुं. [हिं. बेढ़ना] हाथ का एक गहना ।

बेणी—संज्ञा स्त्री. [सं. वेणी] चोटी, वेंणी ।

बेणीफूल—संज्ञा पुं. [सं. वेणी+हिं. फूल] शीश फूल नामक सिर का गहना ।

बेतकल्लुफ—वि. [फ़ा. बे+अ. तकल्लुफ़] निस्संकोच कार्य या व्यवहार करनेवाला ।

बेतना—क्रि. अ. [सं. वेतना] प्रतीत होना ।

बेतरह—वि. [फ़ा. बे+अ. तरह] बहुत अधिक ।

बेतवा—संज्ञा स्त्री. [सं. वेत्रवती] बुन्देलखंड की एक नदी जो भूपाल के ताल से निकलकर जमुना में मिलती है ।

बेतहाशा—क्रि. वि. [फ़ा. बे+अ. तहाशा] (१) बहुत तेजी से । (२) बहुत घबड़ाकर ।

बेताब—वि. [फ़ा.] विकल, व्याकुल ।

बेताल—संज्ञा पुं. [सं. वेताल] बैताल ।
संज्ञा पुं. [सं. वैतालिक] भाट, बंदी ।

बेतुका—वि [हिं. बे+तुक] बेमेल, बेढंगा ।

बेद—संज्ञा पुं. [सं. वेद] भारतीय आर्यों के प्राचीन धार्मिक ग्रंथ जो चार हैं—ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद और अथर्ववेद ।

बेदन—संज्ञा स्त्री. [सं. वेदना] वेदना । उ.—ज्यों अचेत बालक की बेदन अपने ही तन सहिए ।

बेदम—वि. [फ़ा.] (१) जिसमें दम न हो । (२) जिसमें शक्ति न हो । (३) जो कामलायक न हो, जर्जर ।

बेदर्द—वि. [फ़ा.] निर्दयी, कठोर ।

बेदाना—वि. [फ़ा. बे+दाना] (१) जिसमें बीज न हो । (२) मूर्ख, नासमझ ।

बेदाम—वि. [हिं. बे+दाम] बिना दाम का ।

बेदी—संज्ञा स्त्री. [हिं. वेदी] किसी शुभ या धार्मिक कार्य के लिए तैयार की हुई ऊँची भूमि, मंडप । उ.—चलियै बिप्र जहाँ जग-बेदी, बहुत करी मनुहारी—८-१४ ।

बेध—संज्ञा पुं. [सं. वेध] (१) छेद । (२) छेदने का भाव ।

बेधड़क—क्रि. वि. [हिं. बे+धड़क] (१) बिना संकोच के । (२) बिना भय या आशंका के । (३) बिना रुकावट के । (३) बिना सोचे-समझे ।
वि. (१) निसंकोची । (२) निडर, निर्भय ।

बेधत—क्रि. स. [हिं. बेधना] छेदता है, सूराख करता है, भेदता है । उ.—पाहन पतित बान नहिं बेधत रीतो करत निषंग—१-३३२ ।

बेधना—क्रि स. [सं. बेधन] (१) बेधना, छेदना । (२) शरीर में घाव करना ।

बेधर्म—वि. [सं. विधर्म] धर्म से गिरा हुआ ।

बेधीर—वि. [हिं. बे+धीर] अधीर, व्याकुल । उ.—अधार-निधि बेधीर करिकै करत आनन हास ।

बेधे—क्रि. स. [हिं. बेधना] शरीर में घाव किये । उ.—बहुत सनाह समर सर बेधे, ज्यौं कंटक नल-नाल—१-२७८ ।

बेधै—क्रि. स. [हिं. बेधना] (१) छेद दे, भेद दे, बेध डाले । उ.—अचरज कहा पार्थ जौ बेधै, तीनि लोक इक बान—१-२६९ । (२) घाव करे, घायल करे ।

बेन—संज्ञा पुं. [सं. वेणु] (१) मुरली, बाँसुरी । (२) बाँस । (३) एक वृक्ष ।

बेना—संज्ञा पुं. [सं. वेणु] (१) छोटा पंखा । (२) खस, उशीर । (३) बाँस ।
संज्ञा पुं. [सं. वेणी] माथे का एक गहना ।

बेनागा—क्रि. वि. [फ़ा. बे+अ. नागा] बिना नागा किये ।

बेनि—संज्ञा स्त्री. [हिं. बेनी] बालकों की चोटी । उ.—कजरी कौ पय पियहु लाल, जासौं तेरी बेनि बढ़ै—१०-१७४ ।

बेनिमूत—वि. [फ़ा. बे+नमूना] अनुपम, अद्वितीय ।

बेनी—संज्ञा स्त्री. [सं. वेणी] (१) **गंगा, सरस्वती और यमुना का संगम, त्रिवेणी।** उ.—सहस बार जौ बेनी परसौ चंद्रायन कीजै सौ बार। सूरदास भगवंत-भजन बिनु, जम के दूत खरे हैं द्वार—२-३। (२) **स्त्रियों की चोटी।** उ.—सुभ स्रवननि तरल तरौन, बेनी सिथिल गुही—१०-२४।

बेनीपान—संज्ञा पुं. [हिं. बेनी+पान] **बेंदी (गहना)।**

बेनु—संज्ञा पुं. [सं. वेणु] (१) **वंशी, मुरली, बाँसुरी।** उ.—ताल, मृदंग, झाँझ, इंद्रिनि मिलि, बीना, बेनु बजायौ—१-२०५ (२) **बाँस।**

बेनौटी—संज्ञा पुं. [हिं. बिनौला] **हलका पीला रंग।**

बेनौरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिनौला] **ओला।**

बेपरवाह—वि. [फ़ा.] (१) **बेफिक्र।** (२) **मनमौजी।**

बेपाइ—वि. [हिं. बे+सं. उपाय] **बहुत घबराया हुआ।**

बेपार—संज्ञा पुं. [सं. व्यापार] **वाणिज्य, व्यापार।**

बेपारी—संज्ञा पुं. [सं. व्यापारी] **व्यवसायी।**

बेपीर—वि. [हिं. बे+पीर] **दूसरों का दुख-दर्द न समझने वाला, निर्दयी, निष्ठुर।** उ.—सूरदास प्रभु दुखित जानिकै छाँड़ि गए बेपीर—२६८६।

बेफायदा—क्रि. वि. [फ़ा.] **बिना किसी लाभ के।**

बेफिक्र—वि. [फ़ा.] **जिसे कुछ चिन्ता न हो।**

बेबस—वि. [सं. विवश] (१) **जिसका कुछ वश न चले।** (२) **पराधीन, परवश।**

बेबाक—वि. [फ़ा.] **चुकाया हुआ (ऋण आदि)।**

बेभाव—क्रि. वि. [हिं. बे+भाव] **बिना हिसाब या गिनती के।**

बेमन—क्रि. वि. [हिं. बे+मन] **बिना ध्यान लगाये।**

बेमुरव्वत—वि. [फ़ा.] **जिसमें शील या संकोच न हो।**

बेर—संज्ञा स्त्री. [हिं. बार] (१) **बार, दफा।** उ.—बेर सूर की निठुर भए प्रभु, मेरौ कछु न सरचौ—१-१३३। (२) **विलंब, देर।** उ.—(क) प्रभु, हौं बड़ी बेर को ठाढ़ौ। और पतित तुम जैसे तारे, तिनहीं मैं लिखि काढ़ौ—१-१३७। (ख) मेरे प्रान-जिवन-धन माधौ, बाँधे बेर भई—३८१। (३) **घड़ी, समय।** उ.—मरती बेर सम्हारन लागे जो कछु गाड़ि धरी—१-७१।

संज्ञा पुं. [सं. बदरी] **एक छोटा खटमिट्ठा फल।**

बेरस—वि. [हिं. बे+रस] (१) **जिसमें रस न हो।** (२) **जिसमें स्वाद न हो।** (३) **जिसमें आनन्द न हो।**

बेरहम—वि. [फ़ा. बे+रहम] **निर्दय, निठुर।**

बेरा—संज्ञा पुं. [हिं. बेला] (१) **समय, अवसर।** उ.—सिव-आहुति-बेरा जब आई। बिप्रनि दच्छहिं पूछचौ जाई—४-५। (२) **सबेरा, प्रभात।**

संज्ञा पुं. [हिं. बेड़ा] (१) **लकड़ी-लट्ठों का बेड़ा।** (२) **नाव या जहाजों का समूह।**

बेरिआ, बेरियाँ, बेरिया—संज्ञा स्त्री. [हिं. बेला, बिरियाँ] **समय, बेला, वक्त।** उ.—(क) आवहु कान्ह, साँझ की बेरिया—१०-२४६। (ख) ग्वाल-मंडली मैं बैठे मोहन बट की छाँह, दुपहर बेरिया सखनि संग लीने—४६७।

बेरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बेड़ी] **लोहे की जंजीर जो प्रायः कैदियों को पहनाई जाती है, बेड़ी, निगड़।** उ.—(क) पांडव सब पुरुषारथ छाँड़चौ, बाँधे कपट-बचन की बेरी—१-२५१। (ख) पति अति रोष माँहि मन ही मन, भीषम दई बचन बँधि बेरी—१-२५२। (ग) प्रीतम भयौ पाइ की बेरी—८०७।

संज्ञा स्त्री. [हिं. बेर (फल)] **बेर, फल।**

संज्ञा स्त्री. [हिं. बार] (१) **बार, दफा।** (२) **देर।**

बेरो—संज्ञा पुं. [हिं. बेड़ा] **बेड़ा।** उ.—सूर मधुप उठि चले मधुपुरी बोरि जोग को बेरो—३४३१।

बेरोक—क्रि. वि. [हिं. बे+रोक] **बेखटके।**

बेरौ—संज्ञा पुं. [हिं. बेड़ा] **लकड़ी-लट्ठों का बना बेड़ा।** उ.—सेमर-ढाकहिं काटिकै बाँधौ तुम बेरौ—९-४२।

बेलंद—वि. [फ़ा. बलंद] **ऊँचा, उच्च।**

बेल—संज्ञा पुं. [सं. बिल्व] **एक वृक्ष और उसका फल।**

संज्ञा स्त्री. [सं. वल्ली] (१) **लता, बल्ली।**

मुहा०—बेल मँढ़े चढ़ना—**किसी काम में अभीष्ट क्रम से पूरी सफलता मिलना।**

(२) **काम-काज के अवसर पर 'परजा' को दिया जाने-वाला धन या नेग।** (३) **संतान, वंश।**

मुहा०—बेल बढ़ना—**वंश-वृद्धि होना।** (४) **बेल-बूटेदार रेशमी या मखमली फीता।** (५) **एक तरह की लंबी कुदाली।**

बेलदार—संज्ञा पुं. [फ़ा.] मजदूर, कारीगर।

बेलन, बलना—संज्ञा पुं. [सं. वलन] (१) लकड़ी, पत्थर आदि का कुछ लम्बा और गोल खंड। (२) लकड़ी का लंबा गोल खंड जो रोटी-पूरी बेलने के काम आता है।

बेलना—क्रि. स. [हिं. बेलन] (१) बेलन की सहायता से चकले पर रोटी-पूरी आदि को तैयार करना।

मुहा०—पापड़ बेलना—मुसीबतें और कठिनाइयाँ सहकर काम करना या समय काटना। (२) नष्ट करना। (२) पानी के छीटें उड़ाना।

बेलपत्र—संज्ञा पुं. [सं. बिल्वपत्र] बेल वृक्ष की पत्ती।

बेलसना—क्रि. अ. [सं. विलास+ना] भोग करना।

बेलहरा—संज्ञा पुं. [हिं. बेल+हरा] पान की डिबिया।

बेला—संज्ञा पुं. [सं. विचकिल, प्रा. बिअइल्ल] (१) एक छोटा पौधा जिसमें बहुत सुगंधित सफेद फूल लगते हैं। (२) बेले के फूल की तरह का एक गहना।

संज्ञा पुं. [सं. वेला] (१) लहर। (२) तेल नापने की चमड़े की कुल्हिया। (३) कटोरा। उ.—बेला भरि हलधर कौ दीन्हौ। पीवत पय बल अस्तुति कीन्हौ—३९६। (४) समुद्र का किनारा। उ.—बरनि न जाइ कहाँ लौ बरनौं प्रेम-जलधि वेला बल बोरे। (५) समय, वक्त।

बेलि—संज्ञा स्त्री. [हिं. बेल] लता, बेल।

संज्ञा पुं. [हिं. बेला] बेले का फूल।

बेली—संज्ञा स्त्री. [हिं. बेल] बेल, लता, बल्ली। उ.—(क) ते बेली कैसैं दहियत हैं, जे अपनैं रस भेइ—१-२००। (ख) फिरत प्रभु पूछत बन द्रुम-बेली—९-६४।

बेलौस—वि. [हिं. बे+फ़ा. लौस] खरा, सच्चा।

बेवकूफ—वि. [फ़ा. बेवकूफ] मूर्ख, नासमझ।

बेवकूफी—वि. [हिं. बेवकूफ] मूर्खता, नासमझी।

बेवक्त—क्रि. वि. [फ़ा. बेवक्त] कुसमय में।

बेवफा—वि. [फ़ा. बे+अ. वफा] (१) कृतघ्न। (२) बेमुरव्वत।

बेवरा—संज्ञा पुं. [हिं. ब्योरा] विवरण।

बेवस्था—संज्ञा स्त्री. [सं. व्यवस्था] प्रबंध, व्यवस्था।

बेवहरना—क्रि. अ. [सं. व्यवहार] बरतना, व्यवहार करना।

बेवहरिया—संज्ञा पुं. [सं. व्यवहार+हिं. इया] (१) लेनदेन का व्यवहार करनेवाला, महाजन। (२) मुनीम।

बेवहार—संज्ञा पुं [सं. व्यवहार] बरताव, व्यवहार।

बेवा—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] विधवा, राँड़।

बेवाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिवाई] 'बिवाई' नामक रोग।

बेवान—संज्ञा पुं. [सं विमान] (१) रथ, यान। (२) आकाश-यान। (३) वृद्ध मनुष्य की अरथी।

बेश—संज्ञा पुं. [सं. वेश] (१) वस्त्र, पोशाक। (२) वस्त्र आदि पहनने का ढंग।

बेशऊर—वि. [फ़ा. बे+अ. शऊर] नासमझ, फूहड़।

बेशक—क्रि. वि. [फ़ा. बे+अ. शक] बिना शक-संदेह के।

बेशकीमती—वि. [फ़ा. बेश+अ. कीमती] बहुमूल्य।

बेशरम—वि. [फ़ा. बेशर्म] निर्लज्ज, बेहया। उ.—(क) बाँह पकरि तू ल्याई काको अति बेशरम गँवारि। (ख) ऐसे जन बेशरम कहावत—३००९।

बेशरमी—संज्ञा स्त्री. [फ़ा. बेशर्म] निर्लज्जता, बेहयाई।

बेशी—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] (१) अधिकता। (२) लाभ।

बेशुमार—वि. [फ़ा.] अनगिनती।

बेश्म—संज्ञा पुं. [स.] घर, गृह।

बेष—संज्ञा पुं. [सं. वेश] (१) वस्त्राभूषणों से सजाना। (२) रूप, स्वरूप। उ.—तुरत मोहिं गोकुल पहुँचावहु, यह कहि कै सिसु वेष धरचौ—१०-८।

बेष्ठित—वि. [सं. वेष्टित] छाया हुआ, घिरा हुआ, लिपटा हुआ। उ.—मुक्त-माल बिसाल उर पर, कछु कहौं उपमाइ। मनौ तारा-गननि बेष्ठित गगन निसि रह्यौ छाइ—१०-२३४।

बेसंदर—संज्ञा पुं. [सं. वैश्वनर] अग्नि।

बेसँभर—वि. [हिं. बे+सँभाल] बेहोश।

बेसन—संज्ञा पुं. [देश.] (१) चने की दाल का आटा। उ.—बेसन मिलै सरस मैदा सौं अति कोमल पूरी है भारी—१०-२४१। (२) बेसन के बने व्यञ्जन। उ.—बरी, बरा, बेसन, बहु भाँतिनि, ब्यंजन बिबिध अगनियाँ—१०-२३८।

बेसनी—वि. [हिं. बेसन] बेसन का बना हुआ।

बेसबब—क्रि. वि. [फ़ा.] बिना कारण के।

बेसबरा—वि. [फ़ा. बे+अ. सब्र] धैर्य न रखनेवाला।

बेसमझ—वि. [हिं. बे+समझ] मूर्ख ।

बेसर—संज्ञा स्त्री. [देश.] नाक में पहनने का एक आभूषण, नथ ।

बेसरम—वि. [फा. बेशर्म] निर्लज्ज, बेहया, बेशर्म । उ.—बाँह पकरि तू ल्याइ काकौं, अति बेसरम गँवारि । सूर स्याम मेरे आगे खेलत, जोबन-मद मतवारि—१०-३१४.

बेसरा—वि. [फा. बे+सरा] आश्रयहीन ।

संज्ञा पुं. [देश.] एक शिकारी पक्षी ।

बेसरि—संज्ञा स्त्री. [देश.] नाक में पहनने की छोटी नथ । उ.—कच खुबि आँधरि काजर कानी नकटी पहिरै बेसरि—३०२६ ।

बेसवा—संज्ञा स्त्री. [सं. वेश्या] वारांगना, वेश्या ।

बेसा—संज्ञा स्त्री. [सं. वेश्या] वारांगना, वेश्या ।

संज्ञा पुं. [सं. भेष] वेश-भूषा ।

बेसारा—वि. [हिं. बैठाना, गुज. बैसाना] (१) बैठानेवाला । (२) जमाने या रखनेवाला ।

बेसाहना—क्रि. अ. [देश.] (१) खरीदना । (२) साथ या पीछे लगाना ।

बेसाहा—संज्ञा पुं. [हिं. बेसाहना] खरीदा हुआ सौदा ।

बेसी—क्रि. वि. [फा. बेश.] अधिक ।

बेसुध—वि. [हिं. बे+सुध] (१) बेहोश । बेखबर ।

बेसुर—वि. [हिं. बे+स्वर] बेमेल स्वरवाला ।

बेसुरा—वि. [हिं. बे+स्वर] (१) बेमेल स्वरवाला । (२) बेमौके, बेठिकाने ।

बेस्वाद—वि. [हिं. बे+स्वाद] (१) जिसमें कोई स्वाद न हो । (२) जिसका स्वाद बुरा हो ।

बेहंगम—वि. [सं. विहंगम] (१) बेढंगा । (२) बेढब ।

बेह—संज्ञा पुं. [सं. वेध] छेद, छिद्र ।

बेहतर—वि. [फ़ा.] तुलना में बढ़कर ।

अव्य.—स्वीकृति-सूचक शब्द, स्वीकार है ।

बेहद—वि. [फ़ा.] बहुत अधिक ।

बेहना—संज्ञा पुं. [देश.] रुई धुननेवाला ।

बेहया—वि. [फ़ा.] निर्लज्ज, बेशर्म ।

बेहयाई—संज्ञा स्त्री. [फा.] निर्लज्जता, बेशर्मी ।

बेहर—वि. [देश.] (१) अचर । (२) पृथक ।

बेहरना—क्रि. अ. [देश.] फटना, दरार पड़ना ।

बेहरा—वि. [देश.] अलग, पृथक् ।

बेहराना—क्रि. स. [सं. विदीर्ण] फाड़ना ।

क्रि. अ.—फटना ।

बेहान—क्रि. वि. [हिं. बिहान] आनेवाला दिन, कल ।

बेहाल, बेहाला—वि. [फा. बे+अ. हाल] व्याकुल, विकल, बेचैन । उ.—(क) काम-क्रोध-मद-लोभ-महाभय, अहनिसि नाथ, रहत बेहाल—१-१२७ । (ख) मीड़त हाथ सकल गोकुल जन बिरह बिकल बेहाल—२५३६ । (ग) मुरछि परी धरनी बेहाला—३४०८ ।

बेहिसाब—क्रि. वि. [फ़ा. बे+अ. हिसाब] बहुत अधिक ।

बेहून—क्रि. वि. [सं. विहीन] बिना, बगैर ।

बेहोश—वि. [फ़ा.] बेसुध, मूर्छित ।

बैंगन—संज्ञा पुं. [सं. वंगण ?] एक पौधा जिसके फल की तरकारी बनती है ।

बगनी, बैंजनी—वि. [हिं. बैंगन] ललाई लिये नीले रंग का ।

संज्ञा स्त्री.—बैंगन के टुकड़े को बेसन में लपेटकर बनायी गयी पकौड़ी ।

बैंडा—वि. [हिं. बेड़ा] (१) तिरछा । (२) कठिन ।

बै—संज्ञा स्त्री, [सं. वय] आयु, अवस्था ।

संज्ञा स्त्री. [अ.] बेचना, बिक्री ।

बैकल—वि. [सं. विकल] पागल, उन्मत्त ।

बैकुंठ—संज्ञा पुं. [सं. वैकुंठ] विष्णुलोक । उ.—त्राहि-त्राहि द्रौपदी पुकारी, गई बैकुंठ अवाज खरी—१-२४९ ।

बैखरी—संज्ञा स्त्री. [सं. वैखरी] (१) व्यक्त और स्पष्ट वाणी । (२) वाक् शक्ति । (३) वाग्देवी ।

बैखानस—वि. [सं. वैखानस] वानप्रस्थ आश्रम में रहनेवाला यति ।

बैजंती, बैजयंती—संज्ञा स्त्री. [सं. वैजयंती] (१) एक पौधा । (१) विष्णु की माला ।

बैठक—संज्ञा स्त्री. [हिं. बैठना] (१) बैठने का स्थान, चौपाल, अथाई । (२) वह आसन या पीठ जिस पर बैठा जाय । उ.—(क) अति आदर करि बैठक दीन्हीं—१२८५ । (ख) हृदय माँह पिय घर करौं री नैनन

बैठक देउँ—१२१५। (ग) गई भवन भीतर लिए तहँ बैठक दीन्हों—२१८२। (३) **मूर्ति, खम्भे आदि की चौकी।** (४) **बैठने का कार्य, जमाव।** (५) **अधिवेशन।** (६) **बैठने का ढंग।** (७) **संग-साथ, मेल।** (८) **दीवट, बैठकी।** (९) **एक तरह की कसरत।**

बैठका—संज्ञा पुं. [हिं. बैठक] **बैठने का स्थान, चौपाल।**

बैठकी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बैठक] (१) **बैठने का आसन, पीठ, पीढ़ा।** उ.—कनक-भूमि पर कर-पग-छाया यह उपमा इक राजति। करि-करि प्रतिपद प्रतिमनि बसुधा कमल बैठकी साजति—१०-११०। (२) **उठने-बैठने की कसरत।** (२) **मूर्ति, खंभे आदि की चौकी।** (४) **बैठने का ढंग।**

बैठत—क्रि. अ. [हिं. बैठना] **बैठता है।**

मुहा०—बैठत-उठत—**उठते-बैठते, हर समय।** उ.—बैठत-उठत सेज सोवत मैं कंस डरनि अकुलात—१०-१२।

बैठन—संज्ञा स्त्री. [हिं. बैठना] (१) **बैठने की क्रिया, भाव या ढंग।** (२) **आसन, पीढ़ा।**

बैठना—क्रि. अ. [सं. वेशन, बिष्ठ., प्रा. बिट्ठ+ना] (१) **आसीन या स्थित होना।**

मुहा०—बैठना-उठना—(१) **समय बिताना।** (२) **साथ या संगत में रहना।** उठ-बैठना— (१) **जाग जाना।** (२) **लेटा न रहना।**

(२) **किसी खाली जगह में ठीक तरह से जमना।** (३) **ठीक या अभ्यस्त होना।** (४) **घुली हुई चीज का तल में इकट्ठा हो जाना।** (५) **नीचे की ओर जाना, धँस जाना।** (६) **पचक जाना, धँसना।** (७) **चलता हुआ कार्य-व्यापार बिगड़ जाना।** (८) **तौल में निकलना।** (९) **खर्च होना।** (१०) **गुड़ का पिघल जाना।** (११) **पकाने पर चावल का गीला हो जाना।** (१२) **सवार होना।** (१३) **पौधे का जमना या लगना।** (१४) **पद पर स्थित होना।** (१५) **समाना, अँटना।** (१६) **किसी स्त्री का पत्नी के समान रहने लगना।** (१७) **पक्षी का अंडे सेना।** (१८) **काम न मिलना या रहना।** (१९) **काम से नागा करना।** (२०) **अस्त हो जाना।** (२१) **स्त्री का रजस्वला होना।**

बैठनि—संज्ञा स्त्री. [हिं. बैठना] (१) **बैठने की क्रिया, भाव या ढंग।** उ.—धन्य यह मिलनि धन्य यह बैठनि धन्य अनुराग नहीं रुचि थोरी—पृ. ३१० (४)। (ख) लोचन भए पखेरू माइ। ....मोर मुकुट टाटी मानौं यह बैठनि ललित त्रिभंग—२८९० (ना.)।

बैठवाँ—वि. [हिं. बैठना] **दबा या बैठा हुआ।**

बैठवाना—क्रि. स. [हिं. बैठाना] (१) **बैठाने को प्रवृत्त करना।** (१) **पौधा लगवाना।**

बैठाइ—क्रि. स. [हिं. बैठाना] **बैठाकर, आसीन करके।** उ.—दाऊ जू कहि, हँसि मिले, बाँह गही बैठाइ—४३१।

बैठाए—क्रि. स. [हिं. बैठाना] **स्थित किया, आसीन किया।** उ.—अरघासन दै प्रभु बैठाए—९-६७।

बैठाना—क्रि. स. [हिं. बैठना] (१) **आसीन या स्थित करना।** (२) **आसीन होने को कहना।** (३) **पद पर प्रतिष्ठित करना।** (४) **किसी स्थान पर ठीक से जमना।** (५) **अभ्यस्त करना।** (६) **घुली हुई वस्तु को तल पर इकट्ठा करना।** (७) **डुबाना, धँसाना।** (८) **पचकाना, दबाना।** (९) **कार्य-व्यापार चलता न रहने देना।** (१०) **फेंक या चलाकर किसी स्थान पर पहुँचाना।** (११) **सवार कराना।** (१२) **जमीन में गाड़ना या जमाना।** (१३) **किसी स्त्री को पत्नी के रूप में रख लेना।** (१४) **बेकाम कर देना।**

बैठार—क्रि. स. [हिं. बैठालना] **बैठाकर।** उ.—बहुरी गोद माँहि बैठार। कह्यौ, पढ़ेकहबिद्या-सार—७-२।

बैठारना—क्रि. स. [हिं. बैठालना] **बैठाना।**

बैठारिहौं—क्रि. स. [हिं. बैठालना] **बैठालूँगा, आसीन करूँगा।** उ.—तोहिं बैठारिहौं नाव मैं हाथ गहि, बहुरि हम ज्ञान तोहिं कहि सुनावैं—८-१६।

बैठारौ—क्रि. स. [हिं. बैठाना] **बैठाया, स्थित किया, रखा।** उ.—बाहिर बाँधि सुतहिं बैठारौ। मथति दही माखन तोहिं प्यारौ—३९१।

बैठालना—क्रि. स. [हिं. बैठाना] **बैठाना।**

बैठावन—संज्ञा स्त्री. [हिं. बैठाना] **बैठाने की क्रिया, भाव या ढंग।** उ.—पाइन परि सब बधू महरि बैठावन रे—१०-२५।

बैठाव—क्रि. स. [हिं. बैठाना] **स्थित करावे।** उ.—हाथहिं पर तोहिं लीन्हे खेलै नैंकु नहीं धरनी बैठावै—१०-१९१।

बैठिबे– संज्ञा पुं. [हिं. बैठना] **स्थित या आसीन होने का भाव, कार्य या ढंग।** उ.—ध्रुव खेलत-खेलत तहँ आए। गोद बैठिबे कौं पुनि धाए—४-९।

बैठे—क्रि. अ. [हिं. बैठना] **स्थित हैं, आसीन हैं।** उ.—सुनि देवकी को हितू हमारे। असुर कंस अपबंस बिनासन, सिर ऊपर बैठे रखवारे—१०-१०।

बैठैं—क्रि. अ. [हिं. बैठना] **स्थित हों, आसीन हों, बैठें।** उ.—मेरैं संग आइ दोउ बैठैं, उन बिनु भोजन कौने काम—१०-२३५।

बैढ़ना, बैड़ना—क्रि. स. [हिं. बाड़ा] **रोकना, बन्द करना।**

बैत—संज्ञा स्त्री. [अ.] **पद्य, श्लोक।**

बैतरनी—संज्ञा स्त्री. [सं. वैतरणी] **यम के द्वार के पास की एक कल्पित पौराणिक नदी।**

बैताल, बैतालिक–संज्ञा पुं. [सं. वैताल, वैतालिक] **राजा का वह सेवक जो स्तुति-पाठ कर उन्हें जगाता था।**

बैद—संज्ञा पुं. [सं. वैद्य] **चिकित्सक, वैद्य।**

बैदई, बैदक—संज्ञा स्त्री. [हिं. बैद] **वैद्य का कार्य।**

बैदूर्य—संज्ञा पुं. [सं. वैदूर्य्य] **लहसुनिया रत्न।**

बैदेही—संज्ञा स्त्री. [सं. वैदेही] **जनक की पुत्री जानकी।**

बैद्य—संज्ञा पुं. [सं. वैद्य] **चिकित्सक।** उ.—(अश्विनि-सुत) कह्यौ, हम जज्ञ-भाग नहिं पावत। बैद्य जानि हमकौं बहरावत—९-३।

बैद्यक—संज्ञा स्त्री. [हिं. वैद्य] **वैद्य का कार्य-व्यापार।**

बैन—संज्ञा पुं. [सं. वचन, प्रा. वयन] (१) **वचन, बात।** उ.—किलकि-किलकि बैन कहत मोहन मृदु रसना—१०-९०। (२) **शोकसूचक वाक्य।** (३) **व्यंग्य वाक्य।**

बैनतेय—संज्ञा पुं. [सं. वैनतेय] **गरुड़।**

बैना—संज्ञा पुं. [सं. वायन] **भेंट रूप में भेजी गयी मिठाई।**

क्रि. स. [सं. वयन] **बोना।**

बैपार—संज्ञा पुं. [सं. व्यापार] **काम-धंधा।**

बैपारी—संज्ञा पुं. [सं. व्यापारी] **व्यवसायी, रोजगारी।**

बैयर—संज्ञा स्त्री. [हिं. बहुअर] **स्त्री।**

संज्ञा पुं. [हिं. बैर] **बैर, द्वेष।**

बैया—क्रि. वि. [अनु. पैयाँ] **घुटनों के बल।**

बैया—संज्ञा. पुं. [सं. बाय] **जुलाहे की कंघी।**

बैर—संज्ञा पुं. [सं. वैर] (१) **विरोध, शत्रुता।** (२) **दुर्भाव, द्रोह, द्वेष।**

मुहा०—बैर काढ़ना (निकालना)—**बदला लेना।** बैर काढ़त—**बदला लेता है।** उ.—यहि बिधि सब नवीन पायौ ब्रज काढ़त बैर दुरासी। बैर ठहना (ठानना)—**दुर्भाव रखना।** बैर ठयौ—**दुर्भाव हो गया है।** उ.–कालि नहीं यहि मारग ऐहौं, ऐसौ मोसौं बैर ठयौ। बैर डालना **विरोध पैदा करना।** बैर पड़ना-**शत्रु बनकर कष्ट पहुँचाना।** बैर परै—**शत्रु बन जाय, विरोध करे।** उ.—(क) जाकौं मनमोहन अंग करै। ताकौ केस खसै नहिं सिर तैं जौ जग बैर परै—**१**-३७। (ख) कुटुंब बैर मेरे परे त्रैरिनि बैरि सिसुपाल—४१८८ (ना.)। बैर बढ़ाना—**दुर्भाव उत्पन्न करना।** बैर बढ़ैहै—**दुर्भाव उत्पन्न करेगी।** उ.—सुनहु सूर रस-छकी राधिका बातन बैर बढ़ैहै—१२६३। बैर बढ़ैहौ—**दुर्भाव उत्पन्न करोगी।** उ.—आवत जात रहत याही पथ मोसौं बैर बढ़ैहौ। बैर बिसाहना (मोल लेना)—**व्यर्थ ही शत्रु बना लेना।** बैर मानना—**दुर्भाव या द्वेष रखना।** बैर लेना—**बदला लेना।** बैर लेहु—**बदला लो।** उ.—भ्राता-बैर लेहु तुम जाइ—७-२। लैहौं बैर—**बदला लूँगा।** उ.—लैहौं बैर पिता तेरे को जैहै कहाँ पराई।

संज्ञा पुं. [हिं. बेर (फल)] **बेर का पेड़ या फल।**

बैरख—संज्ञा पुं. [तु. बैरक] **सेना का झंडा, ध्वजा, पताका।** उ.—सोई करौ जु बसतैं रहियैं, अपनौ धरियैं नाउँ। अपने नाम की बैरख बाँधौ, सुबस बसौं इहिं गाउँ—१-१८५।

बैराखी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बाहु + राखी] **भुजा का एक गहना।**

बैराग—संज्ञा पुं. [सं. वैराग्य] **विरक्ति।** उ.—मानौ बैराग पाइ, सकल सोक-गृह बिहाइ, प्रेम-मत्त फिरत भृत्य, गुनत गुन तिहारे—१०-२०५।

बैरागी—संज्ञा पुं. [सं. विरागी] **वैष्णव साधुओं का एक वर्ग।**

वि.—**विरक्त ।**

वैराग्य—संज्ञा पुं. [सं. वैराग्य] **विरक्ति ।**

बराना—क्रि. आ. [हिं. वायु] **वायु प्रकोप से बिगड़ना ।**

बैरी—वि. [सं. बैरी] (१) **शत्रु, द्वेषी ।** उ.—जो भक्तनि सौं बैर करत है, सो बैरी निज मेरौ—१-२७२। (२) **विरोधी ।**

संज्ञा पुं.—**व्यक्ति जो शत्रुता या द्वेष रखता हो ।** उ.—रंगभूमि मैं कंस पछारौं धीसि बहाऊँ बैरी—१०-१७६ ।

बैरोचन—संज्ञा पुं. [सं. बैरोचन] **विरोचन का पुत्र, राजा बलि ।** उ.—जज्ञ करत बैरोचन कौ सुत, बेद-बिहित बिधि-कर्मा—१-१०४ ।

बैल—संज्ञा पुं. [सं.बलद] (१) **वृषभ, बलीवर्द ।** उ.—प्रभु जू, यौं कीन्हीं हम खेती।....। काम-क्रोध दोउ बैल बली मिलि, रज-तामस सब कीन्हौ। अति कुबुद्धि मन हाँकनहारे, माया जूआ दीन्हौ—१-१८५ । (२) **मूर्ख या बुद्धिहीन व्यक्ति ।**

बैवस्वत—संज्ञा पुं. [सं. वैवस्वत] **सूर्य के एक पुत्र का नाम ।** उ.—सूरज कैं बैवस्वत भयौ। सुत-हित सो बसिष्ठ पै गयौ—९-२ ।

बैषानस—संज्ञा पुं. [सं. वैखानस] **तपस्वी ।**

बैसंदर—संज्ञा पुं. [सं. वैश्वानर] **अग्नि ।**

बैस—संज्ञा पुं. [सं. वयस्] (१) **अवस्था, आयु, उम्र।** उ.—(क) हम तुम सब बैस एक, को कारौं को अगरौ—१०-३३६ । (ख) जिन कीन्हे मोहन सुबस बैस ही थोरी—४२८६ (ना.) ।

मुहा०—बैस चढ़ै—**युवावस्था को प्राप्त हो, जवानी आए ।** (२) **अवस्था में वृद्धि हो ।** उ.—कजरी कौ पय पियहु लाल, जासौं तेरी बेनि बढ़ै। जैसैं देखि और ब्रज बालक, त्यौं बल-बैस चढ़ै—१०-१७४ ।

संज्ञा पुं. [सं. वैश्य] **वैश्य जाति ।**

संज्ञा पुं.—**क्षत्रियों की एक शाखा ।**

बैसना—क्रि. अ. [हिं. बैठना] **बैठना ।**

बैसवाड़ा, बैसवारा—संज्ञा पुं. [सं. बैस] **अवध का पश्चिमी प्रान्त जहाँ बैस क्षत्रियों की बस्ती थी ।**

बैसाख—संज्ञा पुं. [सं. वैशाख] **चैत के बाद का महीना ।**

बैसाखी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बैसाख] **बैसाख की पूर्णिमा ।**

संज्ञा स्त्री. [सं. बैशाख] **लँगड़े के सहारे की लाठी ।**

बैसारना—क्रि. स. [हिं. बैसना] **बैठाना ।**

बैसी—क्रि. अ. [हिं. बैसना] **बैठी (है) ।**

मुहा०—ठाली बैसी है—**कोई काम-धाम नहीं है, निठल्ली है ।** उ.—ऐसी को ठाली बैसी है तो सौं मूड़ लड़ावै—३२८७ ।

बैसैं—क्रि. स. [हिं. बैसना] **बैठे, बैठे रहकर।** उ.—जनम सिरानौ ऐसैं। कै घर-घर भरमत जदुपति बिनु, कै सोवत, कै बैसैं—१-२९३ ।

बैहर—संज्ञा स्त्री. [सं. वायु] **हवा, वायु ।**

बैहाल—संज्ञा पुं. [हिं. बिहाल] **बुरा हाल ।**

बैहौं—क्रि. स. [हिं. बोना] **बोऊँगा ।** उ.—दैहौं छाँड़ि राखिहौं यह ब्रत हरि हितु बीजु बहुरि को बैहौं—२५२४ ।

बोआई—संज्ञा स्त्री. [हिं. बोना] **बोने की क्रिया, भाव या मजदूरी ।**

बोइए, बोइयै—क्रि. स. [हिं. बोना] **बीज जमाइए, उगाइये, पैदा कीजिए ।** उ.—(क) जैसोइ बोइयै तैसोइ लुनिऐ, कर्मन भोग अभागे—१-६१ । (ख) जैसौ बीज बोइए तैसौ लुनिए लोग कहत सब बावरी—३३३१ ।

बोक, बोकरा—संज्ञा पुं. [हिं. बकरा] **बकरा ।**

बोकरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बकरी] **बकरी ।**

बोकला—संज्ञा पुं.[हिं. बकला](१) **छिलका ।** (२) **छाल ।**

बोज—संज्ञा पुं. [देश.] **घोड़ों का एक भेद ।**

बोझ—संज्ञा पुं. [देश०] (१) **भार, बोझा ।** उ.—(क) सूरदास भगवंत-भजन बिनु धरनी जननि बोझ कत मारी ?—१-३४ । (ख) जोग मोट सिर बोझ आनि तुम कत धौं घोष उतारी—३३१६ । (२) **भारीपन ।** (३) **कठिन काम ।** (४) **खटका, चिंता ।** (५) **कार्य-संपादन का श्रम या कष्ट ।** (६) **वस्तु या व्यक्ति के संबन्ध-निर्वाह का भार ।** (७) **गट्ठा ।** (८) **भार जो एक बार में लादा जाय ।**

मुहा०—बोझ उठना—**कार्य-भार लिया जा सकना ।**

बोझ उठाना—कार्य-भार का दायित्व लेना। बोझ उतरना—कठिन कार्य या दायित्व से छुटकारा पाना। बोझ उतारना—कठिन कार्य या दायित्व से छुटकारा दिलाना। (२) ऐसा कार्य करना या स्वयं दायित्व ले लेना, जिससे दूसरे की चिंता दूर हो जाय। (३) बेमन से काम करके बेगार-सी टालना।

बोझना—क्रि. स. [हिं. बोझ] भार लादना।

बोझल—वि. [हिं. बोझ] भारी, गुरु।

बोझा—संज्ञा पुं. [हिं. बोझ] बोझ, भार।

बोझिल—वि. [हिं. बोझ] भारी, गुरु।

बोटा—संज्ञा पुं. [सं. बोण्ट] लट्ठा, कुंदा।

बोटी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बोटा] मांस का छोटा टुकड़ा।

बोड़—संज्ञा स्त्री. [देश.] सिर का एक आभूषण।

बोड़री—संज्ञा स्त्री. [हिं. बौंड़ी] तोंदी, नाभि।

बोड़ा—संज्ञा पुं. [देश.] बड़ा साँप, अजगर।

संज्ञा पुं. [देश.] लोबिए की फली।

बोड़ी—संज्ञा स्त्री. [देश.] दमड़ी, कौड़ी।

संज्ञा स्त्री. [हिं. बौंड़ी] तोंदी, नाभि।

बोत—संज्ञा पुं. [देश.] घोड़ों की एक जाति।

बोदा—वि. [सं. अबोध] (१) मूर्ख। (२) सुस्त, मट्ठर। (३) फुसफुसा।

बोदापन—संज्ञा पुं. [हिं. बोदा+पन] (१) मूर्खता, नासमझी। (२) फुसफुसापन, फुसफुसा होने का भाव।

बोध—संज्ञा पुं. [सं.] (१) ज्ञान, जानकारी। (२) धीरज, संतोष।

बोधक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) जताने-बतानेवाला। (२) श्रृंगार रस का एक हाव जिसमें संकेत या क्रिया द्वारा मन का भाव जताया जाता है।

बोधगम्य—वि. [सं.] समझ में आने योग्य।

बोधत—क्रि. स. [हिं. समझाना] समझाते हैं। उ.—पुनि पुनि बोधत कृष्न लिखौ नहिं मेटै कोई—२६२५।

बोधति—क्रि. स. [हिं. बोधना] (१) समझाती-बुझाती है। उ.— (क) एकनि माथैं दूब-रोचना, एकनि कौं बोधति दै धीर—१०-२५। (ख) सुनहु सूर जसुमति सुत बोधति बिधि के चरित सबै हैं न्यारे—६०८। (२) ज्ञान सिखाती है।

बोधन—संज्ञा पुं [सं.] (१) समझाना, जताना। (२) उपदेश। (३) मंत्र जगाना।

बोधना—क्रि. स. [सं. बोधन] (१) समझाना-बुझाना। (२) ज्ञान सिखाना, जताना।

बोधि—क्रि. स. [हिं. बोधना] समझा-बुझाकर। उ.—सूर प्रभु कियौ बिस्राम सब निसि तहाँ बोधि अक्रूर निज घर पठाए—२५७०।

संज्ञा पुं. [सं.] पीपल का पेड़।

बोधितरु, बोधिद्रुम, बोधिवृक्ष—संज्ञा पुं. [सं.] गया नगर का पीपल का वह पेड़ जिसके नीचे गौतम बुद्ध ने बुद्धत्व प्राप्त किया था।

बोधिसत्व—संज्ञा पुं. [सं.] जो बुद्धत्व प्राप्त करने का अधिकारी हो, परंतु उसे प्राप्त न कर पाया हो।

बोधी—क्रि. स. [हिं. बोधना] समझाया। उ.—सूर यह कहि जननि बोधी, देख्यौ तुमहीं आइ—५८०।

बोना—क्रि. स. [सं. वपन] (१) उगाने के लिए बीज को जमीन में छितराना या डालना। (२) इधर-उधर डालना या छितराना।

बोबा—संज्ञा पुं. [देश.] (१) स्तन, थन। (२) साज-सामान। (३) गठरी।

बोय—संज्ञा स्त्री. [फा. बू] (१) सुगंध। (२) दुर्गंध।

बोयौ—क्रि. स. [हिं. बोना] (१) उगाया, अंकुरित किया। (२) फेंका, डाला, बहाया। उ.—कंस, केसि, चानूर, महाबल करि निरजीव जमुनजल बोयौ —१-५४।

वि.—बोया या उगाया हुआ। उ.—अपनौ बोयौ आप लोनिए तुम आपहिं निरुवारौ ३२९४।

बोर—संज्ञा पुं. [हिं. बोरना] डुबाव।

संज्ञा पुं. [सं. वर्त्तुल] (१) कँगूरेदार घुँघरू जो आभूषणों में गूँथा जाता है। (२) सिर का एक गहना।

संज्ञा पुं. [देश.] गड्ढा, खड्ड, बिल।

बोरत—क्रि. स. [हिं. बोरना] डुबाता है, बोरता है, निमग्न करता है। उ.—यह भव-जल कलिमलहिं गहे हैं, बोरत सहस प्रकारौ—१-२०९।

बोरति—क्रि. स. [हिं. बोरना] बोरती, डुबाती या निमग्न

करती है। उ.—गोलक नाउ निमेष न लागत सो पलकनि बर बोरति—३४५४।

बोरन—क्रि. स. [हिं. बोरना] **बोरने या डुबाने के लिए।** उ.—गर्व सहित आयो ब्रज बोरन, यह कहि मेरी भक्ति घटाई—९९६।

बोरना—क्रि. स. [हिं. बूड़ना] (१) **डुबाना।** (२) **पानी में डालकर तर करना।** (३) **बदनाम करना।** (४) **मिलाना।** (५) **रंग के घोल में डालकर रँगना।**

बोरा—संज्ञा पुं. [सं. पुर] **टाट का बड़ा थैला।**

संज्ञा पुं. [हिं. बोर] **छोटा घुँघरू।**

क्रि. स. [हिं. बोरना] **डुबोया।**

बोरि—क्रि. स. [हिं. बोरना] (१) **पानी में डुबोकर।** उ.—सूर मधुप उठि चले मधुपुरी बोरि जोग को बेरौ—३४३१। (२) **पानी की बाढ़ में बहाकर।** उ.—बल समेत निसि बासर बरसहु गोकुल बोरि पताल पठावहु—९४७। (३) **सुगंधित जल या रंग में डुबोकर।** उ.—रचि स्रक कुसुम सुगंध सेज सजि बसन कुमकुमा बोरि—२८१२। (४) **लपेटकर, मिलाकर, सानकर।** उ.—नील पुट बिच मनौ मोती धरे बंदन बोरि—१०-२२५।

बोरिया—संज्ञा स्त्री. [हिं. बोरा] **टाट का छोटा थैला।**

संज्ञा पुं. [फा.] **चटाई, बिस्तर।**

मुहा०—बोरिया-बँधना उठाना (समेटना)—**चलने की तैयारी करना।**

बोरी—क्रि. स. [हिं. बोरना] **डुबो दी, निमग्न कर दी।** उ.—धन-जोबन अभिमान अल्प जल, काहे कूर आपनी बोरी—१-३०३।

वि.—**डुबाकर भिगोई हुई, अच्छी तरह तर की हुई, रस से भरी हुई।** उ.—सुठि सरस जलेबी बोरी। जिहिं जेंवत रुचि नहिं थोरी—१०-१८३।

बोरे—वि. [हिं. बोरना] **डुबाये हुए, तर किये हुए।** उ.—घेवर अति घिरत चभोरे। लै खाँड़ सरस रस बोरे—१०-१८३।

क्रि. स. बहु.—**डुबाये, निमग्न किये।**

बोरैं—क्रि. स. [हिं. बोरना] **डुबा देने से, बोरने से, निमज्जित करने से।** उ.—प्रेम के सिंधु को मर्म जान्यौ नहीं, सूर कहि कहा भयौ देह बोरैं—१-२२२।

बोरौं—क्रि. स. [हिं. बोरना] **पानी की बाढ़ में डुबो दूँ, या डुबोकर बहा दूँ।** उ.—ब्रज बोरौं प्रलय के पानी—१०२४।

बोरयौ—क्रि. स. [हिं. बोरना] (१) **डुबाया, निमग्न किया।** उ.—प्रीति नदी महँ पाँव न बोरयौ दृष्टि न रूप परागी—३३३५। (२) **कलंकित किया, बदनाम किया।** उ.—कैसैं नाथहिं मुख दिखराऊँ, जौ बिनु देखे जाउँ। बानर बीर हँसैंगे मोकौं, तैं बोरयौ पितु-नाउँ—९-७५।

बोल—संज्ञा पुं. [हिं. बोलना] (१) **वचन, वाणी, बोली, शब्द।** उ.—(क) (सुरपति) काग-रूप करि रिषि-गृह आयौ। अर्धनिसा तिहिं बोल सुनायौ—६-८। (ख) बार-बार बकि स्याम सौं कछु बोल बुलावत—१०-१२२। (ग) स्रवन सुनत सुठि मीठे बोल—६३०। (२) **ताना, व्यंग्य, चुभती हुई बात।** उ.—ब्रज बसि करके बोल सहौं—२७७४।

मुहा०—बोल मारना—**ताना देना।**

(३) **सिखावन, सीख।** उ.—लोचन मानत नाहिन बोल—पृ० ३३५ (४५)। (४) **बात, कथन, निश्चय, प्रतिज्ञा।** उ.—अब न कौनौ चूक करिहौं यह हमारे बोल—३४७५।

मुहा०—बोल रखना—**बात मानकर काम करना, बात या कहा न टालना।** बोल रखायौ—**बात नहीं टाली, कहा मान लिया।** उ.—मथन नहीं मोहिं आवई, तुम सौंह दिवायौ। तिहिं कारन मैं आइ कै तुव बोल रखायौ—७१६। बोलबाला रहना—**बात या कहे का आदर होना।** बोलबाला होना—(१) **बात या कहे का आदर होना।** (२) **प्रताप या भाग्य बढ़ा-चढ़ा होना।** (३) **प्रसिद्ध होना।** बोल रहना—**मान-मर्यादा होना।**

(५) **बाजे का बँधा हुआ शब्द।** (६) **गीत का अंतरा।** (७) **संख्या।**

संज्ञा पुं. [देश.] **एक तरह का गोंद।**

क्रि. अ.—**शब्दोच्चारण करके, कहकर।**

मुहा०—बोल जाना—(१) **मर जाना।** (२) **बाकी न बचना।** (३) **घिस या फट जाना।** (४) **दुखी**

या हैरान होकर हार मान लेना। (५) सिटपिटा जाना। (६) दिवाला निकल जाना।

क्रि. स.—कोई कथन, बात या वचन कहकर।

मुहा०—बोल उठना—एकाएक कुछ कहने लगना।

बोलक—संज्ञा पुं. [हिं. बोल+एक] एक बात, शिक्षा की एक-दो बातें। उ.—बोलक इनहू को सुनि लीजै—२९७२।

बोलचाल—संज्ञा स्त्री. [हिं.बोल+चाल](१) बात-चीत। (२) मेल-मिलाप। (३)सामान्य व्यवहार(की भाषा)।

बोलत—क्रि. अ. [हिं. बोलना] (१) बोलते हैं, मुख से शब्द निकालते हैं। (२) चहचहाते हैं। उ.—तमचुर खग-रोर सुनहु, बोलत बनराई—१०-२०२।

क्रि. स.—बुलाते हैं, पुकारते हैं। उ.—ग्वाल सखा ऊँचे चढ़ि बोलत बार बार लै नाम।

बोलता—संज्ञा पुं. [हिं. बोलना] (१) आत्मा। (२) प्राण।

वि. (१) जीवित। (२) वाक्पटु।

बोलती—संज्ञा स्त्री. [हिं. बोलना] (१) बोलने की शक्ति, वाणी।

मुहा०—बोलती मारी जाना—भय, संकोच आदि के कारण मुँह से शब्द न निकलना।

बोलन—संज्ञा स्त्री. [हिं. बोलना] (१) बोलने की क्रिया या भाव। (२)वचन, बात, कथन। उ.—कुंज किलोल किये बन ही बन सुधि बिसरी उन बोलन की—३२९९।

बोलना—क्रि. अ. [सं. ब्रू, 'ब्रूयते', बूयंते; प्रा. बुल्लइ] (१) मुँह से शब्द निकालना।

यौ.—बोलना-चालना—बातचीत करना। हँसना-बोलना—प्रेमपूर्वक बातें करके प्रसन्न होना।

(२) किसी चीज के ठोंके-पीटे जाने पर आवाज निकलना या ध्वनि होना।

क्रि. स.—(१) कथन, बात या वचन कहना। (२) ठहराना, बद लेना। (३) उत्तर देना। (४) रोक-टोक करना। (५) छेड़छाड़ करना, सताना। (६) बुलाना, पुकारना। (७) बुलाने का संदेसा भेजना।

बोलनि—संज्ञा स्त्री. [हिं. बोलना] (१) बोलने की क्रिया या भाव। उ.—मन मोहनी तोतरी बोलनि, मुनि-मन हरनि सु हँसि मुसुकनियाँ—१०-१०६। (ख) कुंडल लोल, कपोलनि की छबि, मधुरी बोलनि बरनि न जाई—६१६। (२) बात, वचन। उ.—तुम्हरी बोलनि कौन पतीजै ज्यौं भुस पर की भीति—३१६३।

बोलनो—संज्ञा पुं. [हिं. बोलना] बोलने या बात करने की क्रिया या भाव।

यौ.—हँसि-बोलनो—सस्नेह हँसने-बोलने में। उ.—रमत राम स्याम सँग ब्रज बालक सुख पावत हँसि बोलनो—२२८०।

बोलवाना—क्रि. स. [हिं. बोलना] कहलाना, बुलवाना।

बोलसर, बोलसिरी—संज्ञा पुं. [हिं. मौलसिरी] मौलसिरी।

बोलाना—क्रि. स.[हिं.बुलाना] बोलने को प्रेरित करना।

बोलायो—क्रि. स. [हिं. बुलाना] बुलाया, आने को कहा, आने का निमंत्रण या संदेश भेजा। उ.—सब कुल सहित नंद सूरज प्रभु हित करि तहाँ बुलायो—१० उ०-१०८।

बोलावन—संज्ञा. पुं. [हिं. बुलाना] बुलाने के लिए। उ.—गए ग्वाल तब नंद बोलावन—१००१।

बोलावा—संज्ञा पुं. [हिं. बुलाना] न्योता, निमन्त्रण।

बोलि—क्रि. [हिं. बोलना] (१) बोलकर, कहकर। (२) बुलाकर। उ.—पारथ-तिय कुरुराज सभा मैं बोलि करन चहै नंगी—१-२१। (३) आवाज देकर, पुकार कर। उ.—आइ दरजी गयौ, बोलि ताकौ लयौ—२४८४।

प्र०—बोलि आयौ—बोल निकला, मुँह से शब्द निकल सके। उ.—बीतैं जाम बोलि तब आयौ, सुनहु कंस तव आइ सरचौ—१०-५९।

बोली—संज्ञा स्त्री. [हिं. बोलना] (१) मुँह से निकली हुई आवाज, वाणी।

मुहा०—मीठी बोली—कानों को मधुर या प्रिय लगनेवाली वाणी।

(२) वचन,बात,कथन। (३)नीलाम में दामकहना।

(४) बोलचाल का भाषा-रूप। (५) हँसी-ठठोली।

मुहा०—बोली छोड़ना (बोलना या मारना)—ताना देना।

क्रि. स.—बुलाया। उ.—तब ब्रज बसत बेनु (ख) ध्वनि करि बन बोली अधरातनि—३०२५।

बोले—क्रि. स. [हिं. बोलना] बुलाये। उ.—औरै दसा भई छिन भीतर बोले गुनी नगर तैं—७४४।

बोलैं—क्रि. अ. [हिं. बोलना] (१) बोलते हैं, उच्चारण करते हैं। (२) नाम ले लेकर आशीर्वाद देते हैं, बढ़ती मनाते हैं। उ.—बंदीजन-मागध-सूत, आँगन भौन भरे। ते बोलैं लै लै नाउँ, नहिं हित कोउ बिसरै—१०-२४।

बोलौं—क्रि. स. [हिं. बोलना] कहूँ, बताऊँ, उत्तर दूँ। उ.—जौ तुम कहौ कौन खल तारयौ, तौ हौं बोलौं साखी—१-१२२।

बोलौ—क्रि. स. [हिं. बोलना] कहो, उच्चारण करो। उ.—तौ हौं अपनी फेरि सुधारौं, बचन एक जौ बोलौ—१-१३६।

बोल्यौ—क्रि. अ. [हिं. बोलना] बोला, कहा। उ.—भोजन करत सखा इक बोल्यौ, बछरू कतहूँ दूरि गये—४३८।

बोवत—क्रि. स. [हिं. बोना] बोता है, उगाता है, बीज जमाता है। उ.—बोवत बबुर दाख फल चाहत, जोवत है फल लागे—१-६१।

बोवना—क्रि. स. [हिं. बोना] उगाने के लिए बीज जमीन में डालना।

बोवाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. बोवना] बोने की क्रिया, भाव या मजदूरी।

बोवाना—क्रि. स. [हिं. बोना] बोने का काम करना।

बोह—संज्ञा स्त्री. [हिं. बोर] डुबकी, गोता।

मुहा०—बोह लेना—डुबकी या गोता मारना।

बोहनी—संज्ञा स्त्री. [सं. बोधन = जगाना] (१) किसी चीज की पहली बिक्री। (२) दिन की पहली बिक्री। उ.—बिन बोहनी तनक नहिं दैहौं ऐसेहि छीन लेहु बर सगरौ।

बोहारना—क्रि. स. [हिं. बुहारना] झाड़ू देना।

बोहारी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बुहारी] झाड़ू।

बोहित—संज्ञा पुं. [सं. वोहित्थ] नाव, जहाज। उ.—भव-सागर, बोहित बपु मेरौ, लोभ-पवन दिसि चारौ—१-२१३।

बौंड़—संज्ञा स्त्री. [सं. वृंत] (१) डोरी जैसी पतली टहनी। (२) लता, बेल।

बौंड़ना—क्रि. अ. [हिं. बौंड़] पतली टहनी या लता की तरह बढ़कर फैलना।

बौंडर—संज्ञा पुं. [हिं. बवंडर] चक्कर खाता हुआ चलने वाला वायु का झोंका, बगूला, बवंडर। उ.—बौंडर महा भयावन आयौ, गोकुल सबै प्रलय कर मानी। महा दुष्ट लै उड़चौ गुपालहिं, चल्यौ अकास कृष्न यह जानी—१०-७८।

बौंड़ी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बौंड़] (१) कच्चा फल, ढेंड़ी। (२) फली, छीमी।

बौंरना—क्रि. अ. [हिं. बौर] लता का फूलना।

बौआना—क्रि. अ. [हिं. बाउ = वायु + आना] (१) सोते-सोते बकना। (२) बाई या पागलपन में बर्राना।

बौखल—वि. [हिं. बाउ = वायु + स्खलन] पागल, सनकी।

बौखलाना—क्रि. अ. [हिं. बौखल] पागल-सा हो जाना, बहकने लगना।

बौछाड़, बौछार—संज्ञा स्त्री. [सं. वायु + क्षरण] (१) हवा का झोंका। (२) (ईंट, पत्थर आदि का) बूँदों की तरह बरसना। (३) (रुपया-पैसा) बहुत अधिक देना या लुटाना। (४) (गाली, कोसना आदि) का बहुत अधिक कहा जाना। (५) ताना, व्यंग्य।

बौड़हा—वि. [हिं. बाउर+हा] बावला, पागल।

बौद्ध—वि. [सं.] (१) गौतम बुद्ध द्वारा प्रचारित। (२) गौतमबुद्ध का अनुयायी।

संज्ञा पुं.—गौतम बुद्ध का अनुयायी या उनके धर्म में आस्था रखनेवाला व्यक्ति।

बौद्ध धर्म—संज्ञा पुं. [सं.] गौतमबुद्ध का प्रवर्तित प्रसिद्ध धर्म।

बौध—संज्ञा पुं. [सं. बौद्ध] (१) गौतमबुद्ध। (२) बुद्ध का अनुयायी।

बौधा—क्रि. वि. [सं. बहुधा] अनेक प्रकार से ।

बौना—संज्ञा पुं. [सं. वामन] छोटे शरीर का, ठिगना । उ.—सूर प्रगट गिरि धरचौ बाम कर, हम जानति बलि बौना—६०१ ।

बौर—संज्ञा पुं. [सं. मुकुल, प्रा. मुउड़] आम की मंजरी ।

बौरई—संज्ञा स्त्री. [हिं. बौरा] (१) पागलपन, सनक । (२) पागल स्त्री ।

बौरना—क्रि. अ. [हिं. बौर + आना] आम के पेड़ में मंजरी या बौर आना ।

बौरहा—वि. [हिं. बावला] (१) पागल, बावला । (२) बहुत बकनेवाला, बकवादी ।

बौरा—वि. [हिं. बाउर] (१) पागल । (२) मूर्ख ।

बौराई—संज्ञा स्त्री. [हिं. बौरा] पागलपन ।

बौराऐं—क्रि. स. [हिं. बौराना (ना. प्रत्य.)] मूर्ख बनाने, बहलाने या मति फेरने पर । उ.—तुम्हरौ प्रेम प्रगट मैं जान्यौ, बौराऐं न बहौंगौ—१०-१९४ ।

बौराना—क्रि. अ. [हिं. बौरा] (१) पागल हो जाना । (२) उन्मत्त या विवेकरहित हो जाना ।

क्रि. स.—मूर्ख बनाना, मति फेरना ।

बौरानी—क्रि. अ. [हिं. बौराना]पागल हो गयी है, बौरा गयी है । उ.—देखौ री जसुमति बौरानी । घर-घर हाथ दिवावति डोलति, गोद लिए गोपाल बिनानी—१०-२५८ ।

वि. स्त्री.—पगली, जो पागल हो गयी हो ।

बौराने—वि. पु. [हिं. बौराना] पागल (जैसे) । उ.—हमअपने ब्रज ऐसेहिंरहिहैंबिरहबाइ बौराने—३२३९।

बौरान्यौ—क्रि. अ. [हिं. बौराना] (१) पागल हो गया, बौराया, सनकी हुआ । (२) उन्मत्त हुआ, बिवेक या बुद्धिरहित हुआ । उ.—बौरे मन्द रहन अटल करि जान्यौ । धन-दारा-सुत-बंधु-कुटुंब-कुल निरखि निरखि बौरान्यौ - १-३१९ ।

बौरायौ—क्रि. अ. [हिं. बौरना] उन्मत्त हुआ, विवेक-बुद्धि रहित हुआ । उ.—ऐसैंहि जनम बहुत बौरायौ । बिमुख भयौ हरि-चरन-कमल-तजि, मन संतोष न आयौ—१-२७ ।

क्रि. स.—विवेकहीन किया, मूर्ख बनाया । उ.—किधौं देवमाया बौरायौ किधौं अनत ही आयौ—१० उ०-६९ ।

बौरावत—क्रि. स. [हिं. बौराना] मूर्ख बनाता है । उ.—हम जानत परपंच स्याम बातन ही बौरावत—३१३५ ।

बौरावति—क्रि. अ. [हिं. बौराना] पागल होती है, सनक गयी है । उ.—साँचैंहि सुत भयौ नंद-नायक कैं, हौं नाहीं बौरावति—१०-२३ ।

बौरावहीं—क्रि. स. [हिं. बौराना] मूर्ख बनाती हैं, बहलाती-फुसलाती हैं । उ.—अति बिचित्र लरिका की नाईं गुर देखाइ बौरावहिं—२९८५ ।

बौरावै—क्रि. स. [हिं. बौराना] पागल बना देता है, विवेक-बुद्धिरहित कर देती है । उ.—सोवत सपने मैं ज्यौं संपति, त्यौं दिखाइ बौरावै—१-४२ ।

बौराह—वि. [हिं. बावला] पागल, सनकी ।

बौरी—वि. स्त्री. [हिं. बौरा (पुं.)] (१) पगली । (२) बुद्धिहीन, मूर्ख । उ.—(क) कहति कहा ऊधौ सौं तुम बौरी—३००७ । (ख) हम बौरी बकवाद करत हैं—३०९१ । (३) उन्मत, मदमाती । उ.—री बौरी, सठ भई मदनबस, मेरैं ध्यान चरन रघुराई—९-५६ ।

बौरे—वि. [हिं. बौरा] (१) पागल, विक्षिप्त । (२) अज्ञान, नादान, मूर्ख । उ.—(क) तजि अभिमान, राम कहि बौरे, नतरुक ज्वाला तचिबौ—१-५९ । (ख) और उपाइ नहीं रे बौरे, सुनि तू यह दै कान—१-३०४ ।

बौरैया—संज्ञा स्त्री. [हिं. बौरी] बावली, पागल, बौरी । उ.—आई सिखवन भवन पराऐं, स्यानि ग्वालि बौरैया—३७१ ।

बौलड़ा—संज्ञा पुं. [हिं. बहु + लड़] सिर का एक गहना ।

बौहर—संज्ञा स्त्री.[सं. वधूवर,हिं.बहुवर] वधू, दुलहिन ।

ब्यंग, ब्यंग्य—संज्ञा पुं. [सं. व्यंग्य] ताना, व्यंग्य ।

ब्यंजन—संज्ञा पुं. [सं. व्यंजन] (१) तैयार या बनी हुई तरकारी और साग । (२) (विभिन्न प्रकार के) भोजन । उ.—(क) षट-रस ब्यंजन छाँड़ि रसोई, साग बिदुर-घर खाए—१-२४४ (ख) बहुत प्रकार किये सब ब्यंजन अमित बरन मिष्टान्न—१०-८९ ।

ब्यजन—संज्ञा पुं. [सं. व्यजन] हवा करने का पंखा । उ.—असुर-सुता तिहिं ब्यजन डुलावै—६-१७४ ।

व्यतीतत – क्रि. अ. [सं. व्यतीत] **बीतता है।**

व्यतीतना—क्रि. अ. [सं. व्यतीत] **बीत जाना।**

क्रि. स.—**बिताना, व्यतीत करना।**

व्यथा—संज्ञा स्त्री. [सं. व्यथा] **पीड़ा, कष्ट।**

व्यथित—वि. [सं. व्यथित] **पीड़ित, दुखी।**

व्यभिचारी—वि. [सं. व्यभिचारी] **चरित्रहीन, दुश्चरित्र।** उ.—बिना गोपाल और जेहि भावत ते कहिहैं ब्यभिचारी—२४१६।

व्यवसाय—संज्ञा पुं. [सं. व्यवसाय] (१) **काम-धंधा।** (२) **जीविका-साधन।** (३) **व्यापार।**

व्यवस्था—संज्ञा स्त्री. [सं. व्यवस्था] (१) **कार्य-विधान।** (२) **उचित क्रम।** (३) **प्रबन्ध, योजना।**

व्यवहर—संज्ञा पुं. [सं. व्यवहार] **उधार, ऋण।**

व्यवहरिया—संज्ञा पुं. [सं. व्यवहार] **रुपए का लेन-देन करनेवाला, महाजन।**

व्यवहार—संज्ञा पुं. [सं. व्यवहार] (१) **बर्ताव।** (२) **रुपये का लेन-देन।** (३) **आने-जाने या लेने देने का संबंध।** (४) **रीति-नीति, प्रसंग, विवरण।** उ.—पारवती-बिवाह ब्यवहार, सूर कह्यौ भागवतऽनुसार—४-७। (५) **कार्य, धर्म, प्रकृति।** उ.-(क) हर्ष-सोक तनु कौ ब्यवहार—५-४। (ख) सूरदास सिर देत सूरमा सोइ जानै ब्यवहार—२६०८।

व्यवहारी—संज्ञा पुं. [सं. व्यवहारिन्] (१) **कार्यकर्ता।** **लेन-देन करनेवाला।** (३) **इष्ट-मित्र।** (४) **प्रबंधक।**

व्यष्टि—संज्ञा स्त्री. [सं. व्यष्टि] **समष्टि का विशिष्ट और पृथक अंश, समष्टि का विपरीतार्थक।** उ.—प्रथम ज्ञान, बिज्ञानक द्वितिय मत, तृतिय भक्ति कौ भाव। सूरदास सोई समष्टि करि, ब्यष्टि दृष्टि मन लाव—२-३८।

ब्यसन—संज्ञा पुं. [सं. व्यसन] (१) **भोग-विलास के प्रति आसक्ति।** (२) **बुरे शौक की लत।**

ब्यसनी—वि. [सं. व्यसनिन्] (१) **जिसको भोग-विलास के प्रति आसक्ति हो।** (२) **जिसे बुरी बात का शौक हो।**

ब्याइ—क्रि. अ. [हिं. ब्याना] **बच्चा जनकर।**

प्र.—रही ब्याइ—**बच्चा जन रही है।** उ.—अबहीं एक सखा यह कहि गयौ गाइ रही बन ब्याइ—१५५७।

व्याख्यान—संज्ञा पुं. [सं. व्याख्यान] **व्याख्या, वर्णन।**

प्र०—कियौ ब्याख्यान—**व्याख्या की, वर्णन किया।** उ.—ब्यासदेव तब करि हरि-ध्यान, कियौ भागवत कौ ब्याख्यान—१-२३०।

व्याज—संज्ञा पुं. [सं. व्याज] (१) **छल, बहाना, मिस।** उ.—यहै जानि गोपाल बँधाए। साप-दग्ध ह्वै सुत कुबेर के, आनि भए तरु जुगल सुहाए। ब्याज रुदन लोचन-जल ढारत, ऊखल दाम सहित चलि आए—३८६। (२) **उधार दिये गये धन का सूद।** उ.—सूर मूर अक्रूर गयौ लै ब्याज निबेरत ऊधौ—३३७८।

व्याजू—वि. [हिं. ब्याज] **ब्याज पर दिया हुआ या दिया जानेवाला धन।**

व्याध—संज्ञा पुं. [सं. व्याध] **पशु-पक्षियों को पकड़ने, बेचने और मारने से जीविका चलानेवाला, बहेलिया।** उ.—लोचन भए पखेरू माई।………। सूरदास मन ब्याध हमारौ गृह-बन तैं जु बिसारे—सभा० २८९०।

ब्याधा—संज्ञा पुं. [हिं. व्याध] **ब्याध, बहेलिया।**

संज्ञा स्त्री. [सं. व्याधि] (१) **रोग।** (२) **विपत्ति।**

व्याधि—संज्ञा स्त्री. [सं. व्याधि] (१) **रोग।** (२) **विरह के कारण अस्वस्थ रहना जो एक संचारी भाव है और पूर्व राग की दस अवस्थाओं में से भी एक है।** (३) **विपत्ति।** (४) **झंझट।**

ब्याना—क्रि. अ. [हिं. बिया = बीज] **बच्चा जनना।**

क्रि. स.—**उत्पन्न करना, गर्भ से निकालना।**

ब्यानी—वि. [हिं. ब्याना] **ब्यायी हुई, जिसने हाल ही में बच्चा जना हो।** उ.—ब्यानी गाय बछरुवा चाटति, हौं पय पियत पतूखिनि लैया—१०-३३५।

व्यापक—वि. [सं. व्यापक] **दूर तक व्याप्त, चारों ओर फैला हुआ।** उ.—दूरि गयौ दरसन के ताईं, ब्यापक प्रभुता सब बिसरी—१-११५।

ब्यापत—क्रि. अ. [हिं. ब्यापना] **प्रभाव या असर करता है।** उ.—हमारे देहु मनोहर चीर। काँपति, सीत तनहिं अति ब्यापत, हिम सम जमुना-नीर—७९२।

ब्यापना—क्रि. अ. [सं. व्यापन] (१) **अच्छी तरह फैलकर सब जगह घेर लेना।** (२) **चारों ओर छा जाना।** (३) **घेरना, ग्रसना।** (४) **प्रभाव या असर करना।**

ब्यापार—संज्ञा पुं. [सं. व्यापार] (१) **काम, कार्य।** (२) **काम करने का भाव।** (३) **रोजगार, धंधा।**

ब्यापारी—संज्ञा पुं. [सं० व्यापारिन्] **रोजगार करनेवाला।**

ब्यापि—क्रि. अ. [हिं. व्यापना] **फैला है, व्याप्त है, वर्तमान है।** उ.—रह्यौ घट-घट ब्यापि सोई, जोति-रूप अनूप—२-२७।

ब्यापिहै—क्रि. अ. [हिं. व्यापना] **प्रभाव डालेगी, असर करेगी, व्यापेगी।** उ.—हरि कह्यौ अब न ब्यापिहै माया, तब वह गर्भ छाँड़ि जग आया—१-२२६।

ब्यापै—क्रि. अ. [हिं. व्यापना] (१) **किसी पात्र या पदार्थ के भीतर फैलता है अथवा व्याप्त होता है।** (२) **प्रभाव या असर करता है।** उ.—(क) जाकौ काम-क्रोध नित ब्यापै। अरु पुनि लोभ सदा संतापै।... हरि-माया सब जग संतापै। ताकौ माया-मोह न ब्यापै।......। भक्ति पाइ पावै हरि-लोक। तिन्हैं न ब्यापै हर्षऽरु सोक—३-१३। **(ख)** माया, काल, कछु नहिं ब्यापै, यह रस-रीति जो जानै। (२) **घेरती है, ग्रसती है।** उ.—जरा अबहिं तोहिं ब्यापै आई। भयउ बृद्ध तब कहेउ सिर नाई।

ब्यार—संज्ञा स्त्री. [हिं. बयार] **हवा, वायु।**

ब्यारी—संज्ञा स्त्री. [हिं. ब्यालू] **रात का भोजन।**

ब्याल—संज्ञा पुं. [सं. व्याल] (१) **सर्प।** (२) **कालियनाग।** उ.—नाथत ब्याल बिलंब न कीन्हौ—५५७।

ब्याली—संज्ञा स्त्री. [सं. व्याली] **साँपिन, नागिन।**
वि.—**सर्पों को धारण करनेवाला।**

ब्यालू—संज्ञा पुं. [सं. विकाल] **रात का भोजन।**

ब्यावर—वि. स्त्री. [हिं. ब्याना] **जिसने बच्चा जना हो।** उ.—ब्यावर बिथा न बंध्या जानै—३४४२।

ब्यास—संज्ञा पुं. [सं. व्यास] **श्रीकृष्ण द्वैपायन जो वेदों के संपादक और श्रीमद्भागवत आदि पुराणों के रचयिता माने जाते हैं।** उ.—अन्तर-दाह जु मिट्यो ब्यास कौ इक चित ह्वै भागवत किऐं—१-९।

ब्याह—संज्ञा पुं. [सं. विवाह] **विवाह, परिणय।** उ.—कहति जननी ब्याह कौं तब रहत बदन दुराइ—४९८।

ब्याहता—वि. [सं. विवाहित] **जिसके साथ ब्याह हुआ हो।**
संज्ञा पुं.—**पति।**

ब्याहना—क्रि. स. [हिं. ब्याह+ना] **विवाह करना।**

ब्याहि—क्रि. स. [हिं. ब्याहना] **ब्याह कर।**
प्र०—ब्याहि दयौ—**विवाह कर दिया।** उ.—रुचि कै अत्रि नाम सुत भयौ, ब्याहि अनसुया सौं सो दयौ—४-२।

ब्याही—क्रि. स. [हिं. ब्याहना] **विवाह किया, ब्याह लिया।** उ.—हरि, हौं महा अधम संसारी। आन समुझ मैं बरिया ब्याही आसा कुमति कुनारी—१-१७३।

ब्याहुला—वि. [हिं. ब्याह] **विवाह का।**

ब्योंचना—क्रि. अ. [सं. विकुंचन, प्रा. बिउंचन] **शरीर के किसी अंग का मुरक जाना या मोच खा जाना।**

ब्योंची—संज्ञा स्त्री. [हिं. ब्योंचना] **उलटी, कै, वमन।**

ब्योंड़ा—संज्ञा पुं. [हिं. बेड़ा] **लम्बी गोलाकार लकड़ी जो दरवाजा खुलने से रोकने को लगाई जाती है।**

ब्योंत—संज्ञा पुं. [सं. व्यवस्था] (१) **ब्योरा, विवरण।** (२) **ढंग, विधि, रीति।** (३) **युक्ति, उपाय।** (४) **उपक्रम, तैयारी।** (५) **संयोग, अवसर।** (६) **पूरा-पूरा कार्य होने का हिसाब।** (७) **साधन, समाई।** (८) **पहनावे की काट-छाँट।** (९) **प्रबन्ध, व्यवस्था।**
मुहा०—ब्योंत खाना—**अनुकूल व्यवस्था होना।**

ब्योंतत—क्रि. स. [हिं. ब्योंतना] **किसी पहनावे के हिसाब से कपड़े को काटता-छाँटता है।** उ.—सूर स्वामी अति रिस भीम की भुजा के मिस ब्योंतत बसन ज्यों सुत तन फारचौ।

ब्योंतना—क्रि. स. [हिं. ब्योंत] (१) **किसी हिसाब से कपड़े को काटना-छाँटना।** (२) **मार डालना।**

ब्योंताना—क्रि. स. [हिं. ब्योंतना] **नाप के हिसाब से कपड़ा कटाना-छँटाना।**

ब्योपार—संज्ञा पुं. [हिं. ब्यापार] **रोजगार, धंधा।**

ब्योपारी—संज्ञा पुं. [हिं. ब्यापारी] **रोजगारी, व्यवसायी।**

ब्योरन—संज्ञा स्त्री. [हिं. ब्योरना] **बाल सँवारने की रीति।**

ब्योरना—क्रि. स. [सं. ब्योरना] **उलझे बाल सुलझाना।**

ब्योरा—संज्ञा पुं. [सं. विवरण] (१) **घटना आदि का विवरण।** (२) **किसी विषय या प्रसंग का पूरा हिसाब।** (३) **हाल, वृत्तान्त।**

ब्योरेवार—क्रि. वि. [हिं. ब्योरा] **बस्तार के साथ।**

ब्योसाइ, ब्योसाय—संज्ञा पुं. [सं. व्यवसाय] (१) **कार-बार, धंधा।** (२) **व्यापार, व्यवसाय।**

ब्योहर—संज्ञा पुं. [हिं. व्यवहार] **सूद पर रुपये के लेन-देन का व्यापार।**

ब्योहरा, ब्योहरिया—संज्ञा पुं. [हिं. ब्योहर] **सूद पर रुपया देनेवाला।**

ब्योहरना—क्रि. अ. [हिं. व्यवहार] **काम में लाना।**
क्रि. स.— **आचरण या बर्ताव करना।**

ब्योहार—संज्ञा पुं. [सं. व्यवहार] **बर्ताव, व्यवहार।**

ब्यौंकना—क्रि. अ. [देश.] **उछलना, कूदना, लपकना।**

ब्यौंकि—क्रि. अ. [हिं. ब्यौंकना] **उछलकर, लपककर।** उ.—मैया री, मैं चंद लहौंगो। कहा करौं जलपुट भीतर कौ, बाहर ब्यौंकि गहौंगौ—१०-१९४।

ब्यौपार—संज्ञा पुं. [सं. व्यापार] (१) **व्यवसाय।** (२) **कर्म, कार्य, काम।** उ.—या बिधि कौ ब्यौपार बन्यौ-जग, तासौं नेह लगायौ—१-७९।

ब्यौपारी—संज्ञा पुं. [हिं. व्यापारी] **व्यापारी, व्यवसायी।** उ.—(क) यह मारग चौगुनौ चलाऊँ तौ पूरौ ब्यौपारी—१-१४६। (ख) दीरघ मोल कह्यौ ब्यौपारी रहे ठगे सब कौतुक हार—१०-१७३।

ब्यौरौ—संज्ञा पुं. [हिं. ब्यौरा] **प्रसंग, झगड़ा, चक्कर, बन्धन।** उ.—श्रीभागवत सुनै जो कोइ, ताकौं हरि-पद प्रापति होइ। ऊँच-नीच ब्यौरौ न रहाइ। ताकी साखी मैं, सुनि आइ—१-२३०।

ब्यौसाइ—संज्ञा पुं. [सं. व्यवसाय] **कार-बार, व्यापार।**

ब्यौसाई—संज्ञा पुं. [सं. व्यवसायी] **कार-बार करने वाला, व्यापारी।**

ब्यौहर—संज्ञा पुं. [हिं. व्यवहार] **सूद पर रुपया लेने-देने का व्यापार।**

ब्यौहरा, ब्यौहरिया—संज्ञा पुं. [हिं. व्यवहारी] **सूद पर रुपया लेने-देने का व्यापार करनेवाला।**

ब्यौहार—संज्ञा पुं. [सं. व्यवहार] (१) **काम-धंधा।** उ.—जब हरि मुरली अधर धरी। गृह-ब्यौहार तजे आरज-पथ, चलत न संक करी—६५९। (२) **बर्ताव, व्यवहार।**

ब्यौहारत—क्रि. अ. [हिं. व्यवहारना] **व्यवहार करता है।** उ.—ऐसे जनम-करम के ओछे, ओछनि हूँ ब्योहारत—१-१२।

ब्यौहारना—क्रि. अ. [सं. व्यवहार] **सम्बन्ध रखना।**

ब्रंद—संज्ञा पुं. [सं. वृंद] **समूह।**

ब्रज—संज्ञा पुं. [सं. व्रज] **मथुरा और वृन्दावन का समीपवर्ती प्रदेश जब श्रीकृष्ण ने बाललीलाएँ की थीं श्रीकृष्ण-भक्तों के लिए यह प्रदेश समस्त तीर्थों से बढ़कर है।**

ब्रजधर—संज्ञा पुं. [सं. व्रज+हिं. धरना] **ब्रज को धारण करनेवाले, ब्रज में ही व्याप्त, ब्रज के रक्षक।** उ.—गिरिधर, ब्रजधर, मुरलीधर, धरनीधर—५७२।

ब्रजना—क्रि. अ. [सं. ब्रजन] **जाना, चलना।**

ब्रजराइ, ब्रजराई—संज्ञा पुं. [सं. व्रज+हिं. राय] **व्रजपति श्रीकृष्ण।** उ.—अपने कृत तैं हौं नहिं बिरमत, सुनि कृपालु ब्रजराई—१-२०७।

ब्रजराज, ब्रजराजा—संज्ञा पुं. [सं. व्रजराज] (१) **ब्रज के राजा नन्द जी।** उ.—जागिए, ब्रजराज-कुँवर, कमल-कुसुम फूले—१०-२०२। (२) **ब्रज के स्वामी श्री कृष्ण।** उ.—(क) लीजै पार उतारि सूर कौं महाराज ब्रजराज—१-१०८। (ख) और लेहु कछ सुख ब्रज-राजा—३९६।

ब्रत—संज्ञा पुं. [सं. व्रत] (१) **पुण्य-प्राप्ति के उद्देश्य से नियमपूर्वक उपवास करना।** उ.—भक्तनि-हित तुम कहा न कियौ। गर्भ परीच्छित रच्छा कीन्ही; अंबरीष ब्रत राखि लियौ—१-२६। (२) **टेक, संकल्प।** उ.—पतिव्रता जालंधर-जुवती सो पति-ब्रत तैं टारी—१-१०४।

ब्रह्मांड—संज्ञा पुं. [सं. ब्रह्मांड] **चौदहों भुवनों का समूह, अखिल विश्व, ब्रह्मांड।** उ.—अखिल ब्रह्मांड—खंड की महिमा, दिखराई मुख माँहि—१०-२५५।

ब्रह्म—संज्ञा पुं. [सं. ब्रह्मन्] (१) **जगत का कर्त्ता जो सत, चित् और आनन्दस्वरूप माना गया है।** उ.—सूर पूरन ब्रह्म निगम नाहीं गम्य तिनहिं अक्रूर मन यह बिचारै—२५५१। (२) **आत्मा, चैतन्य।** (३) **ईश्वर।**

ब्रह्मकन्यका, ब्रह्मकन्या—संज्ञा स्त्री. [सं.] ब्रह्मा की कन्या सरस्वती।

ब्रह्मचर्य—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वीर्य को रक्षित रखने की साधना। (२) चार आश्रमों में प्रथम।

ब्रह्मचारी—संज्ञा पुं. [सं. ब्रह्मचारिन्] ब्रह्मचर्य का साधक।

ब्रह्मज्ञ—वि. [सं.] ब्रह्म का ज्ञाता।

ब्रह्मज्ञान—संज्ञा पुं. [सं.] ब्रह्म या अद्वैत सिद्धान्त का बोध या उसकी जानकारी।

ब्रह्मज्ञानी—संज्ञा पुं. [सं.] ब्रह्म का ज्ञाता, अद्वैतवादी।

ब्रह्मण्य—वि. [सं.] (१) ब्राह्मण पर श्रद्धा रखनेवाला। (२) ब्रह्म या ब्रह्मा-संबंधी।

ब्रह्मन्य—वि. [सं. ब्रह्मण्य] ब्रह्मण्य। उ.—बिदित बिरद ब्रह्मन्य देव, तुम करुनामय सुखदाई—९-७।

ब्रह्मद्रव—संज्ञा पुं. [सं.] गंगाजल।

ब्रह्मद्रोही—वि. [सं.] ब्राह्मण का बैरी।

ब्रह्मद्वार—संज्ञा पुं. [सं.] खोपड़ी के बीच का छेद जिससे प्राण निकलते माने जाते हैं, ब्रह्मरंध्र। उ.—(क) त्रिकुटी संगम ब्रह्मद्वार भिदि यों मिलिहैं बनमाली। (ख) ब्रह्मद्वार फिरि फोरि कै निकसे गोकुलराय।

ब्रह्मनाथ—संज्ञा पुं. [सं.] विष्णु।

ब्रह्मपुत्र—संज्ञा पुं. [सं.] (१) ब्रह्मा का पुत्र। (२) नारद। (३) एक नद जो मानसरोवर से निकलकर भारत के पूर्वी प्रदेश से होकर बंगाल की खाड़ी में गिरता है। इसका प्राचीन नाम 'लौहित्य' है।

ब्रह्मपुत्री—संज्ञा स्त्री. [सं.] सरस्वती।

ब्रह्मपुराण—संज्ञा पुं. [सं.] १८ पुराणों में एक।

ब्रह्मभोज—संज्ञा पुं. [सं.] ब्राह्मण-भोजन।

ब्रह्ममुकुन्द—संज्ञा पुं. [सं.] परब्रह्म। उ.—मुरनि कही गोकुल प्रगटे हैं पूरन ब्रह्ममुकुन्द—९७५।

ब्रह्ममुहूरत, ब्रह्ममुहूर्त—संज्ञा पुं. [सं.] सूर्योदय से एक घण्टा पहले का समय। उ.—ब्रह्ममुहूरत भयौ सबेरौ जागे दोऊ भाई।

ब्रह्मरंध्र—संज्ञा पुं. [सं.] खोपड़ी के बीच का गुप्त छिद्र जो प्राण निकलने का द्वार माना जाता है।

ब्रह्मराक्षस—संज्ञा पुं. [सं.] वह ब्राह्मण जो मरकर प्रेत हुआ हो।

ब्रह्मलोक—संज्ञा पुं. [सं.] ब्रह्मा का लोक।

ब्रह्मवाद—संज्ञा पुं. [सं.] वह सिद्धान्त जिसमें शुद्ध चैतन्य की सत्ता मानी जाय, अद्वैतवाद।

ब्रह्मवादी—वि. [सं. ब्रह्मवाद] वेदान्ती, अद्वैतवादी।

ब्रह्मविद्या—संज्ञा स्त्री. [सं.] ब्रह्म को जानने की विद्या।

ब्रह्महत्या—संज्ञा स्त्री. [सं.] ब्राह्मण-वध।

ब्रह्मांड—संज्ञा पुं. [सं.] (१) चौदहों भुवनों का समूह। (२) खोपड़ी, कपाल।

ब्रह्मांडपति—संज्ञा पुं. [सं.] चौदहों भुवनों के स्वामी। उ.—अखिल ब्रह्मांडपति तिहुँ भुवनाधिपति नीरपति पवनपति अगम बानी—१५२२।

ब्रह्मा—संज्ञा पुं. [सं.] ब्रह्म के तीन सगुण रूपों में एक जो सृष्टि का रचयिता माना गया है, विधाता। उ.—ध्यान धरत महादेव व ब्रह्मा तिनहूँ पै न छूटै—१-२६३।

ब्रह्माणी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) ब्रह्मा की स्त्री। (२) सरस्वती।

ब्रह्मानंद—संज्ञा पुं. [सं.] ब्रह्मज्ञान के अनुभव का आनन्द।

ब्रह्मावर्त—संज्ञा पुं. [सं.] सरस्वती और दृशद्वती नदियों के बीच के प्रदेश का नाम।

ब्रह्मास्त्र—संज्ञा पुं. [सं.] एक अमोघ अस्त्र।

ब्रात, ब्रात्य—वि. [सं. ब्रात्य] (१) जिसके दस संस्कार न हुए हों। (२) जिसका यज्ञोपवीत न हुआ हो। (३) वर्ण-संकर।

ब्राह्म—वि. [सं.] ब्रह्म-संबंधी।

ब्राह्मण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) चार वर्णों में सर्वश्रेष्ठ वर्ण। (२) इस वर्ण का व्यक्ति। (३) वेद का भाग जो 'मंत्र' नहीं है।

ब्राह्मणत्व—संज्ञा पुं. [सं.] ब्राह्मण का भाव या धर्म।

ब्राह्मणी—संज्ञा स्त्री. [सं.] ब्राह्मण की स्त्री।

ब्राह्मन—संज्ञा पुं. [सं. ब्राह्मण] ब्राह्मण। उ.—गुरु-ब्राह्मन अरु संत सुजन के जात न कबहुँ निकेत—२-१५।

ब्राह्ममुहूर्त—संज्ञा पुं. [सं.] सूर्योदय से दो-तीन घड़ी पूर्व का समय।

ब्राह्मी—संज्ञा पुं. [सं.] (१) दुर्गा। (२) भारत की एक प्राचीन लिपि जिससे नागरी आदि लिपियाँ विकसित हुई हैं। (३) एक बूटी।

ब्रीड़त—क्रि. अ. [हिं. ब्रीड़ना] **लजाते हो, लज्जित होते हो।** उ.—मोसौं बात सकुच तजि कहिए। कत ब्रीड़त कोउ और बतावौ, ताही के ह्वै रहियै—१-१३६।

ब्रीड़ना, ब्रीड़नो—क्रि. अ. [सं. व्रीडन] **लजाना, लज्जित होना।**

ब्रीड़ा—[संज्ञा स्त्री. सं. व्रीडा] **लज्जा।**

ब्वै—वि. [हिं. बिय] **दो।**

भ

भ—**देवनागरी वर्णमाला का चौबीसवाँ और पवर्ग का चौथा वर्ण जिसका उच्चारण-स्थान ओष्ठ है।**

भंकार—संज्ञा पुं. [सं. भय+करना] **भयानक शब्द।**

भंग—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **टूटने का भाव, विनाश।** उ.—(क) देवराज मख-भंग जानि कै बरष्यौ ब्रज पर आई—१-१२२। (२) **बाधा, रुकावट।** उ.—छाँड़ि मन हरि बिमुखन कौ संग। जिनके संग कुबुद्धि उपजति है, परत भजन में भंग—१-३३२। (३) **तरंग, लहर।** (४) **पराजय।** (५) **खंड, भाग।** (६) **टेढ़ापन।** (७) **टेढ़े होने या झुकने का भाव।**

वि.—**टेढ़ी, कुटिल, झुकी हुई।** उ.—अलक अबिरल चारु हास-बिलास भृकुटी भंग—६२७।

संज्ञा स्त्री. [हिं. भाँग] **भाँग।**

भंगड़—वि. [हिं. भाँग] **बहुत भाँग पीनेवाला।**

भंगना, भंगनो—क्रि. अ. [हिं. भंग] (१) **टूटना।** (२) **हारना।**

क्रि. स.—(१) **तोड़ना।** (२) **हराना।**

भंगरा, भंगरैया—संज्ञा पुं. [हिं. भाँग] **भाँग के रेशे से बना मोटा कपड़ा।**

संज्ञा पुं. [सं. भृंगराज] **एक बनस्पति।**

भंगार—संज्ञा पुं. [हिं. भाँग] **घास-फूस, कूड़ा-करकट।**

भंगिमा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) **टेढ़ापन।** (२) **हाव-भाव या कोमल चेष्टाएँ।**

भंगी—वि. [सं. भंगिन्] (१) **भंग या नष्ट होनेवाला।** (२) **भंग या नष्ट करनेवाला।**

संज्ञा पुं. [सं. भक्त] **मेहतर।**

वि. [हिं. भाँग] **भाँग पीनेवाला, भँगेड़ी।**

संज्ञा स्त्री. [सं. भंगिमा] **स्त्रियों के हाव-भाव।**

भंगुर—वि. [सं.] (१) **भंग होनेवाला, नाशवान।** उ०—(क) इहिं तन छन-भंगुर के कारन, गरबत कहा गँवार—१-८४। (ख) भ्रम्यौ बहुत लघु धाम बिलोकत छनभंगुर दुखदानी—१-८७। (२) **टेढ़ा, कुटिल।**

भँगेड़ी—वि. [हिं. भाँग] **खूब भाँग पीनेवाला।**

भंजक—वि. [सं.] **भंग करने या तोड़नेवाला।**

भंजन—वि. [सं.] **नाश करनेवाला, तोड़नेवाला, भंजक।** उ.—(क) जन-दुख जानि, जमल-द्रुम-भंजन, अति आतुर ह्वै धाए—१-२७। (ख) रजक-मल्ल चानूर-दवानल-दुख-भंजन सुखदाई—१-१५८।

संज्ञा पुं.—(१) **तोड़ने या भंग करने का भाव।** (२) **नाश, ध्वंस।**

भँजना, भँजानो—क्रि. अ. [सं. भंजन] (१) **टूटना।** (२) **भुनना।**

क्रि. अ. [हिं. भाँजना] (१) **(रस्सी आदि का) बटा जाना।** (२) **(कागज आदि का) परतों में मोड़ा जाना।**

भंजना, भंजनो—क्रि. स. [सं. भंजन] **तोड़ना।**

भँजाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. भाँजना] **भाँजने की क्रिया, भाव या मजदूरी।**

भँजाना, भँजानो—क्रि. स. [हिं. भँजना] (१) **तुड़वाना।** (२) **भुनाना।**

क्रि. स. [हिं. भाँजना] **भाँजने को प्रवृत्त करना।**

भंजि—क्रि. स. [हिं. भंजना] **तोड़कर, गिराकर।** उ.—बिटप भंजि, जमलार्जुन तारे, करि अस्तुति गोबिंद रिझाए—३८६।

भंजे—क्रि. स. [हिं. भंजना] (१) **तोड़े, टुकड़े-टुकड़े किये।** (२) **नष्ट किये, बिनाशे, दूर किये।** उ.—सुदामा-दारिद्र भंजे कूबरी तारी—१-१७६।

भंटा—संज्ञा पुं. [सं. वृंताक] **बैंगन।** उ.—भरता भँटा खटाई दीनी—२३२१।

भंड—वि. [सं.] **अश्लील बातें बकनेवाला।**
संज्ञा पुं. [हिं. भाड़] **भाड़।**

भंडता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) **भाँड़ों की बातें।** (२) **ओछी हँसी-मखौल।**

भंडना, भंडनो—क्रि. स. [सं. भंडन] (१) **हानि पहुँचाना।** (२) **भंग करना, तोड़ना।** (३) **नष्ट करना।** (४) **बदनाम करना।**

भडफोड़—संज्ञा पुं. [हिं. भाँड़ा+फोड़ना] (१) **बर्तन तोड़ना-फोड़ना।** (२) **भंडाफोड़ करना।**

भंडर, भँडरिया—वि. [हिं. भंड] **पाखंडी, धूर्त।**

भँडसार, भँडसाल—संज्ञा स्त्री. [हिं. भाँड+शाला] **खत्ती, गोदाम।**

भंडा—संज्ञा पुं. [सं. भाँड] (१) **बर्तन।** (२) **भेद।**
मुहा०—भंडा फूटना—**भेद खुलना।** भंडा फोड़ना—**भेद खोलना।**

भँडाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. भाँड] **उपद्रव।** उ.—काहू कै घर करत भँडाई—१०-३४०।

भडा , भँडानो—क्रि. स. [हिं. भाँड] (१) **उपद्रव ना।** (२) **तोड़ना-फोड़ना।**

भँडा —क्रि. स. [हिं. भँडाना] **तोड़-फोड़ दिया, नष्ट कर या, अव्यव्यस्त कर दिया।** उ.—अब तौ इन्हैं जकरि बाँधौंगी, इहि सब तुम्हरौ गाँव भँडायौ।

भंडार, भंडारा—संज्ञा पुं. [सं. भांडागार, हिं. भंडार] (१) **कोष, खजाना।** उ.—(क) तिन हारयौ सब भूमि-भँडार। हारी बहुरि द्रौपदी नार—१-२४६ (ख) हारि सकल भंडार-भूमि, आपुन बन-बास लह्यौ—१-२४७। (२) **अन्नादि रखने का कोठार।** (३) **व्यंजन पकाने और रखने का स्थान।** (४) **पेट।**

भंडारा—संज्ञा पुं. [हिं. भंडार] (१) **कोष।** (२) **कोठार।** (३) **समूह, झुंड।** (४) **साधुओं का भोज।** (५) **पेट।**

भडारी—संज्ञा पुं. [हिं. भंडार] (१) **भंडार, कोष, खजाना।** उ.—(क) जो माँगौ सो देहुँ तुरतहीं, हीरा-रतन-भँडारी—८-१४। (ख) तिन हारयौ सब भूमि-भँडारी (भँडार)—१-२४६। (२) **छोटी कोठरी।**
संज्ञा पुं.—(१) **कोषाध्यक्ष, खजांची।** (२) **भंडार।** (३) **रसोइया।**

भंडीर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **चौलाई।** (२) **बट।**

भँडेरिया—संज्ञा पुं. [हिं. भंड] **चालाकी, मक्कारी।**

भँड़ैती—संज्ञा स्त्री. [हिं. भांड़] **भाँड़ का काम।** (२) **भाँड़ों की सी बातचीत या चेष्टा।**

भड़ौआ—संज्ञा पुं. [हिं. भाँड़] (१) **भाँड़ों का गीत।** (२) **हास्य रस की साधारण कविता।**

भँभरना—क्रि. अ. [हिं. भय] **डरना, भयभीत होना।**

भंभा, भँभा, भँभाका—संज्ञा पुं. [सं. भंसस्] **बड़ा छेद।**

भँभाना, भँभानो—क्रि. अ. [अनु.] **गाय आदि का रँभाना।**

भँभीरी—संज्ञा स्त्री. [अनु.] **एक पतिंगा जिसकी पूछ लंबी और चार पर झिल्लीदार होते हैं।** उ—बाल अवस्था मैं तुम धाइ। उड़ति भँभीरी पकरी जाइ—३-५।

भँभेरि—संज्ञा स्त्री. [हिं. भँभरना] **भय, डर।**

भँमर, भँमरा—संज्ञा पुं. [सं. भ्रमर] **बड़ी मधुमक्खी।**

भँवत—क्रि. अ. [हिं. भँवना] **हिलता-डोलता या चक्कर लगाता है।** उ.—चंचल दृग अंचल-पट-दुति-छबि, झलकत चहुँ दिसि झालरी। मनु सेवाल कमल पर अरुझे, भँवत भ्रमर भ्रम-चाल री—१०-१४०।

भँवन—संज्ञा स्त्री. [सं. भ्रमण] **घूमना, भ्रमण।**

भँवना, भँवनो—क्रि. अ. [सं. भ्रमण] (१) **घूमना।** (२) **चक्कर काटना।**

भँवर—संज्ञा पुं. [सं. भ्रमर, पा. भमर, प्रा० भँवर] (१) **भौंरा।** (२) **जल का चक्करदार घुमाव।** (३) **गड्ढा।** उ.—उरज भँवरी भँवर मानो मीन मनि की कांति—१४१६।

भँवरजाल—संज्ञा पुं. [हिं. भँवर+जाल] **मोह-माया के सांसारिक झगड़े।**

भँवरना, भँवरनो—क्रि. अ. [हिं. भ्रमना] (१) **घूमना।** (२) **चक्कर लगाना।**

भँवरभीख—संज्ञा स्त्री. [हिं. भँवर+भीख] **तीन प्रकार की भिक्षा में से दूसरी जो घूम-घूमकर माँगी जाय।**

भँवरा—संज्ञा पुं. [हिं. भँवर] **भौंरा।** उ.—(क) ज्यौं भँवरा रस चाखि चाहि कै तहाँ जाइ जहाँ नव तन जानै—२६९८। (ख) आपुहिं भँवरा आपुहिं फूल—३४०७।

भवरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. भँवरा] (१) **प्राणी के शरीर के**

ऊपर वह स्थान जहाँ के रोएं और बाल भँवर की तरह घूमे हुए हों। उ.—(क) उर बनमाल बिचित्र बिमोहन, भृगु-भँवरी भ्रम कौं नासै—१-६६। (ख) उरज भँवरी भँवर मानों मीन मनि की कांति—१४१६। (२) पानी का चक्कर, भँवर।

संज्ञा स्त्री. [हिं. भँवना] (१) भाँवर। (२) सौदे की फेरी। (३) रक्षक की गश्त। (४) परिक्रमा।

भँवा संज्ञा पुं. [हिं. भँवना] फेरा, चक्कर।

भँवाना, भँवानो—क्रि. स. [हिं. भँवना] (१) घुमाना-फिराना, चक्कर देना। (२) भ्रम या उलझन में डालना।

भँवारा—वि. [हिं. भँवना] घूमने-फिरनेवाला।

भँवारे—वि. [हिं. भँवारा] चक्कर लगानेवाले, घूमने-फिरने वाले। उ.—तुम कारे सुफलकसुत कारे, कारे मधुप भँवारे।

भ—संज्ञा पुं. [सं.] (१) नक्षत्र। (२) भूधर। (३) भौंरा।

भइया—संज्ञा पुं. [हिं. भाई] (१) भाई। (२) एक प्रेम या स्नेह-सूचक संबोधन।

भइ—क्रि. अ. [हिं. भई] हुई। उ.—सिंह आगैं, सेष पाछैं, नदी भइ भरिपूरि—१०-५।

भईं—क्रि अ. [हिं. हुईं] (१) हुईं उ.—जुवति बनि भईं ठाढ़ी और पहिरे चीर—१८५२। (२) निकलीं, उगीं, जन्मीं। उ.—दुहुँधा द्वै दँतुली भईं, मुख अति छबि पावत—१०-१२२।

भई—क्रि. अ. [हिं. हुई] हुई, घटित हुई। उ.—(क) पाछे भई सु भई सूर जन, अजहूँ समुझि सँभारि—२-३१। (ख) तातैं भई यज्ञ की हान—४-५।

भउजाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. भौजाई] भावज, भाभी।

भए—क्रि. अ. [हिं. होना] (१) हुए, हो गये, प्रतिष्ठित हुए, बने। उ.—(क) कहा कूबरी सील-रूप-गुन? बस भए स्याम त्रिभंगी—१-२१। (ख) पारथ के सारथि हरि आप भए हैं—१-२२। (ग) काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह ये भए चोर तैं साहु—१-४०। (२) जन्मे, अवतरे, पैदा हुए। उ.—प्राचीनबर्हि भूप इक भए—४-१२।

भएँ—क्रि. अ. [हिं. होना] होने पर, हो जाने पर। उ.—बिरध भएँ कफ कंठ बिरोध्यौ, सिर धुनि धुनि पछितानौ—१-३२९।

भक - संज्ञा स्त्री. [अनु.] सहसा जल उठना।

भकभकाना—क्रि. अ. [अनु.] 'भकभक' करके जलना।

भकभूरि—वि. [सं. भेक] (१) मूर्ख। (२) उजड्ड।

भकुआ—वि. [सं. भेक] मूर्ख।

भकुआना, भकुआनो--क्रि.अ. [हिं. भकुआ] घबरा जाना।

क्रि. स.—(१) घबरा देना। (२) मूर्ख बनाना।

भकोसना, भकोसनो—क्रि. स. [सं. भक्षण] जल्दी-जल्दी खाना।

भक्त—वि. [सं.] (१) कई भागों में बाँटा हुआ। (२) अनुयायी। (३) भजन या भक्ति करनेवाला। उ.—भक्त (भक्तनि) हित तुम कहा न कियौ—१-२६।

भक्तपन - संज्ञा पुं. [सं. भक्त + हिं. पन] भक्ति।

भक्तबछल, भक्तबच्छल, भक्तबत्सल, भक्तवत्सल—[सं. भक्तवत्सल] भक्तों पर कृपा रखनेवाला। उ.—(क) सूरदास प्रभु भक्त-बछल तुम पावन-नाम कहाए हो—१-७। (ख) कुसल प्रसननि कहे तुरत मन काम लहि भक्तबत्सल नाम भक्त गावैं—२५८८।

भक्ता—वि. [सं. भक्त] भक्ति करनेवाला। उ.—इह सुन के भृगु कह्यौ, नारद आदिक हरि-भक्ता—१८६१।

भक्ताई—संज्ञा स्त्री. [हिं. भक्त+आई] भक्ति।

भक्ति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) भागों में बाँटना। (२) भाग। (३) पूजा, अर्चन। (४) श्रद्धा। (५) अनुराग। (६) ईश्वर में श्रद्धापूर्ण अनुराग। इसके नौ भेद हैं—श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पाद-सेवन, अर्चन, वंदन, दास्य, सख्य और आत्मनिवेदन।

भक्ष - संज्ञा पुं. [सं.] (१) खाने का पदार्थ, भोजन। (२) खाने का काम। उ.—जूठे की कछु संक न मानी भक्ष किए सत भाई।

भक्षक—वि. [सं.] खाने या भक्षण करनेवाला।

भक्षण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) भोजन। (२) भोजन करना।

भक्षत—क्रि. स. [हिं. भक्षना] भोजन करता है।

भक्षना, भक्षनो—क्रि. स. [सं. भक्षण] भोजन करना।

भक्षिए, भक्षिये—क्रि. स. [हिं. भक्षण] खाइये।

भक्षित—वि. [सं.] खाया हुआ।

भक्षी—वि. [सं. भक्षिन्] खानेवाला, भक्षक।

भक्ष्य—वि. [सं.] खाने या भक्षण करने योग्य।

संज्ञा पुं.—भोजन, आहार।

भख—संज्ञा पुं. [सं. भक्ष, प्रा. भक्ख] आहार, भोजन। उ.—बेद-बेदांत उपनिषद अरपै सो भख भोक्ता नाहिं।

मुहा०—भख करना—भोजन करना।

भखना—क्रि. स. [सं. भक्षण, प्रा. भक्खन] (१) भोजन करना। (२) निगल जाना।

भखि—क्रि. स. [हिं. भखना] खाकर। उ.—दादुर जल बिनु जिवै पवन भखि, मीन तजै हठि प्रान—३३५७।

भखिहैं—क्रि. स. [हिं. भखना] भक्षण करेंगे, खायँगे। उ.—कृमि-पावक तेरौ तन भखिहैं,—१-३१९।

भग—संज्ञा पुं. [सं.] (१) स्त्री की योनि या जननेंद्रिय। उ.—इहिं अंतर गौतम गृह आयौ। इंद्र जानि यह बचन सुनायौ। ····इक भग की तोहिं इच्छा भई। भग सहस्र मैं तोकौं दई—६-८। (२) ऐश्वर्य।

भगई—संज्ञा स्त्री. [हिं. भगवा] लँगोटी।

भगण—संज्ञा पुं. [सं.] छंदशास्त्र में एक गण।

भगत—वि. [सं. भक्त] भक्ति करनेवाला, उपासक। उ.—भगत-बिरह कौ अति हीं कादर, असुर-गर्ब-बल नासत—२-३१।

संज्ञा पुं.—(१) साधु। (२) भूत-प्रेत उतारनेवाला ओझा।

भगतबछल, भगतबच्छल, भगतवत्सल, भक्तवत्सल—वि. [सं. भक्त-वत्सल] भक्त पर कृपा रखनेवाला।

भगति, भगती—संज्ञा स्त्री. [सं. भक्ति] (१) पूजा, अर्चना। उ.—परमारथ सौं बिरत, बिषय-रत, भाव-भगति नहिं नैंकहु जानी—१-१४९। (२) श्रद्धा। (३) विश्वास।

भगदत्त—संज्ञा पुं. [सं.] प्राग्ज्योतिषपुर का राजा जो नरकासुर का पुत्र था और महाभारत के युद्ध में कौरवों की ओर से लड़ा था। उ.—इत भगदत्त, द्रोन, भूरिस्रव, तुम (भीष्म) सेनापति धीर—१-२६९।

भगदड़, भगदर—संज्ञा स्त्री. [हिं. भागना+दौड़ना] बहुत से लोगों के दौड़ने-भागने की क्रिया या भाव।

भगन—वि. [सं. भग्न] भग्न, टूटा फूटा।

भगना—क्रि. अ. [हिं. भागना] भागना।

संज्ञा पुं. [सं. भागनेय] बहन का लड़का, भानजा।

भगनी—संज्ञा स्त्री. [सं. भगिनी] बहन।

भगर, भगल, भगली—संज्ञा पुं. [देश.] (१) छल-कपट। (२) लूट-खसोट। (३) जादू।

भगवंत—संज्ञा पुं. [सं. भगवत् का बहु. भगवंत] भगवान, ईश्वर। उ.—(क) भक्त सात्विकी सेवैं संत। लखैं तिन्है मूरति भगवंत—३-१३। (ख) मानि भगवंत-आज्ञा सो आयौ तहाँ—८-८।

भगवती—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) देवी। (२) गौरी। (३) सरस्वती। (४) गंगा। उ.—त्रिभुवन-हार सिंगार भगवती सलिल चराचर जाके ऐन—९-१२।

भगवत्—वि. [सं.] (१) ऐश्वर्ययुक्त। (२) पूज्य।

संज्ञा पुं.—(१) ईश्वर। (२) विष्णु। (३) शिव।

भगवत्पदी—संज्ञा स्त्री. [सं.] गंगा।

भगवदीय—वि. [सं. भगवत्] भगवान का (भक्त)।

भगवद्गीता—संज्ञा स्त्री. [सं.] एक प्रसिद्ध संस्कृत ग्रंथ जो हिन्दू धर्म का सर्वश्रेष्ठ ग्रंथ माना जाता है और सभी भारतीय संप्रदायों में मान्य है।

भगवद्भक्त—संज्ञा पुं. [सं.] ईश्वर का भक्त

भगवान, भगवान्—वि. [सं. भगवत् का एक०] (१) ऐश्वर्य, बल, यश, श्री, ज्ञान और वैराग्य—इन छह गुणों से युक्त। (२) पूज्य।

संज्ञा पुं.—(१) ईश्वर। (२) विष्णु। (३) शिव। (४) कोई परम आदरणीय व्यक्ति।

भगाइ—क्रि. स. [हिं. भगाना] भगाकर, छिपाकर, हराकर। उ.—कै बालकनि भगाइ जाहिं लै आन भूमि पर—५८९।

भगाई—क्रि. अ. [हिं. भागना] भागकर, दौड़कर।

प्र०—गए भगाई—भाग गए उ.—सखा सहित बलराम छपाने जहँ-तहँ गए भगाई—१०-२४०।

भगाऊँ—क्रि. स. [हिं. भगाना] भागने को प्रवृत्त करूँ।

भगात—क्रि. अ. [हिं. भागना] भागता है। उ.—जोइ लीजै सोई है अपनो जैसे चोर भगात—पृ. ३२४(३२)।

भगाना, भगानो—क्रि. स. [हिं. भागना] (१) भागने **को प्रवृत्त करना, दौड़ना। (२) खदेड़ना, हटाना।**

क्रि. अ.—**भागना, दौड़ना।**

भगाने—क्रि. अ. [हिं. भागना] **भाग गये।** उ.—सूर निरखि मुख सकुचि भगाने—६९५।

भगाड़, भगार—संज्ञा. स्त्री. [हिं. भागना] **भागने की क्रिया या भाव।** उ.—मल्ल सुभट परे भगार कृष्ण को परिसाने—२६१३।

भगिनी—संज्ञा स्त्री. [सं.] **बहन, सहोदरा।** उ.—सती कह्यौ, मम भगिनी सात। सबै बुलाई ह्वैहैं तात—४-५।

भगिनीय—संज्ञा पुं. [सं.] **बहन का लड़का, भानजा।**

भगी—क्रि. अ. [हिं. भागना] **भाग गयी, चली गयी।** उ.—सुपनेउ के सुख न सहि सकी नींद जगाइ भगी—२७९०।

भगीरथ—संज्ञा पुं. [सं.] **अयोध्या के एक राजा जो दिलीप के पुत्र थे और जिनकी तपस्या से संतुष्ट होकर गंगा पृथ्वी पर आयी थी।** उ.—बहुरि भगीरथ तप बहु कियौ। तब गंगा जू दरसन दियौ—९-९।

भगे—क्रि. अ. [हिं. भागना] (१) **भाग गये।** (२) **दूर हो गये, हट गये।** उ.—सूर स्याम ऐसे तैं देखे मैं जानति दुख दूर भगे—१३१८।

भगेड़, भगोड़ा—वि. [हिं. भागना] (१) **छिपकर भागने-वाला।** (२) **काम पड़ने पर भागनेवाला, कायर।**

भगौती—संज्ञा स्त्री. [सं. भगवती] **देवी, भगवती।**

भगौहाँ—वि. [हिं. भागना+औहाँ] (१) **भाग जानेवाला, भागने को प्रस्तुत।** (२) **कायर।**

वि. [हिं. भगवा] **गेरू से रँगा हुआ, भगवा।**

भग्गुल, भग्गू—वि. [हिं. भागना] **भागनेवाला, कायर।**

भग्न—वि. [सं.] (१) **टूटा हुआ।** उ०—भग्न भाजन कंठ, कृमि सिर, कामिनी-आधीन—१-३२१। (२) **पराजित।**

भग्नावशेष—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **खँडहर।** (२)**टूटा-फूटा टुकड़ा या अंश।**

भग्यो, भग्यौ—क्रि. अ. [हिं. भागना] **भागा, दौड़ा।** उ.—(क) अस्वत्थामा भय करि भग्यौ—१-२८९। (ख) कौन कौन को उत्तर दीजै ताते भग्यो अगाऊँ—३४६६।

भचकना, भचकनो—क्रि. अ. [हिं. भौचक] **अचरज से स्तब्ध या हक्काबक्का रह जाना।**

क्रि. अ. [अनु० भच] **लचककर या कुछ लँगड़ाकर चलना।**

भच्छ—संज्ञा पुं. [सं. भक्ष्य] **भोजन, आहार।**

भच्छक—संज्ञा पुं. [सं. भक्षक] **भक्षण करनेवाला।**

भच्छति—क्रि. स. स्त्री. [हिं. भच्छना] **खाती है, भक्षण करती है।** उ.—माधौ, नैंकु हटकौ गाइ। ...। और अहित अभच्छ भच्छति, कला बरनि न जाइ—१-५६।

भच्छन—संज्ञा पुं. [सं. भक्षण] **भोजन, आहार।** उ.—बिधि-बाहन-भच्छन की माला, राजत उर पहिराए—४१७।

भच्छना, भच्छनो क्रि. स. [सं. भक्षण] **भक्षण करना।**

भच्छि—क्रि. स. [हिं. भच्छना] **भक्षण करके, खाकर।** उ.—भच्छि अभच्छ, अपान पान करि, कबहुँ न मनसा धापी—१-१४०।

भछना, भछनो—क्रि. स. [हिं. भच्छना] **खाना।**

भछ्यो, भछ्यौ—क्रि. स. [हिं. भच्छना] **खाया, भक्षण किया।** उ.—कहियत गुन प्रबीन है राधा क्रोधही में बिष भछ्यो—२२५९।

भजक—वि. [सं.] (१) **भजन करनेवाला।** (२) **भाग करनेवाला।**

भजत—क्रि. स. [हिं. भजना] (१) **भजन करता है, स्मरण करता है, चित्त लगाता है।** उ.—(क) सूर कहत जे भजत राम कौं, तिनसौं हरि सौं सदा बनी—१-३९। (२) **वासना का भाव मन में लाता हैं, वासना के भाव से स्मरण करता या ध्यान लगाता है।** उ.—पंजा पंच प्रपंच नारि-पर भजत सारि फिरि मारी—१-६०।

क्रि. अ. [हिं. भागना] **भागता है, दौड़ता है।** उ.—भजत सखनि समेत मोहन देखि ब्याई गाय—४९८।

भजन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **सेवा, पूजा।** (२) **स्मरण, जप।** उ.—स्याम भजन बिनु कौन बड़ाई—१-२४। (३) **ऐसा गीत जिसमें देवी-देवता का गुण-गान हो।**

भजना, भजनो—क्रि. स. [सं. भजन] (१) **सेवा-पूजा**

करना। (२) जपना, स्मरण करना। (३) आश्रित होना।

क्रि. अ. [सं. व्रजन, प्रा. वजन] (१) भागजाना। (२) पहुँचना।

भजनानंद—संज्ञा पुं. [सं.] भजन-भाव से प्राप्त होनेवाला आनन्द या सुख।

भजनानंदी—वि. [सं.] सदैव भजन के आनन्द में ही मग्न रहनेवाला।

भजनी, भजनीक—वि. [सं. भजनीय] भजन करने योग्य।

संज्ञा पुं.—भजन करनेवाला। उ.—यह प्रताप दीपक सुनिरंतर, लोक सकल भजनी—२-२८।

भजनीय—वि. [सं.] (१) सेवा-पूजा करने योग्य। (२) भजने योग्य।

भजहु—क्रि. स. [हिं. भजना] भजन करो, स्मरण करो, जपो। उ.—भजहु न मेरे स्याम मुरारी—१-२१२।

भजाइ—क्रि. स. [हिं. भजाना] हटाकर।

प्र० लेत भजाइ—हटा लेता है। उ.—कीर पिंजरैं गहत अँगुरी ललन लेत भजाइ—४९८।

भजाना, भजानो—क्रि. अ. [हिं. भजना] भागना।

क्रि. स.—(१) भगाना। (२) खदेड़ना, हटाना।

भजायौ—क्रि. स. [हिं. भजाना] भगाया, दौड़ाया, भटकाया। उ.—अब तौ इन्हैं जकरि धरि बाँधौं, इहि सब तुम्हरौ गाउँ भजायौ—१०-३४०।

भजि—क्रि. अ. [हिं. भजना=भगना] भागकर।

प्रा०—जैहै भजि—भाग जायगा। उ.—जाकौ सुजस सुनत अरु गावत जैहै पाप-बृंद भजि भरहरि—१-३१२।

भजिऐ—क्रि. स. [हिं. भजना] स्मरण कीजिए, जपिए। उ.—सब तजि भजिऐ नंदकुमार—१-६७।

भजिबौ—संज्ञा पुं. [हिं. भजना] भजने की क्रिया या भाव। उ.—जिहिं तन हरि भजिबौ न कियौ। सो तन सूकर-स्वान-मीन ज्यौं, इहिं सुख कहा जियौ—२-१६।

भजियाउर—संज्ञा स्त्री. [हिं. भाजी+चाउर=चावल] चावल, दही, घी आदि का बना नमकीन भोजन।

भजियै—क्रि. स. [हिं. भजना] भजन कीजिए, जपिए। उ.—सदा सँघाती श्री जदुराइ। भजियैं ताहि सदा लव लाइ—७-२।

भजी—क्रि. अ. स्त्री. [हिं. भजना=भागना] भागी, दौड़ी।

भजे—क्रि. अ. [हिं. भजना=भागना] भागे, दौड़े।

क्रि. स. [हिं. भजना] (१) शरण ली, आश्रित हुए। उ.—(क) जे जन सरन भजे बनवारी। ते-ते राखि लिए जग जीवन, जहँ जहँ बिपति परी तहँ टारी—१-२२। (ख) बिषयी भजे, बिरक्त न सेए मन धन-धाम धरे—१-१९८। (२) स्मरण किया, जप किया। उ.—(क) पाँडव पाँच भजे प्रभु-चरननि, रनहिं जिताए हैं जदुराई—१-२४। (ख) सूर सबै तजि हरि-पद भजे —१-२८८।

भजैं—क्रि. स. [हिं. भजना] स्मरण करें, ध्यान लगायें। उ.—और सकल तजि मोकौं भजैं—९-५।

क्रि. अ. [हिं. भजना=भगना] भागें, दूर जायँ। उ.—(धेनु) बेनु स्रवन सुनि, गोबर्धन तैं, तृन दंतनि धरि चालीं। आईं बेगि सूर के प्रभु पै, ते क्यौं भजैं जे पाली—६१३।

भजै—क्रि. स. [हिं. भजना] स्मरण करे, जपे। उ.—मन-बच-क्रमजौ भजै स्यामकौं, चारि पदारथ देत—१-२९६।

क्रि. अ. [हिं. भजना=भागना] भागती है, शीघ्रता से जाती है। उ.—ज्यौं पति सौं त्रिय रति करै। जैसे सरिता सिंधुहिं भजै—पृ. ३६० (५)।

भजौं—क्रि. स. [हिं. भजना] भजन करूँ, स्मरण करूँ। उ.—(क) करौं जतन, न भजौं तुमकौं, कछुक मन उपजाइ—१-४५। (ख) तुमहिं समान और नहिं दूजौ काहि भजौं हौं दीन—१-१११।

भजौ—क्रि. स. [हिं. भजना] स्मरण करो, ध्यान लगाओ। उ.—दृढ़ बिस्वास भजौ नँदलालहिं—१-७४।

भज्यौ—क्रि. स. [हिं. भजना] भजन किया, जपा, स्मरण किया। उ.—अब हौं माया-हाथ बिकानौ। परबस भयौ पसू ज्यौं रजु-बस, भज्यौ न श्रीपति रानौ—१-४७।

क्रि. अ. [हिं. भजना=भागना] भागा, पलायन किया। उ.—नरकौ भज्यौ नाम सुनि मेरौ, पीठि दई जमराज—१-९६।

भट—संज्ञा पुं. [सं.] **योद्धा, वीर।** उ.—(क) द्वार-कपाट कोट भट रोके—१०-११। (ख) उठी बहुरि सँभारि भट ज्यौं परम साहस कीन—३४५१।

भटई—संज्ञा स्त्री. [हिं. भाट] (१) **भाट का काम, भाव या मजदूरी।** (२) **कोरी प्रशंसा या चाटुकारी।**

भटकत—क्रि. अ. [हिं. भटकना] **खोजता-फिरता है, मारा-मारा घूमता है।** उ.—भटकत फिरयौ स्वान की नाईं नैंकु जूठ कैं चाइ—१-१५५।

भटकाई, भटकटैया—संज्ञा स्त्री. [सं. कंटकारी] **एक काँटेदार झाड़।**

भटकना, भटकनो—क्रि. अ. [सं. भ्रम] (१) **खोजते फिरना, मारे-मारे घूमना।** (२) **रास्ता भूलकर घूमना।** (३) **भ्रम में पड़ना।**

भटकाना, भटकानो—क्रि. स. [हिं. भटकना] (१) **व्यर्थ मारे-मारे घुमाना-फिराना।** (२) **भ्रम में डालना।**

भटकि—क्रि. अ. [हिं. भटकना] **मारे-मारे फिरकर, व्यर्थ इधर-उधर घूमकर।** उ.—श्रीभागवत सुन्यौ नहिं कबहूँ, बीचहिं भटकि मरयौ—१-२९१।

भटकी—क्रि. अ. स्त्री. [हिं. भटकना] **भूली हुई, रास्ता भूल जाने के कारण इधर-उधर घूमती फिरती हुई।**

प्र०—जैहैं भटकी—**भटक जायँगी, मार्ग भूलकर इधर-उधर फिरने लगेंगी।** उ.—अबकैं अपनी हटकि चरावहु, जैहैं भटकी घाली—५०३।

भटके—क्रि. अ. [हिं. भटकना] **भ्रम में पड़ गये।** उ.—ऊधौ भूलि भले भटके—३१०७।

भटकैं—क्रि. अ. [हिं. भटकना] **मारे-मारे या भटका-भटका फिरता हुआ।** उ.—जनम सिरानौ अटकैं अटकैं। राजकाज, सुतबित की डोरी, बिन बिवेक फिरयौ भटकैं—१-२९२।

भटकै—क्रि. अ. [हिं. भटकना] **मारा-मारा फिरता है, व्यर्थ घूमता है।** उ.—ऐसौ प्रभू छाँड़ि क्यों भटकै, अजहूँ चेति अचेत—१-२९६।

भटकैया—संज्ञा पुं. [हिं. भटकना] (१) **भटकावे या भुलावे में डालनेवाला।** (२) **भटकने या भ्रम में पड़नेवाला।**

भटकौंहाँ—वि. [हिं. भटकना + औहाँ] **भटकानेवाला।**

भटभेरा—संज्ञा पुं. [हिं. भट + भिड़ना] (१) **योद्धाओं की भिड़ंत।** (२) **धक्का, टक्कर।** (३) **आकस्मिक भेंट।**

भट्टू—संज्ञा स्त्री. [सं. बधू] (१) **सखी।** (२) **स्त्रियों के लिए प्रेम और आदरसूचक एक संबोधन।**

भटैया—संज्ञा स्त्री. [हिं. भटकटैया] **भटकटैया।**

भट्ट—संज्ञा पुं. [सं. भट] (१) **ब्राह्मणों की एक उपाधि।** (२) **भाट।** (३) **योद्धा, भट।**

भट्टारक—संज्ञा पुं. [सं.] **राजा।**

वि.—**मान्य, माननीय।**

भट्ठा—संज्ञा पुं. [हिं. भट्ठा] **बहुत बड़ी भट्ठी।**

भट्ठी—संज्ञा स्त्री. [सं. भ्राष्ट्र, प्रा० भट्ठ] **विशेष आकार-प्रकार का बड़ा चूल्हा।**

भठियारपन—संज्ञा पुं. [हिं. भठियारा + पन] **लड़ना, झगड़ना और गाली बकना।**

भठियारा—संज्ञा पुं. [हिं. भट्ठी] **सराय का प्रबंधक।**

भड़ंवा—संज्ञा पुं. [सं. विडंबन] **दिखावटी शान।**

भड़क—संज्ञा स्त्री. [अनु.] (१) **ऊपरी चमकदमक।** (२) **डरने-सहमने का भाव।**

भड़कदार—वि. [हिं. भड़क + फा. दार] (१) **जिसमें खूब चमक-दमक हो।** (२) **रोबदार।**

भड़कना, भड़कनो—क्रि. अ. [हिं. भड़क] (१) **बढ़ना, तेज होना** (२) **चौंककर पीछे हटना। उत्तेजित होना।** (४) **शरीर में गर्मी आना।**

भड़काना, भड़कानो—क्रि. स. [हिं. भड़कना] (१) **बढ़ाना, तेज करना।** (२) **उत्तेजित करना।** (३) **डराना, चौकाना।** (४) **शरीर में गर्मी पहुँचाना।**

भड़कीला—वि. [हिं. भड़क] (१) **खूब चमक-दमकवाला।** (२) **जल्दी चौकन्ना हो जाने वाला।**

भड़भड़—संज्ञा स्त्री. [अनु.] (१) **'भड़' होने का शब्द।** **भीड़-भब्बड़ की गड़बड़।** (३) **व्यर्थ की बातचीत।**

भड़भड़ाना, भड़भड़ानो—क्रि. स. [अनु.] **'भड़भड़' शब्द करना।**

क्रि. अ.—**'भड़भड' शब्द होना।**

भड़भड़िया—वि. [हिं. भड़भड़] **व्यर्थ बकनेवाला।**

भड़भूँजा—संज्ञा पुं. [हिं. भाड़ + भूँजन] **भाड़ झोंकनेवाला।**

भड़ास—संज्ञा स्त्री. [अनु.] **गुप्त क्रोध या असंतोष जो विशेष अवसर पर प्रकट किया जाय।**

भड़िहा—संज्ञा पुं. [सं. भाँडहर] चोर।

भड़िहाई—क्रि. वि. [हिं. भाँडहर] चोरों की तरह लुक छिपकर या आँख बचाकर।

भड़ी—संज्ञा स्त्री. [हिं. भड़क] भड़काने के लिए दिया गया झूठा बढ़ावा।

भड़ुआ—संज्ञा पुं. [हिं. भाँड़] वेश्याओं का दलाल।

भणना—क्रि. अ. [सं. भण] कहना, बोलना।

भणित—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) बात, कथा। (२) कविता।

वि. —जो कहा गया हो, कहा हुआ।

भतरौड़—संज्ञा पुं. [हिं. भात] (१) मथुरा-वृन्दावन के बीच एक स्थान जहाँ चौबों की स्त्रियों से भात माँगकर श्रीकृष्ण द्वारा खाये जाने की बात कही जाती है। (२) मंदिर का शिखर।

भतवान—संज्ञा पुं. [हिं. भात+वान] विवाह की एक रीति जिसमें विवाह के एक दिन पूर्व वर और उससे छोटों को कच्ची रसोई खिलायी जाती है।

भतार, भतारी—संज्ञा पुं. [सं. भर्तार] पति।

भतीजा—संज्ञा पुं. [सं. भ्रातृज] भाई का पुत्र।

भत्ता—संज्ञा पुं. [सं. भरण] यात्रा आदि के लिए, वेतन के अतिरिक्त दिया जानेवाला धन।

भद—संज्ञा स्त्री. [हिं. भद्दा] तुच्छ या हास्यास्पद बात या आचरण।

भदईं—वि. [हिं. भादों] भादों का, भादों-सम्बन्धी।

भदभद—वि. [अनु.] (१) बहुत मोटा। (२) भद्दा।

भदेस, भदेसिल—वि. [हिं. भद्दा] भोंडा, कुरूप।

भदैला—वि. [हिं. भादों] भादों का, भादों संबंधी।

भदौंह—वि. [हिं. भादों] भादों में होनेवाला।

भद्दा—वि. [अनु. भद] (१) कुरूप, बेडौल, बेढंगा। (२) अनुचित। (३) अश्लील।

भद्दापन—संज्ञा पुं. [हिं. भद्दा+पन] भद्दे होने का भाव।

भद्र—संज्ञा पुं. [सं. भद्राकरण] सिर, दाढ़ी, मूछ आदि का मुंडन। उ.—राम पै भरत चले अतुराइ।····। लीनौ हृदय लगाइ सूर-प्रभु, पूछत भद्र भए क्यौं भाइ —९-५१।

वि.—[सं.] (१) सभ्य (२) मंगलकारी।

संज्ञा पुं. [सं.] (१) क्षेम-कुशल। (२) महादेव। (३) ब्रज के चौबीस वनों में एक। (४) खंजन पक्षी।

भद्रकाली—संज्ञा स्त्री. [सं.] दुर्गा देवी।

भद्रता—संज्ञा स्त्री. [सं.] शिष्टता, सज्जनता।

भद्रवन—संज्ञा पुं. [सं.] मथुरा के पास का एक वन।

भद्रा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) श्रीकृष्ण की एक पत्नी जो केकयराज की पुत्री थी। उ.—भद्रा ब्याहि आप जब आये, द्वारावती अनंद—सारा० ६५७। (२) आकाश गंगा। (३) द्वितिया, सप्तमी और द्वादशी तिथियों की संज्ञा। (४) गाय। (५) दुर्गा। (६) मंगलकारिणी शक्ति। (७) पृथ्वी। (८) बाधा।

मुहा०—भद्रा उतरना—हानि होना। भद्रा लगाना—बाधा या हानि पहुँचाना।

भद्राकरण—संज्ञा पुं. [सं.] मुंडन।

भद्रासन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वह मणिजटित सिंहासन जिस पर राज्याभिषेक होता है। (२) योग का एक आसन। (३) सात द्वीपों में एक। उ.—इलावर्त और किंपुरुषा, कुरु और हरिवर्ष केतुमाल। हिरनमै, रमयक, भद्रासन भरतखंड सुखपाल—सारा० ३३।

भद्री—वि. [सं. भद्रिन्] भाग्यवान्।

भनक—संज्ञा स्त्री. [सं. भणन] (१) धीमी ध्वनि। उ.—स्रवन भनक परी ललिता के तान की—१६०९। (२) उड़ती हुई खबर। नंद-भवन भनक सुनी कंस कहि पठायौ—२४९६।

भनकना—क्रि. स. [हिं. भनक] बोलना, कहना।

भनना, भननो—क्रि. स. [सं. भणन] कहना।

क्रि. अ.—ध्वनि होना।

भनभनाना, भनभनानो—क्रि. अ. [अनु.] 'भन-भन' शब्द करना।

भनभनाहट—संज्ञा स्त्री. [हिं. भनभन+आहट] भनभनाने का शब्द।

भनित—वि. [सं. भणित] जो कहा गया हो।

संज्ञा स्त्री.—(१) कही हुई बात। (२) कविता।

भनीजना, भनीजनो—क्रि. स. [सं. भणन] कहना, बोलना।

भनै—क्रि. अ. [हिं. भनना] ध्वनि होती है। उ.—जै जै ध्वनि भनै—पृ. ३४५ (३७)।

भबका—संज्ञा पुं. [हिं. भाप] **अर्क आदि उतारने का बंद मुँह का घड़ा।**

भव्य—वि. [सं. भव्य] (१) **सुन्दर, विशाल।** (२) **शुभ, मंगलकारी।** उ.—अतिहिं पुनीत बिष्नु पादोदक, महिमा निगम पढ़त मुनि चैन। परम पवित्र, मुक्ति की दाता, भागीरथहिं भव्य बर दैन—९-१२।

भभक—संज्ञा स्त्री. [अनु. भक] (१) **उबाल।** (२) **तेज गंध।**

भभकत—क्रि. अ. [हिं. भभकना] **छटपटाता है, उछलता है।** उ.—कहुँ भुज, कहुँ धर, कहुँ सिर लोटत, मानौ मद मतवारौ। भभकत, तरफत स्रोनित मैं तन, नाहीं-परत निहारौ—९-१५९।

भभकना, भभकनो—क्रि. अ. [अनु.] (१) **उबलना।** (२) **तेज गर्मी से फूटना।** (३) **तेजी से धधक उठना।**

भभका—संज्ञा पुं. [हिं. भाप] **अरक निकालने का घड़ा।**

भभकि—क्रि. अ. [हिं. भभकना] **उबलकर, फूटकर।** उ.—भभकि कै दंत ते रुधिर धारा चली छींट छबि बसन पर भई भारी—२५९५।

भभकी—संज्ञा स्त्री. [हिं. भभक] **झूठी धमकी, घुड़की।**

भभरिकै—क्रि. अ. [हिं. भभरना] **घबराकर।** उ.—सबनि मटुकिया रीती देखी तरुनी गई भभरिकै—११६८।

भभरना, भभरनो—क्रि. अ. [हिं. भय+करना] (१) **डरना।** (२) **घबरा जाना।** (३) **धोखे में पड़ जाना।**

भभूका—संज्ञा पुं. [हिं. भभक] **ज्वाला, लपट।**

वि.—**बहुत गहरे लाल रंग का।**

भभूत—संज्ञा स्त्री. [सं. विभूति] (१) **देवमूर्ति के सामने जलनेवाली अथवा यज्ञादि की अग्नि की भस्म जो मस्तक, भुजा आदि पर लगायी जाती है।** (२) **भस्म जो शिव जी शरीर में लगाते हैं।**

भभ्भड़—संज्ञा पुं. [हिं. भीड़] (१) **भीड़-भाड़।** (२) **शोर।**

भयंकर—वि. [सं.] **डरावना, भयानक।**

भयंकरता—संज्ञा स्त्री. [सं.] **भयानकता, भीषणता।**

भय—संज्ञा पुं. [सं.] **डर, भीति।**

मुहा०—भय खाना, खानो—**डरना, भयभीत होना।**

क्रि. अ. [हिं. होना] **हुआ।**

भयउ—क्रि. अ. [हिं. हुआ] **हुआ।** उ.—यह सब कलिजुग कौ परभाउ। जो नृप कैं मन भयउ कुभाउ—१-२९०।

भयकर—वि. [सं.] **जिसे देखकर डर लगे।**

भयद—वि. [सं.] **डरावना, भयानक।**

भयप्रद—वि. [सं.] **जिसे देखकर डर लगे।**

भयभीत, भयभीता—वि. [सं. भयभीत] **भयभीत, डरा हुआ।** उ.—(क) भारत जुद्ध होइ जब बीता। भयौ जुधिष्ठिर अति भयभीता—१-२६१। (ख) मनु रघुपति भयभीत सिंधु पत्नी पयौसार पठाई—९-१२४।

भयमोचन—वि. [सं.] **डर दूर करनेवाला।**

भयल—वि. [हिं. होना] **पूर्वी हिंदी में 'होना' का भूत०।**

भयहरण, भयहरन—वि. [सं. भयहरण] **भय या डर दूर करनेवाला।**

भयहारी, भयहारे—वि. [सं. भयहारिन्, हिं. भयहारी] **डर छुड़ानेवाला, भय दूर करनेवाला।** उ.—गज-चानूर हते, दव नास्यौ, ब्याल मथ्यौ, भयहारे १-२७।

भया—संज्ञा स्त्री. [सं.] **एक राक्षसी।**

क्रि. अ. [हिं. हुआ] **हुआ।**

भयाकुल—वि. [सं.] **डर से घबराया हुआ।**

भयातुर—वि. [सं.] **डर से घबराया हुआ।**

भयान—वि. [सं. भयानक] **भयानक, डरावना।** उ.—(क) सुनि कै सिंह भयान अवाज। मारि फलाँग चली सो भाज—५-३। (ख) तुम बिना सोभा न ज्यौं गृह बिना दीप भयान—३४४७।

भयानक—वि. [सं.] **डरावना, भयंकर।** उ.—(क) भव-समुद्र अति देखि भयानक, मन मैं अधिक डराऊँ—१-१६४। (ख) अरी मोहिं भवन भयानक लागै माई स्याम बिना—२५४७।

संज्ञा पुं.—**साहित्य के नौ रसों में एक जिसमें भीषण दृश्यों का वर्णन होता है।**

भयाना, भयानो—क्रि. अ. [सं. भय+हिं. आना] **डरना।**

क्रि. स.—**डराना, भयभीत करना।**

भयारा—वि. [सं. भयानक] **डरावना, भयंकर।**

भयावन, भयावना—वि. [सं. भय+हिं. आवन] **डरावना।**

भयावह—वि. [सं.] डरावना, भयंकर।

भयौ—क्रि. अ. [हिं. हुआ] (१) हुआ, प्रतिष्ठित हुआ, बना। उ.—राखी पैज भक्त भीषम की, पारथ कौ सारथी भयौ—१-२६। (२) पैदा हुआ, जन्मा। उ.—ताकैं छौना सुन्दर भयौ—५-३।

भरंत—संज्ञा स्त्री. [सं. भ्रांति] भ्रम, संदेह।

भर—वि. [हिं. भरना] सब, सारा। उ.—अति करुना रघुनाथ गुसाईं जुग भर जात घरी।

क्रि. वि. [हिं. भार] भार या बल से, द्वारा।

संज्ञा पुं.—(१) भार, बोझ। उ.—(क) भू-भर-हरन प्रगट तुम भूतल गावत संत-समाज—१-२१५। (ख) धरनि सीस धरि सेस गरब धर्‌यौ, इहिं (कालिय नाग) भर अधिक सँहार्‌यौ—५६७। (२) मोटाई, पुष्टता।

संज्ञा पुं. [सं.] (१) भरण-पोषण करनेवाला। (२) लड़ाई, युद्ध।

भरक—संज्ञा स्त्री. [हिं. भड़क] (१) चमक-दमक, चमकीलापन। (२) डरने-सहमने का भाव।

भरकना, भरकनो—क्रि. अ. [हिं. भड़कना] (१) तेजी से बल उठना। (२) चौंककर पीछे हटना। (३) उत्तेजित होना। (४) शरीर में कुछ गर्मी आना।

भरकाना, भरकानो—क्रि. स. [हिं. भड़काना] (१) तेजी से बलाना। (२) चौंककर पीछे हटाना। (३) उत्तेजित करना। (४) शरीर में कुछ गर्मी पहुँचाना।

भरण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) पालन-पोषण। (२) वेतन।

भरणी—संज्ञा स्त्री. [सं.] सत्ताइस नक्षत्रों में दूसरा।

वि.—पालन-पोषण करनेवाली।

भरत—संज्ञा पुं. [सं.] राजा दशरथ के कैकेयी से उत्पन्न पुत्र जो राम से छोटे थे। कैकेयी ने इनके लिए राजा दशरथ से राज्य माँगा और राम को निर्वासित कराया। भरत ने इस कर्म के लिए माता कैकेयी की निंदा की और राम को वापस लौटाने के लिए वे चित्रकूट गये। राम जब लौटने को तैयार न हुए तब वे इनकी पादुकाएँ ले आए और उन्हें ही सिंहासन पर रख कर राम के आने तक अयोध्या का शासन करते रहे। राम के वन से लौटने पर भरत ने राज्य उन्हें सौंप कर अपूर्व त्याग का परिचय दिया। (२) ऋषभ देव के पुत्र जड़ भरत। (३) शकुंतला के पुत्र का नाम; प्रसिद्ध है कि इस देश का नाम 'भारत' इन्हीं के नाम पर पड़ा है। (४) 'नाट्य शास्त्र' के रचयिता भरत मुनि।

संज्ञा पुं. [सं. भरद्वाज] 'लवा' नामक पक्षी।

क्रि. स. [हिं. भरना] (१) लादता है (लादकर) ढोता है। उ.—अगम सिंधु जतननि सजि नौका, हठि क्रम-भार भरत—१-५५। (२) पेट पालता या भरता है। उ.—जीव मारि कै उदर भरत हैं—२-१४।

मुहा०—दुख भरत—दुख भोगता है, कष्ट सहता है। उ.—(क) मेरे हित इतनौ दुख भरत—१-२२६। (ख) हम तौ उन बिनु बहु दुख भरत—१० उ. ३७। नैन भरत पानी—आँसू आ जाते हैं। उ.—मेरे नैन भरत है पानी—२६४९। हियो भरत—हृदय भर-भर आता है। उ.—मोसौं कहत होहि जिनि ऐसी नैन ढरत नहिं भरत हियौ—२६४७।

भरतखंड—संज्ञा पुं. [सं.] (१) पृथ्वी के नौ खंडों में से एक जिसका राजा भरत था। उ.—भरत सो भरत-खंड कौ राव—५-३।

भरता—संज्ञा पुं. [देश०] बैंगन आदि की ऐसी तरकारी जो अच्छी तरह भूनकर और नमक-मिर्च-खटाई डालकर बनायी जाती है। उ.—भरता भँटा खटाई दीनी—२३२१।

संज्ञा पुं. [सं. भर्तृ] (१) स्वामी। (२) पति।

भरतार—संज्ञा पुं. [सं. भर्त्ता] (१) पति। उ.—(क) काम अति तनु दहत, दीजै सूर हरि भरतार—७६७। (ख) तजि भरतार और जो भजिए सो कुलीन नहिं होई—पृ. ३४१ (३)। (२) स्वामी, मालिक।

भरती—संज्ञा स्त्री. [हिं. भरना] (१) भरे जाने का भाव।

मुहा०—भरती करना—(१) रखना या सम्मिलित करना। (२) केवल खाना-पूरी के लिए रखना।

(२) प्रविष्ट होने या प्रवेश पाने का भाव।

भरतौ—क्रि. स. [हिं. भरना] किसी रिक्त वस्तु या पात्र में दूसरा पदार्थ डालकर उसे पूर्ण करता। उ.—पर-तिय-रति अभिलाष निसा-दिन मन-पिटरी लै भरतौ—१-२०३।

भरत्थ, भरथ—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **श्रीराम के छोटे भाई भरत।** (२) जड़ भरत। (३) शकुंतला के पुत्र का नाम। (४) नाट्य शास्त्र के रचयिता भरतमुनि।

भरथरी—संज्ञा पुं. [सं. भर्तृहरी] राजा भर्तृहरि।

भरद्वाज—संज्ञा पुं. [सं.] उतथ्य ऋषि के भाई बृहस्पति का अपनी भावज ममता के गर्भ से उत्पन्न किया हुआ पुत्र जो आगे चलकर गोत्र-प्रवर्तक हुआ। (२) भरद्वाज ऋषि के वंशज।

भरन—संज्ञा पुं. [सं. भरण] पालन, पोषण। उ.—प्रभु तेरौ बचन भरोसौ साँचौ। पोषन भरन बिसंभर साहब, जो कलपै सो काँचौ—१-३२।

संज्ञा पुं. [हिं. भरना] **भरने की क्रिया या भाव।**

मुहा०—उदर भरन—पेट पालने के लिए। उ.—भजन बिनु जीवत जैसे प्रेत। मलिन मंदमति डोलत घर-घर उदर भरन कैं हेत—२-१५।

भरना, भरनौ—क्रि. स. [सं. भरण] (१) खाली पात्र को कोई चीज डालकर पूर्ण करना। (२) उँडेलना, डालना। (३) स्थान को खाली न छोड़ना। (४) दो चीजों के बीच की दरज आदि बंद करना। (५) (बंदूक आदि में) गोली डालना। (६) रिक्त पद की पूर्ति करना। (७) हानि पूरी करना, चुकाना।

मुहा०—(किसी का) घर भरना, भरनौ—(किसी को) खूब धन देना।

(८) (किसी के मन में) बुरी धारणा जमाना। (९) बिताना, व्यतीत करना। (१०) निबाहना। (११) काटना, डसना। (१२) सहन करना। (१३) (पशु पर) बोझ लादना। (१४) (शरीर पर) पोतना।

क्रि. अ.—(१) रिक्त स्थान की पूर्ति होना। (२) उँडेला जाना। (३) रिक्त पद की पूर्ति होना। (४) बीच का अवकाश बंद होना। (५) गोली आदि डाली जाना। (६) हानि पूरी होना। (७) क्रोध या अप्रसन्नता होना। (८) बोझ आदि लदना। (९) परिश्रम से किसी अंग का दर्द करने लगना। (१०) घाव का ठीक होना। (११) शरीर का हृष्ट-पुष्ट होना। (१२) कमी या कसर न रह जाना।

संज्ञा पुं.—भरने की क्रिया या भाव।

भरनि, भरनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. भरना] **भरने का भाव।**

मुहा०—अंकम भरनी—गले या छाती से लगाने का भाव या कार्य। उ.—उमँगि उमँगि प्रभु भुजा पसारत हरषि जसोमति अंकम भरनी—१०-४४।

संज्ञा स्त्री. [सं. भरण] पहनावा, पोशाक।

भरपाई—क्रि. वि. [हिं. भरना+पाना] भली भाँति।

संज्ञा स्त्री.—बाकी (धन आदि) पा जाने का भाव।

भरपूर-वि. [हिं. भरना+पूरना] पूरा, जिसमें कसर न हो।

क्रि. वि.—अच्छी तरह, भली भाँति।

भरभराना, भरभरानौ—क्रि. अ. [अनु.] (१) रोंआँ खड़ा होना। (२) घबराना, व्याकुल होना।

भरभेंटा—संज्ञा पुं. [हिं. भर+भेंटना] मुठभेड़।

भरम—संज्ञा पुं. [सं. भ्रम] (१) भ्रम, भ्रांति, धोखा। उ.—(क) भरम ही बलवंत सबमैं ईसहू कैं भाइ—१-७०। (ख) बदन उघारि दिखायौ अपनौ नाटक की परिपाटी। बड़ी बार भई, लोचन उघरे भरम-जवनिका फाटी—१०-२५४। (२) भेद, रहस्य।

मुहा०—भरम गँवाना (बिगाड़ना)—भेद खोलना।

भरमत—क्रि. अ. [हिं भरमना] (१) मारा मारा फिरता है, भटका है। उ.—(क) पंचनि के हित-कारन यह मन जहँ तहँ भरमत भाग्यौ—१-७३। (ख) जनम सिरानी ऐसैं ऐसैं। कै घर घर भरमत जदुपति बिनु, कै सोवत, कै बैसे—१-२९३। (२) घूमता-फिरता है। उ.—बहत पवन, भरमत ससि-दिनकर फनपति सिर न डुलावै—१-१६३।

भरमना, भरमनौ—क्रि. अ. [सं. भ्रमण] (१) घूमना-फिरना। (२) मारा-मारा फिरना। (३) धोखे में पड़ना।

संज्ञा स्त्री. [सं. भ्रम] (१) भूल। (२) भ्रम, भ्रांति।

भरमाइ—क्रि. अ. [हिं. भरमना] भटकती है, घूमती-फिरती है। उ.—प्रात से सिर धरे मटुकी नंद गृह भरमाइ—१२११।

भरमाई—क्रि. अ. [हिं. भरमना] (१) मारा-मारा फिरता है, भटकता है। उ.—काया हरि कैं काम न आई। ....। जब लगि स्याम-अंग नहिं परसत, अंधे ज्यौं भरमाई—१-२९५। (२) भ्रम में पड़ गयी। उ.—(क) राधा हरि के रंगहि राँची, जननी रही

जिये भरमाई—१२५२। (ख) सूरदास राधा की बानी सुनत सखो भरमाई—१२७५। (३) चकित हुई।

क्रि. स. [हिं. भरमाना] (१) भ्रम या चक्कर में डाल दिया। उ.—(क) एकनि कह्यौ, याहि मत मारौ। याकौ सुन्दर रूप निहारौ। केतिक अमृत पिए यह भाई। हरि मति तिनकी यौं भरमाई—७-७। (ख) कोऊ निरखि रही चारु लोचन निमिष भरमाई—१३३८। (२) भटकाया, व्यर्थ मारे-मारे फिराया।

भरमाए—क्रि. स. [हिं. भरमाना] भ्रम या आश्चर्य में डाल दिया। उ.—अंकुस-कुलिस-बज्र-ध्वज परगट, तरुनी-मन भरमाए—६३१।

भरमात—क्रि. अ. [हिं. भरमाना] हैरान होता है, अचम्भे में आता है। उ.—एक अंग को पार न पावति चकित होइ भरमात—१४२४।

भरमाना, भरमानो—क्रि. स. [हिं. भरमना] भ्रम में डालना।

भरमान्यौ—क्रि. स. [हिं. भरमाना] भटकाता फिरा, मारे मारे घूमा। उ.—माधौ जू मोहि काहे की लाज। जन्म जन्म योंहीं भरमान्यौ अभिमानी बेकाज—१-१५०।

भरमाया—क्रि. स. [हिं. भरमाना] भ्रम या चक्कर में डाला, बहकाया। उ.—बिदुर कह्यौ, देखौ हरि-माया। जिन यह सकल लोक भरमाया—१-२८४।

भरमार—संज्ञा स्त्री. [हिं. भरना + मार = अधिकता] बहुत अधिकता।

भरमावत—क्रि. स. [हिं. भरमाना] भ्रम में डालते हो, बहकाते हो। उ.—तुम नारायन भक्त कहावत। केहि कारन हमकौं भरमावत—४-९।

भरमावहु—क्रि. अ. [हिं. भरमाना] हैरान होते हो। उ.—आन जन्तु-धुनि सुनि कत डरपत, मो भुज कंठ लगावहु। जनि संका जिय करौ लाल मेरे, काहे कौं भरमावहु—१०-१०६।

भरमावै—क्रि. स. [हिं. भरमाना] भ्रम में डालती है, चक्कर में डालती है, बहकाती है। उ.—माया नटी लकुटि कर लीन्हें, कोटिक नाच नचावै।......। तुमसौं कपट करावति प्रभु जू, मेरी बुधि भरमावै—१-४२।

भरमाहीं—क्रि. अ. [हिं. भरमाना] चकित या हैरान होती हैं। उ.—सूर स्याम छबि निरखि कै जुवती भरमाहीं—पृ. ३१९ (८५)।

भरमि—क्रि. स. [हिं. भरमना] भटककर, मारे-मारे फिर कर। उ.—लख चौरासी जोनि भरमि कै, फिरि वाहीं मन दीनौ—१-६५।

भरमित—वि. [हिं. भरमना] चकित, हैरान, अचंभित। उ.—लखि लोचन, सोचै हनुमान। चहुँ दिसि लंक-दुर्ग दानवदल, कैसैं पाऊँ जान।......। भरमित भयौ देखि मारुत-सुत दियौ महाबल ईस—९-७५।

भरमिहौ—क्रि. अ. [हिं. भरमना] मारी-मारी फिरोगी, भटकोगी। उ.—तुम जानकी, जनकपुर जाहु। कहा आनि हम संग भरमिहौ, गहबर बन दुख-सिंधु अथाहु—९-३४।

भरमे—क्रि. अ. [हिं. भरमना] भ्रम में पड़ गये। उ.—सोच मुख देखि अक्रूर भरमे—२४६६।

भरमौंहाँ—वि. [सं. भ्रम] भ्रम उत्पन्न करनेवाला।

वि. [सं. भ्रमण] चक्कर खिलानेवाला।

भरम्यौ—क्रि. अ. [हिं. भरमना] मारा-मारा फिरा, भटका। उ.—(क) फिरि-फिरि जोनि अनंतनि भरम्यौ, अब सुख-सरन परयौ—१-१५६। (ख) सुन मैया मैं वृथा भरम्यो बन जो देखो नैननि भरि जोइ—१५७७।

भरराना, भररानो—क्रि. अ. [अनु०] (१) 'भरर' शब्द के साथ गिरना। (२) टूट पड़ना, पिल पड़ना।

क्रि. स.—(१) 'भरर' शब्द के साथ गिराना। (२) पिल पड़ने या टूट पड़ने को प्रवृत्त करना।

भरवाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. भरवाना] भरवाने की क्रिया।

भरवाना, भरवानो—क्रि. स. [हिं. भरना] भरने का काम कराना, भरने को प्रवृत्त करना।

भरसक—क्रि. वि. [हिं. भर + सक = शक्ति] यथाशक्ति।

भरसन—संज्ञा स्त्री. [सं. भर्त्सना] डाँट-फटकार।

भरहरना, भरहरनो—क्रि. अ. [हिं. भरभराना] घबराना, व्याकुल होना।

भरहराना, भरहरानो—क्रि. अ. [हिं. भहराना] (१) टूट पड़ना। (२) एकाएक गिरना। (३) फिसल पड़ना।

भरहरि—क्रि. अ. [हिं. भरभराना (अनु.)] व्याकुल होकर,

घबराकर। उ.—जाको सुजस सुनत अरु गावत, जैहै पाप-बृंद भजि भरहरि—१-३१२।

भरांति—संज्ञा स्त्री. [सं. भ्रांति] भ्रम, भ्रांति।

भराइ—क्रि. स. [हिं. भराना] भराकर।

प्र०—लेत भराइ—भर या भरा लेता है। उ.—सुभग कर आनन समीपै मुरलिका इहिं भाइ। मनु उभै अंभोज-भाजन लेत सुधा भराइ—६२७।

भराई—क्रि. अ. [हिं. भरना] भर ली, भरी।

प्र०—जाति भराई—भरी जाती है। उ.—बेगिहिं नार छेदि बालक की, जाति बयारि भराई—१०-१६।

संज्ञा स्त्री.—भरने की क्रिया, भाव या मजदूरी।

भराए—क्रि. स. [हिं. भराना] (१) सामग्री रखवायी। उ.—आजु कान्ह करिहैं अनप्रासन। मनि-कंचन के थार भराए, भाँति-भाँति के बासन—१०-८९। (२) कमी पूरी करेंगे। उ.—पुनहु सूर कछु मोल लेहिंगे, कछु इक दान भराए—११०९।

भराना, भरानो—क्रि. स. [हिं. भरना] (१) रिक्त पात्र को किसी वस्तु से भरने को प्रवृत्त करना। (२) उलटाना, डलवाना। (३) खाली स्थान को पूरा कराना। (४) दरज आदि भरने को प्रवृत्त करना। (५) बंदूक आदि में गोली डलवाना। (६) पद पर नियुक्त कराना। (७) हानि पूरी कराना। (८) बुरी बात मन में बैठाना (९) निबाह कराना। (१०) डसवाना, कटवाना। (११) झेलने को प्रवृत्त करना। (१२) बोझ लदवाना। (१) शरीर में पुतवाना।

भरापूरा—वि. [हिं. भरना+पूरना] बहुत सम्पन्न।

भराव—संज्ञा पुं. [हिं. भरना] (१) भरने का भाव। (२) भरने का अवकाश। (३) भरी हुई वस्तु आदि।

भरावन—संज्ञा पुं. [हिं. भरना+आवन] भर जाने की क्रिया या भाव। उ.—ब्रह्मादिक, सनकादिक, गगन भरावन रे—१०-२८।

भरावहु—क्रि. स. [हिं. भरावना] भरने को प्रवृत्त करो। उ.—बाँधो बंदनवार मनोहर कनक कलस भरि नीर भरावहु—१० उ० २३।

भरि—क्रि. स. [हिं. भरना] (१) लगाकर, (गोद में) लेकर, आलिंगन करके। उ.—पुत्र-कबंध अंक भरि लीन्हौ, धरति न इक छिन धीर—१-२९। (२) हानि पूरी करके। उ.—तब दिन को भरि लेहुँ आजु ही तब छाँड़ौं मैं तुमको—१०८९।

भरित—वि. [सं.] (१) भरा हुआ। (२) पाला-पोसा हुआ।

भरिपूरि—वि. स्त्री. [हिं. भरपूर] खूब भरी हुई। उ.—सिंह आगैं, शेष पाछैं, नदी भइ भरिपूरि १०-५।

भरियत—क्रि. अ. [हिं. भरना] भर जाती है, जल-मग्न हो जाती है। उ.—स्वाति बिना ऊसर सब भरियत ग्रीव रंध्र मत कीन्हौं—३०३४।

भरिया—वि. [हिं. भरना] (१) भरे हुए, युक्त, पूर्ण, मग्न, लीन। उ.—क्रीड़ा करत तमाल-तरुन-तर स्यामा-स्याम उमँगि रसभरिया—६८८। (२) पूरा करनेवाला। (३) ऋण चुकानेवाला।

संज्ञा पुं.—बरतन ढालनेवाला।

भरिहैं—क्रि. अ. [हिं. भरना] (१) बीतेंगे, बीत सकेंगे, बिताये जा सकेंगे। उ.—कैसे कै भरिहैं री दिन सावन के—२८३०। (२) सहन होगी, सही जा सकेगी। उ.—अब यह ब्यथा कौन बिधि भरिहैं कोऊ देइ बताइ—३११३।

भरिहौं—क्रि. स. [हिं. भरना] वसूल कर लूँगा। उ.—चोरी जाति बेंचि दान सब दिन को भरिहौं—१११६।

भरीं—वि. [हिं. भरना] पूर्ण, युक्त। उ.—पिय पहिलैं पहुँची जाइ अति आनन्द भरीं—१०-२४।

भरी—वि. [हिं. भरना] युक्त, पूर्ण, सहित। उ.—जिहिं जिहिं जोनि भ्रम्यौ संकट बस, सोइ सोइ दुखनि भरी—१-७१।

संज्ञा स्त्री. [हिं. भर] दश माशे के बराबर तौल।

भरीजै—क्रि. स. [हिं. भरना] भरिए, किसी पदार्थ को रिक्त स्थान में डालकर उसको पूर्ण कीजिए।

मुहा०—उदर भरीजै—पेट पालिए। उ.—ऐसैं बसिए ब्रज की बीथिनि। ग्वारनि के पनवारे चुनि-चुनि, उदर भरीजै सीथिनि—१०-४९०।

भरु—संज्ञा पुं. [सं. भार] बोझ, बोझा, भार। उ.—इहिं भरु अधिक सह्यौ अपनैं सिर अमित अंडमय बेष—५७०।

भरुआ—संज्ञा पुं. [हिं. भड़आ] वेश्या का दलाल।

भरुका—संज्ञा पुं. [हिं. भरना] **कुल्हड़, चुक्कड़ ।**

भरुहाए—क्रि. स. [हिं. भरुहाना] **भ्रम में डाला है, बहकाया है ।** उ.—तुमको नद महर भरुहाए । माता गर्भ नहीं तुम उपजे तौ कहौ कहाँ ते आए—१७०२ ।

भरुहाना, भरुहानौ—क्रि. अ. [हिं. भार+होना] **घमंड करना, गर्व में चूर होना ।**

क्रि. स. [हिं. भ्रम] (१) **बहकाना, भ्रम में डालना ।** (२) **उत्तेजित करना, बढ़ावा देना ।**

भरुहाने—क्रि. अ. [हिं. भरुहाना] **घमंड में चूर होकर, अभिमान में भरकर ।** उ.—अब वै भरुहाने फिरैं कहुँ डरत न माई । सूरज प्रभु मुँह पाइ कै भए ढीठ बजाई—पृ. ३२३ (२०) ।

भरुहावत—क्रि. स. [हिं. भरुहाना] **भ्रम में डालते हैं, बहकाते हैं ।** उ.—अपने हैं ताते यह कहियत स्याम इनहिं भरुहावत हैं—पृ. ३३० (९३) ।

भरे—वि. [हिं. भरना] **युक्त, पूर्ण, सहित ।**

मुहा०—रंग भरे—**प्रेम, विभोर, उन्मत्त ।** उ.—आजु नँद-नँदन रंग भरे । बिबि लोचन सु बिसाल दुहुँनि के चितवत चित्त हरे—६८९ ।

(२) **कुल, पूरा, सब ।** उ.—पलक भरे की ओट न सहती अब लागे दिन जान—२८४७ ।

संज्ञा पुं.—**भरापुरा स्थान ।** उ.—जिन देखौं मन भयौ तिनहिं कौ मनौ भरे कौ चोर री—१०-१३६ ।

भरै—क्रि. स. [हिं. भरना] (१) **रिक्त स्थान या पात्र को पूर्ण अथवा अंशत: भरता है ।** उ.—(क) अनायास बिनु उद्यम कीन्हैं, अजगर उदर भरै । (ख) रातै भरै, भरैं पुनि ढारै, चाहै फेरि भरै । ········ । बागर तैं सागर करि डारै, चहुँ दिसि नीर भरै—१-१०५ ।

मुहा०—अंग भरै—**गोद में लेती है ।** उ.—मुख के रेनु झारि अंचल सौं जसुमति अंग भरै—२८०३ ।

भरैया—वि. [हिं. भरण] **पालन करनेवाला ।**

वि. [हिं. भरना] **भरनेवाला ।**

भरोइ—वि. [हिं. भरा] **युक्त, सहित ।** उ.—कन्हैया हालरो हलरोइ । हौं बारी तव इंदु-बदन पर, अति छबि अलस भरोइ—१०-५६ ।

भरोसा—संज्ञा पुं. [सं. भर=भार+आशा] (१) **आसरा ।** (२) **सहारा ।** (३) **आशा ।** (४) **दृढ़ विश्वास ।**

भरोसी—वि. [हिं. भरोसा] (१) **आसरा रखनेवाला ।** (२) **सहारे रहनेवाला ।** (३) **आशा रखनेवाला ।** (४) **विश्वास करने योग्य ।**

भरोसैं—संज्ञा पुं. [हिं. भरोसा] (१) **आश्रय, आसरा ।** (२) **सहारा, अवलंब ।** उ.—आज हौं एक-एक करि टरिहौं । कै तुमहीं कै हमहीं, माधौ, अपने भरोसैं लरिहौं—१-१३४ ।

भरोसौ—संज्ञा पुं. [हिं. भरोसा] (१) **सहारा, अवलंब ।** उ.—प्रभु तेरो बचन भरोसौ साँचौ । पोषन भरन बिसंभर साहब, जो कलपै सो काँचौ—१-३२ । (२) **दृढ़ विश्वास ।** उ.—तातैं तुम्हरौ भरोसौ आवै । दीनानाथ पतित-पावन, जस बेद-उपनिषद गावै—१-१२२ ।

भरौं—क्रि. स. [हिं. भरना] **संपूर्ण कर दूँ, खाली न रहने दूँ ।** उ.—कालिह जाइ अस उद्यम करौं । तेरे सब भंडारनि भरौं—४-१२ ।

भरौ वि. [हिं. भरना] **सारे शरीर में लगा हुआ, पुता हुआ, सना हुआ ।** उ.—धोयौ चाहत कीच भरौ पट, जल सौं रुचि नहिं मानौ—१-१९४ ।

भर्ग—संज्ञा पुं. [सं. भर्ग्य] **शिव, शंकर ।**

भर्त्ता, भर्त्तार—संज्ञा पुं. [सं. भर्तृ] (१) **स्वामी ।** (२) **पति ।**

भर्तृहरि—संज्ञा पुं. [सं.] **उज्जयिनी के राजा विक्रमादित्य के छोटे भाई जो पत्नी से अत्यधिक प्रेम करते थे; परन्तु एक बार उसकी चरित्रहीनता से खिन्न होकर विरक्त हो गये । ये प्रसिद्ध वैयाकरण और कवि थे ।**

भर्त्सन—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) **निंदा ।** (२) **डाँट-फटकार ।**

भर्म—संज्ञा पुं. [सं. भ्रम] **भ्रम, भ्रांति ।** उ.—नारद मन की भर्म तोहि यतनो भरमायौ—३०४७ ।

भर्मन—संज्ञा पुं. [सं. भ्रमण] **घूमना-फिरना ।**

भरयौ—क्रि. सं. [हिं. भरना] **भरा ।**

प्र०—अंकम भरयौ—**छाती से लगाया ।** उ.—पुनि माता के पायनि परयौ । माता ध्रुव कौं अंकम भरयौ—४-९ ।

भर्राना, भर्रानौ—क्रि. अ. [अनु.] **'भर्र' शब्द होना ।**

भर्सन—संज्ञा स्त्री. [सं. भर्त्सन] (१) **निंदा ।** (२) **फटकार ।**

भल—वि. [हिं. भला] भला, श्रेष्ठ, उत्तम । उ.—कुंती प्रान तजे धरि ध्यान । जीवन-मरन उनहिं भल जान—१-२८८ ।

भलपति—संज्ञा पुं. [हिं. भाला+सं. पति] भाला रखनेवाला ; वह जिसके पास भाला हो ।

भलमनसाहत, भलमनसी—संज्ञा स्त्री. [हिं. भला+मनुष्य] सज्जनता ।

भलहिं—क्रि. वि. [हिं. भला] भली भाँति ।

भला—वि. [सं. भद्र] (१) उत्तम, अच्छा । (२) बढ़िया ।

संज्ञा पुं.—(१) कुशल, भलाई । (२) लाभ ।

अव्य.—(१) खैर, अस्तु । (२) 'नहीं' सूचक अव्यय ।

भलाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. भला+ई] (१) अच्छाई, अच्छी बात । उ.—(क) तिन कह्यौ, मा मैं एक भलाई । तुम सौं कहौं, सुनौ चित लाई—१-२९० । (ख) कौ गोकुल ते गमन कियो तुम इन बातन है नहीं भलाई—पृ. ३४० (९७) । (२) उपकार । (३) सौभाग्य ।

भलापन—संज्ञा पुं. [हिं. भला] भले होने का भाव ।

भले—क्रि. वि. [हिं. भला] भली भाँति, अच्छी तरह ।

अव्य.—खूब, वाह ।

भलेरा—संज्ञा पुं. [हिं. भला] (१) कुशल । (२) लाभ ।

भलैं—अव्य. [हिं. भला] खूब, वाह । उ.—सूरदास प्रभु भलैं परे फँद, देउँ न जान भावते जु कौं—१०-२८७ ।

भलौ—वि. [हिं. भला] भला, उत्तम, श्रेष्ठ ।

संज्ञा पुं. (१) भली बात, उत्तम कार्य, श्रेष्ठ कर्म । उ.—जहाँ गयौ तहँ भलौ न भावत, सब कोऊ सकुचानौ—१-१०२ । (२) कल्याण, कुशल, भलाई । उ.—ऐसौ को ठाकुर, जन-कारन दुख सहि भलौ मनावै—१-१२२ ।

भल्ल—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वध, हत्या । (२) भाला ।

भवँ—संज्ञा स्त्री. [हिं. भौंह] भौंह ।

भवंग—संज्ञा पुं. [सं. भुजंग] साँप, सर्प ।

भवँर—संज्ञा पुं. [सं. भ्रमर] भौंरा ।

भवंत—वि. [सं. भवत्] आप लोगों का ।

भव—संज्ञा पुं. [सं.] (१) संसार, जगत । उ.—यहै जिय जानि कै अंध भव त्रास तैं सूर कामी-कुटिल सरन आयौ—१-५ । (२) संसार का दुख, जन्म-मरण का दुख । उ.—कमलनयन मकराकृति कुंडल देखत ही भव भागै । (३) उत्पत्ति, जन्म । (४) कारण । (५) कामदेव । (६) शिव ।

संज्ञा पुं. [सं. भय] डर, भय ।

वि.—(१) कल्याण-कारी । (२) जन्मा हुआ ।

भवचन्द्—संज्ञा पुं. [सं.] शिव जी का धनुष, पिनाक ।

भवदीय—सर्व. [सं.] आपका ।

भवन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) घर, मकान । उ.—भवन सँवारि, नारि रस लोभ्यौ, सुत, वाहन, जन, भ्रात्र—१-२१६ । (२) महल ।

संज्ञा पुं. [सं. भुवन] जगत, संसार ।

भवना, भवनौ—क्रि. अ. [सं. भ्रमण] घूमना-फिरना ।

भवनी—संज्ञा स्त्री. [सं. भवन] गृहिणी, गृहस्वामिनी ।

भवबंधन—संज्ञा पुं. [सं.] सांसारिक माया-मोह के कष्ट ।

भवभंजन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) परमेश्वर, (२) काल ।

भवभय—संज्ञा पुं. [सं.] जन्म-मृत्यु का भय ।

भवभामिनी—संज्ञा स्त्री. [सं.] पार्वती, भवानी ।

भवभार—संज्ञा पुं. [सं.] सांसारिक दुख और कष्ट, जन्म-मरण के कष्ट । उ.—सूर हरि कौ सुजस गावौ जाहि मिटि भव-भार—१-२९४ ।

भवभूष, भवभूषण—संज्ञा पुं. [सं.] संसार को भूषित करनेवाले (परमेश्वर) ।

भवमोचन—वि. [सं.] सांसारिक बंधनों से छुड़ानेवाले (परमेश्वर) ।

भवविलास—संज्ञा पुं. [सं.] सांसारिक सुख जो अज्ञान और माया-जन्य होते हैं ।

भवसंभव—वि. [सं.] संसार में होनेवाला ।

भवाँ—संज्ञा स्त्री. [हिं. भवना] भौंरा, चक्कर ।

भवाँना—क्रि. स. [सं. भ्रमण] घुमाना, चक्कर खिलाना ।

भवा—संज्ञा स्त्री. [सं.] पार्वती, भवानी ।

भवानी—संज्ञा स्त्री. [सं.] शिव-पत्नी पार्वती ।

भवितव्य—वि. [सं.] अवश्य होनेवाला ।

भवितव्यता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) होनी । (२) भाग्य ।

भविष, भविष्य, भविष्यत्—वि. [सं. भविष्यत्, हिं. भविष्य] आनेवाला काल या समय ।

भविष्यद्वक्ता—संज्ञा पुं. [सं.] (१) भविष्यवाणी करनेवाला। (२) ज्योतिषी।

भविष्यद्वाणी—संज्ञा स्त्री. [सं.] भविष्य में होनेवाली बात जो पहले से ही बता दी जाय।

भवेश—संज्ञा पुं. [सं.] (१) संसार का स्वामी। (२) शिव।

भव्य—वि. [सं.] (१) सुन्दर, शानदार। (२) मंगलसूचक। (३) भविष्य में होनेवाला।

भव्यता—संज्ञा स्त्री. [सं.] सुन्दरता, शोभा।

भष—संज्ञा पुं. [सं. भक्ष्य] आहार, भोजन। उ.—(क) सुंदर स्याम गही कवरी कर, मुक्तामाल गही बलबीर। सूरज भष लेबे अप अपनौ, मानहुं लेत निबेरे सीर—१०-१६१। (ख) सिंह भष तजि चरत तिनुका सुनी बात नई—३१३१।

भषना, भषनो—क्रि. स. [सं. भक्षण] भोजन करना।

भसम—संज्ञा पुं. [सं. भस्म] (१) राख। (२) चिता की राख। (३) अग्निहोत्र आदि की राख।

भसान—संज्ञा पुं. [बं. भसाना] पूजा के उपरांत मूर्ति को जल में प्रवाहित करने की क्रिया।

भसाना, भसानो—क्रि. स. [बं.] (१) पानी पर तैराना। (२) जल में प्रवाहित करना।

भसिंड, भसिंडा, भसींड, भसींडा—संज्ञा स्त्री. [देश.] कमल की जड़।

भसुंड—संज्ञा पुं. [सं. भुशुंड] हाथी, गज।

भस्म—संज्ञा पुं. [सं. भस्मन्] (१) अग्निहोत्र की राख जो पवित्र मानी जाती है और जिसे शिव-भक्त मस्तक या शरीर में अथवा साधु सारे शरीर में लगाते हैं। उ.—कहा स्नान कियैं तीरथ के, अंग भस्म, जट-जूटै २-१९। (२) राख। (३) चिता की राख।

वि.—जला हुआ, जल कर भस्म हुआ। उ.—कालयवन मुचुकुंद सों हरि भस्म करायौ—१०-उ. ३।

भस्मासुर—संज्ञा पुं. [सं.] 'वृकासुर' नामक दैत्य जिसे शिव जी ने वरदान दिया था कि तू जिसके सर पर हाथ रख देगा, वह भस्म हो जायगा। पार्वती जी पर मुग्ध होकर जब भस्मासुर शिव जी के ही सर पर हाथ रखने बढ़ा तब वे भागे और विष्णु ने चतुरता से उसी के सर पर हाथ रखवाकर उसी को भस्म करा दिया।

भहराइ, भहराई—क्रि. अ. [अनु.] झोंके के साथ गिरकर। उ.—(क) परि कबंध रथनि तैं उठत मनौ झर आगि—९-१५८। (ख) त्राहि त्राहि करि नंद पुकारत देखत ठौर गिरे भहराई—५४४।

भहरात—क्रि. वि. [हिं. भहराना] झोंके के साथ। उ.—गिर्‌यौ भहरात सकटा सँहार्‌यौ—१०-६२।

भहराना, भहरानो—क्रि. अ. [अनु.] (१) टूट पड़ना। (२) झोंके के साथ गिरना। (३) फिसल पड़ना।

भहूँ—संज्ञा स्त्री. [हिं. भौंह] भौंह।

भाँई—संज्ञा पुं. [हिं. भाना] खरादनेवाला।

भाँउ—संज्ञा पुं. [सं. भाव] अभिप्राय।

भाँउर, भाँउरि—संज्ञा स्त्री. [हिं. भाँवर] विवाह के समय वर-वधू द्वारा अग्नि की परिक्रमा।

भाँग—संज्ञा स्त्री. [सं. भृंगी] भंग, विजया।

मुहा०—भाँग खाना, खानो (खा जाना, पी जाना, पीना)—पागलपन की बातें या काम करना। घर में भूँजी भाँग न होना—बहुत दरिद्र होना।

भाँगना, भाँगनो—क्रि. स. [हिं. भंग] तोड़ना।

क्रि. अ.—टूटना, टूट जाना।

भाँज—संज्ञा स्त्री. [हिं. भाँजना] भाँजने की क्रिया, भाव या मजदूरी।

भाँजना, भाँजनो—क्रि. स. [सं. भंजन] (१) तह करके मोड़ना। (२) मुग्दर आदि घुमाना। (३) कई लड़ों को बटना। (४) तोड़ना-फोड़ना।

भाँजा—संज्ञा पुं. [हिं. भानजा] बहन का लड़का।

भाँजी—संज्ञा स्त्री. [हिं. भाँजना] बाधा डालनेवाली बात।

भाँजी—संज्ञा स्त्री. [हिं. भाँजा] बहन की लड़की।

भाँजि—क्रि. स. [हिं. भाँजना] तोड़कर, फोड़कर। उ.—अब कैसैं जैयतु अपनैं बल, भाजन भाँजि, दूध दधि पी कै—१०-२८७।

भाँट—संज्ञा पुं. [हिं. भाट] भाट, चारण। उ.—मागध, सूत, भाँट धन लेत जुरावन रे—१०-२८।

भाँटा—संज्ञा पुं. [हिं. भंटा] बैंगन।

भाँड़—संज्ञा पुं. [सं. भंड] (१) बहुत हँसी-मजाक करनेवाला। (२) स्वाँग भरकर नाचने-गानेवाला। (३)

हँसी-मजाक। (४) **बेहया या निर्लज्ज पुरुष।** (५) **नाश, बरबादी।**

संज्ञा पुं. [हिं. भाँड़ा] (१) **बरतन-भाँड़ा।** उ.—फोरि भाँड़ दधि-माखन खायौ—१०-३१८। (२) **भंडाफोड़।** (३) **उपद्रव, उत्पात।**

भांड—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **बरतन-भाँड़ा।** (२) **व्यापार की वस्तुएँ।**

भाँडना, भाँडनो—क्रि. अ. [सं. भंड] **मारे-मारे घूमना।**

क्रि. स.—(१) **निंदा करते फिरना।** (२) **नष्ट-भ्रष्ट करना, तोड़ना-फोड़ना।**

भाँड़ा—संज्ञा पुं. [सं. भाण्ड] **बड़ा बरतन।**

भांडागार—संज्ञा पुं. [सं.] **भंडार, कोष।**

भांडार—संज्ञा पुं. [सं. भांडागार] (१) **स्थान जहाँ बहुत सी चीजें रखी जायँ।** (२) **वह जहाँ एक सी अनेक बातें या चीजें हों।** (३) **अनाज या सामान रखने का स्थान।** (४) **कोष।**

भांडारिक—संज्ञा. पुं. [हिं. भांडार] **भंडार का अध्यक्ष, भंडारी।**

भाँड़े—संज्ञा पुं. [हिं. भाँड़ा] **बड़े बरतन।**

मुहा०—भाँड़े में जी (प्राण) देना—**किसी के प्रति आसक्ति या प्रेम होना।** भाँड़े भरना—**पछताना।** भाँड़े भरति—**पछताती है।** उ.—तब तू मारिबोई करति। रिसनि आगे कहि जो आवत अब लै भाँड़े भरति—२६७९।

भाँड़ौ—संज्ञा पुं. [हिं. भाँड़ा] **बड़ा बरतन।**

मुहा०—भरि भाँड़ौ—**बहुत अधिक।** उ.—बहुत भरोसौ जानि तुम्हारौ, अघ कीन्हे भरि भाँड़ौ—१-१४६।

भाँत, भाँति, भाँती, भाँते—संज्ञा स्त्री. [सं. भेद, हिं. भाँति] **तरह, प्रकार, रीति।** उ.—(क) कौन भाँति हरि, कृपा तुम्हारी, सो स्वामी समुझी न परति—१-११५। (ख) पय पीवत पूतना निपाती, तृनावर्त इहिं भाँत—५८८। (ग) द्रुम फूले बन अनगन भाँती—पृ. ३४८ (५)। (घ) सारँगरिपु-सुत-सुहृदपति बिना दुख पावति बहु भाँते—३४६१।

मुहा०—भाँति-भाँति के—**अनेक प्रकार से।**

भाँपना, भाँपनो—क्रि. स. [देश.] **ताड़ जाना, पहचान लेना, देखकर समझ जाना।**

भाँयँ—संज्ञा पुं. [अनु.] **सन्नाटे का शब्द।**

यौ०—भाँयँ भाँयँ—**सन्नाटे का शब्द।**

भाँरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. भाँवर] **विवाह के समय वर-वधू द्वारा की जानेवाली अग्नि की परिक्रमा।**

भाँवता—वि. [हिं. भावता] **भला लगनेवाला।**

संज्ञा पुं.—**प्रियपात्र, प्रियतम।**

भाँवना, भाँवनो—क्रि. स. [सं. भ्रमण] (१) **खरादना।** (२) **गढ़ना, गढ़कर सुन्दर बनाना।**

भाँवर, भाँवरि, भाँवरी—संज्ञा स्त्री. [सं. भ्रमण, हिं. भाँवर] (१) **परिक्रमा करना।** (२) **विवाह के समय वर-वधू का अग्नि की परिक्रमा करना।** उ.—भाँवरि सी पारि फिरैं नारि ज्यों पराई—पृ. ३२८ (७०)।

संज्ञा पुं. [हिं. भौंरा] **भौंरा, भ्रमर।**

भाँस—संज्ञा स्त्री. [हिं. धाँस (?)] **'धाँस' जैसी गंध।** उ.—भहरात झहरात दवा (नल) आयौ।....। बरत-बन-बाँस, थरहरत कुस काँस, जरि, उड़त है भाँस, अति प्रबल धायौ—५९६।

भा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) **चमक, प्रकाश।** (२) **शोभा, छबि।** (३) **किरण, रश्मि।** (४) **बिजली।**

अव्य.—**चाहे, यदि, इच्छा हो।**

क्रि. अ. [हिं. हुआ] **हुआ (अवधी)।**

भाइ—संज्ञा पुं. [सं. भाव] (१) **प्रेम, प्रीति, भाव।** उ.—आन देव की भक्ति भाइ करि कोटिक कसब करैगौ—१-७५। (२) **संबंध, विषय।** उ.—भरम ही बलवंत सबमैं ईसहू कैं भाइ। जब भगत भगवंत चीन्है, भरम मन तैं जाइ—१-७०। (३) **स्वभाव।** (४) **विचार।**

संज्ञा स्त्री. [हिं. भाँति] (१) **भाँति, प्रकार, तरह।** उ.—(क) वृषभ कह्यौ तासौं या भाइ—१-२९०। (ख) दासी-पुत्र होहु तुम जाइ। सूर बिदुर भयौ सो इहिं भाइ—३-५। (ग) उन दियौ साप ताहि या भाइ—६-५। (२) **चालढाल, रंगढंग।**

संज्ञा पुं. [हिं. भाई] (१) **भाई, भ्राता।** (२) **आत्मीयता-सूचक संबोधन।** उ.—ऊँच-नीच ब्यौरौ न रहाइ। ताकी साखि मैं, सुनि भाइ—१-२३०।

क्रि. स. [हिं. भाना] भाती है, रुचती है। उ.—कहौं सो कथा, सुनी चित लाइ। सूर स्याम भक्तनि मन भाइ—१-२३६।

भाइप—संज्ञा पुं. [हिं. भाई+पन] (१) भाई-चारा। (२) मित्रता।

भाई—संज्ञा पुं. [सं. भ्रातृ] (१) भ्राता, सहोदर, बंधु। (२) चाचा, फूफा, मौसा, मामा आदि का लड़का। (३) जाति या समाज का व्यक्ति। (४) आत्मीयता सूचक संबोधन।

वि.—प्रिय, रुचिकर। उ.—छाँड़ि सकुच सब देति परस्पर अपनी भाई गारि—२३९९।

क्रि. स. [हिं. भाना] रुची, भली लगी। उ.—ब्रह्मा मन सो भली न भाई। सूर सृष्टि तब और उपाई—३-७।

भाईचारा—संज्ञा पुं. [हिं. भाई+चारा] (१) बंधुत्व, भाईपन। (२) परम प्रिय होने का भाव।

भाईदूज—संज्ञा स्त्री. [हिं. भाई+दूज] कार्तिक शुक्ल द्वितीया, जब बहन, भाई के टीका काढ़ती है।

भाईपन—संज्ञा पुं. [हिं. भाई+पन] (१) भाई की प्रीति का भाव। (२) मित्रता या आत्मीयता का भाव

भाईबंद, भाईबंधु—संज्ञा पुं. [हिं. भाई+बंधु] (१) भाई तथा अन्य संबंधी। (२) इष्ट-मित्र।

भाई-बिरादरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. भाई+बिरादरी] (१) नाते-रिश्तेदार। (२) जाति-समाज के लोग।

भाउ, भाऊ—संज्ञा पुं. [सं. भाव] (१) विचार, भाव। (२) उद्देश्य, तात्पर्य। उ.—गोपिकनि लिखि जोग पठयौ भाउ जान न जाइ—२९२९ (३) प्रीति। (४) स्वभाव, प्रकृति। उ.—अनजानैं बिधि यह करी, नए रचे भगवान। ....। वहै नाउ, वहै भाउ, धेनु बछरा मिलि रब के—४३७।

संज्ञा पुं. [सं. भव] जन्म, उत्पत्ति।

भाऊँ—संज्ञा पुं. [सं. भाव] (१) प्रेम, प्रीति। (२) भावना। (३) स्वभाव। (४) दशा, अवस्था। (५) महिमा, महत्व। (६) रूप, आकृति। (७) सत्ता, प्रभाव। (८) बिचार।

क्रि. स. [हिं. भाना] रुचूँ, भला लगूँ।

भाएँ, भाए—क्रि. वि. [सं. भाव] समझ में, दृष्टि में। उ.—(क) सबही या ब्रज के लोग चिकनिया मेरे भाएँ घास। (ख) सरबस दियो आपनो उनको तऊ न कछू कान्ह के भाए—३४०३।

क्रि. स. [हिं. भाना] रुचे, भले लगे। उ.—मधुबन की मानिनी मनोहर तहीं जाहु जहाँ भाए हो—२९८६।

भाकर—संज्ञा पुं. [सं.] सूर्य, रवि।

भाकसी—संज्ञा स्त्री. [हिं. भट्ठी] भट्ठी।

भाखना, भाखनो—क्रि. स. [सं. भाषण] कहना, बोलना।

भाखा—क्रि. स. [हिं. भाखना] कहा, बोला।

संज्ञा स्त्री. [हिं. भाषा] (१) भाषा। (२) हिन्दी भाषा।

भाखि—क्रि. स. [हिं भाखना] कहो, बोलो, जपो। उ.—दुहूँ लोक सुखकरन, हरनदुख, बेद-पुराननि साखि। भक्ति ज्ञान के पंथ सूर ये, प्रेमनिरंतर भाखि—१-९०।

भाखी—क्रि. स. [हिं. भाखना] (१) कही। उ.—बुधि बिबेक उनमान आपने मुख आई सो भाखी—३४६९। (२) बतायी, वर्णन की। उ.—ग्राह ग्रसत गजराज छुड़ायौ, बेद पुराननि भाखी—५६७।

भाखे—क्रि. स. [हिं. भाखना] (१) कहे, सुनाये। उ.—चारि स्लोक कहे समुझाइ। ....। सोई अब मैं तुम सौं भाखे—१-२३०। (२) बताये, वर्णन किये। उ.—जे पद-कमल रमा-उर भूषन, बेद भागवत भाखे—५७१।

भाखै—क्रि. स. [हिं. भाखना] कहती है, बोलती हैं। उ.—बाल-बिनोद बचन हित-अनहित बार बार मुख भाखै—१-६०।

भाख्यौ—क्रि. स. [हिं. भाषना] (१) कहा, बताया। उ.—दुहुँनि मनोरथ अपनौ भाख्यौ, तब श्रीपति बानी उचरी—१-२६८। उच्चारण किया, पढ़ा। उ.—जोग-जज्ञ-जप-तप नहिं कीन्हौ, बेद बिमल नहिं भाख्यौ—१-१११।

भाग—संज्ञा पुं. [सं.] (१) हिस्सा, खंड, अंश। उ.—(क) जज्ञ-भाग नहिं लियौ हेत सौं रिषिपति पतित बिचारै—१-२५। (ख) रिषि कह्यौ, मैं करिहौं जहँ जाग। दैहौं तुमहिं अवसि करि भाग—९-७३।

(२) ओर, तरफ। (३) भाग्य, तकदीर। उ.—दुख, सुख, कीरति, भाग आपनैं आइ परैं सो गहियै—१-६२। (४) सौभाग्य। उ.—(क) नाहिन इतनो भाग जो यह रस, नित लोचन-पुट पीजैं—१०-९। (ख) धनि-धनि महरि की कोख भाग-सुहाग भरी—१०-२४। (ग) ऐसे कबहुँ भाग होहिंगे बहुरौ गोद खेलाइ—३४३५। (५) माथा, ललाट। (६) प्रातःकाल। (७) ऐश्वर्य, वैभव। (८) गणित की 'भाग' करने की क्रिया।

भागड़—संज्ञा स्त्री. [हिं. भगदड़] भगदड़, भाग-दौड़।

भागना, भागनो—क्रि. अ. [सं. भाज्] (१) दौड़ना, पलायन करना।

मुहा०—सिर पर पैर रखकर भागना—बहुत तेज भागना।

(२) हट जाना। (३) काम से बचना।

भागनेय—संज्ञा पुं. [सं.] बहन का बेटा, भानजा।

भागवंत—वि. [सं. भाग्यवान्] अच्छे भाग्यवाला।

भागवत—संज्ञा पुं. [सं.] (१) अठारह पुराणों में से एक जो वैष्णवों का मान्य धर्मग्रंथ है। इसे वे महापुराण मानते हैं। इसमें १२ स्कंध, ३१२ अध्याय और १८-००० श्लोक हैं। कृष्ण-भक्ति की प्रेमयुक्त कहानियाँ इसमें वर्णित हैं। सूरदास ने 'सूरसागर' का क्रम इसी ग्रंथ के अनुसार रखा है। उ.—सूर कह्यौ भागवतऽनुसार—४-७। (२) ईश्वर का भक्त।

वि. भगवत-संबंधी, भगवत-विषयक।

भागवती—संज्ञा स्त्री. [सं.] वैष्णवों की कंठी।

भागि—क्रि. अ. [हिं. भागना] भागकर, दौड़कर, पलायन करके। उ.—बांध्यौ बैर दया भागिनी सौं, भागि दुरी सु बिचारी—१-१७३।

भागिनि, भागिनी—वि. स्त्री. [हिं. भाग्यवान्] अच्छे भाग्यवाली, भाग्यवती। उ.—कुबिजा सी भागिनि को नारी—२६४०।

भागिनेय—संज्ञा पुं. [सं.] बहन का बेटा, भानजा।

भागी—क्रि. अ. स्त्री. [हिं. भागना] दौड़ी, पलायन किया। उ.—घर की नारि बहुत हित जासौं, रहति सदा सँग लागी। जा छन हंस तजी यह काया, प्रेत-प्रेत कहि भागी—१-७९।

वि. स्त्री. [हिं. भाग्य] अच्छे भाग्यवाली, भाग्यवती। उ.—तब बोले बलराम मातु तुमतें को भागी—२६२५।

संज्ञा पुं. [सं. भागिन्] (१) हिस्सेदार (२) अधिकारी।

भागीरथ—संज्ञा पुं. [सं. भगीरथ] राजा भगीरथ। उ.—भागीरथ जब बहु तप कियौ। तब गंगा जू दरसन दियौ—९-९।

भागीरथी—संज्ञा स्त्री. [सं.] गंगा नदी जिसको राजा भगीरथ पृथ्वी पर लाये थे।

भागु—संज्ञा पुं. [सं. भाग्य] भाग्य, सौभाग्य। उ.—ऊधौ जाके माथे भागु—३०९५।

भागे—क्रि. अ. [हिं. भागना] दौड़े, पलायन किया, चटपट दूर चले गए। उ.—सुनि याके उतपात कौं, सुक सनकादिक भागे (हो)—१-४४।

क्रि. वि.—दौड़े हुए, भागते हुए। उ.—ध्रुव आये माता पै भागे—४-८।

वि. [हिं. भाग्य] परम भाग्यवान।

भाग्य—संज्ञा पुं. [सं.] (१) नियति, अदृष्ट, किस्मत, तकदीर।

मुहा०—बड़े भाग्य—अच्छे भाग्य से, सौभाग्य से। उ.—(क) बड़े भाग्य इहिं मारग आये—९-७०। (ख) सूरदास प्रभु कहति जसोदा भाग्य बड़े ते पावैं—२५-४९। भाग्य के मोटे—अच्छे भाग्य वाले, सौभाग्यशाली। उ.—बड़े भाग्य के मोटे हो—२०६१।

भाग्य-भवन—संज्ञा पुं. [सं.] जन्मकुंडली में जन्म-लग्न से नवाँ स्थान जहाँ मनुष्य के शुभाशुभ भाग्य का विचार किया जाता है। उ.—भाग्य भवन मैं मकर मही-सुत बहु ऐश्वर्य बढ़ैहैं—१०-८६।

भाग्यवान्—वि. [सं.] जिसका भाग्य अच्छा हो।

भाग्यौ—क्रि. अ. [हिं. भागना] भागा, पलायन किया। उ.—पंचनि के हित-कारन यह मन जहँ-जहँ भरमत भाग्यौ—१-७३।

भाज—क्रि. अ. [हिं भाजना] भागना, दौड़ना।

प्र०—चली भाज—भाग या दौड़ चली। उ.—सुनि कै सिंह भयान अवाज। मारि फलाँग चली सो भाज—५-३। गये भाज—भाग गये, पलायन कर गये। उ.—और मल्ल मारे शल तोशल बहुत गये सब भाज।

भाजक—वि. [सं.] बाँटने या भाग करनेवाला।

भाजत—क्रि. अ. [हिं. भागना] भागता है।

वि.—भागता हुआ। उ.—रघुपति-रवि-प्रकास सौं देखौं, उडुगन ज्यौं तोहिं भाजत—९-१३०।

भाजन—संज्ञा पुं. [सं. भाजन] (१) बरतन। उ.—(क) मेरौ मन मतिहीन गुसाईं। सब सुखनिधि पद-कमल छाँड़ि, स्रम करत स्वान की नाईं। फिरत वृथा भाजन अवलोकत, सूनैं सदन अजान—१-१०३। (ख) रस-चरन-अंबुज बुद्धि भाजन लेहि भरि-भरि-भरि—१-३०६। (२) पात्र, योग्य व्यक्ति।

संज्ञा पुं. [हिं. भाजना = भागना] भागने की क्रिया।

प्र०—कैसे पावतु भाजन—भागना कैसे हो सकता है, भागने का अवसर कैसे मिल सकता है। उ.—चहुँ दिसि तें तनु बिरहा घेरो अब कैसे पावतु भाजन—२८१७।

भाजनता—संज्ञा स्त्री. [सं.] पात्रता, योग्यता।

भाजना, भाजनो—क्रि. अ. [सं. व्रजन,प्रा. वजन, पुं. हिं. भजना] दौड़ना, भाग जाना, पलायन कर जाना।

भाजा, भाजो—क्रि. अ. [हिं. भाजना] भाग गया।

भाजित—वि. [सं.] भाग या विभक्त किया हुआ।

भाजिबे—संज्ञा पुं. [हिं. भाजना] भागने की क्रिया या भाव। उ.—पुरुष को भाजिबे तें मरन है भलो जाई सुरलोक द्वारे उघारे—१० उ.-२१।

भाजी—संज्ञा स्त्री. [हिं. भाजना = भूनना] तरकारी, साग। उ.—(क) तुम तौ तीनि लोक के ठाकुर, तुम तैं कहा दुरइयै? हम तौ प्रेम-प्रीति के गाहक, भाजी-साक छकइयै—१-२३९। (ख) मीठे तेल चना की भाजी। एक मकूनी दै मोहिं साजी—३९६।

क्रि. अ. [हिं. भाजना = भागना] भागी, दौड़ी, पलायन किया। उ.—बिडरे गज-जूथ सील, सैन-लाज भाजी—६५०।

भाजे—क्रि. अ. [हिं. भाजना] भागे, पलायन कर गये। उ.—भाजे नरक नाम सुनि मेरौ, जम दीन्यौ हठि तारौ—१-१३१।

भाजैं—क्रि. अ. [हिं. भाजना] भागते हैं, दौड़ते हैं। उ.—उग्रसेन-सिर छत्र धर्‍यौ है, दानव दस दिसि भाजैं—१-२६।

भाजै—क्रि. अ. [हिं. भाजना] (१) भागते हैं, दूर होते हैं। उ.—हृद बिच नाभि, उदर त्रिबली बर, अवलोकत भव भय भाजै—१-६९। (२) दूर हो, मिटे। उ.—भोजन किये बिनु भूख क्यौं भाजै बिन खाए सब स्वाद—२७७८।

भाज्य—वि. [सं.] जिसे भाग या विभक्त किया जाय।

भाज्यौ—क्रि. अ. [हिं. भाजना] भागा, पलायन किया। उ.—(क) हौं अनाथ बैठ्यौ द्रुम-डरिया, पारधि साधे बान। ताकैं डर मैं भाज्यौ चाहत, ऊपर ढुक्यौ सचान—१-९७। (ख) प्रथम पूतना इनहिं निपाती काग मरत उठि भाज्यौ—२५८१।

भाट—संज्ञा पुं. [सं. भट्ट] (१) यश-गायक चारण या बंदी। (२) यश-गायकों की जाति। (३) चाटुकार। (४) राजदूत।

भाटा—संज्ञा पुं. [हिं. भाट] पानी का बहाव से उतार की ओर जाना, 'ज्वार' का उलटा।

भाटी—संज्ञा स्त्री. [हिं. भट्टी] भट्ठी, तपाने का स्थान।

भाटयौ—संज्ञा पुं. [हिं. भाट] भाट का काम।

भाठ, भाठा—संज्ञा स्त्री. [देश.] (१) नदी के साथ बहकर आयी हुई मिट्टी। (२) पानी का उतार। (३) नदी का किनारा। (४) बहाव। (५) गड्ढा।

भाठी—संज्ञा स्त्री. [हिं. भाठा] पानी का उतार।

संज्ञा स्त्री. [भट्ठी] (१) भट्ठी। उ.—भवन मोहिं भाठी सौं लागत मरति सोच ही सोचन—१५१७। (१) शराब बनाने की भट्ठी।

भाड़—संज्ञा पुं. [सं. भ्राष्ट्र, प्रा. भट्टो] भड़भूजे की भट्ठी।

मुहा०—भाड़ झोंकना—(१) साधारण काम में व्यस्त होना। (२) व्यर्थ समय खोना। भाड़ में झोंकना

(डालना)—(१) आग में जलाना। (२) नष्ट करना। भाड़ में जाय (पड़े)—नष्ट हो जाय हमें परवाह नहीं।

भाड़ा—संज्ञा पुं. [सं. भाटक] किराया।

भाण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) रूपक का एक भेद। (२) व्याज, बहाना। (३) ज्ञान, बोध।

भात—संज्ञा पुं. [सं. भक्त, पा. भत्त] (१) पकाया हुआ चावल। उ.—(क) परस्यौ थार धर्यौ मग जोवत, बोलति बचन-रसाल। भात सिरात तात दुख पावत, बेगि चलौ मेरे लाल—१०-२२३। (ख) घर गोरस जनि जाहु पराए। दूध भात भोजन घृत अंमृत अरु आछौ करि दह्यौ जमाए—१०-३०९। (२) विवाह की एक रीति जिसमें कन्या के घर आकर समधी 'भात' खाते हैं।

भाति, भाती—संज्ञा स्त्री. [सं. भाति] शोभा, कांति। उ.—मनोहर है नैनन की भाति (भांति)। मानहुँ दूरि करत बल अपने सरद कमल की कांति—ना. २४२९।

संज्ञा स्त्री. [सं. भाँति] रीति, प्रकार।

भातु—संज्ञा पुं. [सं.] सूर्य, रवि।

भाथा—संज्ञा पुं. [सं. भस्त्रा, पा. भत्था] (१) तीर रखने की चमड़े की थैली जो पीठ पर या कमर में बाँधी जाती है, तरकश, तूणीर। उ.—रघुपति कहि प्रिय नाम पुकारत। हाथ धनुष लीन्हे, कटि भाथा, चकित भए दिसि-बिदिसि निहारत—९-६१। (२) बड़ी धौंकनी।

भाथी—संज्ञा स्त्री. [हिं. भाथा] लोहार की धौंकनी।

भादों, भादौं, भाद्र—संज्ञा पुं. [सं. भाद्र, पा. भद्दो, हिं. भादों] भादों या भाद्रपद नामक महीना जो सावन और कुआर के बीच में पड़ता है। इस महीने की पूर्णिमा को चंद्रमा भाद्रपद नक्षत्र में रहता है। प्रायः इस महीने में खूब वर्षा होती है। उ.—(क) करन मेघ बान-बूंद भादौं-झरि लायौ—१-२३। (ख) भादौं की अध राति अँध्यारी—१०-११। (ग) नैना सावन-भादौं जीते—२७६९।

भान—संज्ञा पुं. [सं. भानु] भानु, सूर्य। उ.—(क) सूर-मधुप निसि कमल-कोश-बस, करौ कृपा-दिन-भान—१-१००। (ख) जैसैं कमल होत अति प्रफुलित देखत दरसन भान—१-१६९। (ग) चलत तारे सकल मंडल, चलत ससि अरु भान—१-२३५।

संज्ञा पुं. [सं.] (१) प्रकाश। (२) दीप्ति, कांति। (३) ज्ञान। (४) आभास, प्रतीति।

भानजा—संज्ञा पुं. [हिं बहन+जा] बहन का लड़का।

भानना, भाननो—क्रि. स. [सं. भंजन] (१) तोड़ना, भंग करना। (२) नाश करना। (३) हटाना, दूर करना। (४) काटना।

क्रि. स. [हिं. भान] समझना, अनुमानना।

भानमती—संज्ञा स्त्री. [सं. भानुमती] जादूगरनी।

भानवी—संज्ञा स्त्री. [सं. भानवीया] यमुना नदी।

भाना, भानो—क्रि. अ. [सं. भान=ज्ञान] (१) जान पड़ना, मालूम होना। (२) रुचना, भला लगना। (३) सोहना, फबना।

क्रि. स. [सं. भा=प्रकाश] चमकाना।

संज्ञा पुं. [सं. भानु] सूर्य, रवि।

संज्ञा स्त्री.—राधा की एक सखी का नाम। उ.—कहि राधा, किन हार चोरायो।......। सुमना बहुला चंपा जुहिला ज्ञाना भाना भाउ—१५८७।

भानि—क्रि. स [हिं. भानना] काट (डालेंगे)। उ.—रे दसकंध, अंधमति, तेरी आयु तुलानी आनि। सूर राम की करत अवज्ञा, डारैं सब भुज भानि—९-७९।

भानी—क्रि. स. [हिं. भानना] (१) काटकर, विच्छिन्न करके। उ.—सूरख सुख निद्रा नहिं आवै, लैहैं लंक बीस भुज भानी ९-११६। (२) हटायी, दूर की। उ.—छोटा एक भयौ कैसैंहु करि, कौन-कौन करवर बिधि भानी—३६८।

भानु—संज्ञा पुं. [सं.] सूर्य, रवि।

भानुज—संज्ञा पुं. [सं.] (१) यम। (२) शनिश्चर। (३) कर्ण। (४) मनु।

भानुजा—संज्ञा स्त्री. [सं.] सूर्य की पुत्री, यमुना।

भानुतनया, भनुतनूजा—संज्ञा स्त्री. [सं.] यमुना नदी।

भानुमती—संज्ञा स्त्री. [सं.] जादूगरनी।

भानुसुत—संज्ञा पुं. [सं.] (१) कर्ण। उ.—दान-धर्म बहु कियौ भानु-सुत, सो तुव बिमुख कहायौ—१-१०४। (२) यम। उ.—प्रभु, मेरे गुन-अवगुन न

बिचारी। कीजै लाज सरन आए की, रबि-सुत-त्रास निवारी—१-१११। (३) शनिश्चर। (४) मनु।

भानुसुता—संज्ञा स्त्री. [सं.] **यमुना नदी।**

भाने—क्रि. स. [हिं. भानना] **तोड़ता है, भंग करता है।** उ.—आपुहिं हरता आपुहिं करता आपु बनावत, आपुहिं भाने—११८७।

भानै—क्रि. स. [हिं. भानना] (१) **काट देंगे, काटेंगे** उ.—अजहूँ सिय सौंपि नतरु बीस भुजा भानै। रघुपति यह पैज करी, भूतल धरि पानै—९-९७। (२) **नष्ट-भ्रष्ट करती है।** उ.—सरिता चली मिलन सागर को कूल सबै द्रुम भानै—३३३७।

संज्ञा पुं. [सं. भानु] **सूर्य या रवि को।** उ.—कुमुद चकोर मुदित बिधु निरखत कहा करै लै भानै—३४०४।

भान्यो, भान्यौ—क्रि. स. [हिं. भानना] (१) **तोड़ा।** (२) **नष्ट किया।**

भाप, भाफ—संज्ञा स्त्री. [सं. वाष्प, पा. वप्प, हिं. भाप] **वाष्प।**

भाभरा—वि. [हिं. भा+भरना] **लाल (रंग का)।**

भाभी—संज्ञा स्त्री. [हिं. भाई] **बड़े भाई की स्त्री, भौजाई।** उ.—खैबे कौं कछु भाभी दीन्हे। श्रीपति श्री मुख बोले। फेंट उपर तैं अंजुल तंदुल बल करि हरि ज खोले—ना. ४२४५।

भाम—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **क्रोध।** (२) **प्रकाश।**

संज्ञा स्त्री. [सं. भामा] **स्त्री।**

भामा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) **स्त्री, पत्नी।** उ.—वह सुधि आवत तोहि सुदामा। जब हम तुम बन गए लकरियन पठए गुरु की भामा—१०-उ-६६। (२) **क्रुद्ध स्त्री।**

भामिन, भामिनि, भामिनी—संज्ञा स्त्री. [सं. भामिन्] (१) **स्त्री, नारी।** उ.—जे पद-पदुम परसि ब्रज-भामिनि सरबस दै, सुत-सदन बिसारे—१-९४। (२) **क्रुद्ध स्त्री।** (३) **पत्नी।**

भामी—वि. [सं. भामिन्] **क्रुद्ध, नाराज।**

संज्ञा स्त्री.—(१) **क्रुद्ध नारी।** (२) **नारी।**

भाय—संज्ञा पुं. [हिं. भाई] **भाई।**

संज्ञा पुं. [सं. भाव] (१) **भाव।** उ.—गोबिंद प्रीति सबन की मानत। जेहि-जेहि भाय करी जिन सेवा अंतरगत की जानत—१-१३। (२) **परिमाण।** (३) **दर, भाव।** (४) **ढंग, भाँति।**

भायप—संज्ञा पुं. [हिं. भाई+पन] **भाईचारा।**

भाया—वि. [हिं. भाना] **रुचिकर, प्रिय।**

क्रि. स.—**रुचा, भला या प्यारा लगा।**

भायो, भायौ—वि. [हिं. भाना=रुचना, भाया] **जो अच्छा लगे, प्रिय, इच्छित।** उ.—(क) जित-जित मन अर्जुन कौ तितहिं रथ चलायौ। कौरौ-दल नासि-नासि कीन्हौं जन भायौ—१-२३। (ख) यह तन राँचि-राँचि करि बिरच्यौ कियौ आपनो भायौ—१-६७। (ग) बारक मिलै सूर के प्रभु तौ करौं आपने भायौ—३३८५।

क्रि. स.—**रुचा, भला या प्यारा लगा।** उ.—(क) बेद-बिरुद्ध सकल पांडव-कुल, सो तुम्हरैं मन भायौ—१-१०४। (ख) श्री रुकमिनि के जिय नाहिं भायौ—१० उ-७।

भार—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **बोझ।** उ.—(क) जिहिं-जिहिं जनि जन्म धारचौ, बहु जारचौ अघ कौ भार—१-६८। (ख) मोह अभ सिर भार—१-९९। (ग) कबहुँक चढ़ौं तुरंग, महा गज, कबहुँक भार बहौं—१-१६१। (घ) बिरथा जनम लियौ संसार। करी कबहुँ न भक्ति हरि की मारी जननी भार—१-२९४। (ङ) सूरदास प्रभु दुष्ट-निकंदन धरनी भार उतारनकारी—२५८९। (२) **बोझ जो बहँगी में लादा जाय।** (३) **सँभाल, रक्षा।** उ.—घर-घर गोपिन ते कहेउ कर भार जुरावहु। (६) **आश्रय, बल, सहारा।** (७) **कर्तव्य-पालन का उत्तरदायित्व।**

मुहा०—किसी का भार उठाना—**उसके पालन-पोषण या रख-रखाव का भार अपने ऊपर लेना।** भार उतरना—**उत्तरदायित्व से मुक्त होना।** भार उतारना—(१) **उत्तरदायित्व से मुक्त करना।** (२) **बेगार की तरह काम पूरा कर देना।** भार डालना (देना)—**उत्तरदायित्व सौंपना।**

संज्ञा पुं. [हिं. भाड़] **भड़भूजे का भाड़।**

भारत—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **महाभारत का युद्ध।** उ.—भारत जुद्ध होइ जब बीता। भयौ जुधिष्ठिर अति भयभीता—१-२६१। (२) **महाभारत ग्रंथ।** उ.—

भारत माँहि कथा यह विस्तृत, कहत होइ बिस्तार—१-२६७। (३) घोर युद्ध। उ.—सोवत काली जाइ जगायौ, फिरि भारत हरि कीन्हौ—५७६।

क्रि. अ. [हिं. भारना] भार से दबाता है।

वि. भारी। उ.—आपुन तरि-तरि औरनि तारत। ....। इहिं बिधि उपलै तरत पात ज्यौं, जदपि सैल अति भारत—९-१२३।

भारतवर्ष—संज्ञा पुं. [सं.] आर्यावर्त, हिंदुस्तान।

भारति, भारती—संज्ञा स्त्री. [सं. भारती] (१) वाणी, वचन। (२) सरस्वती।

भारतीय—वि. [सं.] भारत-संबंधी।

भारथ—संज्ञा पुं. [सं. भारत] (१) युद्ध। (२) महाभारत का युद्ध। (३) महाभारत ग्रंथ।

भारथी—संज्ञा पुं. [सं. भारत] योद्धा, सैनिक।

भारद्वाज—संज्ञा पुं. [सं.] भरद्वाज का वंशज।

भारना, भारनो—क्रि. अ. [हिं. भार] (१) भार या बोझ लादना। (२) दबाना।

भारवाह, भारवाहक, भारबाहि, भारबाही—वि. [सं.] भार ढोनेवाला।

भारहारी—संज्ञा पुं. [सं. भारहारिन्] पृथ्वी का भार उतारने वाले (भगवान विष्णु और उनके अवतार)।

भारा—संज्ञा पुं. [सं. भार] भार, बोझ। उ.—गयौ कूदि हनुमंत जब सिंधु पारा। सेष के सीस लागे कमठ पीठि सौं, धँसे गिरिवर सबै तासु भारा—९-७६।

वि. (१) भारी। (२) बहुत बड़े, विशाल।

संज्ञा पुं. [हिं. भाला] भाला।

भारि—वि. [हिं. भार, भारा] विशाल, बड़े, विस्तृत। उ.—आइ घर जो नंद देखे, तरु गिरे दोउ भारि—३८७।

भारी—वि. [सं. भार] (१) महान, बड़ा, महत्वशाली। उ.—जन प्रहलाद प्रतिज्ञा पाली, कियौ बिभीषन राजा भारी—१-३४। (२) अधिक भारवाला, बोझिल।

मुहा०—पेट भारी होना—अपच होना। पैर भारी होना—गर्भिणी होना। सिर भारी होना—सिर में दर्द होना। आवाज (गला) भारी होना—गला पड़ जाना या बैठ जाना।

(३) कठिन, असह्य। उ.—(क) यहि अंतर जुवती सब आईं बन लाग्यौ कछु भारी—१०८२। (ख) स्याम बिन भई सरद-निसि भारी—१० उ०—९७। (४) अत्यंत, अधिक, बहुत। उ.—(क) बचन बाँह लै चलौं गाँठि दै, पाऊँ सुख अति भारी—१०१४६। (ख) हँसे सबै कर तारी दै दै आनन्द कौतुक भारी १०७५। (५) जिसका निर्वाह करना कठिन हो, दूभर। (६) फूला या सूजा हुआ। (७) सबल, अधिक शक्तिशाली। (८) गंभीर।

भारीपन—संज्ञा पुं. [हिं. भारी+पन] भारी होने का भाव।

भारे—वि. [हिं. भारी] (१) अधिक, बहुत अत्यंत। उ.—(क) काम-क्रोध-मद-लोभ-मोह-बस, अतिहिं किए अघ भारे—१-२७। (ख) कुरुपति अंध मोह बस तिनको देत सदा दुख भारे—३४९४। (२) विशाल, बड़ा, बृहत्, महा। उ.—जीव जल-थल जिते, बेष धरि-धरि तिते, अटत दुरगम अगम अचल भारे—१-१२०।

भारो, भारौ—वि. [हिं. भार, भारी] (१) अधिक, अत्यंत, बहुत। उ.—(क) सूर पतित कौं ठौर नहीं, तौ बहुत बिरद कत भारौ—१-१३१। (ख) मदनदूत मोहिं बात सुनाई इनमें भर्यौ महारस भारौ—११२२। (२) बड़ी, महान्, महिमामही। उ.—नाद मुद्रा बिभूति भारी करौ रावर भेस—३४१३।

भार्गव—संज्ञा पुं. [सं.] (१) भृगु का वंशज। (२) परशुराम।

भार्या—संज्ञा स्त्री. [सं.] पत्नी, स्त्री।

भार्यौ—वि. [हिं. भारी] बहुत, अधिक, अत्यंत। उ.—माखन लै ढाउनि कर दीन्हौ, तुरत मथ्यौ, मीठौ अति भार्यौ—४०७।

भाल—संज्ञा पुं. [सं.] माथा, ललाट। उ.—अधर दसन रसना रस बानी, स्रवन नैन अरु भाल—६४३।

संज्ञा पुं. [हिं. भाला] (१) भाला, बरछा। (२) तीर की नोक, गाँसी।

संज्ञा पुं. [सं. भल्लुक] रीछ, भालू।

भालना, भालनो—क्रि. स. [हिं. देखना का अनु.] (१) अच्छी तरह देखना। (२) ढूँढ़ना, खोज करना।

भाला—संज्ञा पुं. [सं. भल्ल] बरछा, साँग, नेजा।

भालि—संज्ञा स्त्री. [हिं. भाला] (१) **बरछी** । (२) **काँटा** ।

भाली—संज्ञा स्त्री. [हिं. भाला] (१) **भाले या तीर की गाँसी या नोक** । उ.—जब वह सुरति होत उर अंतर लागति काम बान की भाली—१० उ०-७९ । (२) **शूल, काँटा** । उ.—कहा री कहौं कछु कहति न बनि आवै लगी मरम की भाली री—८४६ ।

भालुनाथ—संज्ञा पुं. [हिं. भालू+सं. नाथ] **जामवंत** ।

भालू—संज्ञा पुं. [सं. भल्लुक] **'रीछ' नामक चौपाया** ।

भावंता—संज्ञा पुं. [हिं. भाना] **प्रिय, प्रीतम** ।

संज्ञा पुं. [सं. भावी] **होनहार, भावी** ।

भाव – संज्ञा पुं. [सं.] (१) **'अभाव' का उलटा, अस्तित्व** । (२) **विचार** । (३) **अभिप्राय** । (४) **मुख की आकृति** । (५) **कृत्य, क्रिया** । (६) **विषय-भोग** ।(७) **प्रेम, प्रीति** । (८) **उपदेश** । (९) **कल्पना** । उ.—सूर स्याम जन के सुखदायक बँधे भाव रजु रंग—२५९ । (१०) **प्रकृति स्वभाव** । (११) **आंतरिक इच्छा** । (१२) **ढंग, रीति** । (१३) **प्रकार, तरह** । (१४) **दशा** । (१५) **विश्वास, भरोसा**, (१६) **प्रतिष्ठा** । (१७) **बिक्री की दर** ।

मुहा०—भाव उतरना—**दर या दाम घटना** । भाव चढ़ना—**दर या दाम बढ़ जाना** ।

(१८) **देवी-देवता के प्रति श्रद्धा-भक्ति** । उ.—(क) बहुत भाव करि भोजन अप्यौ—१३५ । (१९) **नायक के दर्शन से नायिका के मन में उपजनेवाला विकार** । (२०) **आंतरिक अनुभव को शारीरिक चेष्टा द्वारा व्यक्त करना** ।

मुहा०—भाव देना—**शारीरिक चेष्टा से मन का भाव प्रकट करना** । भाव दै गयी—**मनोभाव या मनोकामना सूचित कर गयी** । उ.—स्याम को भाव दै गयी राधा । नारि नागरि न काहु लख्यौ कोऊ नहीं, कान्ह कछु करत है बहुत अनुराधा । भाव बताना—(१) **नखरे के साथ हाथ-पैर हिलाना** । (२) **आंतरिक भाव सूचित करना** ।

(२१) **नखरा, चोंचला** । (२२) **बुद्धि का गुण जिससे धर्म आदि का ज्ञान होता है** ।

भावइ—अव्य. [हिं. भाना] **चाहो तो, इच्छा हो तो** ।

भावई—क्रि. स. [हिं. भाना] **रुचिकर लगता है, प्रिय होता है** । उ.—सुधारस जेहि स्वाद चाख्यौ तिनहिं और न भावई—३२६० ।

भावक—क्रि. वि. [सं. भाव+क] **थोड़ा, किंचित** ।

वि. [सं.] **भावपूर्ण, भावयुक्त** ।

संज्ञा पुं. (१) **भावना करनेवाला** । (२) **भाव से युक्त** । (३) **भक्त, श्रद्धालु** । (४) **भाव** ।

भावगति—संज्ञा स्त्री. [सं. भाव+गति] **इच्छा, विचार** ।

भावगम्य—वि. [सं.] **जो भाव द्वारा जाना जाय** ।

भावज—वि. [सं.] **भाव से उत्पन्न** ।

संज्ञा स्त्री. [सं. भ्रातृजाया, हिं. भौजाई] **भाई की स्त्री** ।

भावत—क्रि. अ. [हिं. भाना] **अच्छा लगता है, रुचता है, पसंद आता है** । उ.—(क) जहाँ गयौ तहँ भलौ न भावत, सब कोऊ सकुचानौ—१-१०२ । (ख) गरब गोबिंदहिं भावत नाहीं—२-२३ । (ग) उपवन बन्यौ चहूँघा पुर के अति ही मोकों भावत—२५५९ ।

भावता—वि. [हिं. भावना, भाना] **जो भला लगे** ।

संज्ञा पुं.—**प्रेमपात्र, प्रियतम** ।

भावताव—संज्ञा पुं. [हिं. भाव+ताव] **मोल-तोल** ।

भावति—वि. स्त्री. [हिं. भावती] **भली लगनेवाली, रुचिकर, प्रिय** । उ. आजु सो बात बिधाता कीन्ही, मन जो हुती अति भावति—१०-२३ ।

क्रि. स.—**भली लगती है, प्रिय है** । उ.—मोसौं तुम मुँह की मिलवत हौ भावति है वह प्यारी—१८६४ ।

भावती—वि. स्त्री. [हिं. पुं. भावता] **जो भली लगे** । उ.—(क) बालबिनोद भावती लीला, अति पुनीत मुनि भाषी—१०-४ । (ख) एक-एक ते गुन-रूप उजागरि स्याम भावती प्यारी—११८५ । (ग) तुमते को है भावती हृदय बसाऊँ—१८६८ । (घ) वाकी भावती बात चलाइहौं—२२०९ ।

संज्ञा स्त्री.—**प्रेमपात्री, प्रियतमा** । उ.—(क) सूर स्याम की भावती कहै कहौ कहा री—१५३२ । (ख) सूर-प्रभु-भावती के सदा रसभरे नैन भरि-भरि प्रिया रूप चोरै—पृ० ३१७ (६४) ।

भावते—वि. पुं. [हिं. भावता] **जो-जो रुचे, भले लगे** ।

उ.—(क) होड़ाहोड़ी सनहिं भावते किए पाप भरि पेट—१-१४६। (ख) सूरदास प्रभु भलैं परे फँद, देउँ न जान भावते जी के—१०-२८७।

संज्ञा पुं.—प्रेमपात्र, प्रियतम।

भावन—वि. [सं. भाव] अच्छा लगनेवाला, जो भला लगे, भानेवाला। उ.—चरन धोइ चरनोदक लीन्हौ, कह्यौ माँगु मन-भावन—८-१३।

प्र०—लागी भावन—भली लगने लगी है। उ.—सूर सुगति क्यों होति हमारी लागी नीको भावन—२८६९।

संज्ञा पुं. [सं.] (१) भावना। (२) ध्यान।

भावना—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) ध्यान, विचार। (२) अनुभव-जन्य विचार। (३) कामना, वासना।

क्रि. अ.—रुचना, भला लगना।

वि.—(१) जो भला लगे। (२) मनचाहा, मन-चीता। उ.—(तब) लादि पंकज कढ्यौ बाहिर, भयौ ब्रज-मन-भावना—५७७।

भावनि—संज्ञा स्त्री. [हिं. भाना] इच्छानुसार कार्य।

भावनी—वि. [हिं. भावना] रुचिकर, प्रिय। उ.—भाट बोलै बिरद नारी बचन कहैं मन भावनी—१०उ०-२४।

भावनो—वि. [हिं. भावना] भला लगनेवाला, रुचिकर। उ.—तेहि देखे त्रय ताप नासै ब्रज-बधू-मन-भावनो—२२८०।

क्रि, अ.—रुचना, भला लगना।

भावभक्ति—संज्ञा स्त्री. [सं. भाव+भक्ति] (१) भक्ति की भावना। उ.—भाव-भक्ति कछु हृदय न उपजी, मन विषया मैं दीनौ—१-६५। (२) आदर, सत्कार, श्रद्धा। उ.—नैन मूँदि कर जोरि बोलायौ। भाव-भक्ति सों भोग लगायौ।

भाववाचक—संज्ञा स्त्री. [सं.] संज्ञा (शब्द) जिससे किसी पदार्थ का गुण, धर्म आदि सूचित हो।

भावशबलता—संज्ञा स्त्री. [सं.] एक अलंकार जिसमें कई भावों की संधि हो।

भावसंधि—संज्ञा स्त्री. [सं.] वह वर्णन-रीति जिसमें दो विरुद्ध भावों की संधि का वर्णन रहता है।

भावहि—क्रि. स. [हिं. भाना] भला लगता है, रुचता है। उ.—नाहिंन कछू सुहात तुमहिं बिन कानन भवन न भावहि—३४२७।

भाविक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) भावी अनुमान। (२) वह अलंकार जिसमें भूत और भावी बातें प्रत्यक्षवत् वर्णित हों।

वि.—जाननेवाला, सर्वज्ञ।

भावित—वि. [सं.] (१) सोचा-विचारा हुआ। (२) सुगंधित किया हुआ। (३) भेंट किया हुआ, समर्पित।

भाविता—संज्ञा स्त्री. [सं.] होनहार, होनी।

भाविय, भाविहि—संज्ञा स्त्री. सवि. [हिं. भावी] भावी ही के, भवितव्यता ही के। उ.—कह्यौ, सुतनि-सुधि आवति कबहीं ? कह्यौ, भाविये कैं बस सबहीं—१-२८४। (ख) सूरदास प्रभु भाविहि के बस मिलत कृपा कै अति सुख देवै—२६४१।

भावी—संज्ञा स्त्री. [सं. भाविन्] (१) भविष्य में होनेवाली बात, भवितव्यता होनी। उ.—भावी काहूसौं न टरै। कहँ वह राहु, कहाँ वह रवि-ससि आनि सँजोग परै। भावी कैं बस तीन लोक हैं, सुर नर देह धरै—१-२६४। (२) आनेवाला समय। (३) भाग्य, प्रारब्ध।

भावुक—वि. [सं.] (१) सोचने-विचारनेवाला। (२) जिसके मन में भावों का उदय बहुत शीघ्र हो, जो सहज ही द्रवित हो जाय।

भावै—क्रि. स. [हिं. भाना] प्रिय लगता है, रुचता है। उ.—(क) सुकृती-सुचि-सेवकजन काहि न जिय भावै—१-१२४। (ख) प्रातहिं उठत तुम्हारे कान्ह को माखन-रोटी भावै—२७०७। (ग) नहिंन सोहात कछू हरि तुम बिनु कानन भवन न भावै—३४२३।

क्रि. वि.—(१) समझ में, बुद्धि के अनुसार। उ.—प्रान हमारे घात (?) होत हैं तुमरे भावैं हाँसी—३०६३। (२) चाहे। उ.—भावै परो आजु ही यह तन भावै रहौ अमान—२-३३।

भाषण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) कथन। (२) व्याख्यान।

भाषत—क्रि. अ. [हिं. भाषना] कहते है, बताते हैं। उ.—(क) महादेव कौं भाषत साधु—४-५। (ख) बार-बार संकर्षन भाषत लेत नहीं ह्यांते गज टारी—२५८९।

भाषति—क्रि. अ. [हिं. भाषना] कहती है, बोलती है। उ.—निबाहौ बाँह गहे की लाज। द्रुपद-सुता भाषति नँदनंदन, कठिन बनी है आज—१-२५५।

भाषना, भाषनो—क्रि. अ. [सं. भाषण] बोलना, कहना।

क्रि. अ. [सं. भक्षण] भोजन करना।

भाषांतर—संज्ञा पुं. [सं.] अनुवाद, उल्था।

भाषा—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बोली, जबान। (२) विशेष जन-समूह की बोली। (३) जन-साधारण में प्रचलित बोली का रूप। (४) आधुनिक हिंदी जिसका जन्म सन् १००० के आस-पास हुआ माना जाता है और जिसकी राजस्थानी, ब्रजभाषा, अवधी, खड़ीबोली आदि जन-बोलियों के लिए (संस्कृत की तुलना में) 'भाषा' कहा जाता है। उ.—व्यास कहे सुकदेव सौं द्वादस स्कंध बनाइ। सूरदास सोइ कहे पद भाषा करि गाइ—१-२२५।

भाषाबद्ध—वि. [सं.] जनभाषा में लिखा हुआ।

भाषि—क्रि. अ. [हिं. भाषना] कहकर, बोलकर।

भाषित—वि. [सं.] कहा हुआ, कथित।

संज्ञा पुं.—कथन, बातचीत।

भाषी—क्रि. अ. स्त्री. [हिं. भाषना] बोली, कहा, कहने लगी। उ.—(क) रिपु कच गहत द्रुपद-तनया जब सरन-सरन कहि भाषी—१-२७। (ख) ऐसी भाँति नृपति बहु भाषी। सुनि जड़ भरत हृदय महँ राखी—५-४।

संज्ञा पुं. [सं. भाषिन्] बोलनेवाला।

भाषैं—क्रि. स. [हिं. भाषना] कहते हैं। उ.—सूरदास-प्रभु दीन बचन यौं हनूमान सौं भाषैं—९-१४६।

भाषै—क्रि. स. [हिं. भाषना] कहता है, बोलता है। उ.—ठाढ़े आधीन भए देव-देव भाषै—२६१९।

भाषौं—क्रि. स. [हिं. भाषना] कहता हूँ, बोलता हूँ। उ.—रसना इहई नेम लियो है और नहिं भाषौं मुख बैन—२७६८।

भाष्य—संज्ञा पुं. [सं.] व्याख्या, टीका।

भाष्यकार—संज्ञा पुं. [सं.] व्याख्या या टीकाकार।

भाष्यौ—क्रि. स. [हिं. भाषना] कहा। उ.—(रिसि) कह्यौ, सर्प है भाष्यौ मोहिं। सूर्य रूप तुहौ नृप हुं हि—६-७।

भास—संज्ञा पुं. [सं.] (१) प्रभा, दीप्ति। (२) किरण।

भासना, भासनो—क्रि. स. [सं. भास] (१) चमकना। (२) जान पड़ना। (३) देख पड़ना। (४) फँस जाना।

क्रि. अ. [हिं. भाषना] कहना, बोलना।

भासमान—वि. [सं.] जान पड़ता हुआ।

संज्ञा पुं.—सूर्य।

भासित—वि. [सं.] प्रकाशमान, दीपित।

भासी—क्रि. अ. [हिं. भासना] फँसी, लिप्त हुई। उ.—अपने भुज दंडन कर गहिये बिरह-सलिल मैं भासी।

भास्कर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) सूर्य। (२) अग्नि।

भास्वर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) सूर्य। (२) दिन।

भिंग—संज्ञा पुं. [सं. भृंग] (१) 'भृंगी' कीड़ा। (२) भौंरा।

संज्ञा स्त्री. [सं. भंग] बाधा, रुकावट।

भिंगाना, भिंगानो, भिंजाना, भिंजानो—क्रि. स. [हिं. भिगोना] गीला करना।

भिंडी—संज्ञा स्त्री. [सं. भिंडा] एक पौधे की फली जिसकी तरकारी बनती है। उ.—बनकौरा पिंडीक चिचिंड़ी, सीप पिंडारू कोमल भिंडी—३९६।

भिंसार—संज्ञा पुं. [सं. भानु+सरण] प्रातःकाल।

भिआ—संज्ञा पुं. [हिं. भैया] भाई, भ्राता।

भिक्षण—संज्ञा पुं. [सं.] भीख माँगना।

भिक्षा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) माँगना, याचना। (२) भीख। (३) भीख में मिली वस्तु। (४) सेवा, नौकरी।

भिक्षाटन—संज्ञा पुं. [सं.] भीख माँगते घूमना।

भिक्षापात्र—संज्ञा पुं. [सं.] भीख माँगने का पात्र।

भिक्षु, भिक्षुक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) भिखारी। (२) साधु।

भिखमंगा—संज्ञा पुं. [हिं. भीख+माँगना] भिखारी।

भिखार—संज्ञा पुं. [हिं. भीख] भिखारी।

भिखारिणि, भिखारिणी भिखारिनि, भिखारिनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. भिखारी] भीख माँगनेवाली स्त्री।

भिखारि, भिखारी—वि. [हिं. भीख+आरी (प्रत्य.)] भीख माँगनेवाला, भिक्षुक। उ.—और देव सब रंक-भिखारी, त्यागे बहुत अनेरे—१-१७०।

भिखिया—संज्ञा स्त्री. [हिं. भीख] भीख, भिक्षा।

भिगाना, भिगानो, भिगोना, भिगोनो—क्रि. स. [हिं. भिगोना] गीला करना।

भिच्छा—संज्ञा स्त्री. [सं. भिक्षा] भीख, भिक्षा। उ.—रावन तुरत बिभूति लगाए, कहत आइ, भिच्छा दै माई—९-५९।

भिजवना, भिजवनो—क्रि. स. [हिं. भिगोना] गीला करना।

भिजवाना, भिजवानो—क्रि. स. [हिं. भिगोना] गीला या तर कराना।

क्रि. स. [हिं. भेजना] भेजने को प्रवृत्त करना।

भिजाना, भिजानो—क्रि. स. [हिं. भिगोना] गीला या तर करना।

क्रि. स. [हिं. भेजना] भेजने को प्रवृत्त करना।

भिजे—वि. [हिं. भीजना] गीले, तर, भीजे हुए। उ.—मूँग-पकौरा पनौ पतबरा। इक कोरे इक भिजे गुर-बरा—३९६।

भिजोना, भिजोनो, भिजोवना, भिजोवनो—क्रि. स. [हिं. भिगोना] गीला करना।

भिज्ञ—वि. [सं.] जानकार, ज्ञाता।

भिटना—संज्ञा पुं. [देश.] छोटा गोल फल।

भिटनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. भिटना] स्तन की घुंडी।

भिडंत—संज्ञा स्त्री. [हिं. भिड़ना] मुठभेड़।

भिड़—संज्ञा स्त्री. [सं. वरट] बर्र, ततैया।

भिड़ना, भिड़नो—क्रि. अ. [हिं. भड़ (अनु.)] (१) टकराना। (२) लड़ाई करना। (३) निकट या पास पहुँचना।

भितरिया—संज्ञा पुं. [हिं. भीतर] बल्लभ-संप्रदायी मंदिर में मूर्ति के निकट रहनेवाला पुजारी।

वि.—भीतर या अन्दर का।

भितल्ला—संज्ञा पुं. [हिं. भीतर+तल] भीतरी परत।

भितल्ली—संज्ञा स्त्री. [हिं. भीतर+तल] चक्की का निचला पाट।

भिताना, भितानो—क्रि. स. [सं. भीति] डराना, भयभीत करना।

क्रि. अ.—डरना, भयभीत होना।

भित्ति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) दीवार। (२) भय, डर। (३) चित्र खींचने का आधार।

भिद्—संज्ञा पुं. [सं. भिद्] भेद, अन्तर।

भिदन—वि. [हिं. भेदना] भेदने, छेदने या नाश करने वाले। उ.—मधु कैटभ मथन, मुर भौम केसी भिदन कंस कुलकाल अनुसाल हारी—१०उ०—५०।

भिदना, भिदनो—क्रि. अ. [सं. भिद्] (१) घुसना, धँसना। (२) छेदा जाना। (३) घायल होना।

भिदि—क्रि. अ. [हिं. भिदना] धँसकर।

प्र०—भिदि गयौ—धँस गया। उ.—रोमनि रोमनि भिदि गयौ सब अँग अंग पगी—१५०३।

भिदुर—संज्ञा पुं. [सं. भिदिर] वज्र।

भिनकना, भिनकनो—क्रि. अ. [अनु.] (१) घृणा उत्पन्न होना। (२) मलिन या गंदा होना। (३) 'भिन-भिन' शब्द या ध्वनि करना।

मुहा०—(किसी पर) मक्खियाँ भिनकना—बहुत दुर्बल और दीन-मलीन होना।

भिनभिनाना, भिनभिनानो—क्रि. अ. [अनु.] 'भिनभिन' शब्द या ध्वनि करना।

भिनसार—संज्ञा पुं. [सं. वि+अह्नि+सार] प्रातःकाल।

भिनहीं—क्रि. वि. [सं. विनिशा] सबेरे, तड़के।

भिनुसार—संज्ञा पुं. [हिं. भिनुसार] सबेरा, प्रभात, प्रातःकाल। उ.—(क) उठौ नँदलाल भयौ भिनु-सार, जगावति नंद की रानी—१०-२०८। (ख) बारहिं बार जगावति माता, अंबुजनैन भयौ भिनु-सार—४०३।

भिन्न—वि. [सं.] (१) अलग, पृथक। (२) दूसरा, अन्य। उ.—बिष्नु, रुद्र, बिधि, एकहि रूप। इन्हैं जानि मति भिन्न स्वरूप—४-५।

संज्ञा पुं.—संख्या जो इकाई से कम हो।

भिन्नता—संज्ञा स्त्री. [सं.] अलगाव, भेद, अन्तर।

भिन्नाना, भिन्नानो—क्रि. अ. [अनु.] (१) (दुर्गन्ध आदि से) सर चकराना। (२) खीझना, खिजलाना।

भियना, भियनो—क्रि. अ. [सं. भीति] भयभीत होना।

भिया—संज्ञा पुं. [हिं. भैया] भाई, भ्राता।

भिरत—क्रि. अ. [हिं. भिड़ना] लड़ता-फिरता है। उ.—सोभित सुभट प्रचारि पैज करि भिरत न मोरत अंग—९५७।

भिरना, भिरनो—क्रि. अ. [हिं. भिड़ना] (१) **टकराना।** (२) **लड़ना-झगड़ना।** (३) **समीप या निकट पहुँचना।**

भिरहु—क्रि. अ. [हिं. भिड़ना] **लड़ो, जूझो।** उ.—सब कहत भिरहु स्याम सुनत रहत सदा नाम हारि-जीति घर ही की कौन काहि मारै—२६००।

भिरे—क्रि. अ. [हिं. भिड़ना] **लड़े, जूझे।** उ.—रुद्र भगवान अरु बान सांबुक भिरे राम कुंभाउ माँड़ी लड़ाई—१० उ०—३५।

भिरौं—क्रि. अ. [हिं. भिड़ना] **लड़ूँगा, सामना करूँगा।** उ.—होइ सनमुख भिरौं, संक नहिं धरौं, मारि सब कटक सागर बहाऊँ—९-१२९।

भिलनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. भील] **भील जाति की स्त्री।**

भिल्ल—संज्ञा पुं. [हिं. भील] **भील जाति।**

भिल्लनि—संज्ञा पुं. बहु. [सं. भिल्ल] **बहुत से भील।** उ.—तहँ भिल्लनि सौं भई लराई। लूटे सब, बिन स्याम सहाई—१-२८६।

भिल्लिनि—संज्ञा स्त्री. [हिं. भीलनी] (१) **भील जाति की स्त्री।** (२) **भीलनी शबरी जिसके बेर श्रीरामचन्द्र ने सरुचि खाए थे।** उ.—भिल्लिनि के फल खाए भाव सौं खाटे-मीठे-खारे—१-२५।

भिश्त—संज्ञा स्त्री. [फा. बिहिश्त] **स्वर्ग।**

भिश्ती—संज्ञा पुं. [?] **मशक से पानी भरनेवाला।**

भिषक, भिषक्, भिषज—संज्ञा स्त्री. [सं. भिषक्] **वैद्य।**

भिष्टा, भिसटा, भिस्टा—संज्ञा पुं. [सं. विष्टा] **मल।**

भिस्त—संज्ञा पुं. [फा. बिहिश्त] **(मुसलमानों का) स्वर्ग।**

भींचना, भींचनो—क्रि. स. [हिं. खींचना] (१) **कसना, दबाना।** (२) **(आँख) मूँदना या बंद करना।**

भींज—संज्ञा स्त्री. [हिं. भीगना] **नमी, तरी।**

भी—संज्ञा स्त्री. [सं.] **भय, डर।**

अव्य. [हिं. ही] (१) **अवश्य, निश्चय ही।** (२) **अधिक, विशेष।** (३) **तक, लौं।**

भीउँ—संज्ञा पुं. [सं. भीम] **युधिष्ठिर का भाई भीम।**

भीरु—वि. [सं.] **डरा हुआ, भयभीत।**

संज्ञा स्त्री. [हिं. भीख] **भिक्षा।**

भीख—संज्ञा स्त्री. [सं. भिक्षा] (१) **भिक्षा।** (२) **दान।** उ.—पंच की भीख सूर बल-मोहन, कहति जसोमति माई—४५५।

भीखन—वि. [सं. भीषण] **भयानक, भयंकर।**

भीखम—संज्ञा पुं. [सं. भीष्म] **भीष्म पितामह।**

वि.—**भयानक, डरावना।**

भीगना, भीगनो—क्रि. अ. [सं. अभ्यंज] **गीला होना।**

भीजत—क्रि. अ. [हिं. भीजना] **गीला या तर होता है।** उ.—अति ही सीत भीत भीजत तनु गिरि कर क्यों न धरी—३२००।

भीजना, भीजनो—क्रि. अ. [हिं. भीगना] **गीला होना।**

भीजी—क्रि. अ. [हिं. भीजना] **भीग गयी, गीली या तर हो गयी, आर्द्र या सराबोर हो गयी।** उ.—(क) नैन सलिल भीजी सब सारी—पृ० ३५३ (९२)। (ख) या गोकुल के चौहटे रँग भीजी ग्वालिनि—२४०५।

भीजे—क्रि. अ. [हिं. भीजना] **गीले या तर हो गये।**

वि.—**गीले, तर, आर्द्र।** उ.—दसन दामिनि ज्योति उर पर माल मोती, ग्वाल-बाल सब आवें रंग भीजे—२३५२।

भीजैं—क्रि. अ. [हिं. भीजना] (१) **(भीगती) भीगते हैं, गीले होते हैं।** उ.—(क) पाहन तारे, सागर बाँध्यौ तापर चरन न भीजैं—९-१२६। (ख) बूँद परत रँग ह्वैहै फीको, सुरँग चूनरी भीजैं—७३१। (२) **पुलकित या प्रेममग्न हो जाते हैं।** उ.—गदगद सुर, पुलक रोम, अंक प्रेम भीजैं—१-७२।

भीजैगौ—क्रि. अ. [हिं. भीजना] **गीला या तर हो जायगा।** उ.—बेगि साँवरे पाइँ धारिये सूर के स्वामी नतरु भीजैगो पियरौ पट आवत है पिय मेहरा—२००१।

भीजौ—क्रि. अ. [हिं. भीजना] **गीले या तर हो जाओ।** उ.—ठाढ़े रहौ आँगन ही हो पिय जौलौं मेह न नख-शिख भीजौ—२००२।

भीट, भीटा—संज्ञा पुं. [देश.] (१) **टीला।** (२) **स्थान जहाँ पान की खेती होती है।**

भीड़—संज्ञा स्त्री. [हिं. भिड़ना] (१) **जन-समूह, झुंड।**

मुहा०—**भीड़ चीरना—झुंड हटाकर मार्ग बनाना।**

भीड़ छँटना—जन-समूह का एकत्र न रह जाना ।
(२) संकट, आपत्ति, विपत्ति ।

भीड़ना, भीड़नो—क्रि.स. [हिं. भिड़ाना] (१) मिलाना ।
(२) मलना ।

भीड़भड़क्का—संज्ञा पुं. [हिं. भीड़] बहुत भीड़ ।

भीड़भाड़—संज्ञा स्त्री. [हिं. भीड़] बहुत भीड़ ।

भीड़ा—वि. [हिं. भिड़ाना] तंग, संकुचित ।

भींड़ी—संज्ञा स्त्री. [हिं. भिंडी] भिंडी (तरकारी) । उ.—बन कोरा पिंडीक चिचींड़ी । खीय पिंडारु कोमल भींड़ी—८३१ ।
संज्ञा स्त्री. [सं. भीड़] जन समूह, झुंड, भीड़ ।

भीत—संज्ञा स्त्री. [सं. भित्ति] (१) दीवार ।
मुहा०—भीत में दौड़ना—शक्ति से बाहर काम करना ।
(२) चित्र खीचने का आधार । उ.—बिन ही भीत चित्र किन कीनो किन नभ हठ करि घाल्यो झोरी—३०२८ ।
मुहा०—भीत बिना चित्र बनाना—बे सिर पैर की या उल्टी-सीधी बात करना ।
वि. [सं.] डरा हुआ, भयभीत ।
संज्ञा पुं.—भय, डर ।

भीतर—क्रि. वि. [देश०] अंदर, में । उ.—जबतैं जनम लियौ जग भीतर तब तैं तिहिं प्रतिपारयौ—१-३३६ ।
मुहा०—भीतर का कुआँ—उपयोगी, परन्तु सबके काम न आ सकनेवाली वस्तु । उ.—सूरदास प्रभु तुम बिन जोबन घर भीतर को कूप । भीतर पैठना—तत्व की बात जानने का प्रयत्न करना ।
संज्ञा पुं.—(१) हृदय, अन्तःकरण ।
मुहा०—भीतर ही भीतर—मन ही मन में ।
(२) रनिवास, जनानाखाना ।

भीतरा—वि. [हिं. भीतर] रनिवास में आने-जानेवाला ।

भीतरि—क्रि. वि. [हिं. भीतर] अंदर, में ।

भीतरिया—संज्ञा पुं. [हिं. भीतर] (१) वह जो भीतर रहता हो । (२) वल्लभ-संप्रदायी मंदिरों के वे पुजारी जो मूर्ति के निकट रहते हैं ।
वि.—भीतर का, भीतरी ।

भीतरी—वि. [हिं. भीतर] (१) भीतर का । (२) गुप्त ।

भीति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) भय, डर । उ.—ज्यौं बिट पर-तिय सँग बस्यौ, भोर भए भई भीति—१-३२५ ।
(२) कंप, कँपकँपी ।
संज्ञा स्त्री. [सं. भित्ति] (१) दीवार । उ.—नंद-नंदन ब्रत छाँड़िकै को लिखि पूजै भीति—३४४३ ।
मुहा०—भुस पर की भीति—दृढ़ आधार न होने के कारण बहुत जल्दी ढा जाने या नष्ट हो जानेवाली चीज । उ.—सूरदास प्रभु तुम्हरे मिलन बिनु भई भुस पर की भीति—२७१६ ।
(२) चित्र खींचने का आधार । उ.—भीत बिन कहु चित्र देखैं रही दूती हेरि—२०४३ ।
मुहा०—भीति (के) बिना चित्र करना (बनाना)—बे सिर-पैर की या आधार-रहित बात करना । भीति बिन चित्र करत—बे सिर-पैर की बातें करते हो । उ.—तात रिस करत भ्राता कहै मारिहौं, भीति बिन चित्र तुम करत रेखा—१२४६ ।

भीतिका, भीतिकारी—वि. [सं.] भयंकर, भयावना ।

भीती—संज्ञा स्त्री. [सं. भित्ति] दीवार ।
संज्ञा स्त्री. [सं. भीति] डर, भय । उ.—चंद की दुति गई, पहै पीरी भई सकुच नाहीं दई अतिहि भीती—१६१० ।

भीन—संज्ञा पुं. [हिं. बिहान] सबेरा, प्रातःकाल ।
वि. [हिं. भीनना] मग्न, निमग्न, लीन, डूबा हुआ । उ.—दुष्टनि दुख, सुख संतनि दीन्हौ, नृप-ब्रत पूरन कीन । रामचन्द्र दसरथहिं बिदा करि सूरदास रस-भीन—९-२६ ।

भीनना, भीननो—क्रि. अ. [हिं. भीगना] भर या समा जाना, लीन होना ।

भीनी—वि. [हिं. भीनना] युक्त, लीन, डूबी हुई, निमग्न । उ.—चलत चरन गहि रहि गई गिरि खेद सलिल भय भीनी—३४४९ ।

भीने—वि. [हिं. भीनना] युक्त, लीन, डूबे हुए, निमग्न । उ.—(क) नवल निकुंज नवल रस दोऊ राजत हैं रँग भीने—पृ० ३१५ (४६) । (ख) दुरत न डर नख गात लाल रँग भीने हो—२४०१ ।

भीनो, भीनौ—वि. [हिं. भीनना] मग्न, लीन, डूबा हुआ। उ.—अति सुकुमार डोलत रस-भीनौ—२-१०।

भीन्यौ—क्रि. अ. [हिं. भीनना] लीन या मग्न हो गया, समा गया। उ.—सूरदास स्वामीपन तजि कै सेवक पन रस भीन्यौ—८-१५।

भीन्ही—वि. [हिं. भीनना] (सुगंध आदि में) बसी हुई। उ.—गोरे गात मनोहर उरजन लसत फुलेल कंचुकी भीन्ही—२२९५।

भीम—संज्ञा पुं. [सं.] युधिष्ठिर का भाई भीमसेन।

मुहा०—भीम के हाथी—भीमसेन द्वारा फेंके गये हाथी जो आज भी आकाश में घूमते माने जाते हैं। तात्पर्य उस व्यक्ति या पदार्थ से है जो एक बार छूट-कर फिर न मिले। उ.—अब मन भयो भीम के हाथी सुपने अगम अपार—१० उ०-८४।

वि.—(१) भयानक, भयंकर। (२) बहुत बड़ा।

भीमता—संज्ञा स्त्री. [सं.] भयंकरता।

भीमा—वि. स्त्री. [सं.] भयंकर, डरावनी।

भीर—संज्ञा स्त्री. [हिं. भीड़] (१) जन-समूह, भीड़। उ.—सूर स्याम कौ जसुमति टेरति बहुत भीर है हरि न भुलाहिं—९१९। (२) ठठ, झुंड, समूह। उ.—प्रेम मगन गावत गंध्रब गन ब्योम बिमाननि भीर—५७५। (३) संकट, विपत्ति। उ.—(क) हरै बलबीर बिना को पीर। सारंगपति प्रगटे सारंग तैं, जानि दीन पर भीर—१-३३१। (ख) जब-जब भीर परी संतन कौं चक्र सुदरसन तहाँ सँभारयौ—१-१४। (ख) जहँ-जहँ भीर परै भक्तनि कौ तहाँ-तहाँ उठि धाऊँ—१-२४४।

वि. [सं. भीरु] (१) डरा हुआ। (२) कायर।

भीरना, भीरनो—क्रि. अ. [हिं. भीरु] भयभीत होना, डरना।

भीरा—वि. [सं. भीरु] कायर, साहसहीन।

संज्ञा स्त्री. [हिं. भीड़] संकट, विपत्ति।

भीरु—वि. [सं.] (१) डरपोक, कायर। (२) डरी हुई, भयभीत। उ.—दुखित द्रौपदी जानि जगतपति, आए खगपति त्याग। पूरे चीर भीरु-तन-कृष्ना, ताके भरे जहाज—१-२२५।

भीरुता, भीरुताई—संज्ञा स्त्री. [सं. भीरुता] (१) कायरता। (२) भय, डर।

भीरू—वि. [सं. भीरू] कायर, साहसहीन

भीरे—क्रि. वि. [हिं. भिड़ना] समीप, पास।

भील—संज्ञा पुं. [सं. भिल्ल] एक प्रसिद्ध जंगली जाति।

भीलि—संज्ञा स्त्री. [हिं. भील] (१) भील जाति की स्त्री, भीलनी। (२) शबरी जिसे श्रीरामचन्द्र जी ने तारा था। उ.—अजामील अरु भीलि गनिका, चढ़े जात बिमान—१-२३५।

भीलिनि—संज्ञा स्त्री. [हिं. भीलनी] भील जाति की स्त्री। उ.—अजामिल बिप्र कनौज-निवासी। सो भयौ बृषली कौ गृहवासी।......। ता भीलिनि कैं दस सुत भए। पहिले पुत्र भूलि तिहिं गए—६-४।

भीलु, भीलुक—वि. [सं.] कायर, भीरु।

भीवँ, भीव—संज्ञा पुं. [सं. भीम] भीमसेन।

भीष—संज्ञा स्त्री. [हिं. भीख] भिक्षा, भीख।

भीषक—वि. [सं. भीषण] भयंकर।

भीषज—संज्ञा पुं. [सं. भेषज] वैद्य।

भीषण, भीषन—वि. [सं. भीषण] (१) भयानक, डरावना। (२) उग्र, दुष्ट, कठोर।

भीषणता, भीषनता—संज्ञा स्त्री. [सं. भीषणता] भयंकरता, डरावनापन।

भीषम—संज्ञा पुं. [सं. भीष्म] (१) भीष्म पितामह। उ.—भीर परै भीषम-प्रन राख्यौ, अर्जुन कौ रथ हाँक्यौ—१-११३। (२) राजा भीष्मक जो रुक्मिणी के पिता थे। उ.—कुंदनपुर को भीषम राई—१० उ०-७।

भीष्म—संज्ञा पुं. [सं.] (१) भयानक रस। (२) राजा शांतनु के, गंगा के गर्भ से उत्पन्न पुत्र देवव्रत जो भीष्म पितामह के नाम से प्रसिद्ध हैं।

भीष्मक—संज्ञा पुं. [सं.] विदर्भ के एक राजा जो रुक्मिणी के पिता थे।

भीष्मकसुता—संज्ञा पुं. [सं.] रुक्मिणी जो श्रीकृष्ण की पटरानी थी।

भुँइ, भुँई—संज्ञा स्त्री. [सं. भूमि] पृथ्वी।

भुइघरा, भुँइधरा, भुँइहरा—संज्ञा पुं. [सं. भूमि+गृह=घर] तहखाना।

भुंगल—संज्ञा पुं. [देश.] युद्ध का एक बाजा।

भुँजना, भुँजनो—क्रि. अ. [हिं. भुनना] भुनना।

भुँजैं—क्रि. अ. [हिं. भूँजना, भूनना] तपाती हैं, जलाती हैं। उ.—पवन पानि घनसारि सुमन दै दधि-सुत-किरन भानु भै भुंजैं—२७२१।

भुँजौना—संज्ञा पुं. [हिं. भूनना] (१) भूनने की मजदूरी। (२) भुना हुआ अन्न।

भुअ—संज्ञा स्त्री. [सं. भूमि] पृथ्वी।

भुअंग, भुअंगम—संज्ञा पुं. [सं. भुजंग] साँप। उ.—(क) डसी री स्याम भुअंगम कारे—७४७। (ख) भूलि न उठत जसोदा जननी मनो भुअंगम डासी—३४३९।

भुअन—संज्ञा पुं. [सं. भुवन] जगत, संसार।

भुआर, भुआल—संज्ञा पुं. [सं. भूपाल] राजा।

भुइँ—संज्ञा स्त्री. [सं. भूमि] भूमि, पृथ्वी। उ.—ऊखल चढ़ि, सींके कौ लीन्हौ, अनभावत भुइँ मैं ढरकायौ—१०-३३१।

भुइँघरा, भुइँधरा, भुइँहरा—संज्ञा पुं. [सं. भूमिगृह] तहखाना।

भुइँचाल, भुइँडोल—संज्ञा पुं. [सं. भू+चलना, डोलना] भूचाल, भूडोल, भूकंप।

भुईं—संज्ञा स्त्री. [सं. भूमि] भूमि, पृथ्वी। उ.—मैया, कबहिं बढ़ैगी चोटी? ....। तू जो कहति बल की बेनी ज्यों, ह्वैहै लाँबी-मोटी। काढ़त-गुहत-न्हवावत जैहै नागिनि सी भुईं लोटी—१०-१७५।

भुक—संज्ञा पुं. [सं. भुज्] (१) भोजन। (२) अग्नि।

भुकराँद, भुकराँयध—संज्ञा स्त्री. [अनु. भुक] सड़ने की दुर्गंध।

भुक्खड़—संज्ञा पुं. [हिं. भूख] जो सदा भूखा रहे।

भुक्त—वि. [सं.] (१) खाया हुआ। (२) भोगा हुआ।

भुक्ता—संज्ञा पुं. [हिं. भोक्ता] उपभोग करनेवाला, भोक्ता। उ.—(क) दाता-भुक्ता, हरता-करता, बिस्वंभर जग जानि। ताहि लगाइ माखन की चोरी, बाँध्यौ जसुमति रानि—४८७। (ख) मैं कर्ता मैं भुक्ता मोहिं बिनु और न कोई—१० उ०-४७।

भुक्ति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) भोजन। (२) सुख-भोग।

भुखमरा—वि. [हिं. भूख+मरना] भूख से मरनेवाला।

भुखमरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. भूख+मरना] भूख से मरने की स्थिति।

भुखाना, भुखानो—क्रि. अ. [हिं. भूख] भूखा होना।

भुखालू—वि. [हिं. भूख] भूखा।

भुगत—संज्ञा स्त्री. [सं. भुक्ति] (१) भोजन। (२) भोग।

भुगतना, भुगतनो—क्रि. स. [सं. भुक्ति] भोगना।

क्रि. अ.—(१) निपटना। (२) बीतना।

भुगतान—संज्ञा पुं. [हिं. भुगतना] भुगताने की क्रिया, भाव या मूल्य।

भुगताना, भुगतानो—क्रि. स. [हिं. भुगतना] (१) निपटाना। (२) बिताना। (३) चुकाना, अदा करना।

भुगति—संज्ञा स्त्री. [सं. भुक्ति] सुख-भोग, भोजन का सुख या रस। उ.—भोग भुगति भूलेहु भखनहिं, भरी बिरह बैराग—३१२५।

भुगती—संज्ञा स्त्री. [सं. भुक्ति] (१) भोजन का भाव। (२) भोजन।

भुगतै—क्रि. स. [हिं. भुगतना] (फल) भोगे, सहे, झेले। उ.—हम तौ पाप कियौ भुगतै को पुण्य प्रगटि कियौ निठुर हियो री—१४०६।

भुच्च, भुच्चड़—वि. [हिं. भूत+चढ़ना] मूर्ख।

भुजंग—संज्ञा पुं. [सं.] साँप।

भुजंगम—संज्ञा पुं. [सं. भुजंगम्] साँप।

भुजंगा—संज्ञा पुं. [सं. भुजंग] साँप।

भुजंगिनि, भुजंगिनी, भुजंगी—संज्ञा स्त्री. [सं. भुजंगिनी] साँपिन, नागिन। उ.—माया बिषम भुजंगिनि कौ बिष, उतरचौ नाहिन तोहिं—२-३२।

भुजंगेंद्र, भुजंगेश—संज्ञा पुं. [सं.] शेषनाग।

भुज—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बाहु, बाँह। उ.—(क) उरग-इंद्र उनमान सुभग भुज—१-६९। (ख) स्याम, भुज गहि काढ़ि लीजै, सूर ब्रज कै कूल—१-९९।

मुहा०—भुज भरि—गले लगाकर। उ.—(क) भुज भरि धरि अँकवारि बाँह गहि कै झकझोरयौ—

१०२६। (ख) भुज भरि मिलनि उड़त उदास ह्वै गत स्वारथ समए — २९९२।

(२) हाथी की सूड़। (३) दो की संख्या सूचक शब्द।

भुजग—संज्ञा पुं. [सं.] साँप।

भुजदंड—संज्ञा पुं. [सं.] बाहु रूपी दंड।

भुजपात—संज्ञा पुं. [सं. भोजपत्र] भोजपत्र।

भुजपाश—संज्ञा पुं. [सं.] दोनों हाथों का बंधन जिसमें बाँधकर गले या छाती से लगाया जाता है।

भुजबंद, भुजबंध—संज्ञा पुं. [सं. भुजबंध] बाजूबंद।

भुजनाथ—संज्ञा पुं. [सं. भुजपाश] भुजपाश।

भुजमूल—संज्ञा पुं. [सं.] (१) कंधा। (२) बगल, काँख।

भुजवा—संज्ञा पुं. [हिं. भूँजना] भड़भूजा।

भुजा—संज्ञा स्त्री. [सं.] बाँह, हाथ।

मुहा०—भुजा उठाना (टेकना)—प्रण करना।

भुजाना, भुनानो—क्रि. स. [हिं. भुनाना] भुनाना।

भुजाली—संज्ञा स्त्री. [हिं. भुज + आली] छोटी बरछी।

भुजिया—संज्ञा पुं. [हिं. भूँजना] (१) उबाले हुए धान के चावल। (२) भूनी हुई (बिना रसे की) तरकारी।

भुजेना—संज्ञा पुं. [हिं. भूजना] भुना हुआ चबेना।

भुट्टा—संज्ञा पुं. [सं. भृष्ट, प्रा. भुट्ठी] मक्का, ज्वार आदि की बाल।

भुतना, भुतवा—संज्ञा पुं. [हिं. भूत] प्रेत, भूत।

भुथरा—वि. [हिं. भोथरा] जिसमें धार न हो, कुंद।

भुथराई—संज्ञा स्त्री. [हिं भोथरा] कुंद होने का भाव।

भुनगा—संज्ञा पुं. [अनु.] उड़नेवाला छोटा कीड़ा।

भुनना, भुनमो—क्रि. अ. [हिं. भूनना] (१) बिना जल के आग पर पकना। (२) गरम बालू में पकना। (३) घी-तेल में पकना। (४) तेज धूप या तपी जमीन पर जलना। (५) कष्ट होना।

क्रि. अ. [सं. भंजन] बड़े सिक्के के छोटे सिक्के मिलना।

भुनभुनाना, भुनभुनानो—क्रि. अ. [अनु.] (१) 'भुनभुन' करना। (२) अस्पष्ट स्वर में बड़बड़ाना।

भुनाना, भुनानो—क्रि. स. [हिं. भूनना] भूनने को प्रेरित करना।

क्रि. स. [सं. भंजन] बड़े सिक्के को छोटे से बदलना।

भुवि—संज्ञा स्त्री. [सं. भू] पृथ्वी, भूमि।

भुरई—क्रि. स. [हिं. भुरवना] फुसला ली। उ.—सूरदास प्रभु रसिक सिरोमनि भुरई राधिका भोरी।

भुरकना, भुरकनो—क्रि. अ. [हिं. भुरका] (१) सूखकर भुरभुरा होना। (२) भूल जाना। (३) चूर्ण को छिड़कना।

भुरका—संज्ञा पुं. [सं. धूरि] बुकनी, चूर्ण, अबीर।

भुरकाना भुरकानो क्रि. स. [हिं भुरवना] (१) सुखाकर भुरभुरा करना। (२) छिड़कना। (३) भुलवाना, बहकाना।

भुरकि—क्रि. अ. [हिं. भुरकना] (किसी चूर्ण-पदार्थ को) छिड़ककर, भुरभुराकर। उ.—अरुन अधर-छबि दसन बिराजत, जब गावत कल मंदन। मुक्ता मनौ नील-मनिमय-पुट, धरे भुरकि बर बंदन - ४७६।

भुरकुस—संज्ञा पुं. [हिं. भुरकना] चूर्ण, चूरा।

मुहा०—भुरकुस निकलना—(१) इतनी मार पड़ना कि हड्डी पसली चूर-चूर हो जाय। (२) नष्ट होना। भुरकुस निकालना—मारते-मारते हड्डी-पसली चूर चूर कर देना। (२) नष्ट करना।

भुरजी—संज्ञा पुं. [हिं. भूजना] भड़भूजा।

वि.—जो 'भुरजी' जैसा काला हो।

भुरता—संज्ञा पुं. [हिं. भुरकना] दबने-कुचलने से बिगड़ी दशा वाला।

मुहा०—भुरता करना (कर देना)—दबाकर या मार-पीटकर चूर-चूर कर देना।

(२) तरकारी जो बैंगन आदि को आग में भूनकर बनती है।

भुरभुर, भुरभुरा—वि. [अनु.] हलके आघात से ही चूर-चूर हो जानेवाला।

भुरभुराना भुरभुरानो—क्रि. स. [अनु.] (१) भुरभुरा करना। (२) छिड़कना, बुरकना।

भुरये—क्रि. स. [हिं. भुराना] भुलावे में डाला। उ.—तुम भुरये हौ नंद कहत हैं तुमसौं ठोटा। दधि-ओदन के काज देह धरि आए छोटा।

भुरयौ—वि. [हिं. भरमना] **भ्रम में पड़ा हुआ, भूला हुआ।** उ.—जनम साहिबी करत गयौ।....। कुबुधि-कमान चढ़ाइ कोप करि, बुधि-तरकस रितयौ। सदा सिकार करत मृग-मन कौ, रहत मगन भुरयौ—१-६४।

भुरवति—क्रि. स. स्त्री. [हिं. भुरवना] **फुसलाती हैं, भुलावा देती हैं।** उ.—ओढ़नि आनि दिखाई मोकौं, तरुनिनि की सिखई बुधि ठानी। घर लै लै मेरौ सुत भुरवहिं, ये ऐसी सब दिन की जानी—६९५।

भुरवना, भुरवनो—क्रि. स. [हिं. भरमना] **फुसलाना, बहलाना।**

भुरहरा—संज्ञा पुं. [हिं. भोर] **सबेरा, प्रातःकाल।**

भुरहरे—क्रि. वि. [हिं. भोरहरा] **बहुत सबेरे।**

भुराई—संज्ञा स्त्री. [हिं. भोला] **सीधापन, सिधाई।**

भुराना, भुरानो—क्रि. स. [हिं. भुलाना] **भूल जाना।**

क्रि. स. [हिं. भुरवना] **बहलाना, फुसलाना।**

भुराये—क्रि. स. [हिं. भुराना] **बहलाया, फुसलाया, भ्रम में डाला।** उ.—अति हीं चतुर कहावत राधा बातन ही हरि क्यों न भुराये—१४५३।

भुरी—वि. [हिं. भोली] **भोली, सीधी।**

क्रि. स. [हिं. भुराना] **बहलाया, फुसला लिया।**

भुरै—क्रि. स. [हिं. भुरवना] **बहला-फुसलाकर।**

प्र०—भुरै लई—**बहला-फुसला लिया।** उ.—कुंतल कुटिल भँवर भामिनि वर मालति भुरै लई। तजत न गहरु कियो तिन कपटी जानि निरास भई—३३०८।

भुरैहौं—क्रि. स. [हिं. भूलना] **भूलूँगा, बहलाने-फुसलाने में आऊँगा।** उ.—मैं अपनी सब गाय चरैहौं। प्रात होत बल के सँग जैहौं तेरे कहे न भुरैहौं।

भुलक्कड़—वि. [हिं. भूलना] **भूल जानेवाला।**

भुलना, भुलनो—वि. [हिं. भूलना] **भूल जानेवाला।**

भुलभुला—संज्ञा पुं. [अनु.] **गरम राख।**

भुलवाना, भुलवानो—क्रि. स. [हिं. भूलना] **(१) भ्रम या भुलावे में डालना। (२) बिसराना।**

भुलसना, भुलसनो—क्रि. अ. [हिं. भुलभुला] **गरम राख में भुलसना।**

भुलाइ—क्रि. स. [हिं. भुलाना] **भुला कर।**

प्र०—दई भुलाइ—**भुला दिया।** उ.—लेहु-लेहु गोपाल कोऊ दह्यौ दई भुलाइ—१२११। देति भुलाइ—**भ्रम में डालती है, धोखा देती है।** उ.—सूर प्रभु की सबल माया देति मोहिं भुला—१-४५।

भुलाई—क्रि. स. [हिं. भूलना] **भुला दी, विस्मरण की।**

प्र०—रहे भुलाई—**भूले रहे, (सब कुछ) भुला बैठे।** उ.—जेंवत छाक गाइ बिसराई। सखा श्रीदामा कहत सबनि सौं, छाकहि मैं तुम रहे भुलाई—४७१।

भुलाऊ—क्रि. स. [हिं. भूलना] **भुला दी, विस्मरण कर दी।** उ.—सप्त रसातल सेषासन रहे तब की सुरति भुलाऊ—१०-२२१।

भुलाए—क्रि. अ. [हिं. भूलना] **भूल गये, विस्मृत हो गये।** उ.—सुरसरी-सुवन रनभूमि आए। बान-बरषा लगे करन अति क्रुद्ध ह्वै, पार्थ-अवसान तब सब भुलाए—१-२७१।

भुलाना—क्रि. स. [हिं. भूलना] **(१) भ्रम या धोखे में डालना। (२) भूलना, विस्मृत करना।**

क्रि. अ.—**(१) भ्रम या धोखे में पड़ना। (२) भटकना, राह भूलना। (३) बिसरना, भूल जाना।**

भुलानीं—क्रि. अ. [हिं. भूलना] **भूल गयीं।**

भुलानी—क्रि. अ. [हिं. भूलना] **भूल गयी, विस्मरण हो गयी, बिसर गयी।** उ.—(क) चिंता कीन्हैं भूख भुलानी नींद फिरति उचटी—१-९८। (ख) सुरपति-पूजा तुमहि भुलानी—१००१।

भुलाने—क्रि. अ. [हिं. भुलाना] **भटक गये हो, राह भूल गये हो।** उ.—स्याम तुमहिं ह्याँ को नहिं पठए तुम हौ बीच भुलाने—३००६।

भुलानो, भुलानौ—क्रि. अ. [हिं. भूलना] **(१) भ्रम में पड़ा।** उ.—सुत-बित-बनिता प्रीति लगाई, झूठे भरम भुलानौ—१-३२९। **(२) भूल गया। (३) सुधि न रही, होश में न रहा, घबरा गया।** उ.—कमल सकटनि भरे व्याल मानौ। स्याम के बचन सुनि, मनहिं मन रह्यौ गुनि, काठ ज्यौं गयौ घुनि, तनु भुलानौ—५९०।

भुलान्यो, भुलान्यौ—क्रि. स. [हिं. भूलना] (१) **भूल गया, विस्मृत कर दिया**। उ.—सुर-नर-मुनि मोहित सब कीन्हे सिवहिं समाधि भुलान्यो—१८५७।(२) (मार्ग) **भुला दिया, (राह) भूल गया**। उ.—कब धौं गयो संग हरि के वह कीधौं पंथ भुलान्यौ—१४७१।

भुलायौ—क्रि. अ. [हिं. भूलना] **भ्रम में पड़ गया**। उ.—अपनपौ आपुन ही मैं पायौ........। ज्यौं कुरंग-नाभी कस्तूरी, ढूँढ़त फिरत भुलायौ—४-१३।

भुलावत—क्रि. स. [हिं. भूलना] **भूल जाता है, विस्मृत हो जाता है**। उ.—बृन्दाबन मोकौं अति भावत।.......। कामधेनु, सुरतरु सुख जितने, रमा सहित बैकुंठ भुलावत—४४९।

भुलावा—संज्ञा पुं. [हिं. भूलना] **छल, धोखा**।

भुलावै—क्रि. अ. [हिं. भूलना] **भ्रम में पड़ जाता है**। उ.—(क) जीव कर्म करि बहु तन पावै। अज्ञानी तिहिं देखि भुलावै—५-४। (ख) सूरदास प्रभु देखि-देखि सुर-नर-मुनि-बुद्धि भुलावै—१०-१२६।

भुलाहि—क्रि. अ. [हिं. भूलना] **भटक जाय, राह भूल जाय**। उ.—सूर स्याम को जसुमति टेरति बहुत भीर है हरि न भुलाहि—९१९।

भुलाहीं—क्रि. अ. [हिं. भूलना] **भ्रम में पड़ जाती हैं**। उ.—जब हरि मुरली अधर धरत।........।खग मोहैं मृग-जूथ भुलाहीं, निरखि मदन-छबि धरत—६२०।

भुलाहु—क्रि. अ. [हिं. भूलना] **भटक जाओ, राह भूल जाओ**। उ.—सघन बृन्दाबन अगम अति, जाइ कहुँ न भुलाहु—६१०।

भुवंग—संज्ञा पुं. [सं. भुजंग, प्रा. भुअंग] **साँप**। उ.—खाइ न सकै खरचि नहिं जानै ज्यौं भुवंग सिर रहत मनी—१-३९।

भुवंगम—संज्ञा पुं. [सं. भुजंगम्] **साँप**। उ.—(क) गइ मुरछाइ, परी धरनी पर, मनौ भुवंगम खाई—१०-५२। (ख) ज्यों केंचुरी भुवंगम त्यागत मात-पिता यों त्यागे—पृ० ३३९ (८९)। (ग) माई री मोहिं डस्यौ भुवंगम कारो।

भुवंगिनि, भुवंगिनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. भुजंगिनी] **साँपिनी**। उ.—नैन मीन भुवंगिनी भुअ नासिका थल बीच—१३५१।

भुवः—संज्ञा पुं. [सं.] **भूमि और सूर्य के बीच का लोक, अंतरिक्ष लोक**।

भुव—संज्ञा पुं. [सं.] **आग, अग्नि**।

संज्ञा स्त्री. [सं. भू, भूमि] **भूमि, पृथ्वी**। उ.—कंपै भुव बर्षा नहिं होहि—१-२८६।

संज्ञा स्त्री. [सं. भ्रू] **भौंह, भ्रू**।

भुवन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **जगत**। उ.—तुम हर्ता तुम कर्ता एकै, तुम हौ अखिल भुवन के साँई—२५५८। (२) **लोक**। उ.—भुवन चौदह खुरनि खूँदति सुधौं कहा समाइ—१-५६। (३) **चौदह की संख्या का द्योतक शब्द**।

भुवनकोश—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **भूमंडल**। (२) **ब्रह्मांड**।

भुवनायक—संज्ञा पुं. [सं.] **संसार के स्वामी**। उ.—येई हैं श्रीपति भुवनायक येई हैं कर्ता संसार—४९७।

भुवनिया—संज्ञा पुं. [सं. भुवन] **भुवन, लोक**। उ.—जो रस नंद-जसोदा बिलसत, सो नहिं तिहूँ भुवनिया—१०-२३८।

भुवपाल—संज्ञा पुं. [सं. भूपाल] **राजा**।

भुवा—संज्ञा पुं. [हिं. घूआ] **रुई**।

भुवार, भुवाल, भुवाला—संज्ञा पुं. [सं. भूपाल, प्रा. भुआल, हिं. भुआल] **राजा**। उ.—(क) रावन पै लै गए सकल मिलि, ज्यौं लुब्धक पसु जाल। करुवौ बचन स्रवन सुनि मेरौ, अति रिस गही भुवाल—९-१०४। (ख) कालिंदी कै कूल बसत इक मधुपुरि नगर रसाला। कालनेमि अरु उग्रसेन-कुल उपज्यौ कंस भुवाला—१०-४।

भुवि—संज्ञा स्त्री. [सं. भूमि] **भूमि, पृथ्वी**। उ.—रवि-बंसी भयौ रैवत राजा। ता सम जग दुतिया न बिराजा। ता गृह जन्म रैवती लयौ। ताकौं लै सो ब्रह्मपुर गयौ।........। ब्याह-जोग अब साँई आहि। रैवत ब्याह कियौ भुवि आइ। आप कियौ तप बन मैं जाइ—९-४।

भुशुंडी—संज्ञा पुं. [सं.] **काकभुशुंडि**।

संज्ञा स्त्री. [सं.] **एक प्राचीन अस्त्र**।

भुस—संज्ञा पुं. [सं. बुस] भूसा। उ.—टूटे कंधरु फूटी नाकनि, कौ लौं धौं भुस खैहौ—१-३३१।

मुहा०—भुस पर की (सी) भीत—शीघ्र नष्ट हो जानेवाली वस्तु, अस्थायी और अविश्वसनीय बात। उ.—(क) तुम्हरी बोलनि कौन पतीजै ज्यौं भुस पर की भीति—३१६३। (ख) बिनु गोबिंद सकल सुख सुन्दरि भुस पर की सी भीत—१० उ०-७५। कह्यौ पवन को भुस भयौ—बात तत्काल उड़ गयी, किसी ने बात पर ध्यान ही नहीं दिया। उ.—मेरौ कह्यौ पवन को भुस भयौ गावत नंदकुमार—३४८४। भुस फटकै—व्यर्थ के कार्य में श्रम नष्ट करे, निरर्थक कार्य में शक्ति लगावे। उ.—सूर स्याम तजि को भुस फटकै मधुप तुम्हारे हेति—३२५६।

भुसी—संज्ञा स्त्री. [हिं. भूसा] भूसी।

भुसुंडी—संज्ञा पुं. [सं. भुशुंडि] काकभुशुंडि।

भूँकना, भूँकनो—क्रि. अ. [अनु.] (१) 'भौं-भौं' करना। (२) कुत्ते का बोलना। (३) व्यर्थ बकना।

भूँख—संज्ञा स्त्री. [हिं. भूख] भूख। उ.—भोजन किये बिनु भूँख क्यौं भाजै बिन खाए तब स्वाध—२७७८।

भूँखा—वि. [हिं. भूखा] भूखा।

भूँजना, भूँजनो—क्रि. स. [हिं. भूनना] (१) आग या ताप से पकाना। (२) गरम बालू से पकाना। (३) तलना। (४) दुख देना।

क्रि. स. [सं. भोगना] भोग करना।

भूँजब—क्रि. स. [हिं. भूँजना] भोगेंगे, भोग करेंगे। उ.—ऊँचे चढ़ि दसरथ लोचन भरि सुत-मुख देखे लेत। रामचन्द्र से पुत्र बिना मैं भूँजब क्यौं यह खेत—९-३९।

भूँजा—संज्ञा पुं. [हिं. भूनना] भुना हुआ अन्न।

भूँसना, भूँसनो—क्रि. अ. [हिं. भूकना] भौं भौं करना, भूँकना।

भू—संज्ञा स्त्री. [सं] (१) पृथ्वी। उ.—(क) संकर कौ मन हर्यौ कामिनी, सेज छाँड़ि भू सोयौ—१-४३। (ख) भू-भर-हरन प्रगट तुम भूतल गावत संत-समाज—१-२१५। (२) स्थान।

संज्ञा स्त्री. [सं. भ्रू] भौंह। उ.—कीर नासा इंद्र धनु भू भँवर सी अलकावली।

भूकंप—संज्ञा पुं. [सं.] भूचाल, भूडोल।

भूक—संज्ञा स्त्री. [हिं. भूख] भूख।

भूकना, भूकनो—क्रि. अ. [हिं. भूँकना] भौं-भौं करना, भूँकना।

भूकि—क्रि. अ. [हिं. भूँकना] कुत्ते का भौं भौं शब्द करना। उ.—अपुनपौ आपुन ही बिसर्यौ। जैसैं स्वान काँच-मंदिर मैं, भ्रमि-भ्रमि भूकि मरचौ—२-२६।

भूख—संज्ञा स्त्री. [सं. बुभुक्षा] (१) खाने की इच्छा, क्षुधा। उ.—(क) चिंता कोउ भूख भुलानी—१-९८। (ख) अति प्रचंड पौरुष बल पाऐं केहरि भूख मरै—१-१०५।

मुहा०—भूख मरना—खाने की इच्छा न रह जाना। भूख लगना—खाने की इच्छा होना। भूख से (भूखों) मरना—भोजन न मिलने से कष्ट उठाना या मरना।

(२)—आवश्यकता। (३) समाई। (४) कामना।

भूखण, भूखन—संज्ञा पुं. [सं. भूषण] अलंकार, आभूषण।

भूखना, भूखनो—क्रि. स. [सं. भूषण] सजाना, अलंकृत करना।

भूखर—संज्ञा स्त्री. [हिं. भूख] (१) भूख। (२) इच्छा।

भूखा—वि. [हिं. भूख] जिसे भूख लगी हो। उ.—मचला अकलैमूल, पातर, खाउँ खाउँ करै भूखा—१-१८६।

मुहा०—भूखा रहना—उपवास करना। भूखा-प्यासा—बिना खाये-पिये।

(२) इच्छुक, चाहनेवाला। (३) दरिद्र।

भूखे—वि. [हिं. भूखा] जिसे भूख लगी हो। उ.—भूखे छिन न रहत मन मोहन—१०-२३१।

भूगर्भ—संज्ञा पुं. [सं.] पृथ्वी का भीतरी भाग।

भूगोल—संज्ञा पुं. [सं.] वह शास्त्र जिससे पृथ्वी की प्राकृतिक बातों का ज्ञान होता है।

भूचर—संज्ञा पुं. [सं.] पृथ्वी पर रहनेवाले प्राणी।

भूचरी—संज्ञा स्त्री. [सं.] समाधि की एक मुद्रा।

भूचाल—संज्ञा पुं. [सं. भू+हिं. चलना] भूकंप, भूडोल।

भूड़—संज्ञा स्त्री. [देश.] बलुई भूमि।

भूडोल—संज्ञा पुं. [सं. भू + हिं. डोलना] भूकंप, भूचाल।

भूण—संज्ञा पुं. [सं. भ्रमण] (१) जल-यात्रा (२) जल-विहार ।

भूत—संज्ञा पुं. [सं.] (१) सृष्टि-रचना के मूल उपकरण जो पाँच माने गये हैं—पृथ्वी, वायु, जल, अग्नि और आकाश। (२) जड़ या चेतन प्राणी, जीव।

यौ०—भूत-दया—प्राणीमात्र के प्रति दया।

(३) बीता हुआ समय। (४) क्रिया का वह रूप जो व्यापार की समाप्ति का सूचक हो। (५) मृत शरीर। (६) मृत प्राणी की आत्मा। (७) प्रेत। (८) वे पिशाच या दैत्य जो रुद्र के अनुचर तथा अत्यन्त कुरूप और क्रूर माने जाते हैं। उ.—संकर प्रगट भए भृकुटी तें, करी सृष्टि निर्मान। भूत-प्रेत बैताल रचे बहु बौरे बिधि की खान—सारा. ६५।

मुहा०—(किसी बात का)भूत उतरना—(इस बात के लिए) जरा भी उत्साह न रह जाना। (किसी बात का) भूत चढ़ना (सवार होना)—(किसी बात के लिए) जी-जान से जुट जाना। भूत चढ़ना (सवार होना)—बहुत क्रोध होना। भूत उतरना—(१) क्रोध शांत होना। (२) उत्साह शेष न रहना। भूत बनना—(१) बहुत क्रुद्ध होना। (२) बहुत आवेश में होना। भूत बनकर लगना (पीछे पड़ना)—किसी तरह पीछा न छोड़ना। भूत का पकवान (की मिठाई)—(१) ऐसी चीज जिसका अस्तित्व न हो पर जो भ्रम से सच्ची प्रतीत हो। (२) सहज ही मिला हुआ धन या ऐश्वर्य जो अनायास नष्ट भी हो जाय।

वि.—(१) बीता हुआ, गत। (२) मिला हुआ, युक्त। (३) समान। (४) जो हो चुका हो।

भू-तनया—संज्ञा स्त्री. [सं.] सीता, जानकी।

भूतना—संज्ञा पुं. [सं. भूत] भूत, प्रेत।

भूतनाथ—संज्ञा पुं. [सं.] रुद्र, शिव।

भूतनायिका—संज्ञा स्त्री. [सं.] दुर्गा।

भूतपूर्व—वि. [सं.] वर्तमान से पूर्व का।

भूतभावन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) शिव। (२) विष्णु।

भूतराज—संज्ञा पुं. [सं.] रुद्र, शिव।

भूतल—संज्ञा पुं. [सं.] (१) धरातल। (२) संसार, जगत। उ.—भक्त-बत्सल कृपानाथ असरन-सरन, भार-भूतल-हरन, जस सुहायौ—१-११९।

भूतलराइ, भूतलराई, भूतलराउ, भूतलराऊ—संज्ञा पुं. [सं. भूतल+राजा] पृथ्वीपति, भूपाल। उ.—मतौ यह पूछत भूतलराइ—१-२६९।

भूतविद्या—संज्ञा स्त्री. [सं.] वह विद्या जिससे प्रेत, पिशाच, कुग्रह आदि जनित मानसिक रोगों का निदान हो।

भूति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) धन-संपति। (२) भस्म, राख। (३) उत्पत्ति। (४) वृद्धि। (५) लक्ष्मी।

भूतिनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. भूत] (१) भूत की स्त्री। (२) पिशाचिनी।

भूदेव, भूदेवता—संज्ञा स्त्री. [सं.] ब्राह्मण।

भूधर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) पहाड़। (२) शेषनाग।

भून—संज्ञा पुं. [सं. भ्रूण] गर्भ का बालक।

भूनना, भूननो—क्रि. स. [सं. भर्जन] (१) आग में डालकर पकाना। (२) गरम बालू से पकाना। (३) घी-तेल में तलना। (४) कष्ट देना।

भूप—संज्ञा पुं. [सं.] (१) राजा, भूपति। (२) स्वामी। उ.—सेमर-फूल सुरँग अति निरखत मुदित होत खग-भूप—१-१०२।

भूपति—संज्ञा पुं. [सं.] राजा, भूपाल।

भूपाल—संज्ञा पुं. [सं.] राजा। उ.—कहन लगे सब सूर-प्रभु सौं होहु इहाँ भूपाल—२५७१।

भूपाली—संज्ञा स्त्री. [सं.] एक रागिनी।

भूपुत्र—संज्ञा पुं. [सं.] मंगल ग्रह।

भूपुत्री—संज्ञा स्त्री. [सं.] जानकी, सीता।

भूभुल, भूभुरि—संज्ञा स्त्री. [सं. भू+भुर्ज] गर्म राख या रेत।

भूभृत्—संज्ञा पुं. [सं.] (१) राजा। उ.—करुनामय जब चाप लियौ कर, बाँधि सुदृढ़ कटि-चीर। भूभृत सीस नमित जो गर्वगत, पावक सींच्यौ नीर-९-२६। (२) पहाड़, पर्वत।

भूमंडल—संज्ञा पुं. [सं.] पृथ्वी।

भूमि—संज्ञा पुं. [सं.] (१) पृथ्वी।

मुहा०—भूमि होना—पृथ्वी पर गिरना।

यौ—भूमि-भँडार—धन-धाम। उ.—तिन हारचौ सब भूमि-भँडार—१-२४६।

(२) स्थान। (३) जड़, आधार। (४) प्रदेश।

भूमिका—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) रचना। (२) प्रस्तावना।

संज्ञा स्त्री. [सं. भूमि] पृथ्वी, भूमि।

भूमिज—वि. [सं.] भूमि या पृथ्वी से उत्पन्न।

भूमिजीवी—संज्ञा पुं. [सं. भूमिजीविन्] खेतिहर, कृषक।

भूयसी—वि. [सं.] बहुत अधिक।

क्रि. वि.—बार-बार।

भूर—वि. [सं. भूरि] बहुत, अधिक।

संज्ञा पुं. [हिं. भुरभुरा] बालू, रेत।

भूरज—संज्ञा स्त्री. [सं. भू+रज] धूल, मिट्टी।

संज्ञा पुं. [सं. भूर्ज] भोजपत्र का पेड़।

भूरजपत्र—संज्ञा पुं. [सं. भूर्जपत्र] भोजपत्र।

भूरा—वि. [सं. वभ्रु] मटमैले या धूमिल रंग का।

भूरि—वि. [सं.] (१) अधिक, बहुत। (२) बड़ा।

भूरिदा—वि. [सं.] बहुत बड़ा दानी।

भूरिश्रव, भूरिश्रवा—संज्ञा पुं. [सं. भूरिश्रवस्, हिं. भूरिश्रवा] वाल्हीक का चंद्रवंशी राजा जो सोमदत्त का पुत्र था। महाभारत के युद्ध में यह दुर्योधन की ओर से लड़ा और अर्जुन द्वारा मारा गया था। उ.—इत भगदत्त द्रोन भूरिश्रव तुम सेनापति धीर—१-२६९।

भूरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. भूरा] भूरे रंग की गाय। उ.—पियरी, भौरी, गोरी, गैनी, खैरी, कजरी जेती। दुलही, फुलही, भौंरी, भूरी, हाँकि ठिकाई तेती—४५५।

वि. स्त्री.—भूरे रंग की।

भूरुह—संज्ञा पुं. [सं.] वृक्ष, पेड़।

भूर्ज—संज्ञा पुं. [सं.] भोजपत्र का वृक्ष।

भूर्जपत्र—संज्ञा पुं. [सं.] भोजपत्र।

भूल—संज्ञा स्त्री. [हिं. भूलना] (१) भूलने का भाव। (२) गल्ती, चूक।

मुहा०—भूल के कोई काम करना—अनजान या धोखे में कोई काम करना। भूल के (भी) कोई काम न करना—वह काम कदापि न करना, उस काम को न करने का पक्का निश्चय कर लेना।

(३) दोष, अपराध। (४) अशुद्धि।

भूलक—संज्ञा पुं. [हिं. भूल] भूल करनेवाला।

भूलना, भूलनो—क्रि. स. [सं. विह्वल] (१) ध्यान या याद न रखना। (२) गलती करना। (३) खो देना।

क्रि. अ.—(१) याद न रहना। (२) चूकना, गलती होना। (३) धोखे में आ जाना। (४) आसक्त हो जाना। (५) इतराने लगना। (६) खो जाना।

वि.—जिसे स्मरण न रहता हो।

भूलभुलैयाँ—संज्ञा स्त्री. [हिं. भूल+भूलना] (१) वह भवन जिसमें एक ही जैसे अनेक द्वारों के कारण मार्ग भूल जाय। (२) चक्करदार और पेचीदी बात।

भूलि—क्रि. अ. [हिं. भूलना] भूलकर।

प्र०—भूलि रहे—धोखे में पड़ गये। उ.—भूलि रहे अति चतुर चितै चित कौन सत्य कछु मर्म न पावत—१० उ.-५।

मुहा०—भूलि करौ नहिं ऐसे काम—कदापि वैसा काम न करना। उ.—अब पर घर की सौंह करत है भूलि करौ नहिं ऐसे काम—२०२३।

भूलिहु—क्रि. वि. [हिं. भूलना+हु] भूलकर भी, कदापि। उ.—(क) तू जननी अब दुख जनि मानहिं। रामचंद्र नहिं दूरि कहूँ, पुनि भूलिहु चित चिंता नहिं आनहिं—९-९५। (ख) भूलिहु जिनि आवहिं इहि गोकुल तपत तरनि सम चंद।

भूलीं—क्रि अ. [हिं. भूलना] आसक्त हो गयीं, मुग्ध हो गयी। उ.—गोपी तजि लाज, सँग स्याम-रंग भूलीं—६४२।

भूलै—क्रि. स. [हिं. भूलना] भूल जाय, ध्यान न रखे, पता न पावे, विस्मरण कर दे। उ.—ज्यौं मृगा कस्तूरि भूलै, सु तौ ताके पास—१-७०।

भूलोई—क्रि. वि. [हिं. भूला+ई] भूला हुआ ही, भ्रम में पड़ा। उ.—तुम बिनु भूलोइ भूलौ डोलत—१-१७७।

भूलोक—संज्ञा पुं. [सं.] संसार।

भूलौ—वि. [हिं. भूलना] भूला हुआ, भ्रम में पड़ा हुआ। उ.—तुम बिनु भूलोइ भूलौ डोलत—१-१७७।

भूल्यौ—क्रि. अ. [हिं. भूलना] (१) याद न रहा, विस्मृत हुआ, ध्यान न रहा। उ.—भूल्यौ भ्रम्यौ

तृषातुर मृग लौं, काहूँ स्रम न गँवायौ—१-२०१। (२) भ्रम में पड़ गया, धोखे में आ गया। उ.—(क) अब हौं माया-हाथ बिकानौ। ""। हिंसा-मद-ममता रस भूल्यौ, आसा हीं लपटान्यौ—१-४७। (ख) दीन जन क्यौं करि आवै सरन ? भूल्यौ फिरत सकल जल-थल-मग, सुनहु न ताप-भय-हरन—१-४८।

भूवा—संज्ञा पुं. [हिं. घूआ] रुई।

वि.—रुई जैसा उजला या सफेद।

संज्ञा स्त्री. [हिं. बुआ] पिता की बहन।

भूशय्या—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) पृथ्वी रूपी सेज। (२) भूमि पर सोना।

भूशायी—वि. [सं. भूशायिन्] (१) पृथ्वी पर सोनेवाला। (२) मृतक।

भूषण, भूषन—संज्ञा पुं. [सं. भूषण] (१) अलंकार। (२) शोभा बढ़ानेवाली वस्तु या व्यक्ति।

भूषणता, भूषनता—संज्ञा स्त्री. [सं.] भूषण का भाव या धर्म।

भूषना, भूषनो—क्रि. स. [सं. भूषण] भूषित करना।

भूषा—संज्ञा पुं. [सं. भूषण] (१) गहना। (२) सजाने की क्रिया।

भूषित—वि. [सं.] (१) सजा-सजाया। (२) अलंकृत।

भूष्य—वि. [सं.] सजाने योग्य।

भूसन—संज्ञा पुं. [सं. भूषण] अलंकार, आभूषण।

संज्ञा पुं. [हिं. भूँकना] भूँकने या बकने का भाव।

भूसना, भूसनो-क्रि. अ. [हिं. भूँकना] (१) भूँकना, 'भों-भों' करना। (२) बकना।

भूसा—संज्ञा पुं. [सं. तुष] (१) भुस। (२) भूसी।

भूसी—संज्ञा स्त्री. [हिं. भूसा] अनाज का छिलका।

भूसुर—संज्ञा पुं. [सं.] पृथ्वी के देवता, ब्राह्मण।

भूहर—संज्ञा पुं. [हिं. भू+सं. गृह] तहखाना।

भृंग—संज्ञा पुं. [सं.] (१) भौंरा। (२) 'बिलनी' (कीड़ा) जो दूसरे कीड़ों के ढोले को पकड़ कर इस तरह 'भिनभिन' करता है कि वह भी उसी की तरह हो जाता है।

भृंगी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) भौंरी, भ्रमरी। उ.—(क) कहूँ ठौर नहिं चरन-कमल बिनु, भृंगी ज्यौं दसहूँ दिसि धावै—१-२३३। (ख) भृंगी री, भजि स्याम-कमल-पद, जहाँ न निसि कौ त्रास—१-३३९। (२) 'बिलनी' कीड़ा जो दूसरे कीड़ों को भी अपना जैसा बना लेता है।

भृकुटि, भृकुटी—संज्ञा स्त्री. [सं. भृकुटी] भौंह। उ.—भृकुटी कुटिल, अरुन अति लोचन, अगिनि-सिखा-मुख कह्यौ फिराई—९-५६। (ख) भृकुटि पर मसि-बिंदु सोहै सकै सूर न गाइ—१२०-२५।

भृगु—संज्ञा पुं. [सं.] (१) एक प्रसिद्ध मुनि जो शिव जी के पुत्र माने जाते हैं और जिनके वंश में परशुराम जन्मे थे। प्रसिद्धि है कि इन्होंने विष्णु की छाती में, उनकी सहनशीलता की परीक्षा के उद्देश्य से, लात मारी थी। विष्णु के सब अवतारों की छाती पर इस चिह्न का बना रहना माना गया है। (२) जमदग्नि। (३) परशुराम। (४) शुक्राचार्य।

भृगुनंद, भृगुनंदन—संज्ञा पुं. [सं.] परशुराम।

भृगुपति—संज्ञा पुं. [सं.] परशुराम। उ.—जिन रघुनाथ फेरि भृगुपति-गति डारी काटि तहीं—९-९१।

भृगुरेखा—संज्ञा स्त्री. [सं.] विष्णु की छाती पर भृगु की लात का चिह्न। उ.—(क) माथे मुकुट सुभग पीतांबर उर साभित भृगु-रेखा हो। (ख) तट भुजदड भौंर भृगुरेखा चंदन चित्रिच रंगत सुंदर।

भृगुलता—संज्ञा स्त्री. [सं.] भृगु मुनि का चरण-चिह्न जो विष्णु की छाती पर है। उ.—उर अरु ग्रीव बहुरि हिय धारै। तापर कौस्तुभ मनिहिं बिचारै। तहँ भृगु-लता, लच्छमी जान। नाभि कमल चित धारै ध्यान—३-१३।

भृगुवार—संज्ञा पुं. [सं.] शुक्रवार।

भृत—संज्ञा पुं. [सं.] भृत्य, दास, सेवक। उ.—जोइ भावै सोइ करहु तुम, लता सिला, द्रुम, गेहु। ग्वाल गाइ कौ भृत करौ, मानि सत्य ब्रत एहु—४९२।

वि. [सं.] (१) भरा-पूरा। (२) पोषित।

भृति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) नौकरी। (२) वेतन। (३) मूल्य। (४) पालन करना। उ.—वै पथ बिकल चकित अति आतुर भर्मत हेतु दियौ। भृति बिलबि पृष्टि दै स्यामा स्यामै स्याम बियौ—३४७४।

भृतु—संज्ञा पुं. [सं. भृत्य] **दास, सेवक**। उ.—तब पहिचानि जानि प्रभु की भृतु परम सुचित मन कीन्हौं—२९७१।

भृत्य—संज्ञा पुं. [सं.] **सेवक, दास**। उ.—मंत्री-भृत्य-सखा मो सेवक यातैं कहत सुजान—सारा. ५४६।

भृश—क्रि. वि. [सं.] **बहुत अधिक**।

भेंगा—वि. [हिं. भिंगा] **जिसकी आँखों की पुतलियाँ टेढ़ी-तिरछी रहती हों**।

भेंट—संज्ञा स्त्री. [हिं. भेंटना] (१) **उपहार, उपायन**। उ.—(क) चारि पदारथ दिए, सुदामा तंदुल भेंट धरचौ—१-१३३। (ख) ते सब पतित पायँ-तर डारौं, यहै हमारी भेंट—१-१४६। (२) **मिलना, साक्षात्कार**। उ.—(क) अब लगि प्रभु तुम बिरद बुलाए, भई न मासौं भेंट। तजौ बिरद कै मोहिं उधारौ, सूर कहै कसि फेंट—१-१४५। (ख) नृपति के रजक सौं भेंट मग मैं भई, कह्यौ, दै बसन हम पहिरि जाहीं—२५८४।

भेंटइ—क्रि. स. [हिं. भेंटना] **गले या छाती से लगाता है**। उ.—धाइ धाइ द्रुम भेंटइ ऊधौ छाके प्रेम—३४४३।

भेंटत—क्रि. वि. [हिं. भेंटना] **भेंटते समय, भेंटने पर**। उ.—भेंटत आँसू परे पीठि पर, बिरह-अगिनि मनु जरत बुझाए—९-१६८।

क्रि. स.—**भेंट करते हैं, चढ़ाते हैं**। उ.—नंद करत पूजा, हरि देखत। घंट बजाइ देव अन्हवायौ, दल-चंदन लै भेंटत—१०-२६१।

भेंटन—संज्ञा पुं. [हिं. भेंट] **मिलने, मुलाकात करने**। उ.—(क) भारतादि दुरजोधन, अर्जुन, भेंटन गए द्वारिकापुरी—१-२६८। (ख) जुवतिन सबै कामबपु भेंटन कूँ ललचाय—सारा. ५१५।

भेंटना, भेंटनो—क्रि. अ. [हिं. भिड़ना] **मिलना, साक्षात्कार करना**।

क्रि. स.—**गले या छाती से लगाना**।

क्रि. स. [हिं. भेंट] **भेंट देना**।

भेंटिबौं, भेंटिबौ—क्रि. स. [हिं. भेंटना] **गले या छाती से लगाना**। उ.—श्रीदामा आदि सकल ग्वालनि को मेरे हित भेंटिबौं—२९४२।

भेंटी—क्रि. स. [हिं. भेंटना] **गले या छाती से लगाया**। उ.—(क) किशोरी अँग अँग भेंटी स्यामहिं—१७०१। (ख) रुकमिनि राधा ऐसैं भेंटी। जैसैं बहुत दिननि की बिछुरी एक बाप की बेटी—४२९१।

भेंटे—क्रि. स. [हिं. भेंटना] **भेंट की, गले या छाती से लगाया, मिले**। उ.—जथाजोग भेंटे पुरबासी, गए सूल, सुख-सिंधु नहाए—९-१६८।

भेंटौंगी, भेंटौंगी—क्रि. स. [हिं. भेंटना] **गले या छाती से लगाऊँगी**। उ.—सूर स्याम ज्यों उछँगि लई मोहिं यों मैं हूँ हँसि भेंटौंगी—पृ० ३५२ (७९)।

भेंटौंगो, भेंटौंगो—क्रि. स. [हिं. भेंटना] **गले या छाती से लगाऊँगा**। उ.—मनो इन सकुल अबहीं यहि बन इन भुज भरि भेंटौंगो गोपालहिं—२४८३।

भेंवना, भेंवनो—क्रि. स. [हिं. भिगोना] **तर करना**।

भेइ—क्रि. स. [हिं. भेवन] **भिगोई, तर की, मग्न की**। उ.—ते बेली कैसैं दहियत हैं जे अपनैं रस भेइ—१-२००।

भेउ—संज्ञा पुं. [सं. भेद] **भेद, मर्म, रहस्य**।

भेक—संज्ञा पुं. [हिं. मेढक] **मेढक**।

भेख—संज्ञा पुं. [सं. भेष] (१) **पहनने के वस्त्र**। (२) **पहनने का ढंग**।

भेखज—संज्ञा पुं. [सं. भेषज] **दवा, औषधि**।

भेज—संज्ञा स्त्री. [हिं. भेजना] **भेजने की वस्तु**।

भेजना, भेजनो—क्रि. स. [सं. व्रजन्] **किसी वस्तु या व्यक्ति के जाने का आयोजन करना, रवाना करना**।

भेजा—संज्ञा पुं. [?] **सिर के भीतर का गूदा, मगज**।

मुहा०—भेजा खाना—**बकबक से तंग करना**।

भेज्यौ—क्रि. स. [हिं. भेजना] **भेजा, एक स्थान से दूसरे तक जाने को प्रेरित किया**। उ.—रिषि सिष्यहिं भेज्यौ समुझाइ। नृप सौं कहि तू ऐसी जाइ—१-२९०।

भेड़—संज्ञा स्त्री. [सं. मेष] **एक प्रसिद्ध चौपाया, गाडर**।

वि.—(१) **बहुत सीधा**। (२) **बहुत मूर्ख**।

भेड़ा—संज्ञा पुं. [हिं. भेड़] **नर भेड़, मेढा**।

भेड़िया—संज्ञा पुं. [हिं. भेड़] **एक मांसाहारी चौपाया**।

भेड़ी—संज्ञा स्त्री. [हिं. भेड़] **भेड़**।

भेद—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **भेदने-छेदने की क्रिया।** (२) **विरोधी पक्ष में परस्पर द्वेष उत्पन्न करना।** (३) **रहस्य।** उ.—(क) अपुनपौ आपुनहीं मैं पायौ। सब्दहिं सब्द भयौ उजियारौ, सतगुरु भेद बतायौ—४-१३। (ख) मन इनसौं मिलि भेद बतायौ बिरह फाँस गरे डारी—पृ. ३२६ (५७)। (ग) घर को भेद और के आगे क्यौं कहिबे कौं जाहीं—१९००। (घ) कहा मन मैं घालि बैठी भेद मैं नहिं लखि सकी—२२५९। (४) **अता-पता, खोज।** उ०—छाक लिए सिर स्याम बुलावति। ढूँढ़त फिरति ग्वारिनी हरि कौं, कितहूँ भेद न पावति—४५९। (५) **तात्पर्य।** (६) **अंतर, फर्क।** उ.—(क) बग-बगुली अरु गीध-गीधिनी आइ जनम लियौ तैसौ। उनहूँ कैं गृह सुत दारा हैं, उन्हें भेद कहु कैसौ—२-१४। (ख) भेद चकोर कियौ ताहू मैं बिधु प्रीतम रिपु भान—३३५७। (७) **प्रकार, किस्म।** उ.—इते पर हस्तकनि गति छबि नृत्य भेद अपार—पृ० ३५१ (७७)।

भेदक—वि. [सं.] **भेदने-छेदनेवाला।**

भेदन—संज्ञा पुं. [सं.] **भेदने-छेदने की क्रिया।**

भेदना, भेदनो—क्रि. स. [सं. भेदन] (१) **बेधना, छेदना।** (२) **मनोभाव जानने के लिए पैनी दृष्टि से देखना।**

भेदभाव—संज्ञा पुं. [सं.] **अंतर।**

भेदि—क्रि. अ. [हिं. भेदना] **छेदकर, भेदन करके, विदीर्ण करके।** उ.—धनि जननी जो सुभटहिं जावै।...। मरै तौ मंडल भेदि भानु कौ, सुरपुर जाइ बसावै—९-१५२।

भेदिआ, भेदिया—संज्ञा पुं. [हिं. भेद] (१) **भेद लेनेवाला।** उ.—भेदिआ सौं भेद कहिबो छेद सौं छाती परौ—३२६०। (२) **गुप्त रहस्य जाननेवाला।**

भेदी—संज्ञा पुं. [हिं. भेद] (१) **भेद लेनेवाला।** (२) **गुप्त रहस्य जाननेवाला।**

वि. [सं. भेदिन्] **भेदनेवाला।**

भेदीसार—संज्ञा पुं. [सं.] **बढ़ई का 'बरमा' जिससे काठ में छेद किया जाता है।**

भेद्य—वि. [सं.] **जो भेदा या छेदा जा सके।**

भेद्यौ—क्रि. स. [हिं. भेदना] **मनोभाव जानने के लिए तीव्र दृष्टि से देखा।** उ.—प्रभु जागे, अर्जुन-तन चितयौ। कब आये तुम, कुसल खरी। ता पाछैं दुर्योधन भेद्यौ, सिर-दिसि तैं मन गर्व धरी—१-२६८।

भैन, भैना—संज्ञा स्त्री. [हिं. बहिन] **बहिन।**

भैना, भैनो—क्रि. स. [हिं. भिगोना] **तर करना।**

भेर, भेरि, भेरी—संज्ञा स्त्री. [सं. भेरी] **बड़ा ढोल या नगाड़ा, दुंदुभी।** उ.—(क) घुरत निसान, मृदंग-संख धुनि, भेरि-झाँझ-सहनाइ—९-२९। (ख) **बाजन बाजैं** गहगहे, बाजैं मंदिर भेरि—१०-४०।

भेरीकार—संज्ञा पुं. [सं. भेरी+कार] **भेरी बजानेवाला।**

भेल—वि. [सं.] (१) **कायर, भीरु।** (२) **मूर्ख।**

भेला—संज्ञा पुं. [हिं. भेंट] (१) **भिड़ंत।** (२) **मुलाकात।**

संज्ञा पुं. [देश.] **(गुड़ का) बड़ा पिंड।**

भेली—संज्ञा स्त्री. [हिं. भेला (पुं.)] **गुड़ की पिंडी।** उ.—कान्ह कुँवर कौ कनछेदन है, हाथ सोहारी भेली गुर की—१०-१८०।

भेव—संज्ञा पुं. [सं. भेद] (१) **मर्म की बात, भेद, रहस्य।** उ.—जुग-जुग जनम, मरन अरु बिछुरन, सब समुझत मत-भेव। ज्यौं दिनकरहिं उलूक न मानत, परि आई यह टेव—१-१००। (२) **बारी, पारी।**

भेवना, भेवनो—क्रि. स. [हिं. भिगोना] **तर करना।**

भेश, भेष—संज्ञा पुं. [सं. वेश] **कपड़े, गहने आदि से अपने को सजाना।** उ.—अबिहित बाद-बिवाद सकल मत इन लगि भेष धरत—१-५५।

मुहा०—भेष बनायौ—**शरीर धारण किया, अवतार लिया।** उ.—नर तन सिंह बदन बपु कीन्हौ जन लगि भेष बनायौ—१-१९०।

भेषज—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **औषध, दवा।** उ.—**वहाँ** भेषज नाना बिधि को अरु मधुरिपु से हैं बैद—३०१३।

भेषति—क्रि. अ. [हिं. भेषना] **पहनती है।** उ.—अति सुगंध मर्दन अँग अँग ठनि बनि बनि भूषन भेषति—१५१६।

भेषना, भेषनो—क्रि. स. [हिं. भेष] (१) **स्वाँग बनाना।** (२) **पहनना।**

भेषा—संज्ञा पुं. [सं. वेश] **वेश, रूप।** उ.—संख-चक्र-गदा-पद्म बिराजत, अति प्रताप सिसु-भेषा—१०-४।

भेस—संज्ञा पुं. [सं. वेष] (१) रूप-रंग, पहनावा आदि। (२) बनावटी रूप-रंग और पहनावा।

भेसज—संज्ञा स्त्री. [सं. भेषज] औषध, दवा।

भेसना, भेसनो—क्रि. स. [सं. वेश, हिं. भेष] (१) वस्त्रादि पहनना। (२) स्वाँग बनाना।

भैंस—संज्ञा स्त्री. [सं. महिष] एक दुधारू चौपाया।

भसा—संज्ञा पुं. [हिं. भैंस] 'भैंस' का नर।

भैंसासुर—संज्ञा पुं. [सं. महिषासुर] एक दैत्य जो दुर्गा जी द्वारा मारा गया था।

भैंसौ—संज्ञा पुं. [हिं. भैंसा] भैंस का नर, भैंसा; यह यम का वाहन माना गया है। उ.—सूरदास भगवंत-भजन बिनु, मनौ ऊँट-बृष भैंसौ—२-१४।

भै—संज्ञा पुं. [सं. भय] भय, डर।

क्रि. अ. [हिं.] हुई, हुआ। उ.—कत हौ सीत सहति ब्रत-सुंदरि, ब्रज पूरन सब भै री—७८७।

भैचक, भैचक्क—वि. [हिं. भय+चक] भौचक्का, चकित।

भैजन—वि. [सं. भय+जनक] भय उत्पन्न करनेवाला।

भैजल—संज्ञा पुं. [सं. भव+जाल] संसार का बंधन।

भैदा—वि. [सं. भय+दा] भय पैदा करनेवाला।

भैन, भैना भैनि, भैनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. बहन] बहन, भगिनी। उ.—(क) भैनी मात-पिता बंधव गुरु गुरुजन यह कहैं मोसौं—१२२१। (ख) भैनी देखि देति मोहिं गारी काहें कुलहि लजावति—१५१६।

भैने—संज्ञा पुं. [सं. भागिनेय] बहन का पुत्र, भानजा।

भैया—संज्ञा पुं. [हिं. भाई] (१) भाई, भ्राता। उ.—मातु-पिता भैया मिले, (रे) नई रुचि नई पहिचानि—१-३२५। (२) आत्मीयता-सूचक संबोधन।

भैरव—वि. [सं.] (१) भयंकर। (२) भयानक शब्दवाला।

संज्ञा पुं.—(१) शंकर। (२) शिव के एक गण। (३) एक राग। (४) भयानक शब्द।

भैरवी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) एक देवी, चामुंडा। (२) एक रागिनी। (२) पार्वती।

भैरवीचक्र—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वे तान्त्रिक और वाममार्गी जो एक चक्र में बैठकर देवी का पूजन और मद्यपान करते हैं। (२) मद्यप और अनाचारी वर्ग।

भैरौं—संज्ञा पुं. [सं. भैरव] शंकर, रुद्र। उ.—परैं भहराइ भभकंत रिपु घाइ सौं, करि कवन रुधिर भैरौं अघाऊँ—९-१२९।

भैषज—संज्ञा स्त्री. [सं.] औषध, दवा।

भैहा—संज्ञा पुं. [हिं. भय+हा] (१) भयभीत। (२) जिस पर किसी भूत-प्रेत का आवेश आता हो।

भों—संज्ञा स्त्री. [अनु.] 'भों' का शब्द।

भोंकना, भोंकनो—क्रि. स. [अनु. भक] घुसेड़ना।

क्रि. अ. (१) 'भों' 'भों' करना। (२) कुत्ते का बोलना।

भोंड़ा—वि. [हिं. भद्दा] कुरूप। उ.—मूकू, निंद, निगोड़ा, भोंड़ा, कायर, काम बनावै—१-१८६।

भोंडापन—संज्ञा पुं. [हिं. भोंडा+पन] भद्दापन।

भोंतरा, भोंतला, भोंथरा, भोंथला—वि. [हिं. भुथरा] जिसकी धार तेज न हो, कुंद।

भोंदू—वि. [हिं. बुद्धू] मूर्ख, बेवकूफ। उ.—निर्घिन, नीच कुलज, दुर्बुद्धी, भोंदू, नित को रोऊ—१-१८६।

भोंपा, भोंपू—संज्ञा पुं. [अनु. भों+पू] एक बाजा।

भो—क्रि. अ. [हिं. भया] हुआ, भया।

संबोधन [सं.] हे, हो।

भोइ—क्रि. अ. [हिं. भीनना, भोना] (१) आसक्त या अनुरक्त होकर। उ.—(क) नागनि के काटैं बिष होइ। नारी चितवत नर रहै भोइ—९-२। (२) लीन या मग्न होकर। उ.—ज्यौं जिय रहै बिषय-रस भोइ—१० उ०-१२७।

भोए—वि. [हिं. भोना] लीन, निमग्न। उ.—लाल सौं रति मानी जानी कहे देत नैंना री रंग भोए—२११२।

भोकस, भोकसा—वि. [हिं. भूख] भूखा, भुक्खड़।

भोकता, भोक्ता—वि. [सं. भोक्ता] (१) भोग करनेवाला। उ.—तुम दाता अरु तुमहिं भोकता हरता-करता तुमहीं सार—९३६। (२) भोजन करनेवाला। (३) विषय-सुख भोगनेवाला।

भोग—संज्ञा पुं. [सं.] (१) पाप-पुण्य का फल जो सहा या भोगा जाता है, प्रारब्ध। उ.—अब कैसैं पैयत सुख माँगे। जैसोइ बोइयै तैसोइ लुनिऐ, कर्मन भोग अभागे—१-६१। (२) सुख-दुख का अनुभव। (३) सुख, बिलास। उ.—काग हंसहिं संग जैसो कहाँ सुख कहँ भोग—२९११। (४) स्त्री से संभोग। (५)

फल, अर्थ। (६) देवी-देवता को चढ़ाया जानेवाला खाद्य, नैवेद्य। उ.—(क) पट अंतर दै भोग लगायौ—१०-२६१। (ख) गिरि गोबर्धन देवन कौ मनि सेवहु ताकौ भोग चढ़ाई—९१३।

भोगना, भोगनो—क्रि. अ. [सं. भोग] (१) सुख-दुख का अनुभव करना, भुगतना। (२) सहन करना। (३) संभोग करना।

भोगलिप्सा—संज्ञा स्त्री. [सं.] लत, व्यसन।

भोगली—संज्ञा स्त्री. [देश.] (१) नाक की लौंग (गहना)। (२) कान का एक गहना।

भोगवना, भोगवनो—क्रि. अ. [हिं. भोगना] (१) भुगतना। (२) सहन करना। (३) संभोग करना।

भोगवै—क्रि. अ. [हिं. भोगवना] (१) सुख-दुख का अनुभव करे। (२) सुख भोगे। (३) सहन करे। (४) सहवास करे।

भोगवाना, भोगवानो—क्रि. स. [हिं. भोगना] भोगने को प्रवृत्त करना।

भोग-विलास—संज्ञा पुं. [सं.] आमोद-प्रमोद।

भोगाना, भोगानो—क्रि. स. [हिं. भोगना] भोगने को प्रवृत्त करना।

भोगिन, भोगिनि, भोगिनी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) उपपत्नी। (२) प्रेयसी।

भोगी—वि. [सं. भोगिन्] (१) सुखी। (२) इन्द्रियों का सुख भोगनेवाला। उ.—सूर स्याम ब्रज जुवतिनि भोगी—१८४५। (३) भुगतनेवाला। (४) विषयासक्त। (५) विलासी, आनंद करनेवाला। उ.—सूर स्याम आपुन ही भोगी—१०२५। (६) विषयी, भोगासक्त। उ.—भौंरा भोगी बन भ्रमै (रे) मोद न मानै ताप—१-३२५। (७) खानेवाला। उ.—(क) सो ब्रज मैं माखन कौ भोगी—५९९। (ख) सूर-स्याम मेरौ माखन-भोगी तुम आवति बेकाज—७७५।

भोगैं—संज्ञा पुं. सवि. [हिं. भोग] व्यंजनों को, खाद्यों को। उ.—नंद-भवन मैं कान्ह अरोगैं। जसुदा ल्यावैं षटरस भोगैं—३९६।

भोग्य—वि. [सं.] (१) जिसका भोग किया जाय। (२) जो भोगने योग्य हो। (३) खाद्य।

भोग्यभूमि—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) सुख-विलास का स्थान या प्रदेश। (२) मर्त्यलोक जहाँ पाप-पुण्य का फल दुख-सुख के रूप में भोगना होता है।

भोग्यमान—वि. [सं.] जो भोगने को शेष हो।

भोज—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीकृष्ण के एक ग्वाल सखा का नाम। उ.—अर्जुन, भोजऽरु, सुबल, सुदामा, मधुमंगल इक ताक—४६४।

संज्ञा पुं. [सं. भोजन] (१) दावत (२) खाद्य पदार्थ।

भोजक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) भोगनेवाला। (२) विलासी।

भोजन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) खाने की सामग्री। उ.—काग-सृगाल-स्वान कौ भोजन तू कहै मेरी मेरी—१-३४०। (२) खाना, भक्षण करना। उ.—करि भोजन अवसेस जज्ञ कौ त्रिभुवन-भूख हरी—१-१६।

भोजनभट्ट—संज्ञा पुं. [सं. भोजन+भट्ट] बहुत खानेवाला।

भोजनालय—संज्ञा पुं. [सं.] (१) पाकशाला। (२) स्थान जहाँ मूल्य देकर भोजन किया जाय।

भोजपत्र—संज्ञा पुं. [सं. भूर्जपत्र] एक वृक्ष जिसकी छाल प्राचीन काल में ग्रंथ-लेखन के काम में आती थी।

भोजी—वि. [सं. भोजिन्] खानेवाला या वाली।

भोज्य—वि. [सं.] खाने योग्य।

भोडर, भोडल—संज्ञा पुं. [देश.] (१) अबरक। (२) अबरक का चूर्ण जो होली में गुलाल के साथ उड़ाया जाता है।

भोथर, भोथरा—वि. [अनु.] कुंद धारवाला, गुट्ठल।

भोना, भोनो—क्रि. अ. [हिं. भीनना] (१) संचारित होना। (२) लिप्त, लीन या निमग्न होना। (३) आसक्त या अनुरक्त होना। (४) भीगना, तर होना।

क्रि. स.—(१) संचारित करना। (२) मिलाना। (३) आसक्त करना। (४) धोखे में डालना।

भोयौ, भोयौ—क्रि. अ. [हिं. भोना] लीन हुआ, लिप्त या निमग्न हुआ।

वि. [हिं. भीनना, भोना] लिप्त, लीन, युक्त, निमग्न। उ.—(क) भ्रम-भोयौ मन भयौ पखावज, चलत असंगत चाल—१-१५३। (ख) ब्रह्मा-महादेव-सुर-सुरपति नाचत फिरत महारस भोयौ—१-५४।

भोर—संज्ञा पुं. [सं. विभावरी] **प्रातःकाल, सबेरा, तड़का।** उ.—खान-पान-परिधान मैं (रे) जोबन गयौ सब बीति। ज्यौं बिट पर-तिय सँग बस्यौ (रे) भोर भए भई भीति—१-३२५। (ख) भोर भयो जागे नँद-लाल—२५७१।

संज्ञा पुं. [सं. भ्रम] **धोखा, भूल, भ्रम।** उ.—हँसत परस्पर आपु में चली जाहिं जिय भोर।

वि.—**चकित, स्तंभित।** उ.—सूर प्रभु की निरखि सोभा भई तरुनी भोर—१३५५।

वि. [हिं. भोला] **भोला, सीधा, सरल।**

भोरए—क्रि. स. [हिं. भोराना] **भ्रम में डालने (से), बहकाने से।** उ.—सूरदास लोगन के भोरए काहे कान्ह अब होत पराए।

भोरना, भोरनो—क्रि. स. [सं. भ्रम] (१) **भ्रम में डालना।** (२) **धोखा देना।** (३) **बहकाना, फुसलाना।**

भोरा—संज्ञा पुं. [हिं. भोर] **प्रातःकाल, सबेरा।**

वि. [हिं. भोला] **भोला, सीधा।**

भोराई—संज्ञा स्त्री. [हिं. भोरा+ई] **सीधापन।**

भोराना, भोरानो—क्रि. स. [हिं. भोर+आना] **बहकाना, भ्रम में डालना।**

क्रि. अ.—**भ्रम में पड़ना, बहकाया जाना।**

भोरानाथ—संज्ञा पुं. [हिं. भोलानाथ] **शिव जी।**

भोरि—क्रि. स. [हिं. भोराना] (१) **धोखा देकर, भ्रम में डालकर।** उ.—सखी री, मुरली लीजै चोरि।...... ना जानौं कछु मेलि मोहिनी राखे अंग अंग भोरि—६५७। (२) **बहकाकर, फुसलाकर।** उ.—महा मोहिनी मोहि आतमा-अपमारगहिं लगावै।........ ज्यौं दूती पर-बधू भोरि कै लै परपुरुष दिखावै—१-४२।

भोरी—वि. स्त्री. [हिं. पुं. भोला] (१) **भोली, सीधी, सरल, अनजान।** उ.—(क) देखी हरि मथति ग्वालि दधि ठाढ़ी।......... दिन थोरी, भोरी, अति गोरी, देखत ही जु स्याम भए चाढ़ी—१०-३००। (ख) सूरदास अबला हम भोरी गुर-चैंटी ज्यौं पागी—३३३५।

क्रि. स. [हिं. भोरना] **बहकाया, भ्रम में डाला।** उ.—आरज पंथ छिड़ाय गोपिकन अपने स्वारथ भोरी—२८६३।

भोरु—संज्ञा पुं. [हिं. भोर] **सबेरा, प्रातःकाल।**

संज्ञा पुं.—**धोखा, भ्रम।**

भोरे—वि. [हिं. भोला] **सीधा, सरल स्वभाव का।** उ.—(क) सूर स्याम उनको भाए भोरे हमको निठुर मुरारी—पृ. ३३० (९१)। (ख) सुनियत हुए तैसई देखे सुंदर सुमति सुभोरे—२९७१। (ग) ऊधौ, तुम सब साथी भोरे—३१७६। (२) **अबोध, अनजान, अपरिपक्व अवस्था के।** उ.—(क) कहाँ रहत काके वै छोटा बृद्ध तरुन की वो हैं भोरे—१२३८। (ख) की गोरे की कारे रँग हरि की जोबन की भोरे—१२६०।

भोरैं—संज्ञा पुं. [हिं. भोर] **धोखे में, भ्रम में।** उ.—किलकि किलकत हँसत, बाल सोभा लसत, जानि यह कपट, रिपु आयौ भोरैं—१०-६२।

भोरै—संज्ञा पुं. सवि. [हिं. भोर] **भ्रम या धोखे में।** उ.—कहा भयौ तेरे भवन गए जो पियौ तनक लै भोरै—१०-३२१।

भोरो, भोरौ—वि. [हिं. भोला] **भोला, सीधा, सरल, अनजान।** उ.—कह जानै मेरौ, बारौ भोरौ, झुकी महरि दै-दै मुख गारि—१०-३०४।

भोल—वि. [हिं. भोला] **मुग्ध, आसक्त, लीन।**

भोला—वि. [हिं. भूलना] (१) **सीधा-सादा।** (२) **मूर्ख।**

भोलानाथ—संज्ञा पुं. [हिं. भोला+सं. नाथ] (१) **शीघ्र ही संतुष्ट हो जानेवाले, शिव, महादेव।** उ.—सिव कौं सबनि कियौ सनमान। भोलानाथ लियौ सब मान—४-५। (२) **सरल स्वभाव का व्यक्ति।**

भोलापन—संज्ञा पुं. [हिं. भोला+पन] (१) **सिधाई, सरलता।** (२) **नादानी, मूर्खता।**

भोलाभाला—वि. [हिं. भोला+अनु. भाला] **सीधा।**

भोवति—क्रि. स. [हिं. भोवना] **सुगन्धित करती है।** उ.—कबहुँ सेज कर झारि सँवारति कबहुँ मलयरज भोवति—१९४९।

भोवना, भोवनो—क्रि. स. [हिं. भोना] **सुगंधित करना।**

भोसर, भोसरा—वि. [देश.] **मूर्ख, मूढ़।**

भौं—संज्ञा स्त्री. [सं. भ्रू] भौंह, भृकुटी।

भौंकना, भौंकनो—क्रि. अ. [अनु. भौंभौं] (१) भौंभौं करना। (२) कुत्ते का बोलना। (३) बकवाद करना।

भौंतुआ, भौंतुवा—संज्ञा पुं. [हिं. भ्रमना] (१) एक कीड़ा। (२) एक रोग।

भौंर—संज्ञा पुं. [सं. भ्रमर] (१) तेज बहते हुए पानी में पड़ने वाला चक्कर, भँवर, आवर्त्त। उ.—कब लगि फिरिहौं दीन बह्यौ? सुरति-सरित-भ्रम भौंर-लोल मैं, मन परि तट न लह्यौ—१-१६२। (२) भौंरा, भ्रमर। उ.—रसभरे अंबुजनि भीतर भ्रमत मानौ भौंर—१३६४।

भौंरा—संज्ञा पुं. [सं. भ्रमर, पा. भमर, प्रा. भँवर] (१) भ्रमर, चंचरीक। उ.—भौंरा भोगी बन भ्रमै मोद न मानै ताप—१-३२५। (२) बड़ी मधुमक्खी। (३) एक खिलौना जो डोरी लपेट कर नचाया जाता है। उ.—इत आवत दै जात देखाई ज्यौं भौंरा चक-डोर। (४) हिंडोले की मयारी में लगी लकड़ी जिसमें डोरी बाँधी जाती है। उ.—हिंडोरना माई झूलत गोपाल।......। भौंरा मयारिनि नील मरकत खँचे पाँति अपार।

भौंराना, भौंरानो—क्रि. स. [सं. भ्रमण] (१) घुमाना। (२) विवाह की भाँवर दिलाना।

क्रि. अ.—घूमना, चक्कर काटना।

भौंराही—संज्ञा स्त्री. [हिं. भौंरा] भौंरों के मँडराने की क्रिया या भाव।

भौंरी—वि. [सं. भ्रमण] जिस पशु के रोओं या बालों का घुमावदार चक्र हो, जिसके स्थान आदि के विचार से पशु के गुण-दोष का निर्णय किया जाय।

संज्ञा स्त्री.—घुमावदार रोओं या बालों के चक्र वाली गाय। उ.—पियरीं, मौरी, गोरी, गैनी, खैरी, कजरी, जेती। दुलही, फुलही, भौंरी, भूरी, हाँकि, ठिकाई तेती—४४५। (२) विवाह के समय वर-वधू द्वारा अग्नि की परिक्रमा। (३) जल-धारा का चक्कर। (४) बाटी (रोटी)।

भौंह—संज्ञा स्त्री. [सं. भ्रू] भौं, भँव। उ.—तब इक पुरुष भौंह तैं भयौ—३-७।

मुहा०—भौंह चढ़ाना (तानना)—अप्रसन्न होना, बिगड़ना। भौंह तनत—क्रुद्ध या असन्न होते हैं। उ.—बदत काहू नहीं निधरक निदरि मोहिं न गनत। बार-बार बुझाइ हारी भौंह मो पर तनत। भौंह चलाना—भौंह मटका कर संकेत करना। भौंह चलावै—भौंहें मटकाकर संकेत करता है। उ.—ठठकति चलै मटकि मुँह मोरे बंकट भौंह चलावै—८७६। भौंह जोहना—खुशामद करना। भौंह ताकना—रुख या मनोभाव परखना।

भौंहरा—संज्ञा पुं. [हिं. भू + गृह] तहखाना।

भौ—संज्ञा पुं. [सं. भव] संसार।

संज्ञा पुं. [सं. भय] डर, भय।

भौकन—संज्ञा स्त्री. [हिं. भभक] (१) ज्वाला। (२) ताप।

भौगिया—वि. [हिं. भोग] सुख भोगनेवाला।

भौगोलिक—वि. [सं.] भूगोल-संबंधी।

भौचक—वि. [हिं. भय+चकित] हक्का-बक्का, चकित।

भौचाल—संज्ञा पुं. [हिं. भूचाल] भूकंप, भूडोल।

भौचाली—वि. [हिं. भौचाल] उपद्रवी।

भौज, भौजाइ, भौजाई—संज्ञा स्त्री. [सं. भ्रातृजाया] भाई की पत्नी, भावज। उ.—तेरो कोऊ कहा करैगो यौं लरिहै हमसों भौजाई—८५५।

भौजल—संज्ञा पुं. [सं. भव+जाल] सांसारिक बंधन।

भौठा—संज्ञा पुं. [देश.] पहाड़ी, टीला।

भौतिक—वि. [सं.] (१) पाँच भूतों से बना हुआ, पार्थिव, सांसारिक। उ.—भौतिक देह जीव अभिमानी देखत ही दुख लायौ। (२) शरीर संबंधी। (३) भूतयोनि-सम्बन्धी।

भौती—संज्ञा स्त्री. [सं.] रात, रजनी।

क्रि. वि. [हिं. बहुत + ही] बहुत ही।

भौन—संज्ञा पुं. [सं. भवन] घर, गृह। उ.—आजु बिधाता मति मेरी गई भौन कान बिरमाई—२५३८।

भौना, भौनो—क्रि. अ. [सं. भ्रमण] चक्कर लगाना।

संज्ञा पुं. [सं. भवन] घर, गृह। उ.—मुरली बजाय बिसरावत भौना—२४२१।

भौम—वि. [सं.] (१) भूमि-संबंधी। (२) भूमि से उत्पन्न।

संज्ञा पुं—मंगल ग्रह। उ.—(क) नील, सेत अरु

पीत, लाल मनि लटकन भाल लुनाई। सनि, गुरु-असुर, देवगुरु मिलि मनु भौम सहित समुदाई—१०-१०८। (ख) मुक्ता-बिद्रुम-नील-पीत मनि, लटकत लटकन भाल री। मानो सुक्र-भौम-सनि-गुरु मिलि, ससि कैं बीच रसाल री—१०-१४०।

भौमरत्न—संज्ञा पुं. [सं.] मूँगा।

भौमवार—संज्ञा पुं. [सं.] मंगलवार।

भौमासुर—संज्ञा पुं. [सं.] नरकासुर नामक दैत्य। उ.—(क) सिसु ह्वै भौमासुर तहाँ आयौ काहू जान न पाइ—२३७८। (ख) सत्यभामा सहित बैठे हरि गरुड़ पर भौमासुर नगर गए तुरत धाई—१० उ०-३१।

भौमी—संज्ञा स्त्री. [सं.] पृथ्वी की कन्या, सीता।

भौर—संज्ञा पुं. [सं. भ्रमर] (१) भौंरा। (२) एक तरह का घोड़ा।

भ्रंश, भ्रंस—वि. [सं. भ्रंश] भ्रष्ट, खराब। उ.—सूर सुज्ञान सुनावति अबलनि सुनत होत मति भ्रंस—३०४९।

भ्रकुटि—संज्ञा स्त्री. [सं. भृकुटी] भौंह।

भ्रत—संज्ञा पुं. [सं. भृत्य] दास, सेवक।

भ्रम—संज्ञा पुं. [सं.] (१) धोखा, भ्रांति। (२) संदेह, संशय। (३) भ्रमण। (४) कुम्हार का चाक।

वि.—(१) घूमने वाला। (२) भ्रमण करनेवाला।

भ्रमकारी—वि. [सं. भ्रमकारिन्] भ्रम उत्पन्न करने वाला।

भ्रमण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) घूमना-फिरना। (२) आना-जाना। (३) यात्रा। (४) चक्कर, फेरी।

भ्रमत—क्रि. अ. [हिं. भ्रमना] घूमता-फिरता है। उ.—कौन बिरक्त अधिक नारद तैं, निसि दिन भ्रमत फिरै—१-३५।

वि.—घूमता-फिरता हुआ, चक्कर काटता। उ.—चक्र सौं भ्रमत चकृत भए देखि सब चहुँधा देखिए नंद-ढोटा—२५९१।

भ्रमति, भ्रमती—क्रि. अ. [हिं. भ्रमना] घूमती-फिरती है। उ.—तेरो दोष नहीं भ्रमती तू जहीं तहीं नदी डोंगर बन बन पात-पाता—१५४६।

भ्रमना, भ्रमनो—क्रि. अ. [सं. भ्रमण] घूमना-फिरना।

क्रि. अ. [सं. भ्रम] (१) धोखा खाना, भूल करना। (२) भूल-भटक जाना, भटकना।

भ्रमनि—संज्ञा स्त्री. [सं. भ्रमण] (१) घूमना-फिरना। (२) चक्कर, फेरी।

वि. [सं. भ्रम] भ्रम में पड़े हुए व्यक्ति। उ.—तुम सर्वज्ञ, सबै बिधि पूरन, अखिल भुवन निज नाथ। तिन्हैं छाँड़ि यह सूर महा सठ, भ्रमत भ्रमनि कैं साथ—१-१०३।

भ्रममूलक—वि. [सं.] भ्रम से उत्पन्न।

भ्रमर—संज्ञा पुं. [सं.] भौंरा।

यौ०—भ्रमरगुफा—हृदय का स्थान-विशेष।

वि.—कामुक, बिलासी, बिषयी।

भ्रमरगीत—संज्ञा पुं. [सं. भ्रमर+गीत] कृष्ण-काव्य का अंश-विशेष जो कृष्ण-सखा उद्धव के योगोपदेश के उत्तर में ब्रज-बालाओं की उन उक्तियों से युक्त है जो 'भ्रमर' को संबोधित करके कही गयी हैं।

भ्रमरा—संज्ञा पुं. [सं. भ्रमर] भौंरा, भ्रमर। उ.—जैसे लुबधति कमल-कोश में भ्रमरा की भ्रमरी—पृ. ३२९ (८९)।

भ्रमरावली—संज्ञा स्त्री. [सं.] भ्रमर पंक्ति, भ्रमर समूह।

भ्रमरी—संज्ञा स्त्री. [सं. भ्रमर] भौंरे की मादा, भौंरी।

भ्रमवात—संज्ञा पुं. [सं.] वायु मंडल जो सदैव घूमता रहता है।

भ्रमाइ—क्रि. अ. [हिं. भ्रमना] भ्रम में पड़ जाती है, चकित हो जाती है। उ.—जौन जराइ जु जगमगाइ रहे देखत दृष्टि भ्रमाइ—१० उ०-६।

भ्रमात्मक—वि. [सं.] (१) भ्रम उत्पन्न करनेवाला। (२) संदिग्ध।

भ्रमाना, भ्रमानो—क्रि. स. [हिं. भ्रमाना] (१) घुमाना-फिराना। (२) धोखे में डालना, भटकाना।

क्रि. अ.—(१) घूमना-फिरना। (२) भ्रम या धोखे में पड़ना, भटकना।

भ्रमाती—क्रि. अ. [हिं. भ्रमाना] (१) घूमती फिरती है। (२) भ्रम या धोखे में पड़ गयी है।

भ्रमावै—क्रि. अ. [हिं. भ्रमाना] भ्रम या धोखे में पड़ जाते हैं। उ.—जसुदा मदन-गुपाल सोवावै। देखि

सयन-गति त्रिभुवन कंपै, ईस बिरंचि भ्रमावै—१०-६५ ।

भ्रमि—क्रि. अ. [हिं. भ्रमना] **घूम-फिरकर**। उ.—सूर नगर चौरासी भ्रमि-भ्रमि घर-घर कौ जु भयौ—१-६४ ।

भ्रमित—वि. [सं.] (१) **भ्रम में पड़ा हुआ।** (२) **घूमता-फिरता, भटकता।**

भ्रमी—वि. [सं. भ्रमिन्] (१) **जिसे भ्रम या धोखा हो गया हो।** (२) **चकित, भौचक्का।**

भ्रमीन—वि. [सं. भ्रमण] **घूमता हुआ।**

भ्रमै—क्रि. अ. [हिं. भ्रमना] **घूमता-फिरता है**। उ.—भौंरा भोगी बन भ्रमै (रे) मोद न मानै ताप। सब कुसुमनि मिलि रस करै, (पै) कमल बँधावै आप—१-३२५ ।

भ्रम्यौ—क्रि. अ. [हिं. भ्रमना] **मारा-मारा फिरा, भटका।** उ.—(क) जिहिं-जिहिं जोनि भ्रम्यौ संकट-बस, सोइ सोइ दुखनि भरी--१-७१ । (ख) भूल्यौ भ्रम्यौ तृषातुर मृग लौं, काहूँ स्रम न गँवायौ—१-२०१ ।

भ्रष्ट—वि. [सं.] (१) **नीचे गिरा हुआ।** (२) **बिगड़ा हुआ।** (३) **दोषयुक्त।** (४) **बुरे चाल-चलनवाला।**

भ्रष्टा—वि. [सं.] **बुरे आचरणवाली।**

भ्रष्टाचरण, भ्रष्टाचार—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **अनुचित या भ्रष्ट आचार-विचार।** (२) **ईमानदारी से काम न करने का व्यवहार।**

भ्रांत—वि. [सं.] (१) **भ्रम या धोखे में पड़ा हुआ।** (२) **घबराया हुआ।** (३) **उन्मत्त।**

भ्रांति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) **भ्रम, धोखा।** (२) **संदेह।** (३) **मोह, प्रमाद।** (४) **एक काव्यालंकार।**

भ्राज—क्रि. अ. [हिं. भ्राजना] **सुशोभित है।** उ.—दुलहिनि बृषभानु-सुता अंग अंग भ्राज—पृ. ३४९(६०)।

भ्राजई—क्रि. अ. [हिं. भ्राजना] **सुशोभित है।** उ.—हाथ पहुँची बीर कानन जटित मुँदरी भ्राजई। ....। अँग अंग भूषन सुभग ससि पूरनकला मानों भ्राजई—१० उ०—२४ ।

भ्राजत—क्रि. अ. [हिं. भ्राजना] **शोभित है।** उ.—(क) लटकन सीस, कंठ मनि भ्राजत, मनमथ कोटि बारनैं गै री—१०-५५ । (ख) डगमगात गिरि परत पानि पर, भुज भ्राजत नँदलाल—१०-११४ । (ग) राज-भूषन अंग भ्राजत अहीर कहत लजात—२६७२ ।

भ्राजना, भ्राजनो—क्रि. अ. [सं. भ्राजन = दीपन] **शोभा पाना, शोभित होना।**

भ्राजमान—वि. [हिं. भ्राजना] **शोभायमान।**

भ्राजै—क्रि. अ. [हिं. भ्राजना] **शोभित होता है।** उ.—मनि कुंडल मकराकृत तरुन तिलक भ्राजै—१४६५ ।

भ्रात, भ्राता—संज्ञा पुं. [सं. भ्रात, हिं. भ्राता] **भाई।** उ.—(क) बृषभासुर-बत्सासुर मारचौ, बल-मोहन दोउ भ्रात—५०८ । (ख) मुकुट कुंडल पीत पट छबि अनुज भ्राता स्याम—२५६५ ।

भ्रातृज—संज्ञा पुं. [सं.] **भाई का लड़का।**

भ्रातृजाया—संज्ञा स्त्री. [सं.] **भाई की स्त्री, भौजाई।**

भ्रातृत्व—संज्ञा पुं. [सं.] **भाईपन, भाईचारा।**

भ्रात्र—संज्ञा पुं. [सं. भ्रातृ] **सगा भाई, सहोदर।** उ.—भवन सँवारि, नारि रस लोभ्यौ, सुत, बाहन, जन, भ्रात्र—१-२१६ ।

भ्राम—संज्ञा पुं. [सं. भ्रम] **भ्रम, धोखा।**

भ्रामक—वि. [सं.] (१) **भ्रम में डालनेवाला।** (२) **संदेह उत्पन्न करनेवाला।** (३) **चक्कर खिलानेवाला।**

भ्रुम—संज्ञा पुं. [सं. भ्रम] **एक दैत्य जिसे श्रीकृष्ण ने मारा था।** उ.—भ्रुम अरु केसी इहाँ पछारचौ—३४०९ ।

भ्रुव—संज्ञा स्त्री. [सं. भ्रू] **भौं, भौंह।** उ.—(क) लटकन लटकत ललित भाल पर, काजर-बिंदु भ्रुव-ऊपर री—१०-९८ । (ख) अंजन दोउ दृग भरि दीन्हौ। भ्रुव चारु चखौड़ा कीन्हौ—१०-१८३ ।

भ्रू—संज्ञा स्त्री. [सं.] **भौं, भौंह।** उ.—चूमति कर-पग-अधर-भ्रू लटकति लट चूमति—१०-७४ ।

भ्रू-भंग—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **भौंह का संकेत।** (२) **भृकुटी या त्यौरी चढ़ाना।** उ.—काल डरत भ्रू-भंग की आँचो—१-१८ ।

भ्रूण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **गर्भ।** (२) **गर्भ का बालक।**

भ्रूणहत्या—संज्ञा पुं. [सं.] **गर्भ के बालक की हत्या।**

भ्रूविक्षेप—संज्ञा पुं. [सं.] **भृकुटी चढ़ाना, भ्रूभंग।**

भ्वहरना, भ्वहरनो—क्रि. अ. [हिं. भय + हरना] **डरना।**

भ्वासर—वि. [देश.] **मूर्ख, मूढ़।**

म

म—देवनागरी वर्णमाला का पचीसवाँ व्यंजन जो होंठ और नासिका से उच्चरित होता है ।

मंकुर—संज्ञा पुं. [सं. मुकुर] शीशा, दर्पण ।

मंग—संज्ञा स्त्री. [हिं. माँग] सिर के बालों के बीच की माँग । उ.—(क) गोरे भाल लाल सेंदुर छबि मुक्ता-बर सिर सुभग मंग को—१०४२ । (ख) इन बिर-हिनि मैं कहूँ तू देखी सुमन गुहाए मंग—३२२३ ।

मँगइए—क्रि. स. [हिं. मँगाना] मँगाइए । उ.—सकुचत फिरत जो बदन छिपाए, भोजन कहा मँगइए—१-२३९ ।

मंगता, मँगता—संज्ञा पुं. [हिं. माँगना + ता] भिखमंगा ।

मंगन—संज्ञा पुं. [हिं. माँगना] भिखमंगा । उ.—धेनु जे संकल्प राखीं लईं ते गनाइ कै……। मागध मंगन जन लेत मन भाइ कै—२६२८ ।

मंगना—क्रि. स. [हिं. माँगना] याचना करना ।

मँगनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. माँगना] (१) माँगने की क्रिया या भाव । (२) कुछ समय के लिए माँग कर लेने का भाव । (३) कुछ समय के लिए माँग कर ली गयी वस्तु । (४) विवाह-पूर्व की एक रीति जिसमें सम्बन्ध पक्का किया जाता है ।

मंगनो—संज्ञा पुं. [हिं. माँगना] माँगने की क्रिया या भाव । उ.—नवसत साज सिंगार नागरि मारगमय भूषन मंगनो—२२८० ।

क्रि. स.—माँगना, याचना करना ।

मंगरना, मंगरनो—क्रि. स. [हिं. मंगलना] जलाना, प्रज्ज्वलित करना ।

मंगल—संज्ञा पुं. [सं.] (१) कामना पूरी होना । (२) कुशल, कल्याण । (३) एक ग्रह । (४) इस ग्रह के नाम पर पड़ा 'बार' । (५) शुभ या पूजन-संबंधी कार्य । उ.—धूप दीप नैवेद्य साजि कै मंगल करे बिचारी—२५८७ ।

मंगलकलश, मंगलकलस—संज्ञा पुं. [सं. मंगलकलश] मंगल अवसर पर रखा जानेवाला पानी भरा घड़ा ।

मंगलगीत—संज्ञा पुं. [सं.] शुभ दिवस पर अथवा प्रसन्नता के अवसर पर गाया जानेवाला गीत । उ.—गुन गावत मंगलगीत मिलि दस-पाँच अली—१०-२४ ।

मंगलघट—संज्ञा पुं. [सं.] मंगल अवसर पर रखा जाने वाला जल का घड़ा ।

मंगलचार, मंगलचारा—संज्ञा पुं. [सं. मंगल + चार] (१) हर्ष, आनन्द, प्रसन्नता । (२) शुभ दिवस पर अथवा प्रसन्नता के अवसर पर किये जानेवाले नृत्य, गीत आदि हर्ष-सूचक कृत्य । उ.—(क) हय-गय-रतन हेम-पाटंबर आनँद मंगलचारा—१०-४ । (ख) कमल-नयन मधुपुरी सिधारे मिटि गयौ मंगलचार—२६८७ । (ग) कनक कलस प्रति पौर बिराजत मंगल-चार बधाई—सारा. ३९५ ।

मंगलना, मंगलनो—क्रि. स. [सं. मंगल] जलाना, प्रज्व-लित करना ।

मंगल-पाठ—संज्ञा पुं. [सं.] पद्य जो शुभ कार्यारम्भ के पूर्व मंगल-कामना से पढ़ा जाता है ।

मंगलपाठक—संज्ञा पुं. [सं.] बंदीजन ।

मंगलप्रद—वि. [सं.] कल्याणकारी ।

मंगलभाषित—संज्ञा पुं. [सं.] अशुभ या अप्रिय बात को शुभ या प्रिय रूप में कहने का ढंग ।

मंगलवार—संज्ञा पुं. [सं.] सोमवार और बुधवार के बीच का वार, भौमवार ।

मंगलसूत्र—संज्ञा पुं. [सं.] तागा जो देव-प्रसाद-रूप में गले में या कलाई पर बाँधा जाता है ।

मंगला—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) पार्वती । (२) पतिव्रता ।

मंगलाचरण—संज्ञा पुं. [सं.] श्लोक या छन्द जो मंगल की कामना से किसी कार्य के आरम्भ में पढ़ा जाता या ग्रंथ के आदि में लिखा जाता है ।

मंगलामुखी—संज्ञा स्त्री. [सं. मंगलमुखी] वेश्या ।

मंगली—वि. [सं. मंगल (ग्रह)] जिसकी जन्म लग्न के अनु-सार चौथे, आठवें या बारहवें स्थान में मंगल बैठा हो ।

मँगवाना, मँगवानो—क्रि. स. [हिं. माँगना] (१) माँगने में दूसरे को प्रवृत्त करना । (२) दूसरे को खरीद कर लाने के लिए प्रवृत्त करना ।

मंगा—संज्ञा स्त्री. [हिं. मांग] **सिर के बालों के बीच की मांग।** उ.—स्याम अलक बिच मोती दुति मंगा—१७६२।

मँगाइ, मँगाई—क्रि. स. [हिं. मँगाना] **बुलवा ली, मँगवा ली, लौटवा ली।** उ.—(क) मैं खेई हौ पार करौं तुम उलटि मँगाई—९-४२। (ख) घसि चंदन चारु मँगाइ बिप्रनि तिलक करै—१०-२४। (ग) पँचरँग सारी मँगाइ बधूजननि पैंहराइ—१०-९५।

मँगाए—क्रि. स. [हिं. मँगाना] **बुलवाया है, बुलवा भेजा है।** उ.—हम तुमको सुख-काज मँगाए—१००५।

मँगाना, मँगानो—क्रि. स. [हिं. माँगना] **(१) माँगने के लिए दूसरे को प्रवृत्त करना। (२) दूसरे को कुछ खरीद कर लाने के लिए प्रवृत्त करना।**

मँगाय—क्रि. स. [हिं. मँगाना] **मँगाकर।** उ.—पँचरँग सारी बहुत मँगाय—२४१०।

मँगायौ—क्रि. स. [हिं. मँगाना] **बुलवाया, बुलवा भेजा।** उ.—बैठि एकांत मंत्र दृढ़ कान्हा राम-कृष्न दोउ बंधु मँगायौ—२४७७।

मँगारना, मँगारनो—क्रि. स. [सं. मंगल] **जलाना, प्रज्वलित करना।**

मँगावत—क्रि. स. [हिं. मँगाना] **लाने को प्रवृत्त करता है।** उ.—फूले फिरत नंद अति सुख भयौ, हरषि मँगावत फूल-तमोल—१०-९४।

मँगावति—क्रि. स. [हिं. मँगाना] **लाने को प्रवृत्त करती है।** उ.—बार-बार रोहिनि कौं कहि कहि पलिका अजिर मँगावति है—१०-७३।

मँगावन—क्रि. संज्ञा [हिं. मँगाना] **मँगाने की क्रिया।**

प्र०—कह्यो पकरि मँगावन—**पकड़ मँगवाने को कहा है**—उ.—बल मोहन कौ नाम धरयौ, कह्यौ पकरि मँगावन—५८९।

मंगी—क्रि. स. [हिं. माँगना] **मांग (लिया)।**

प्र०—लियौ मंगी—**मांग लिया।** उ.—कहा बिदुर की जाति-बरन है, आइ साग लियौ मंगी—१-२१।

मँगेतर—वि. [हिं. मँगनी + एतर] **जिसके साथ मँगनी होकर विवाह-संबंध पक्का हुआ हो।**

मँगैया—वि. [हिं. माँगना + ऐया] **माँगनेवाला।** उ.—धन्य दान धनि कान्ह मँगैया धन्य सूर तृन द्रुम बन डारि—११८१।

मंच, मंचक—संज्ञा पुं. [सं.] **(१) पीढ़ी, मँचिया। (२) ऊँचा बना हुआ मंडल।**

मंचल—वि. [हिं. मचलना] **मचलनेवाला।** उ.—चंचल-अधर चरन-कर चंचल मंचल अंचल गहत बकोटनि—१०-१८७।

मंछल—संज्ञा पुं. [सं. मत्सर] **ईर्ष्या, डाह।**

संज्ञा पुं. [हिं. मच्छड़] **मच्छड़।**

मंजन—संज्ञा पुं. [सं. मञ्जन] **(१) दाँत साफ करने का कोई चूर्ण। (२) स्नान।**

मँजना, मँजनो—क्रि. अ. [हिं. माँजना] **(१) माँजा जाना। (२) अभ्यास होना।**

मंजरि, मंजरिका, मंजरी—संज्ञा स्त्री. [सं. मंजरी] **(१) कल्ला कोंपल। (२) आम, तुलसी जैसे वृक्षों में फूलों या फलों के स्थान में एक सींक में लगनेवाले दाने।** उ.—पुहुप मंजरी मुक्तन माला अँग अनुराग धरे—६८९।

मंजरित—वि. [सं. मंजरी] **मंजरी से युक्त।**

मँजाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. मंजाना] **माँजने या मँजाने की क्रिया, भाव या मजदूरी।**

मजाना, मँजानो—क्रि. स. [हिं. माँजना] **माँजने को प्रवृत्त करना।**

मंजार—संज्ञा पुं. [सं. मार्जार] **बिल्ली का नर, बिल्ला।** उ.—खाइ जाइ मंजार काज एकौ नहिं आवै—११४१।

मंजारी—संज्ञा स्त्री. [सं. मार्जारी] **बिल्ली जिसका रास्ता काट जाना अशकुन समझा जाता है।** उ.—आइ अजिर निकसी नँदरानी बहुरी दोष मिटाइ। मंजारी आगैं ह्वै आई पुनि फिरि आँगन आइ—५४०।

मंजिल—संज्ञा स्त्री. [अ. मंज़िल] **(१) यात्रा में ठहरने का स्थान, पड़ाव। (२) मकान, मन्दिर आदि का खण्ड।**

मँजीठ—संज्ञा स्त्री. [हिं. मजीठ] **एक लता जिसकी जड़ और डंठल से लाल रंग बनता है।** उ.—मानहुँ मीन मँजीठ प्रेम रँग तैसेही गहि जैहै—२०३३।

मंजीर—संज्ञा पुं॰ [सं.] घुंघरू, नूपुर। उ.—ढिग जरित भरि मंजीर इत-उत चरन पंकज रंग—२२८९।

मँजीरा—संज्ञा पुं. [सं. मंजीर] काँसे की छोटी कटोरियों की जोड़ी जिससे (संगीत में) ताल दी जाती है। उ.—बाजत हुडुक मँजीरा नूपुर नाना भाँति नचायौ —सारा० ४०७।

मंजु—वि॰ [सं.] सुन्दर, सुकुमार, मनोहर। उ.—मंजु मेचक मृदुल तनु अनुहरत भूषन भरनि—१०-१०९।

मंजुल—वि. [सं.] सुन्दर, मनोहर। उ.—मंजुल तारनि की चपलाई चित चतुराइ करसै री—१०-१३७।

संज्ञा पुं.—(१) नदी तट। (२) कुंज।

मंजूर—वि. [अ.] जो मान लिया गया हो, स्वीकृत।

मंजूरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मंजूर] स्वीकार करने का भाव।

मंजूषा, मंजूसा—संज्ञा स्त्री. [सं. मंजूषा] पिटारी, डिबिया।

मंझ, मंझा—वि. [सं. मध्य, पा॰मज्झ] बीच या मध्य का।

संज्ञा पुं. [सं. मंच] (१) चौकी। (२) खाट।

मँझधार—संज्ञा स्त्री. [हिं. माँझ+धार] (१) धारा का मध्य भाग। (२) काम की अपूर्ण अवस्था।

मँझरिया—संज्ञा पुं. [हिं. माँझी] केवट, मल्लाह।

मँझला—वि. [हिं. मँझ+ला] बीच का।

मंझा—वि. [सं. मध्य] बीच का।

संज्ञा पुं.—बीच, मध्य।

संज्ञा पुं. [सं. मंच] पलँग, खाट।

संज्ञा पुं. [हिं. माँझा] पतंग लड़ाने की डोर।

मँझार, मँझारि, मँझारी, मँझारे—क्रि. वि. [सं. मध्य] बीच में। उ.—(क) सभा मँझार दुष्ट दुस्सासन द्रौपदि आनि धरी—१-१६। (ख) इंद्र एक दिन सभा मँझारि। बैठ्यौ हुतौ सिंहासन डारि—६-५। (ग) सब जादव सौं कह्यौ बैठिकै सभा मँझारी—१० उ०-१०५। (घ) इक दिन बैठे सभा मँझारे—४-५।

मँझोला—वि. [हिं. मझोला] (१) बीच का। (२) मध्यम आकारवाला।

मंड—संज्ञा पुं. [सं.] (१) उबले हुए चावल का माँड़। (२) भूषा, सजावट।

मंडइ, मंडई—संज्ञा स्त्री. [सं. मंडप] झोपड़ी, कुटी।

संज्ञा स्त्री. [हिं. मंडा] बाजार, मंडी।

मंडत—क्रि. स. [हिं. मंडना] सुसज्जित करता है। उ.—तुम्हरैं भजन सबहिं सिंगार। जो कोउ प्रीति करै पद-अंबुज, उर मंडत निरमोलक हार—१-४१।

मंडन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) सजाना, सँवारना। (२) प्रमाण आदि देकर किसी कथन की पुष्टि करना।

मंडना, मडनो—क्रि. स. [सं. मंडन] (१) सजाना-सँवारना। (२) प्रमाण आदि देकर सिद्ध करना।

क्रि. स. [सं. मर्दन] दलन-मर्दन करना।

मंडप—संज्ञा पुं. [सं.] (१) विश्रामालय। (२) ऊपर से छाया और चारों ओर से खुला स्थान। (३) उत्सव, आयोजन आदि के लिए बनाया गया सुसज्जित स्थान। उ.—(क) नव फूलन के मंडप छाए—१७०३। (ख) लग्न लै जु बगात साजी उनत मंडप छाइ—१० उ०-१३। (४) चँदोबा।

मंडपिका, मंडपी—संज्ञा स्त्री. [सं. मंडप] छोटा मंडप।

मंडर—संज्ञा पुं. [सं. मंडल] मंडल।

मंडरना, मंडरनो—क्रि. अ. [सं. मंडल] मंडल बाँधकर या चारों ओर छाकर घेर लेना।

मँडराइ, मँडराई—क्रि. अ. [हिं. मँडराना] मंडल बाँध कर या चक्कर काट कर उड़ता है। उ.—हंस को मैं अंस राख्यौ काग कत मँडराइ—१० उ०-१३।

संज्ञा स्त्री.—मंडल या घेरा बाँधकर उड़ने की क्रिया या भाव।

मँडराना, मँडरानो—क्रि. अ. [सं. मंडल] (१) मंडल बाँध कर या चक्कर काटकर उड़ना। (२) चारों ओर घूमना, परिक्रमा करना। (३) आस-पास घूमना।

मँडरानी—क्रि. अ. [सं. मंडल] आस-पास घूमती या चक्कर काटती रहती है। उ.—देखहु जाइ और काहू को हरियर सबै रहत मँडरानी—१०५७।

मँडरे—क्रि. अ. [सं. मंडल] छा गया, घेर लिया। उ.—झाँझ ताल सुर मँडरे रँग हो हो होरी—२४१०।

मंडल—संज्ञा पुं. [सं.] (१) गोलाई, वृत्त।

मुहा०—मंडल बाँधना—(१) गोलाई में चक्कर काटना। (२) चारों ओर छा जाना या घेरना।

(२) गोलाकार विस्तार। (३) बादलों आदि के कारण चंद्रमा या सूर्य के चारों ओर दिखायी देने

वाला घेरा। (४) किसी वस्तु या अंग का गोल भाग। उ.—चलित कुंडल गंडमंडल–१-३०७। (४) क्षितिज। (५) भूमि खंड। उ.—मथुरा मंडल भरत खंड निज धाम हमारो—१८६१। (६) समूह, समाज। उ.—गोपिनि मंडल मध्य बिराजत। (७) पहिया।

मंडलाकार—वि. [सं.] गोल।

मँडलाना, मँडलानो—क्रि. अ. [हिं. मँडराना] (१) चक्कर काटते हुए उड़ना। (२) चारो ओर घूमना। (३) आस-पास फिरना।

मंडली—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) समूह, समाज। उ.—ग्वाल मंडली मैं बैठे मोहन—४६७। (२) ढेर, राशि। उ.—पुहुप मंडली तापर छायो—१००१।

मंडलीक—संज्ञा पुं. [सं. मांडलीक] बारह राजाओं का अधिपति।

मंडव, मंड़वा—संज्ञा पुं. [सं. मंडप, प्रा० मंडव] मंडप।

मँडार—संज्ञा पुं. [सं. मंडल] गड्ढा

मंडित—वि. [सं.] (१) विभूषित, अलंकृत, सजे हुए। उ.—(क) ज्यौं माखी मृग-मद मंडित तन परिहरि पूय परै—१-१९८। (ख) मुख मंडित रोरी रंग—१०-२४। (ग) गो-रज मंडित केस—४७८। (२) छाया हुआ। (३) भरा हुआ।

मंडी—संज्ञा स्त्री. [सं. मंडप] थोक बिक्री की जगह।

मंडूक—संज्ञा पुं. [सं.] मेंढक।

मंत—संज्ञा पुं. [सं. मंत्र] (१) मंत्र। (२) सलाह।

यौ.—तंत-मंत—उद्योग, प्रयत्न।

मंतव्य—संज्ञा पुं. [सं.] विचार, मत।

मंत्र—संज्ञा पुं. [सं.] (१) गुप्त सलाह। (२) यज्ञादि के विधान-सूचक वैदिक वाक्य। (३) वे शब्द या वाक्य जिनका जाप विभिन्न देवताओं को संतुष्ट करने अथवा विभिन्न कामनाओं की पूर्ति के लिए किया जाता है। उ.—(क) माया-मंत्र पढ़त मन निसि दिनि—१-४९। (ख) धन्य ऐसौ गुरू कान के लागत ही मंत्र दै आजु ही वह लखायौ—१२६८।

यौ.—मंत्र-जंत्र (यंत्र)—जादू-टोना। उ.—साधन मंत्र-जंत्र उद्यम बल ये सब डारौ धोइ—१-२६२।

(४) उपाय, उद्योग, प्रयत्न। उ.—(क) थकित भए कछ मंत्र न फुरई, कीन्हें मोह अचेत—१-२९। (ख) जातैं रहै छत्रपन मेरौ, सोइ मंत्र कछु कीजै—१-२६९। (ग) मंत्रिनि नीकौ मंत्र बिचारयौ—९-९८।

मंत्रकार—संज्ञा पुं. [सं.] मंत्र का रचयिता।

मंत्रजल—संज्ञा पुं. [सं.] जल जो मंत्र के प्रभाव से युक्त हो।

मंत्रणा—संज्ञा स्त्री. [सं.] सलाह, परामर्श।

मंत्र-पूत—वि. [सं.] (१) मंत्र पढ़ कर पवित्र किया हुआ। (२) मंत्र पढ़ कर फूँका हुआ।

मंत्रित—वि. [सं.] जो मंत्र के प्रभाव से संस्कृत हो।

मंत्रित्व—संज्ञा पुं. [सं.] मंत्री का कार्य या पद।

मंत्री—संज्ञा पुं. [सं. मन्त्रिन्] (१) परामर्शदाता। (२) राजकाज में परामर्श देनेवाला, सचिव। उ.—(क) मंत्री ज्ञान न औसर पावै कहत बात सकुचातौ—१-४०। (ख) मंत्री काम-क्रोध निज दोऊ अपनी अपनी रीति—१-१४१। (ग) पोच पिसुन लस दसन सभासद प्रभु अनंग मंत्री बिन भीति—२२२३। (३) शतरंज की एक गोटी।

मंत्रेला—संज्ञा पुं. [सं. मंत्र] झाड़फूँक या तंत्र-मंत्र जाननेवाला।

मंथन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मथना, बिलोना। (२) लीन होकर या अवगाहन करके तत्वों की खोज करना।

मंथर—वि. [सं.] (१) मंद, सुस्त। (२) मूर्ख।

मंथरा—संज्ञा स्त्री. [सं.] कैकेयी की दासी जिसके कहने से उसने राम को वन भिजवाया था।

मंद—वि. [सं.] (१) धीमा, सुस्त। उ.—डुलत नहिं द्रुम-पत्र बेली थकित मंद समीर—६५८। (२) मूर्ख। उ.—अहं ममता हमैं सदा लागी रहै, मोह मद-क्रोध-जुत मंद कामी—८-१६।

मंदग—वि. [सं.] धीरे-धीरे चलने वाला।

मंदता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) आलस्य। (२) धीमापन।

मंदन—क्रि. वि. [सं. मंद] धीमे से, धीरे-धीरे। उ.—(क) अरुन अधर छबि दसन बिराजत जब गावत कल मंदन—१८४१।

मंदबुद्धि—वि. [सं.] जिसकी बुद्धि हीन हो।

मंदभागी—वि. [सं.] अभागा, हतभाग्य।

मंदभाग्य—संज्ञा पुं. [सं.] अभाग्य, दुर्भाग्य।

मंदमति—वि॰ [सं॰] मूर्ख । उ॰—(क) बसत सुरसरी तीर मंदमति कूप खनावै—२-९ । (ख) मलिन मंद-मति डोलत घर घर उदर भरन कैं हेत—२-१५ ।

मंदर—संज्ञा पुं॰ [सं॰] (१) एक पर्वत जिससे समुद्र मथा गया था। उ॰—(क) मथि समुद्र सुर-असुरन कैं हित मंदर जलधि धसाऊ—१०-२२१ । (ख) मंदर डरत सिंधु पुनि काँपत फिरि जनि मथन करै—१०-१४२ । (२) स्वर्ग ।

संज्ञा पुं॰ [सं॰ मंद्र] गंभीर ध्वनि या शब्द ।

वि॰—धीमा, मंद ।

मंदरगिरि—संज्ञा पुं॰ [सं॰] मंदर पर्वत ।

मंदरा—वि॰ [सं॰ मंदर] नाटा, ठिगना ।

संज्ञा पुं॰ [सं॰ मंडल] एक बाजा ।

मंदराचल—संज्ञा पुं॰ [सं॰] मंदर पर्वत जिससे समुद्र मथा गया था। उ॰-बासुकी नेति अरु मंदराचल रई—८-८ ।

मंदरी—वि॰ [हिं॰ मँदरा] नाटी, ठिगनी ।

मंदल—संज्ञा पुं॰ [सं॰ मृदंग] एक तरह का ढोल ।

मंदहिं—क्रि॰ वि॰ [हिं॰ मंद] धीरे से, कोमलता के साथ । उ॰—नंद-नारि-आनन छुवै मंदहिं—१०-१०७ ।

मंदा—वि॰ [सं॰ मंद] (१) धीमा, मंद । (२) ढीला । (३) सस्ता । (४) खराब । (५ बिगड़ा हुआ ।

मंदाकिनि, मंदाकिनी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ मंदाकिनी] (१) गंगा की वह धार जो स्वर्ग में मानी गयी है । (२) आकाश गंगा । (३) चित्रकूट के पास की वह नदी जो 'पयस्विनी' कहलाती है ।

मंदाग्नि—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] अन्न न पचने का रोग ।

मंदार—संज्ञा पुं॰ [सं॰] (१) स्वर्ग का एक देववृक्ष। (२) एक वृक्ष । उ॰—उर पर मंदार हार—२३६२। (३) मंदर पर्वत ।

मंदिर, मंदिल, मंदिलरा—संज्ञा पु॰ [सं॰ मंदिर] (१) घर, महल, प्रासाद । उ॰—(क) तब पूछ्यौ, कुरपति है कहाँ ? कह्यौ, पांडु-सुत-मंदिर जहाँ—१-२८४ । (ख) सुंदर नंद महर कैं मंदिर—१०-३२ । (२) देवालय, देवस्थान ।

संज्ञा पुं॰ [सं॰ मृदंग] एक तरह का ढोल ।

मंदी—संज्ञा स्त्री॰ [हिं॰ मंद] सस्तापन ।

मंदे—वि॰ [हिं॰ मंदा] जहाँ भाव सस्ते हों । उ॰—मुक्ति आनि मंदे मो मेली—३१४४ ।

मंदो—संज्ञा पुं॰ [हिं॰ मंदा] सस्ता भाव। उ॰—मंदो परयो सिधाउ अनत लै यहि निर्गुन मत तेरौ—३१४३ ।

मंदोदरी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰] रावण की पटरानी जो मय दानव की पुत्री थी ।

मंद्र—संज्ञा पुं॰ [सं॰] (१) गंभीर ध्वनि । (२) संगीत में स्वर का एक भेद ।

वि॰—(१) सुन्दर, मनोहर । (२) गंभीर ।

मंसना, मंसनो—क्रि॰ स॰ [सं॰ मनस्] संकल्प करना ।

मंसब—संज्ञा पुं॰ [अ॰] (१) पदवी । (२) अधिकार ।

मंसा—संज्ञा स्त्री॰ [अ॰ मंशा] (१) इच्छा । (२) संकल्प । (३) अभिप्राय, तात्पर्य ।

मइ—सर्व॰ [हिं॰ मैं] मैं ।

मइका—संज्ञा पुं॰ [हिं॰ मायका] माँ का घर ।

मइमत—वि॰ [हिं॰ मैमंत] मतवाला ।

मइया—संज्ञा स्त्री॰ [हिं॰ मैया] माँ, माता । उ॰—बाबा नंद जसोदा मइया मिले सबन हित आइ—३४४४।

मई—प्रत्य॰ [हिं॰ मयी] एक प्रत्यय जो तद्रूप, विकार प्राचुर्य आदि के अर्थ में शब्दांत में जुड़ता है । उ॰—(क) पद-नख-चंद चकोर बिमुख मन खात अँगार मयी—१-२९९ । (ख) उठि न गई हरि संग तबहिं तें ह्वै न गई सखि स्याममई—२५३७ । (ग) पाती लिखत बिरह तनु ब्याकुल कागर ह्वै गयौ नोर मई—३४१७ ।

मउर—संज्ञा पुं॰ [हिं॰ मौर] मुकुट या मौर जो दूल्हे के सिर पर पहनाया जाता है ।

मकड़ी—संज्ञा स्त्री॰ [सं॰ मर्कटक] एक प्रसिद्ध कीड़ा जो जाला तान कर दूसरे कीड़े फँसाती और उन्हें खाकर जीवित रहती है ।

मकुना—वि॰ पुं॰ [हिं॰ मकुना] (१) छोटा । (२) नाटा ।

मकबरा—संज्ञा पुं॰ [अ॰ मक़बरा] इमारत जिसमें किसी की कब्र हो, रौजा, मजार ।

मकरंद—संज्ञा पुं॰ [सं॰] (१) फूलों का रस । उ॰—(क) कृष्न पद मकरंद पावन और नहिं सरबरन—१-०

३०८। (ख) इच्छा सौं मकरंद लेत मनु अलि गोलक के बेष री—१०-१३६। (२) फूल का केसर, किंजल्क।

मकर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मगर या घड़ियाल नामक जलजंतु जो कामदेव की ध्वजा का चिन्ह और गंगा का वाहन है। उ.—सुधा-सर जनु मकर क्रीड़त—६२७। (२) एक राशि। (३) एक लग्न। उ.—भाग्य भवन मैं मकर मही सुत बहु ऐश्वर्य बढ़ैहै—१०-८। (४) एक निधि। (५) मछली।

मकरकेतु—संज्ञा पुं. [सं.] कामदेव।

मकरध्वज—संज्ञा पुं. [सं.] कामदेव। उ.—मनहुँ खेलत हैं परस्पर मकरध्वज द्वै मन—३५३।

मकरपति—संज्ञा पुं. [सं.] (१) कामदेव। (२) ग्राह।

मकरसंक्रांति—संज्ञा स्त्री. [सं.] वह समय जब सूर्य मकर राशि में प्रवेश करता है।

मकराकृत—वि. [सं.] 'मकर' के आकार का। उ.—मोर मुकुट मकराकृत कुंडल—५०७।

मकरालय—संज्ञा पुं. [सं.] समुद्र।

मकरी—संज्ञा स्त्री. [सं.] मादा मगर।

मकान—संज्ञा पुं. [फ़ा.] (१) घर। (२) वासस्थान।

मकु—अव्य. [सं. म] (१) चाहे। (२) बल्कि। (३) शायद।

मकुना—वि. [सं. मनाक] (१) छोटा। (२) नाटा।

मकुनि, मकूनी—संज्ञा स्त्री. [देश.] चने और गेहूँ अथवा मटर के आटे की रोटी। उ.—मीठे तेल चना की भाजी। एक मकूनी दै मोहिं साजी।

मकोइ, मकोई—संज्ञा स्त्री. [हिं. मकोय] काँटेदार मकोय (वृक्ष)।

मकोय—संज्ञा स्त्री. [सं. काकभाटा] एक पौधा और उसका फल।

मकोरना, मकोरनो—क्रि. स. [हिं. मरोड़ना] मरोड़ना।

मक्कर—संज्ञा पुं. [अ. मक्र] (१) छल-कपट। (२) नखरा।

मक्का—संज्ञा पुं. [देश.] बड़ी ज्वार।

मक्कार—वि. [अ.] (१) छली, कपटी। (२) नखरीला।

मक्कारी—संज्ञा स्त्री. [अ.] (१) छल। (२) नखरा।

मक्खन—संज्ञा पुं. [सं. मंथज] नैनूं, नवनीत।

मुहा०—कलेजे पर मक्खन मला जाना—बहुत सुख-संतोष होना।

मक्खी—संज्ञा स्त्री. [सं. मक्षिका] एक प्रसिद्ध कीड़ा।

मुहा०—जीती मक्खी निगलना—जानबूझ कर अनुचित कार्य या पाप करना। नाक पर मक्खी न बैठने देना—अभिमान के कारण किसी को अपने ऊपर एहसान करने का अवसर न देना। मक्खी की तरह निकाल (फेंक) देना—ऐसा अलग करना कि किसी प्रकार का संबंध न रखना। मक्खी छोड़ हाथी निगलना—छोटी भूल से बचकर घोर पाप करना। मक्खी मारना—खाली या निठल्ला रहना।

मक्खीचूस—वि. [हिं. मक्खी + चूसना] बहुत ही कंजूस।

मक्षिका—संज्ञा स्त्री. [सं.] मक्खी।

मख—संज्ञा पुं. [सं.] यज्ञ।

मखतूल—वि. [सं. महर्घतूल] काला रेशम।

मखनिया—वि. [हिं. मक्खन] मक्खन निकला हुआ।

मखमल—संज्ञा स्त्री. [अ० मखमल] एक बढ़िया कपड़ा।

मखशाला—संज्ञा स्त्री. [सं.] यज्ञशाला।

मखाना—संज्ञा पुं. [हिं. तालमखाना] तालमखाना।

मखियाँ—संज्ञा स्त्री. [हिं. मक्खी] मक्खी। उ.—झाँकति झपति झरोखा बैठी कर मीड़त ज्यौं मखियाँ—२७६६।

मखौना—संज्ञा पुं. [देश.] एक तरह का कपड़ा।

मखौल—संज्ञा पुं. [देश.] हँसी-ठट्ठा।

मखौलिया—वि. [हिं. मखौल] हँसोड़।

मग—संज्ञा पुं. [सं. मार्ग, प्रा० मग्ग] (१) रास्ता, राह। (क) भूल्यौ फिरत सकल जल-थल-मग—१-४८। (ख) नैननि मग निरखि बदन सोभा रस पीजै—२७९९।

मुहा०—मग जोहना—प्रतीक्षा करना। मग जोवत-आसरा देखता है, प्रतीक्षा करता है। उ.—(क) परस्यौ थाल धरयौ, मग जोवत—१०-२२३। (ख) अवधि गनत इकटक मग जोवत तब ए इत्यो नहिं झूखी—३०२९। (ग) कबहुँ कहत ब्रजनाथ बन गए जोवत मग भई दृष्टि झाँवरी—३४४८।

मगज—संज्ञा पुं. [अ० मग्ज] (१) दिमाग। (२) मींगी।

मगण—संज्ञा पुं. [सं.] वह 'गण' जिसमें तीन गुरु होते हैं।

मगद—संज्ञा. पुं. [सं. मुद्ग] एक मिठाई।

मगदर, मगदल—संज्ञा पुं. [सं. मुद्‌ग] एक तरह का लड्डू।

मगदा—वि. [सं. मग+दा] मार्ग दिखानेवाला।

मगन—वि. [सं. मग्न] (१) डूबा हुआ। उ.—(क) आनँद मगन राम गुन गावै—१-३९। (ख) सुत कुबेर के मत्त मगन भए बिषै रस नैननि छाए—१-७। (२) बहुत प्रसन्न। (३) लीन, तन्मय। उ.—(क) जैसैं मगन नाद-रस सारँग बधत बधिक बिन बान—१-१६९। (ख) मम सरूप जो सब घट जान। मगन रहै तजि उद्यम आन—३-१३। (४) मूर्छित।

मगनता—संज्ञा स्त्री. [सं. मग्न+हिं. ता] (१) लीनता, तन्मयता। (२) हर्ष, आनन्द।

मगना, मगनो—क्रि. अ. [सं. मग्न] (१) लीन या तन्मय होना। (२) डूबना।

वि.—(१) लीन, तन्मय। (२) डूबा हुआ। उ.—काहि उठाइ गोद करि लीजै करि करि मन मगना—२५४७।

मगर—संज्ञा पुं. [सं. मकर] (१) घड़ियाल। (२) मछली।

अव्य० [फा.] लेकिन, परन्तु।

मुहा०—अगर-मगर करना—टाल-टूल करना।

मगरमच्छ—संज्ञा पुं. [हिं. मगर+मच्छ] (१) घड़ियाल। (२) मछली।

मगसिर—संज्ञा पुं. [सं. मार्गशीर्ष] अगहन मास।

मगह, मगहय, मगहर—संज्ञा पुं. [सं. मगध] मगध देश।

मगही—वि. [हिं. मगह] मगध देश का।

मगु, मग्ग—संज्ञा पुं. [सं. मार्ग] राह, रास्ता। उ.—जैसे फिरत रंध्र मगु कँगुरी तैसैं मैंहु फिराऊँ—पृ० ३११ (११)।

मग्न—वि. [सं.] (१) डूबा हुआ। उ.—भव अगाध जल-मग्न महा सठ तजि पद कूल रह्यौ—१-२०१। (२) लीन, तन्मय। (३) प्रसन्न। (४) नशे में चूर।

मघई—वि. [हिं. मगही] मगध देश का।

मघवा—संज्ञा पुं. [सं. मघवन्] इंद्र। उ.—मानौ नव घन ऊपर राजत मघवा धनुष चढ़ाई—१०-१०८।

मघवाप्रस्थ—संज्ञा पुं. [सं.] 'इंद्रप्रस्थ' नामक नगर। उ.—फिरि आए हस्तिनपुर पारथ मघवाप्रस्थ बसायो।

मघवारिपु—संज्ञा पुं. [सं.] इंद्र का शत्रु मेघनाद।

मघा—संज्ञा स्त्री. [सं.] एक नक्षत्र।

मघोनी—संज्ञा स्त्री. [सं. मघवन्] इंद्र की पत्नी।

मघौना—संज्ञा पुं. [सं. मघवा] इंद्र।

मचक—संज्ञा स्त्री. [हिं. मचकना] दाब, दबाव।

मचकना, मचकनो—क्रि. अ. [हिं. मच मच] 'मच-मच' शब्द करके दबना, झटके से हिलना।

क्रि. स.—किसी चीज को इस तरह दबाना कि 'मच-मच' शब्द हो।

मचका—संज्ञा पुं. [हिं. मचक] (१) झटका, झोंका। (२) झूले का पेंग।

मचत—क्रि. अ. [हिं. मचना] झटके से या झोंका देकर हिलाते या झूले के पेंग भरते हैं। उ.—(क) कबहुँ रहँसत मचत लै सँग एक एक सहेलि—२२७८। (ख) यह सुनि हँसत मचत अति गिरिधर डरत देखि अति नारि—२२८२।

मचति—क्रि. अ. स्त्री. [हिं. मचना] झोंका या झटका देकर हिलाती या झूले के पेंग भरती है। उ.—कोउ संग मचति कहत कोउ मचिहौं उपजी रूप अगाध-२२८२।

मचना, मचनो—क्रि. अ. [अनु.] (१) शोर-गुल के साथ काम शुरू होना। (२) फैल या छा जाना।

क्रि. अ. [हिं. मचकना] 'मच-मच' शब्द करके या झोंके से हिलना।

मचमचाना, मचमचानो—क्रि. अ., क्रि. स. [अनु.] दबना या दबाना जिससे 'मच-मच' शब्द हो।

मचल—संज्ञा स्त्री. [हिं. मचलना] मचलने की क्रिया या भाव।

मचलना, मचलनो—क्रि. अ. [अनु०] हठ या जिद करना।

मचला—वि. [हिं. मचलना] जिद्दी, हठीला, अड़ पर डटा रहने वाला। उ.—मचला अकलैमूल पातर खाउँ खाउँ करै भूखा—१-१८६।

मचलाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. मचलना] मचलने की क्रिया या भाव, मचल।

मचलाना, मचलानो—क्रि. अ. [अनु.] जी मतलाना।

क्रि. स. [हिं. मचलना] किसी को मचलने के लिए प्रवृत्त करना।

क्रि. अ.—हठ या जिद करना, अड़ना।

मचलि—क्रि. अ. [हिं. मचलना] हठ करके।

प्र०—मचलि जायगी—जिद करने लगेगी, हठ पकड़ लेगी। उ.—अबहिं मचलि जाइगी तब पुनि कैसे मोसौं जाति बुझाई—१२५७।

मचवा—संज्ञा पुं. [सं. मंच] (१) खटिया। (२) चौकी या खाट का पावा। (३) नाव।

मचाई—क्रि. स. [हिं. मचाना] (१) फैलायी, छा दी। उ.—नाचत बृद्ध तरुन अरु बालक गोरस कीच मचाई—१०-२१। (२) मचाकर, (शोर) करके। उ.—बालक सब नंदहिं सँग धाए ब्रज-घर जहँ तहँ सोर मचाई—५४४।

मचाँग, मचान—संज्ञा स्त्री. [सं. मंच + हिं. आन, हिं. मचान] (१) शिकार खेलने के लिए पेड़ पर बनाया गया ऊँचा स्थान। (२) ऊँची बैठक।

मचाना, मचानो—क्रि. स. [हिं. मचना] (१) शोर-गुल के साथ काम शुरू करना। (२) फैलाना, छा देना।

मचायौ—क्रि. स. [हिं. मचाना] (शोर-गुल, फैला दिया, (हुल्लड़) किया। उ.—ब्रज बीथिनि पुर गलिनि घरै घर घाट-बाट सब सोर मचायौ—१०-३४०।

मचावत—क्रि. स. [हिं. मचाना] (शोर-गुल आदि) करता है। उ.—फिरत जहाँ तहाँ दुंद मचावत ३७७।

मचिया—संज्ञा स्त्री. [सं. मंच] पीढ़ी, खटोली।

मचिलई—संज्ञा स्त्री. [हिं. मचलना] मचलने का भाव।

मचिहौं—क्रि. अ. [हिं. मचना] झटका या झोंका दूँगी। उ.—कोउ संग मचति कहति कोउ मचिहौं उपजौ रूप अगाध—२२८२।

मची—क्रि. अ. [हिं. मचना] फैली, छा गयी। उ.—कुमकुम कीच मची धरनी पर—२४१०।

मचौ—क्रि. अ. [हिं मचना] झोंका दो, पेंग भरो। उ.—अब जिनि मचौ पाँय लागति हौं मोकौं देहु उतारि—२२८२।

मच्छ—संज्ञा पुं. [सं. मत्स्य, प्रा० मच्छ] (१) मछली। उ.—मच्छ-बास ताकी सब हरी—१-१२९। (२) विष्णु का पहला अवतार जिसमें शरीर का निचला भाग रोहू मछली जैसा और ऊपरी मनुष्य का था। उ.—मच्छ कच्छ बाराह बहुरि नरसिंह रूप धरि—२-३६।

मच्छड़, मच्छर—संज्ञा पुं. [सं. मशक, हिं. मच्छड़] एक छोटा पतिंगा।

मच्छर—संज्ञा पुं. [सं. मत्सर] ईर्ष्या, द्वेष।

मच्छरता—संज्ञा स्त्री. [सं मत्सर + ता] ईर्ष्या, द्वेष।

मच्छी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मछली] मछली।

मच्छीमार—संज्ञा पुं. [हिं. मछली + मार] मछुआ।

मच्छोदरि, मच्छोदरी—संज्ञा स्त्री. [सं. मत्स्योदरी] शांतनु की पत्नी सत्यवती जो व्यास जी की माता थी। उ.—सत्यवती मच्छोदरि नारी। गंगा-तट ठाढ़ी सुकुमारी—१-२२९।

मच्यौ - क्रि. अ. [हिं. मचना] फैल गया, छा गया, भर गया। उ.—ब्रज घर-घर सुख सिंधु मच्यौ री—६०६।

मछ—संज्ञा पुं. [सं. मत्स्य, हिं. मच्छ] मछली। उ.—वह्यौ, मछ बचन किहिं भाँति भाष्यौ—८-१६।

मछली—संज्ञा स्त्री. [सं. मत्स्य, प्रा. मच्छ] मीन, मत्स्य।

मछवा, मछुआ, मछुवा—सं. पुं. [हिं. मछली + उआ] मछली मारनेवाला।

मजदूर—संज्ञा पुं. [फ़ा. मजदूर] बोझा ढोने या छोटा-मोटा काम करने वाले।

मजदूरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मजदूर + ई] (१) बोझा ढोने का काम। (२) काम के पारिश्रमिक स्वरूप मिलने वाला धन।

मजना, मजनो—क्रि. अ. [सं० मज्जन] (१) डूबना, निमज्जित होना। (२) अनुरक्त होना।

मजनूँ—संज्ञा पुं. [अ.] (१) 'लैला' का प्रसिद्ध प्रेमी। (२) प्रेमी। (३) दीवाना। (४) बहुत दुबला-पतला।

मजबूत—वि. [अ. मजबूत] (१) पक्का। (२) अचल, स्थिर। (३) बलवान।

मजबूती—संज्ञा स्त्री. [हिं. मजबूत] (१) पक्कापन। (२) ताकत, बल। (३) साहस।

मजबूर—वि. [अ.] विवश, लाचार।

मजबूरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मजबूर] लाचारी, विवशता।

मजमा—संज्ञा पुं. [अ.] भीड़भाड़, जमाव।

मजमून—संज्ञा पुं. [अ. मज़मून] (१) विषय। (२) लेख।

मजलिस—संज्ञा स्त्री. [अ.] (१) सभा। (२) महफिल।

मजहब—संज्ञा पुं. [अ. मज़हब] सम्प्रदाय, पंथ, मत।

मजहबी—वि. [हिं. मजहब] मत या संप्रदाय-संबंधी।

मजा—संज्ञा पुं. [फ़ा. मज़ः] (१) स्वाद।

मुहा०—मजा चखाना—अपराध या अनुचित व्यवहार का दण्ड देना। (किसी चीज का) मजा पड़ना—चसका लगना।

(२) आनंद, सुख।

मुहा०—मजा उड़ाना (लूटना)—सुख भोगना। मजा किरकिरा होना—सुख में बाधा पड़ना।

(३) हँसी, दिल्लगी।

मुहा०—मजा आ जाना—हँसी-दिल्लगी का प्रसंग उपस्थित होना। मजा देखना (लेना)—तमाशा देखना।

मजाक—संज्ञा पुं. [अ. मज़ाक़] हँसी, दिल्लगी, ठिठोली।

मुहा०—मजाक उड़ाना—उपहास करना।

मजार—संज्ञा पुं. [अ. मज़ार] (१) कब्र। (२) मकबरा।

मजारी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मार्जारी] बिल्ली।

मजाल—संज्ञा स्त्री. [अ.] शक्ति, सामर्थ्य।

मजी—क्रि. अ. [हिं. मजना] अनुरक्त हुई। उ.—मानत नहीं लोक मर्यादा हरि के रंग मजी—११७३।

मजीठ—संज्ञा स्त्री. [सं. मंजिष्ठा] एक लता जिसके डंठलों से लाल रंग तैयार होता है। उ.—सींचिय मजीठ जैसी निकट काटी पाई—३२०९।

मजीर—संज्ञा स्त्री. [सं. मंजरी] मंजरी, गौद। उ.—करि कुंभ कुंजर बिटप भारी चमर चारु मजीर।

मजीरा—संज्ञा पुं. [सं. मंजीर] काँसे की ठोस कटोरियों की जोड़ी जिसको बजाकर संगीत में ताल दी जाती है।

मजूर, मजूरा—संज्ञा पुं. [सं. मयूर] मोर।

संज्ञा पुं. [हिं. मजदूर] मजदूर।

मजूरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मजदूर] मजदूरी।

मजेदार—वि. [फ़ा. मजेदार] (१) स्वादिष्ट। (२) बढ़िया। (३) जिसमें मजा या आनन्द मिलता हो।

मज्ज—संज्ञा स्त्री. [सं. मज्जा] हड्डी या नली के भीतर का भेजा या गूदा।

मज्जत—वि. [हिं. मज्जना] डूबता हुआ, जो डूबने की स्थिति में हो। उ.—अब मोहिं मज्जत क्यों न उबारौ—१-२०९।

मज्जन—संज्ञा पुं. [सं. मज्जन] नहाना, स्नान।

मज्जना, मज्जनो—क्रि. अ. [सं. मज्जन] (१) नहाना, स्नान करना। (२) डूबना, निमग्न होना।

मज्जा—संज्ञा स्त्री. [सं.] हड्डी का भीतरी गूदा।

मज्झ, मझ—क्रि. वि. [सं. मध्य, प्रा. मज्झ] बीच, मध्य।

मझधार—संज्ञा स्त्री. [हिं. मध्य+धार] (१) नदी, सरोवर आदि का बीच। (२) काम की अपूर्णता की स्थिति।

मुहा०—मझधार में छोड़ना—(१) अधूरे काम को छोड़ना। (२) बीच में ही छोड़ देना।

मझला—वि. [सं. मध्य, प्रा० मज्झ+ला] बीच का।

मझाना, मझानो—क्रि. स. [सं. मध्य] बीच या मँझधार में धँसाना।

क्रि. अ.—पैठना, प्रविष्ट होना।

मझार, मझारि, मझारी, मझारे—क्रि. वि. [सं. मध्य, प्रा. मज्झ + हिं. आर, हिं. मझार] बीच में, में, भीतर।

मझावना, मझावनो—क्रि. अ. [हिं. मझाना] पैठना, प्रविष्ट होना।

क्रि. स.—धँसाना, प्रविष्ट कराना।

मझियाना, मझियानो—क्रि. अ. [हिं. माँझी+इयाना] नाव खेना।

क्रि. अ. [सं. मध्य + इयाना] बीच या मध्य से निकलना।

क्रि. स.—बीच से होकर निकालना।

मझियारा—वि. [सं. मध्य, प्रा० मज्झ + इयारा] बीच का।

मझोला—वि. [हिं. मझला] बीच का।

मट—संज्ञा पुं. स्त्री. [हिं. मटका] मटका, मटकी।

मटक—संज्ञा स्त्री. [सं. मट=चलना+क] (१) **गति, चाल।** उ.—मुकुट लटकि अरु भृकुटी मटक देखौ कुंडल की चटक सौं अटकि परी दृगनि लपट—८३९। (२) **मटकने की क्रिया का भाव।** उ.—लटकि निरखंन लग्यौ मटक सब भूलि गयौ हटक ह्वै के गयौ गटकि सिला सों रह्यौ मीचु जाती—२६०९।

मटकत—क्रि. अ. [हिं. मटकना] **अंग लचकाते या मटकाते (हो)।** उ.—मटकत गिरी गागरी सिर तें—८६६।

मटकन—संज्ञा स्त्री. [हिं. मटकना] **मटकने की क्रिया या भाव।** उ.—मुकुट लटकनि भृकुटि मटकन धरे नटवर अंग—१७४२।

मटकना, मटकनो—क्रि. अ. [हिं. मटक] (१) **अंग लचकाकर नखरे के साथ चलना।** (२) **नेत्र, भृकुटी आदि अंगों को ऐसे चलाना जिससे लचक या नखरा जान पड़े।** (३) **वापस आना।** (४) **हिलना-डोलना।**

मटकनि—संज्ञा स्त्री. [हिं. मटकना] (१) **गति, चाल।** (२) **मटकने का भाव।** उ.-(क) मोर पंख सिर-मुकुट की मुख-मटकनि की बलि जाउँ—४५१। (ख) रसिक रंग भौंहनि की मटकनि—५१८। (३) **नखरा।**

मटका—संज्ञा पुं. [हिं. मिट्टी] **घड़ा, माट।**

मटकाना, मटकानो—क्रि. स. [हिं. मटकना] (१) **नेत्र, भृकुटि आदि अंगों का नखरे के साथ संचालन करना।** (२) **मटकने को प्रवृत्त करना।**

मटकावै—क्रि. स. [हिं. मटकाना] **नखरे के साथ अंग चमकाती है।** उ.—चमकति चलै बदन मटकावै ऐसी जोबन जोरी—१६२१।

मटकियो—क्रि. अ. [हिं. मटकना] **हिली-डुली।** उ.—गहि पटकि पुहुमि पर नेंक नहिं मटकियो दंत मनु मृनाल से ऐंचि लीन्हे—२५९६।

मटकी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मटका] **छोटा मटका, कमोरी।** उ.—कोरी मटकी दही जमायौ।

संज्ञा स्त्री. [हिं. मटकाना] **मटकाने का भाव।**

क्रि. अ.—(१) **हिली-डुली।** उ.—उतर न देत मोहिनी मौन ह्वै रही री सुनि सब बात नैकहूँ न मटकी। (२) **भृकुटी, नेत्र, हाथ आदि अंग चमकाकर या चमकाने लगी।** उ.—(क) मुख मुख हेरि तरुनि मुसकानी नैन सैन दै दै सब मटकी—११०५। (ख) बात करत तुलसी मुख मेलै सयन दै मुँह मटकी—१३०१।

मटकीला—वि. [हिं. मटकना] **नखरे दिखानेवाला।**

मटके—क्रि. अ. बहु. [हिं. मटकना] **लौटे, फिरे, हटे।** उ.—नैना बहुत भाँति हटके। बुधि बल छल उपाइ करि थाकी नेक नहीं मटके—पृ.३३६ (५२)।

मटकैं—क्रि. अ. [हिं. मटकना] **मटकने या नखरे दिखाने (से)।** उ.—सूरदास सोभा क्यौ पावै पिय बिहीन धनि मटकैं—१-२९२।

मटकौअल, मटकौवल—संज्ञा पुं. [हिं. मटकना + औवल] **मटकने की क्रिया या भाव।**

मटक्यो, मटक्यौ—क्रि. अ. [हिं. मटकना] (१) **हटे, लौटे, फिरे।** उ.—स्याम सलोने रूप में अरी मन अरच्यौ। ऐसे ह्वै लटक्यौ तहाँ तें फिरि नहिं मटक्यौ बहुत जतन मैं करच्यौ—१४८९। (२) **हिला-डुला, विचलित हुआ।** उ.—पटक्यौ भूमि फेरि नहिं मटक्यौ लीन्हें दंत उपारी—२५९४।

मटमैला—वि. [हिं. मिट्टी + मैला] **मिट्टी के रंग का।**

मटर—संज्ञा पुं. [सं. मधुर] **एक अन्न।**

मटरगश्त, मटरगश्ती—संज्ञा स्त्री. पुं. [हिं. मट्ठर= मंद+फा. गश्त] (१) **धीरे-धीरे घूमना।** (२) **सैर-सपाटा।**

मटरी—संज्ञा स्त्री. [देश.] **एक नमकीन पकवान।** उ.—पिस्ता दाख बदाम छुहारा खुरमा खाझा गूँझा मटरी—८१०।

मटिआना, मटिआनो, मटियाना, मटियानो—क्रि. स. [हिं. मिट्टी+आना] (१) **मिट्टी से माँजना या मलना।** (२) **टालना, सुनी-अनसुनी करना।**

मटिया—संज्ञा स्त्री. [हिं. मिट्टी] (१) **मिट्टी।** (२) **शव, लाश।**

मटियामसान—वि. [हिं. मटिया+मसान] **नष्टप्राय।**

मटियार—वि. [हिं. मिट्टी + यार] **जिसमें मिट्टी चिकनी हो।**

मटियाला, मटीला—वि. [हिं. मटमैला] मटमैला।
मटुक, मटुका—संज्ञा पुं. [हिं. मटका] घड़ा, मटका।
मटुकिया, मटुकी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मटकी] छोटा घड़ा, मटकी। उ.—(क) आरि करत मटुकी गहि मोहन बासुकि संभु डरै—१०-१४२। (ख) कोरी मटुकी दह्यौ जमायौ—३४६।
मट्टी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मिट्टी] मिट्टी।
मट्ठर—वि. [हिं. मंद] सुस्त।
मट्ठा—संज्ञा पुं. [सं. मंथन] छाछ, मही, तक्र।
संज्ञा पुं. [देश०] एक खस्ता पकवान।
मठ—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वासस्थान। (२) साधु या महंत का स्थान। (३) मंदिर, देवालय। उ.—सब दल होहु हुसियार चलहु मठ घेरहि जाई—१० उ०-८।
मठरी—संज्ञा स्त्री. [देश०] एक पकवान।
मठा—संज्ञा पुं. [हिं. मट्ठा] छाछ मही, तक्र।
मठाधीश—संज्ञा पुं. [सं.] मठ का स्वामी, महंत।
मठी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मठ] (१) छोटा मठ। (२) मठ का अधिकारी महंत।
मड़ई—संज्ञा स्त्री. [सं. मंडपी] (१) छोटा मंडप। (२) कुटिया, कुटी।
मड़क—संज्ञा स्त्री. [अनु.] (१) घुमाव या पेंच की बात। (२) भेद, रहस्य।
मड़ना, मड़नो—क्रि. अ. [देश.] बिछना आरंभ होना।
मड़वा—संज्ञा पुं. [सं. मंडप] (१) किसी उत्सव के लिए बनाया गया स्थान, मंडप। (२) मंच।
मड़ाड़—संज्ञा पुं. [देश०] कच्चा तालाब।
मड़ुआ—संज्ञा पुं. [देश.] एक मोटा अनाज।
मड़े—क्रि. अ. [हिं. मड़ना] बिछे, फैले, आरंभ हुए। उ.—चौपरि जगत मड़े जुग बीते—१-६०।
मड़ैआ, मड़ैया—संज्ञा स्त्री. [सं. मंडपी] (१) छोटा मंडप। (२) कुटी, कुटिया, झोपड़ा। उ.—इहाँ हुती मेरी तनिक मड़ैया को नृप आनि छयौ—१०उ.-६८।
मढ़ना, मढ़नो—क्रि. स. [सं. मंडन] (१) घेर देना, लपेट लेना। (२) बाजे के मुँह पर चमड़ा लगाना।
मुहा०—मढ़ आना—(बादल का) घिर आना।
(३) किसी को जबरदस्ती कोई दायित्व सौंपना या किसी पर दोषादि आरोपित करना। (४) टाँकना।
क्रि. अ.—आरंभ होना।
मढ़वाना, मढ़वानो—क्रि. स. [हिं. मढ़ना] किसी को मढ़ने के काम में प्रवृत्त करना।
मढ़ा—संज्ञा पुं. [हिं. मढ़ी] मिट्टी का छोटा घर।
मढ़ाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. मढ़ना] मढ़ने का काम या वेतन।
मढ़ाउ—क्रि. स. [हिं. मढ़ना] जड़ दो, लगा दो, टाँक दो। उ. पँचरंग रेसम लगाउ, हीरा मोतिनि मढ़ाउ बहु बिधि जरि करि जराउ ल्याउ रे बढ़ैया—१०-४१।
मढ़ाना, मढ़ानो—क्रि. स. [हिं. मढ़ना] मढ़ने के काम में प्रवृत्त करना।
मढ़ीं—वि. बहु०. [हिं. मढ़ना] जिनके कुछ मढ़ा गया हो। उ.—खुर ताँबै, रूपै पाठि, सोनैं सींग मढ़ीं। दीन्हीं द्विजनि अनेक हरषि असीस पढ़ीं—१०-२४।
मढ़ी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मठ] (१) छोटा मठ। (२) छोटा मंदिर। (३) कुटी, झोपड़ी। उ.—सूरदास प्रभु हरि न मिलै तो घर तैं भली मढ़ी—२७९४।
मढ़ैया—संज्ञा पुं. [हिं. मढ़ना + ऐया] मढ़नेवाला।
संज्ञा स्त्री—मढ़ी।
मढ़ौं—क्रि. स. [हिं. मढ़ना] लिपटवा दूँ, चढ़वा दूँ, मढ़ा दूँ। उ.—सूरदास सोने कै पानी मढ़ौं चोंच अरु पाँखि—९-१६४।
मणि—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) बहुमूल्य रत्न। (२) श्रेष्ठ व्यक्ति।
मणिधर—संज्ञा पुं. [सं.] सर्प, साँप।
मणिबंध—संज्ञा पुं. [सं.] कलाई, गट्टा।
मणियार—वि. [हिं. मणि + आर] सुन्दर, सुहावने, दर्शनीय। उ.—तिनहू माँझ अधिक छबि उपजत कमलनैन मनियारे—३१७५।
मणी—संज्ञा पुं. [सं. मणिन्] सर्प, साँप।
संज्ञा स्त्री.—मणि, रत्न।
मतंग, मतंगज—संज्ञा पुं. [सं.] (१) हाथी। उ.—(क) जेहरि पगज करचौ गाढ़े मनो मंद मंद गति यह मतंग की—१०४१। (ख) बारन छाँड़ि देत किन

हमको तू जानत मतंग मतवारो—२५९०। (२) बादल। (३) एक ऋषि।

मतंगी—संज्ञा पुं. [सं. मतंगिन्] हाथी का सवार।

मत—संज्ञा पुं. [सं.] (१) सम्मति, राय। उ.—सबै समर्पों सूरदास कौं यह साँचौ मत मेरौ—१-२६६।

मुहा॰—मत उपाना—सम्मति स्थिर करना।

(२) धर्म, पंथ, संप्रदाय। उ.—अबिहित बाद-बिवाद सकल मत इन लगि भेष धरत—१-५५। (३) भाव, आशय, तात्पर्य। उ. बेद पुरान भागवत गीता सब कौ यह मत सार १६८। (४) ज्ञान। (५) पूजा।

वि.—(१) जिसकी पूजा की गयी हो। (२) बुरा।

क्रि. वि. [सं. मा] न, नहीं।

मतना, मतनां—क्रि. अ. [सं. मति+ना] राय या मत स्थिर करना।

क्रि. अ. [सं. मत्त] नशे म चूर होना।

मतरिया—संज्ञा स्त्री. [हिं. माता] माँ, माता।

वि. [सं. मंत्र] मंत्र देनेवाला।

मतलब—संज्ञा पुं. [अ.] (१) आशय, तात्पर्य। (२) अर्थ, माने। (३) स्वार्थ, निजी लाभ। (४) उद्देश्य। (५) संबंध, वास्ता।

मतलबिया, मतलबी—वि. [हिं. मतलब] स्वार्थी।

मतली—संज्ञा स्त्री [हिं. मिचली] मिचली।

मतवार, मतवारा, मतवाला—वि. पुं. [सं. मत्त+वाला, हिं. मतवाला] (१) नशे में चूर। (२) उन्मत्त, पागल। उ.—जनु जल सोखि लयो से सविता जोबन गज मतवार—२०६२। (३) अभिमानी, अहंकारी।

मतवारि, मतवारी, मतवाली—वि. स्त्री. [हिं. मतवाली] उन्मत्त, पागल। उ.—सूर स्याम मेरे आगैं खेलत जोबन-मत-मतवारि—१०-३१४।

मतवारे, मतवारो, मतवाले, मतवालो—वि. [हिं. मतवाला] उन्मत्त, पागल। उ.—(क) बारन छाँड़ि देत किन हमकौ तू जानत मतंग मतवारो—२५९०। (ख) रहु रहु मधुकर मधु मतवारे—२९९०।

मता—संज्ञा पुं. [सं. मत] (१) सम्मति। (२) तात्पर्य।

मति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) बुद्धि, समझ। उ.—(क) त्यागति प्रान निरखि सायक-धनु गति-मति बिकल सरीर—१-२९। ख) आजु बिधाता मति मेरी गई भौन काज बिरमाई—२५३८। (ग) मल्लजुद्ध अति कंस कुटिल मति छल करि इहाँ हँकारे—२५६९। (२) सम्मति, राय। उ.—तारथ भीषम सौं मति पाइ—१-२७६ (३) इच्छा। (४) स्मृति।

वि.—चतुर, बुद्धिमान।

क्रि. व.—मत, नहीं। उ.—( ) [illegible] कह्यौ, मति करौ अन्याइ—१-[illegible]। (ख) [illegible] डरचा, मति मति सापै, व्याकुल बचन कहंत—९-८३।

मतिधीर—वि. [स. मति+धीर] धीर बुद्धिवाला, धीरवान। उ.—स्वायंभु के दुतिय पुत्र उत्तानपाद मतिधीर—सारा. ७१।

मतिधूत—संज्ञा स्त्री. [सं. मति+धूर्त] धूर्त मति, दुष्टता, कुटिलता। उ.—नींद दियैं ही पै बनै छाँड़ि देहु मति-धूत—५८९।

मतिमंत—वि. [स. मतिमत्] बुद्धिमान, चतुर। उ.—(क) दीन्हा सभा बनाय पांडु की मय माया गन अंत। ताकूँ देख भ्रमे दुर्योधन महा मोह मतिमंत—७५९। (ख) त्रियाचरित मतिमंत न समुझत उठि प्रछालि मुख धावत—९-३१।

मतिमंद—वि. [सं. मति+मंद] मंद बुद्धिवाला। उ.—गीध्यौ दुष्ट हेम तस्कर ज्यौं अति आतुर मतिमंद—१-१०२।

मतिमान, मतिमाह—वि. [सं. मतिमान्] बुद्धिमान।

मतिवंत—वि. [सं. मतिमंत्] बुद्धिमान।

मतिहीनी—वि. [सं. मति + हीन] बुद्धिहीन, मूर्ख। उ.—अब तौ सहाय करौ तुम मेरी, हौं पामर मतिहीनी—सारा. ७६६।

मती—संज्ञा स्त्री. [सं. मति] (१) बुद्धि। (२) सम्मति। (३) इच्छा। (४) स्मृति।

क्रि. वि.—मत, न, नहीं।

मतीरा—संज्ञा पुं. [सं. मेट] तरबूज, कलींदा।

मतीस—संज्ञा पुं. [देश.] एक बाजा।

मते—संज्ञा पुं. [सं. मत] सम्मति, सलाह। उ.—काहे

कौ बादिहि बकति बावरी मानत कौन मते अब तेरे —पृ.३३१ (३)।

मतेई—संज्ञा स्त्री. [सं. विमाता] **विमाता।**

मतै—संज्ञा पुं. [सं. मत] **आशय, उद्देश्य, सम्मति।** उ.—मानो दोउ एकहि मतै—३०५०।

मतैक्य—संज्ञा पुं. [सं.] **मत की एकता।**

मतो, मतौ—संज्ञा पुं. [सं. मत] **सम्मति, सलाह, आशय।** उ.—(क) मतौ यह पूछत भूतलराइ—१-२६९। (ख) यामैं कछू खरचियतु नाहीं अपनो मतो न दीजै —२९०६। (ग) बैठि असुर सब सभा रुक्म सों मतौ बिचारचौ—१० उ०-८।

मत्त—वि. [सं.] (१) **मस्त।** (२) **उन्मत्त, मतवाला।** उ. —(क) सुत कुबेर के मत्त मगन भए बिषै रस नैननि छाए (हो)—१-७। (ख) लट लटकनि मनु मत्त मधुपगन मादक मधुहिं पिए—१०-९९।

मत्तकाशिनी—संज्ञा स्त्री. [सं.] **उत्तम स्त्री।**

मत्तता, मत्तताई—संज्ञा स्त्री. [सं. मत्तता] **मस्त या उन्मत्त होने का भाव।**

था—संज्ञा पुं. (१) **माथा।** (२) **सिर।**

मुहा०—मत्था टेकना—**प्रणाम करना।** मत्था मारना—**बहुत सोच-विचार या उलझन करना।**

(३) **किसी चीज का ऊपरी भाग।**

मत्स—संज्ञा पुं. [सं. मत्स्य] **मछली, मत्स्य।**

मत्सर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **ईर्ष्या।** (२) **क्रोध।**

वि.—**ईर्ष्यालु, डाह करनेवाला।**

मत्सरता—संज्ञा स्त्री. [सं.] **डाह, ईर्ष्या।**

मत्सरी—संज्ञा पुं. [सं. मत्सरिन्] **ईर्ष्यालु।**

मत्स्य—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **मछली।** (२) **मीन राशि।** (३) **एक महापुराण।** (४) **विष्णु का पहला अवतार।** उ.—यहैं कहि भए अँतरधान तब मत्स्य प्रभु, बहुरि नृप आपनौ कर्म साध्यौ—८-१६।

मत्स्यगंधा—संज्ञा स्त्री. [सं.] **व्यास की माता सत्यवती।**

मथति—क्रि. स. [हिं. मथना] **मथती या बिलोती है।** उ.—मथति दधि जसुमति—१०-६७।

मथन—संज्ञा पुं. [सं.] **मथने या बिलोने की क्रिया या भाव।** उ.—(क) को कौरव-सिंधु मथन करि या दुख पार उतरिहै—१-२९। (ख) मंदर डरत, सिंधु पुनि काँपत, फिरि जनि मथन करै—१०-१४२।

वि.—**मारने या नाश करनेवाला।** उ.—मधु-कैटभ-मथन मुर भौम केसी भिदन कंस कुल काल अनुसाल हारी।

मथनहार—वि. [सं. मथन+हिं. हार] (१) **मथने या बिलोने वाला।** उ.—सिंधु मनौ इह घोष उजागर। मथनहार हरि रतनकुमार—१०३७। (२) **नाश करनेवाला।**

मथनहारि—वि. [सं. मथन + हिं. हारि] **मथने या बिलोनेवाली।** उ.—मथनहारि सब ग्वारि बुलाई —५२०।

मथना, मथनो—क्रि. स. [सं. मंथन या मथन] (१) **(दही आदि) बिलोना।** (२)। **चलाकर मिलाना।** (३) **नष्ट करना।** (४) **ढूँढ़ना, पता लगाना।** (५) **एक ही क्रिया बार-बार करना।**

संज्ञा पुं.—**मथानी, रई।** उ—घूमि रहे जित तित दधि मथना सुनत मेघ ध्वनि लाजै री।

मथनियाँ, मथनिया, मथनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मथानी] (१) **वह मटका जिसमें दही मथा जाता है।** उ.—माखन चोरि फोरि मथनी को पीवत छाछ पराई सारा—७४९। (२) **मथानी।** उ.—नंद जू के बारे कान्ह छाँड़ि दै मथनियाँ—१०-१४५।

मथवाह—संज्ञा पुं. [हिं. माथा + वाह] **हाथी का महावत।**

मथानी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मथना] **काठ का वह दंड जिससे दही मथा जाता है।** उ.—जब मोहन कर गही मथानी—१०-१४४।

मथि—क्रि. स. [हिं. मथना] (१) **बिलोकर, मथकर।** उ.—ज्ञान-कथा को मथि मन देखौ ऊधौ बहु धोपी। (२) **हिलाकर एक में मिलाकर।** उ.—मथि मृग-मद-मलय कपूर माथैं तिलक किए—१०-२४। (३) **नष्ट करके।** उ.—(क) अघ-अरिष्ट केसी काली मथि दावानलहिं पियौ—१-१२१। (ख) धनुष तोरि गज मारि मल्ल मथि किए निडर जदुबंस—३०१८।

मथिऐ—क्रि. स. [हिं. मथना] **मथी जाती हैं।** उ.—

नित प्रति सहस मथानी मथिऐ, मेघ-सब्द दधि-माट घमर कौ—१०-३३३।

मथित—वि. [सं.] (१) **मथा हुआ।** (२) **घोलकर मिलाया हुआ।**

मथी—वि. [सं. मथिन्] **मथनेवाला।**

संज्ञा स्त्री.—**मथानी।**

मथुरा—संज्ञा स्त्री. [सं. मधुपुर] **व्रज में यमुना के दाहिने किनारे पर बसा एक नगर जिसे मधु नामक दैत्य ने बसाया था जिससे उसका नाम 'मधुपुर' पड़ा। मथुरा की गणना सात पुरियों में है। कंस की यही राजधानी थी और श्रीकृष्ण ने यहीं उसका वध किया था।** उ.—मारि कंस केसी मथुरा मैं मेट्यौ सबै दुराजै—१-३३।

मथुरापति—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **मथुरा का राजा।** उ.—बज्रनाभ मथुरापति कीन्हौ—१-२८८। (२) **मथुरा का राजा कंस।**

मथुरिया—वि. [हिं. मथुरा+इया] **मथुरा से संबंधित।**

मथै—क्रि. स. [हिं. मथना] **मथती या बिलोती है।** उ.—अपनैं घर यौंहीं मथै—७१६।

मथौरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. माथा+औरी] **माथे का एक कार का आभूषण।**

मथ्थ, मथ्था—संज्ञा पुं. [हिं. माथा] **भाल, ललाट।**

मथ्यौ—क्रि. स. [हिं. मथना] (१) **मथा, बिलोया।** (२) **नाश किया।** उ.—गज चानूर हते दव नास्यौ, ब्याल मथ्यौ भयहारे—१-२७।

वि.—**मथा या बिलोया हुआ।** उ.—तुरत मथ्यौ दधि माखन आछौ खाहु देउँ सो आनि—४९४।

मदंध—वि. [सं. मदांध] **गर्व से अंधा।**

मद—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **हर्ष, आनन्द।** (२) **मतवाले हाथी की कनपटी से बहनेवाला द्रव्य, दान।** (३) **मद्य।** (४) **मतवाला पन, नशा।** (५) **उन्मत्तता।** उ.—सत्यवती मच्छोदरि नारी। गंगा तट ठाढ़ी सुकुमारी। तहाँ परासर रिषि चलि आए। बिबस होइ तिहिं कैं मद छाए—१-२२९। (६) **गर्व, अहंकार।** उ.—भोजन करत माँगि घर उनकैं राजमान-मद टारत—१-१२। (७) **प्रमाद, मतिभ्रम।** (८) **कामदेव।**

मुहा०—मद पर आना—(१) **युवा होना।** (२) **उमंग पर आना।** (३) **कामोन्मत्त होना।**

वि.—**उन्मत्त, मतवाला।** उ.—मद गजराज द्वार पर ठाढ़ो हरि कहेउ नेक बचाय।

संज्ञा स्त्री. [अ.] **खाता, प्रसंग।**

मदक—संज्ञा स्त्री. [सं. मद] **एक मादक पदार्थ।**

मदकची—वि. [हिं. मदक+ची] **मदक पीनेवाला।**

मदकल—वि. [सं.] (१) **मतवाला।** (२) **पागल।**

मदगल—वि. [सं. मदकल] **मत्त, मतवाला, मस्त।**

मदजल—संज्ञा पुं. [सं.] **मतवाले हाथी के मस्तक से बहनेवाला मद या दान।**

मदत, मदद—संज्ञा स्त्री. [अ.] (१) **सहायता।** (२) **मजदूर, कारीगर आदि का समूह।**

मददगार—वि. [फा.] **सहायता देनेवाला।**

मदन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **कामदेव।** उ.—मनु मदन धनु-सर सँधाने, देखि घन-कोदंड—१-३०७। (२) **कामक्रीड़ा।**

मदनगोपाल—संज्ञा पुं. [सं. मदन+गोपाल] **श्रीकृष्ण का एक नाम।** उ.—मदनगोपाल देखियत हैं सब अब दुख-सोक बिसारी—२५६६।

मदनदमन—संज्ञा पुं. [सं.] **शिव जी।**

मदनमोहन—संज्ञा पुं. [सं.] **श्रीकृष्ण का एक नाम।** उ.—जब तुम मदनमोहन करि टेरौ इहि सुनि कै घर जाऊँ।

मदन-लेख—संज्ञा पुं. [सं.] **प्रेम-पत्र।**

मदनांतक—संज्ञा पुं. [सं.] **शिव।**

मदनांध—वि. [सं. मदन+अंध] **काम-पीड़ित।**

मदनारि—संज्ञा पुं. [सं.] **शिव।** उ.—गरल ग्रीव, कपाल उर इहिं भाइ भए मदनारि—१०-१६९।

मदपि, मदपी—वि. [सं. मद्यप] **शराबी।**

मदमत्त, मदमत्ता—वि. [सं. मदमत्त] **मतवाला।**

मदमात, मदमाता—वि. [सं. मदमत्त] **गर्व में चूर।** उ.—या देही कौ गरब करत धन-जोबन के मदमात—२-२२। (२) **मदोन्मत्त।** उ.—ज्यौं गज जूथ नेक नहिं बिछुरत सरद मदन मदमातौ—३३१९।

मदमाती—वि. [हिं. मद+माता] **मतवाली, मदोन्मत्त।**

उ.—जोबन मदमाती इतराती बेनि ढुरति कटि लौं छबि बाढ़ी—१०-३०० ।

मदमातो, मदमातौ—वि. [हिं. मदमाता] (१) **गर्व में चूर ।** (२) **मतवाला, मदोन्मत्त ।**

मदर—संज्ञा पुं. [सं. मंडल] **घेरना, मँड़राना ।**

प्र०—मदर करत है—**मँड़राता है ।** उ.—ब्रज पर मदर करत है काम—१० उ.-९८ ।

मदरसा—संज्ञा पुं. [अ० मदर्सः] **पाठशाला ।**

मदांध—वि. [सं.] **मद से उन्मत्त ।**

मदार—संज्ञा पुं. [सं.] **हाथी ।**

संज्ञा पुं. [सं. मंदार] **आकवृक्ष ।**

मदारी—संज्ञा पुं. [अ. मदार] (१) **तमाशा करनेवाला ।** (२) **भालू-बन्दर नचानेवाला ।**

मदालसा—संज्ञा स्त्री. [सं.] **एक गंधर्वकन्या ।**

मदालापी—संज्ञा पुं. [सं.] **कोकिल ।**

मदिर—वि. [सं.] (१) **मादक ।** (२) **मत्त ।**

मदिरा, मदी—संज्ञा स्त्री. [सं. मदिरा] **शराब, मद्य ।**

मदीय—वि. [सं.] **मेरा ।**

मदीला—वि. [सं. मद+हिं. ईला] **नशीला ।**

मदोन्मत्त—वि. [सं.] **मद से चूर ।**

मदोवै—संज्ञा स्त्री. [सं. मंदोदरी] **मंदोदरी ।**

मद्धिम—वि. [सं. मध्यम] (१) **बीच का ।** (२) **मंदा ।**

मद्धे—अव्य. [सं. मध्ये] (१) **बीच में ।** (२) **संबंध में ।** (३) **लेखे में ।**

मद्य—संज्ञा पुं. [सं.] **मदिरा, शराब ।**

मद्यप—वि. [सं.] **मद पीनेवाला, शराबी ।**

मद्यपान—संज्ञा पुं. [सं.] **मदिरा पीने की क्रिया ।**

मध, मधि—संज्ञा पुं. [सं. मध्य] **बीच का भाग ।**

वि.—(१) **नीच ।** (२) **बीच का ।**

अव्य.—**में, बीच में ।** उ.—(क) अंबर हरत द्रुपद-तनया की दुष्ट सभा मधि लाज सम्हारी—१-२२ । (ख) लोह तरैं मधि रूपा लायौ—७-५ । (ग) कमल मधि अलि उड़त—३६० ।

मधिम—वि. [सं. मध्यम] **बीच का ।**

मधु—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **शहद ।** उ.—अब तो हैं हम निपट अनाथ । जैसें मधु तोरे की माखी त्यौं हम बिन ब्रजनाथ—२६९३ । (२) **मिसरी ।** उ.—माखन मधु मिष्ठान महर लै दियौ अक्रूर के हाथ—२५३४ । (३) **फूल का रस, मकरंद ।** (४) **वसंत ऋतु ।** (५) **चैत्र मास ।** (६) **एक दैत्य जिसको मारने से विष्णु का नाम 'मधुसूदन' पड़ा ।** उ.—(क) धरनीधर बिधि बेद उधारयौ मधु सौं शत्रु हयौ—२२६४ । (ख) एई माधो जिन मधु मारे री—२५६८ ।

वि.—(१) **मीठा ।** (२) **स्वादिष्ट ।** उ.—चारौ भ्रात मिलि करत कलेऊ मधु मेवा पकवाना । (३) **सुन्दर, सुकुमार ।** उ.—अंग सुभग सजि ह्वै मधु मूरति नैननि माँह समाऊँ—१०-४९ ।

मधुऋतु—संज्ञा स्त्री. [सं.] **वसंत ऋतु ।**

मधुकंठ—संज्ञा पुं. [सं.] **कोयल, कोकिल ।**

मधुकर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **भौंरा ।** उ.—जिहिं मधुकर अंबुज-रस चाख्यौ क्यौं करील फल भावै—१-६८ । (२) **कामी पुरुष ।**

मधुकरि, मधुकरी—संज्ञा स्त्री. [सं. मधुकर] (१) **भ्रमरी ।** उ.—मुनि मधुकरि भ्रम तजि कुमुदनि कौ राजिवबर की-आस—१-३३९ । (२) **भिक्षा जिसमें केवल पका हुआ भोजन हो ।**

मधुकैटभ—संज्ञा पुं. [सं.] **मधु और कैटभ नामक दो दैत्य जो विष्णु द्वारा मारे गये थे ।**

मधुकोश, मधुकोष, मधुकोस—संज्ञा पुं. [सं. मधुकोष] **शहद की मक्खी का छत्ता ।**

मधुप—संज्ञा पुं. [सं.] **भौंरा, भ्रमर ।** उ.—पिउ पद-कमल कौ मकरंद । मलिन मति मन-मधुप परिहरि बिषय नीरस मंद—९-१० ।

वि.—**मधु का पान करनेवाला ।**

मधुपति—संज्ञा पुं. [सं.] **भौंरा, भ्रमर ।** उ.—निसि दै द्वार कपाट सदल बधु मधुपति प्यावत परम चैन—१९७७ ।

संज्ञा पुं.—**श्रीकृष्ण ।**

मधुपन, मधुपनि—संज्ञा पुं. सवि. [सं. मधुप+नि] **अनेक भ्रमर ।** उ.—(क) कुंचित केस सुबंधु सुबसु मनु उड़ि आए मधुपन के टोल—१३३० । (ख) बिन बिकसे कल कमल कोष तैं मनु मधुपनि की माल—१०-२०७ ।

मधुपर्क—संज्ञा पुं. [सं.] (१) दही, घी, जल, शहद और शकर का घोल जो देवता पर चढ़ाया जाता है।

मधुपायी—संज्ञा पुं. [सं. मधुपायिन्] भौंरा।

मधुपुर—संज्ञा पुं. [सं.] मथुरा का प्राचीन नाम।

मधुपुरि, मधुपुरी—संज्ञा स्त्री. पुं. [सं. मधुपुरी] मथुरा का प्राचीन नाम। उ.—(क) कालिंदी कैं कूल बसत इक मधुपुरि नगर रसाला—१०-२। (ख) धनि कालिंदी मधुपुरी दरसन नासैं पापु—४९२।

मधुबन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) ब्रज का एक बन। उ.—मधुबन तुम कत रहत हरे—ना० ३८२८। (२) मथुरा। उ.—(क) गोपालहिं राखहु मधुबन जात—२५३१। (ख) मधुबन सब कृतज्ञ धरमीले—ना० ४२१२। (३) सुग्रीव का बाग। उ.—हनु, तैं सबकौ काज सँवारचौ। ....। तुरतहिं गमन कियौ सागर तैं बीचहिं बाग उजारचौ। कीन्हौ मधुबन चौर चहूँदिसि माली जाइ पुकारचौ—९-१०३।

मधुमंगल—संज्ञा पुं. [सं.] श्रीकृष्ण का एक सखा गोप। उ.—अर्जुन भोजऽरु सुबल सुदामा मधुमंगल इक ताक—४६४।

मधुमक्खी, मधुमक्षिका—संज्ञा स्त्री. [सं. मधुमक्षिका] शहद की मक्खी।

मधुमती—संज्ञा स्त्री. [सं.] समाधि की अवस्था जिसमें रज और तम गुणों के छूट जाने पर केवल सतगुण के प्रकाश का अनुभव होता है।

मधुमाखि, मधुमाखी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मधुमक्खी] शहद की मक्खी। उ.—(क) ज्यौं मधुमाखी सँचति निरंतर बन की ओट लई—१-५०। (ख) ज्यौं घेरि रही मधुमाखि मिलि झूमक हो—२४११।

मधुमास—संज्ञा पुं. [सं.] चैत और बैसाख।

मधुमासी—संज्ञा स्त्री. [सं. मधु+हिं. मक्खी] मधुमक्खी।

मधुर—वि. [सं.] (१) मधु-जैसे स्वादवाला। (२) जो सुनने में मीठा जान पड़े। उ.—महा मधुर प्रिय बानी बोलत साखामृग तुम किहिं के तात—९-६९। (३) सुन्दर, सुकुमार। (४) प्रिय लगनेवाला। (५) शांत।

मधुरई—संज्ञा स्त्री. [हिं. मधुर+ई] (१) मधुरता। (२) मिठास। (३) सुकुमारता। (४) सुन्दरता।

मधुरा—संज्ञा स्त्री. [सं.] मधुर शब्द-योजना।

मधुराई—संज्ञा स्त्री. [सं. मधुर+आई] (१) मधुरता। (२) मिठास, मीठापन। (३) कोमलता। (४) सुन्दरता।

मधुराज—संज्ञा पुं. [सं.] भौंरा।

मधुराना, मधुरानो—क्रि. अ. [हिं. मधुर+आना] (१) मीठा होना। (२) सुन्दर हो जाना। (३) प्रिय या रुचिकर होना।

मधुरान्न—संज्ञा पुं. [सं.] मिठाई।

मधुरि—संज्ञा स्त्री. [सं. मधुर] सुन्दरता।

मधुरिपु—संज्ञा पुं. [सं.] 'मधु' दैत्य को मारनेवाले विष्णु। उ.—(क) सूरदास अब क्यौं बिसरत है मधुरिपु कौ परितोष—पृ. ३३२ (१८)। (ख) वहाँ भेषज नाना बिधि को अरु मधुरिपु से हैं बैद—३०१३।

मधुरिमा—संज्ञा स्त्री. [सं. मधुरिमन्] (१) मिठास, मीठापन। (२) मधुरता। (३) कोमलता। (४) सुन्दरता।

मधुरी—वि. [सं. मधुर] जो सुनने में प्रिय या रुचिकर लगे। उ.—तारी दै दै गावहीं मधुरं मृदु बानी—१०-१३४।

संज्ञा स्त्री. [सं. माधुर्य] सुन्दरता।

मधुरे—क्रि. वि. [सं. मधुर] धीरे-धीरे। उ.—(क) सकुच सहित मधुरे करि बालो—७००। (ख) मधुरे दोउ रोवन लागे—२६२५। (ग) अस्तुति करत बहुत नाना बिधि मधुरे बेनु बजाये—सारा० ४८९।

मधुरैं—क्रि. वि. [सं. मधुर] (१) मधुर स्वर में। उ.—जसुमति मधुरैं गावै—१०-४३। (२) धीरे-धीरे।

वि. सवि.—जो सुनने में भला लगे। उ.—यह कहि कहि मधुरैं सुर गावति केदारौ—१०-१९७। (ख) मधुरैं सुर गावत—१०-२४२। (ग) करत चले मधुरैं सुर गान—४३८।

मधुवन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) ब्रज का एक वन। (२) सुग्रीव का वन। (३) मथुरा। (४) प्रेमी-प्रेमिका का मिलन-स्थल।

मधुवामन—संज्ञा पुं. [सं.] भौंरा, भ्रमर।

मधुसूदन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) 'मधु' दैत्य को मारनेवाले विष्णु। (२) श्रीराम। (३) श्रीकृष्ण।

मधुहंता—संज्ञा पुं. [सं. मधुहंतृ] 'मधु' नामक दैत्य को मारनेवाले विष्णु।

मधूक—संज्ञा पुं. [सं.] महुए का पेड़ या फूल।

मधुकड़ी, मधुकरी—संज्ञा स्त्री. [सं. मधुकरी] मधुकरी।

मध्य—संज्ञा पुं. [सं.] बीच का भाग।

वि.—बीच का, मध्यम।

मध्यम—वि. [सं.] बीच या मध्य का।

मध्यस्थ—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बीच में पड़कर झगड़ा या विवाद मिटानेवाला। (२) उदासीन, तटस्थ।

मध्यमा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) बीच की अँगुली। (२) प्रिय के अपराध पर कुछ मान करके शीघ्र ही प्रसन्न हो जानेवाली नायिका।

मध्यस्थता—संज्ञा स्त्री. [सं.] मध्यस्थ होने का भाव।

मध्यान, मध्यान्ह, मध्याह्न—संज्ञा पुं. [सं. मध्याह्न] दोपहर का समय। उ.—नृप, तुम हमसौं करौ लराई। कह्यौ करौं मध्यान बिताई—९-१३।

मध्ये—क्रि. वि. [सं. मध्य] संबंध में।

मध्वाचार्य—संज्ञा पुं. [सं.] एक प्रसिद्ध वैष्णव आचार्य जिनका समय बारहवीं शताब्दी है।

मन—संज्ञा पुं. [सं. मनस्] (१) अंतःकरण, चित्त। उ.—मन-बानी कौं अगम अगोचर सो जानै जो पावै—१-२। (२) अंतःकरण की चार वृत्तियों में वह वृत्ति जिससे संकल्प-विकल्प होता है।

मुहा०—(किसी से) मन अटकना (उलझना)—प्रेम होना। मन अटक्यौ—प्रेम हो गया। उ.—ता दिन ते मधुकर, मन मटक्यौ बहुत करी निकरै न निकारयौ—३०३५। मन आना (में आना)—जँचना, समझ पड़ना। मन आई—इच्छा हुई, जँच गई। उ.—(क) नृपति रहूगन कैं मन आई। सुनियै ज्ञान कपिल सौं जाई—५-४। (ख) जमुना तीर आजु सुख कीजै यह मेरैं मन आई—५८१। कहा मन आनी—यह क्या सूझी? ऐसा अनुचित विचार क्यों किया है? उ.—इंद्र देखि इरषा मन मन लायौ। करि कै क्रोध न जल बरसायौ। रिषभदेव तबहीं यह जानी। कह्यौ, इंद्र यह कहा मन आनी—५-२। मन करना—इच्छा करना। करत इहाँ को मन—यहाँ आने की इच्छा करते हैं। उ.—कबहुँक स्याम करत इहाँ को मन कैंधौ चित सुध्यो बिसराई—३११८। मन का (कौ)—प्रिय या रुचिकर। उ.—तेरे मन कौ यहाँ कौन है—१०-३२०। मन (का) खराब होना—(१) मन फिरना। (२) अप्रसन्न होना। (३) बीमार होना। मन चलना—इच्छा होना। चलत कहाँ मन—मन कहाँ-कहाँ या किधर-किधर दौड़ता है। उ०—चलत कहाँ मन और पुरी तन जहाँ कछु लैन न दैन—४९१। मन चुराना (चोराना)—मोह लेना, मुग्ध कर लेना। मन लियौ चुराइ—मन मुग्ध कर लिया। उ.—कब देखौं वह मोहन मूरति जिन मन लियौ चुराई—६७९। चोरत मन—मन मुग्ध करते हैं। उ.—कछु दिन करि दधि-माखन चोरी अब चोरत मन मोर—७७६। मन टूटना—(१) निराश या हताश होना। (२) चारों ओर वेग से दौड़ना या लपकना। मन दसहूँ दिसि टूटै—दसों दिशाओं में मन दौड़ता या लपकता है। उ.—करनी और कहै कछु और मन दसहूँ दिसि टूटै—१-१९। मन ढरना—प्रेम या अनुराग होना। मन ढरयो—प्रेम हो गया, मन मुग्ध हो गया। उ.—रूपहीन कुलहीन कूबरी तासौं मन जो ढरयो—३०९२। मन देना—(१) मन लगाना। (२) ध्यान देना। मन दीनौं—मन लगाया। उ.—भाव-भक्ति कछु हृदय न उपजी मन बिसया मैं दीनौं—१-६५। (किसी पर) मन धरना—(१) ध्यान देना। (२) मन लगाना। मन न धारै—चित्त नहीं लगाता है। उ.—सूरदास स्वामी मनमोहन तामें मन न धरै—४८३। मन तोड़ना—(१) निराश या हताश करना। (२) निराश या हताश होना, साहस छोड़ना। मनहिं तोरै—साहस छोड़ देता है। उ.—कहुँ रसना सुनत स्रवन देखत नयन सूर सब भेद गुन मनहिं तोरै। मन बँधना—मुग्ध, आसक्त या लीन होना। मन बँध्यौ—मुग्ध, आसक्त या लीन हुआ। उ.—सूरदास प्रभु कौ मन सजनी, बँध्यौ राग की डोरि—६५७। मन (में) बसना—अच्छा लगना, रुचिकर होना। उ.—सूरदास मन बसैं तोतरे बचन बर—१०-१५१। मन बाँधना—मुग्ध, आसक्त या लीन करना। मन बाँध्यौ—मुग्ध या आसक्त हुआ। उ.—कनक

कामिनी सौं मन बाँध्यौ—१-७४। मन बस में करना—मुग्ध या आसक्त कर लेना। बस कीन्हौ मन मेरौ—मेरा मन मुग्ध या आसक्त कर लिया है। उ.—रिसहिं उठी जहराइ, कह्यौ, यह बस कीन्हौं मन मेरौ—१९९९। मन बिगड़ना—(१) मन का हटना या उदासीन होना। (२) कै या मचली जान पड़ना। (३) झुँझलाना, क्रुद्ध होना। (४) चित्त अस्वस्थ होना। मन बढ़ना—साहस या उत्साह बढ़ना। मन बुझना—चित्त में उमंग या उत्साह न होना। मन बूझना—मन की थाह लेना। मन बढ़ाना—उत्साह या साहस बढ़ाना। मन बढ़ायौ—उमंग या उत्साह बढ़ाकर उ.—दियौ सिर पाँव नृपराउ ने महर को आर पहरावनी सब दिखाए। अतिहिं सुखपाइ कै लियौ सिर नाइ कै हरषि नँदराइकै मन बढ़ायौ। मन (का) बूझना (मानना)—चित्त में शांति या संतोष होना। मन का मारा—खिन्न या दुखित चित्त वाला। मन का मैला—खोटा, कपटी। मन की मन में रहना—इच्छा पूरी न होना। मन के लड्डू खाना—कोरी कल्पना का आनन्द लेना, व्यर्थ की या असंभव आशा पर प्रसन्न होना। मन खोलना—रहस्य प्रकट कर लेना। मन चलना—इच्छा होना। मन (को) टटोलना—मन की थाह लेना। मन डोलना—(१) चित्त का चंचल हो जाना। (२) लोभ हो आना, नियत डोलना। मन डोलाना—(१) चित्त को चंचल करना। (२) नियत डुलाना, लोभ करना। मन न डोलावै—चित्त को चंचल न करे। उ.—भोजन करत गह्यौ कर रुक्मिनि सोइ देहु जो मन न डोलावै। मन देना—(१) ध्यान लगाना। (२) लीन या मुग्ध होना। मन फटना (फिर जाना)—घृणा या चिढ़ हो जाना। मन फिराना (फेरना)—चित्त हटाना। मन बहलाना—दुख भुलाने का प्रयत्न करना, खिन्न चित्त को प्रसन्न करना। मन भरना—(१) विश्वास होना। (२) तृप्ति, संतोष या समाधान होना। मन भर जाना—(१) अघा जाना, तृप्त हो जाना। (२) इच्छा या प्रवृत्ति न रह जाना। मन भाना—भला या रुचिकर लगना। मन भारी करना—खिन्न या उदास होना। मन मानना—(१) तृप्ति, संतोष या समाधान होना। (२) निश्चय या विश्वास होना। (३) भला या रुचिकर लगना, भा जाना। (४) प्रेम या अनुराग होना। मन मानत—संतुष्ट होता है। उ.—क्यों मन मानत है इन बातन—३०२५। कैसे मन मानै—कैसे संतोष हो सकता है? उ.—मधुकर कहि कैसैं मन मानै। जिनकौं इक अनन्य ब्रत सूझै, क्यौं दूजौ उर आनै—ना० ४३३३। मन मान्यौ—अनुराग हो गया। उ.—(क) सखी री, स्याम सौं मन मान्यौ। नीकैं करि चित कमल नैन सौं घालि एकठौं सान्यौ—१२०२। (ख) नंदलाल सौं मेरौ मन मान्यौ कहा करैगौ कोई री—१२०३। मन मिलना—(१) प्रेम होना। (२) मित्रता होना। मन में आना-(१) प्रतिक्रिया-स्वरूप किसी विचार या भाव का उत्पन्न होना। (२) जान या समझ पड़ना। (३) भला या रुचिकर लगना। मन न आये—प्रतिक्रिया-स्वरूप कोई भाव जाग्रत न हुआ। उ.—तासों उन कटु बचन सुनाये। पै ताके मन कछू न आये। मन नहिं आवे—समझ या जान नहीं पड़ता। उ.—यह तनु क्यों ही दियौ न जावे। और देत कछु मन नहिं आवे। मन में आनना—सोचना, विचार करना। मन में जमना-(१) उचित जान पड़ना। (२) ध्यान में आना। मन में ठानना—दृढ़ संकल्प करना। मन में धरना—(१) प्रकट न करना। (२) स्मरण रखना। (३) ध्यान देना, श्रद्धा या विश्वास रखना। न मन मैं धरै—ध्यान नहीं देता है, श्रद्धा या विश्वास नहीं रखता है। उ.—जज्ञ सराध न कोऊ करै। कोऊ धर्म न मन मैं धरै—१-२९०। मन मैं यह धरी—यह निश्चय या संकल्प किया है। उ.—पै तुम बिनती बहु बिधि करी। तातैं मैं मन मैं यह धरी—६-५। मन में बैठना—(१) ठीक जान पड़ना। (२) ध्यान में आना। मन में रखना—(१) प्रकट न करना। (२) स्मरण रखना। मन में भरना—हृदयंगम करना। मन में लाना—सोचना, विचार करना। मन में मानना—ध्यान देना, परवाह करना। मन मैं नहिं मान्यौ—कुछ परवाह या चिंता न की, ध्यान न दिया। उ.—छाक खाय

जूठन ग्वालन की कछु मन मैं नहिं मान्यौ—सारा. ७५० । मन मारना—(१) खिन्न या उदास होना । (२) इच्छा या उमंग को दबाना । मन मारि—खिन्न या उदास होकर । उ.—भवन ही मन मारि बैठी सहज सखी इक आई । मन मारे—खिन्न, उदास । उ.—(क) आए नंद घरहिं मन मारे—५४१ । (ख) प्रिया-वियोग फिरत मारे मन परे सिंधु तट आनि । मन मारैं—खिन्न या उदास होता है । उ.—भूसुत सत्रु थान किन हेरत लखत मोहिं मन मारैं । मन मूसना—मन हरना । मूसे मन—मेरा मन रूपी धन हरकर । उ.—जात कहाँ बलि बाँह छुँड़ाये मूसे संपति मेरी (मन-संपति सब मेरी)—१५०६ । मन मिलना—(१ समान स्वभाव होना । (२) मित्रता या प्रेम होना । मन को मोहना—चित्त लुभाना या आकृष्ट करना । मन (को) मैला करना—खिन्न या अप्रसन्न होना । (किसी से) मन मोटा होना—अनबन होना । (किसी का) मन मोटा होना—विरक्त या तटस्थ होना । मन मोड़ना—(१) चित्त को दूसरी ओर लगाना । (२) विरक्त या तटस्थ रहना । (किसी का) मन रखना—इच्छा या कामना पूरी करना । मन राखे काम—इच्छा पूरी करना ही उचित है । उ.—उनहीं को मन राखे काम—१९९४ । मन (मे) रखना—ध्यान में बसाना । मन राखत—ध्यान में रखते हैं । उ.—जिहिं जिहिं भाँति ग्वाल सब बोलत, सुनि स्रवननि मन राखत—४९३ । मन लगना—(१) तबियत लगना । (२) ध्यान बना रहना । (३) प्रेम या अनुराग होना । नहिं मन लागत—जी नहीं लगता है, तबियत घबराती है । उ.—(क) नैंकहूँ कहूँ मन न लागत काम-धाम बिसारि—७७७ । (ख) नैंक नहीं घर सौं मन लागत—११७५ । मन लग्यो (लाग्यौ)—प्रेम या अनुराग हुआ । उ.—(क) जाकौ मन लाग्यौ नंदलालहिं ताहि और नहिं भावै—२-१० । (ख) सूरदास चित ठौर नहीं कहुँ मन लाग्यौ नँदलालहिं सौं—११८० । (ग) मेरो मन रसिक लग्यौ नँदलालहिं झखत रहत दिन रातौ—३११६ । मन लगाना—(१) ध्यान देना, सोचना, बिचारना । (२) जी बहलाना, विनोद करना । (३) प्रेम या अनुराग करना । मन नहिं अनत लगावै—दूसरी ओर ध्यान नहीं देता, कुछ और सोचता ही नहीं । उ.—ऐसे सूर कमल लोचन बिनु मन नहिं अनत लगावै जो—२८०४ । मन लाना—(१) जी लगाना, ध्यान देना । (२) प्रेम करना, आसक्त होना । मन लायौ—प्रेम किया । उ.—सूरज, त पर-तिय मन लायौ, इंद्रानी तजिकै ह्याँ आयौ—६-८ । मन से उतरना—(१) आदर-भाव न रह जाना । (२) याद न रहना । मन से उतरना—आदर-भाव न रखना । (२) भुलाना, याद न रखना । मन हरना—मोह लेना, मुग्ध करना । मन हरि लियौ—मुग्ध कर लिया । उ.—मन हरि लियौ मुरारि—७६४ । मन हरेउ—मन मुग्ध हो गया । उ.—सूरदास मेरौ मन वाकी चितवन देखि हरेउ री । मन हरचौ—मन मुग्ध कर लिया, मोह लिया । उ.—सूर स्याम मन हरचौ तुम्हारौ हम जानी इह बात बनाई—११८६ । (किसी का) मन हाथ में करना (लेना) मन वश में करना । मन ही मन—चुपचाप, भीतर ही भीतर, बिना कुछ कहे-सुने । उ.—(क) फरकत बदन उठाइ कै मन ही मन भावै—१०-७२ । (ख) रिसनि रही अहराइ कै मन ही मन बाम—२१२६ । मन हरा होना—चित्त प्रसन्न होना । मन हारना—साहस छोड़ना, उत्साह न रह जाना ।

(३) इच्छा, इरादा, विचार ।

मुहा०—मन करना—इच्छा करना । मन माना—इच्छानुसार । मन माने की बात—अपनी-अपनी रुचि या इच्छा है । उ.—ऊधौ मन माने की बात । दाख छुहारा छाँड़ि कै बिष कीरा बिस खात—ना० ४६३९ । मन होना—इच्छा होना, जी चाहना ।

संज्ञा पुं. [सं. मणि] (१) मन । (२) चालीस सेर की एक तौल ।

मनई—संज्ञा पुं. [सं. मानव] आदमी, मनुष्य ।

मनकना, मनकनो—क्रि. अ. [अनु०] (१) हाथ-पैर हिलाना-डुलाना । (२) विरोध या तर्क-वितर्क करना ।

मनकरा—वि. [सं. मणि + हि. कर] चमकदार ।

मनका—संज्ञा पुं. [सं. माणिक्य] (१) माला या सुमिरनी की गुरिया। (२) माला, सुमिरनी।

मनकामना—संज्ञा स्त्री. [हिं. मन+कामना] इच्छा, अभिलाषा। उ.—जौलौं मन-कामना न छूटै—२-१९।

मनगढ़ंत—वि. [हिं. मन+गढ़ना] जो कल्पित या गढ़ा हुआ हो।

संज्ञा स्त्री—कोरी कल्पना।

मनचला—वि. [हिं. मन+चलना] (१) चंचल चित्तवाला। (२) रसिक।

मनचाहता—वि. [हिं. मन+चाहना] (१) जो प्रिय लगे। (२) जो मन के अनुकूल हो।

मनचाहा—वि. [हिं. मन+चाहना] इच्छित।

मनचीतना, मनचीतनो—क्रि. स. [हिं. मन+चाहना] अच्छा लगना।

मनचीता, मनचीते, मनचीत्यौ—वि. [हिं. मन+चेतना] मन में चाहा या सोचा हुआ। उ.—(क) घर डर बिसरेउ बढ़ेउ उछाह। मनचीते हरि पायो नाह। (ख) सूर स्याम दासी सुख सोवहु भयौ उभय मन-चीत्यौ—२८८४।

मनजात—संज्ञा पुं. [हिं. मन+सं. जात] कामदेव।

मनन—संज्ञा पुं. [सं.] चिंतन, विचार।

मननशील—वि. [सं. मनन+शील] चिंतनशील।

मननाना, मननानो—क्रि. अ. [अनु. मन] गूँजना।

मनबांछित—वि. [सं. मनोवांछित] इच्छित, मनभाया। उ.—(क) मनबांछित फल सबहिन पायौ—सारा, १६५। (ख) माँगौ सकल मनोरथ अपने मनबांछित फल पायौ—सारा. ३६८।

मनभाया, मनभायो—वि. [हिं. मन+भाना] जो मन को रुचे या भला लगे। उ.—सूरदास प्रभु रसिक सिरोमनि कियौ कान्ह ग्वालिनि मनभायौ।

मनभावता, मनभावतो—वि. [हिं. मन+भाना] (१) रुचने या प्रिय लगनेवाला। (२) प्रिय, प्यारा।

मनभावन, मनभावनो—वि. [हिं. मन+भाना] (१) रुचने या प्रिय लगनेवाला। उ.—चरन धोइ चरनोदक लीनो, कह्यौ माँगु मनभावन—८-१३। (२) प्रिय, प्यारा। उ.—(क) जुग-जुग जीवहु कान्ह सबही मन-भावन रे। (ख) हित कै चित की मानत सबके जिय की जानत सूरदास मनभावन—१०-२५१।

मनभावनी—वि. स्त्री. [हिं. मनभावना] (१) रुचनेवाली। उ.—भाट बोलैं बिरद नारी बचन कहैं मनभावनी। (२) प्यारी।

मनमत—वि. [हिं. मैमंत] मतवाला।

मनमति—वि. [हिं. मन+मति] मनमौजी, स्वेच्छाचारी।

मनमथ—संज्ञा पुं. [सं. मन्मथ] कामदेव। उ.—लटकन सीस कंठ मनि भ्राजत मनमथ कोटि वारनैं गै री—१०-५५।

मनमथारि—संज्ञा पुं. [सं. मन्मथ+अरि] शिवजी।

मनमानना—वि. [हिं. मन+मानना] मनचाहा।

मनमाना—वि. [हिं. मन+मानना] (१) जो मन को रुचे। (२) मन के अनुकूल। (३) मनचाहा।

मनमानै—वि. [हिं. मन+मानना] जो रुचे या मन चाहे। उ.—मनमानै सोऊ कहि डारौ—३००४।

मनमुखी—वि. [हिं. मन+मुख्य] मनचाहा काम करनेवाला, स्वेच्छाचारी।

मनमुटाव—संज्ञा स्त्री. [हिं. मन+मोटा] बैर, वैमनस्य।

मनमोदक—संज्ञा पुं. [हिं. मन+मोदक] सुखदायी, परंतु कल्पित बात।

मनमोहन, मनमोहना, मनमोहनो—वि. [हिं. मन+मोहन] मन को मोहने या लुभानेवाला, चित्ताकर्षक।

संज्ञा पुं.—(१) श्रीकृष्ण का एक नाम। उ.—(क) जाको मनमोहन अंग करै—१-३७। (ख) स्यामा स्याम मिले ललितादिहि सुख पावत मनमोहनो—२२८०।

मनमौजी—वि. [हिं. मन+मौज] मनमाना काम करनेवाला, स्वेच्छाचारी।

मनरंज, मनरंजन—वि. [हिं. मन+रंजना] मन को आनंदित करने वाला, मनोरंजक। उ.—(क) सिव-बिरंचि खंजन मनरंजन छिन छिन करत प्रबेस—१-३२९। (ख) खंजन मनरंजन न होंहि ए कबहीं नहिं अकुलात—२७७७।

संज्ञा पुं.—मनोरंजन।

मनलाड़ू—संज्ञा पुं. [हिं. मन+लड्डू] सुखद कल्पना,

मनमोदक । उ.—काकी भूख गई मनलाड़ू सो देखहु चित चेत—३२५६ ।

मनवांछित—वि. [सं. मनोवांछित] **मनचाहा, अभीष्ट** ।

मनवाना, मनवानो—क्रि. स. [हिं. मानना] **मानने की प्रेरणा देना** ।

मनशा—संज्ञा स्त्री. [अ.] (१) **इच्छा** । (२) **तात्पर्य** ।

मनसना, मनसनो—क्रि. स. [हिं. मानस] (१) **इच्छा या विचार करना** । (२) **संकल्प या निश्चय करना** । (३) **जल लेकर संकल्प करके दान करना** ।

मनसब—संज्ञा पुं. [अ.] (१) **पद** । (२) **काम** ।

मनसबदार—संज्ञा पुं. [फा.] **जो किसी मनसब पर हो** ।

मनसा—संज्ञा स्त्री. [सं.] **एक देवी** ।

संज्ञा स्त्री. [सं. मानस] (१) **इच्छा, कामना, अभिलाषा, मनोरथ** । उ.—(क) सूरदास ज्यौं मन तें मनसा अनत कहूँ नहिं जावै । (ख) सूर प्रभु की दरस दीजै नहीं मनसा और—३३८३ । (२) **संकल्प, निश्चय** । (३) **मन** । उ.—मनसा-बाचा-कर्म अगोचर सो मूरति नहिं नैन धरी—१-११५ । (४) **बुद्धि** । उ.—(क) पाँच कमल मधि जगल कमल लखि मनसा भई अपंग । (ख) सूर हरि की निरखि सोभा भई मनसा पंग—६२७ । (५) **अभिप्राय, तात्पर्य** ।

वि.—(१) **मन से उत्पन्न** । (२) **मन का** । (३) **मन में किया हुआ, मानसिक** । उ.—मनसा पाप लगै नहिं कोइ—१-२९० ।

क्रि. वि.—**मन से, मन के द्वारा** ।

मनसाना, मनसानो—क्रि. अ. [हिं. मनसा] **उमंग में आना** ।

क्रि. स. [हिं. मनसाना] **संकल्प आदि पढ़कर या पढ़ाकर दान आदि कराना** ।

मनसानाथ—वि. [हिं. मनसा+सं. नाथ] **इच्छा पूरी करनेवाला** । उ.—मनसानाथ मनोरथ पूरन सुख निधान जाकी मौज धनी—१-३९ ।

मनसायन—संज्ञा पुं. [हिं. मानुस+आयन] **मन-बहलाव के लिए जाने का स्थान** ।

मनसि—क्रि. वि. [हिं. मन] **मन से** ।

मनसिज—संज्ञा पुं. [सं.] **कामदेव** । उ.—तब को इंद्र सम्हारि तुरत ही मनसिज साजि लियौ—३४७४ ।

मनसुखा—संज्ञा पुं. [हिं मन+सुख] **श्रीकृष्ण का सखा एक गोप** । उ.—रैता पैता मना मनसुखा हलधर संगहिं रैहौं—४१२ ।

मनसूबा—संज्ञा पुं. [अ.] (१) **युक्ति** । (२) **इरादा** ।

मनसूर—संज्ञा पुं. [अ.] **एक सूफी साधु** ।

मनस्क—संज्ञा पुं. [सं.] **मन** (अल्पार्थक रूप) ।

मनस्ताप—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **आंतरिक दुख** । (२) **पछतावा, अनुताप** ।

मनस्वी—वि. [सं. मनस्विन्] **बुद्धिमान** ।

मनहर—वि. [सं. मनोहर] **मन हरनेवाला** । उ.—(क) बेनी लटकन मसिबुंदा मुनि-मनहर—१०-१५१ । (ख) बिनय बचननि सुनि कृपानिधि चले मनहर चाल—१०-२१८ ।

संज्ञा पुं.—**घनाक्षरी छन्द** ।

मनहरण, मनहरन—संज्ञा पुं. [हिं. मन+हरण] **मन हरने की क्रिया या भाव** ।

वि.—**मन हरनेवाला, मनोहर** ।

मनहार, मनहारि, मनहारी—वि. [हिं. मनोहारी] **सुंदर** ।

मनहुँ, मनहूँ—अव्य. [हिं. मानौ] **मानो, जैसे** ।

मनहूस—वि. [अ.] (१) **अशुभ** । (२) **जो देखने में बुरा लगे** । (३) **आलसी, निकम्मा** ।

मना—वि. [अ.] **जिसको करने की आज्ञा न हो, वर्जित** ।

संज्ञा पुं. [हिं. मन] (१) **मन, चित्त** । उ.—मना (मन) रे, माधव सौं करि प्रीति—१-३२५ । (२) **श्री कृष्ण का सखा एक गोप** । उ.—रैता पैता मना मनसुखा हलधर संगहिं रैहौं—४१२ ।

मनाइए, मनाइये—क्रि. स. [हिं. मनाना] **प्रसन्न कीजिए, मान मोचन कीजिए** । उ.—अति रिस कृष ह्वै रही किसोरी करि मनुहारि मनाइये—१६८८ ।

मनाई—क्रि. स. [हिं. मनाना] **सेवा-पूजा की या करके** । उ.—(क) यह औसर कब ह्वैहै फिरि कै पायौ देव मनाई—१०-१८ । (ख) जा सुख कौं सिव-गौरि मनाई तिय-ब्रत-नेम अनेक करी—१०-८० ।

संज्ञा स्त्री. [हिं मनाही] **न करने की आज्ञा** ।

मनाऊ—क्रि. स. [हिं. मनाना] (१) **सेवा-पूजा से प्रसन्न**

करूँ। (२) स्तुति या प्रार्थना करूँ। उ.—पुनि-पुनि देव मनाऊँ—सारा. ७८० ।

मनाक, मनाक्, मनाग—[सं. मनाक्] थोड़ा, अल्प।

मनादी—संज्ञा स्त्री. [अ. मुनादी] ढिंढोरा, घोषणा।

मनाना, मनानो—क्रि. स. [हिं. मानना] (१) दूसरे को मानने या स्वीकारने को प्रवृत्त करना। (२) रूठे हुए को प्रसन्न या संतुष्ट करने के लिए अनुनय-विनय या मीठी-मीठी बातें करना। (३) मनोरथ पूरा करने के लिए देवी-देवता आदि की पूजा, सेवा या प्रार्थना करना। (४) स्तुति या प्रार्थना करना। (५) कामना या इच्छा करना।

मनायो, मनायौ—क्रि. स. [हिं. मनाना] मनोरथ पूरा करने के लिए देवी-देवता की प्रार्थना की। उ.—मुदित ह्वै गई गौरि मंदिर जोरि करि बहु बिधि मनायौ—१० उ०-१८।

मनावत—क्रि. स. [हिं. मनाना] मीठी-मीठी बातें करके रूठे हुए को प्रसन्न करता है। उ.—ससि कौं देखि आइ हठि ठानी, करि मनुहार मनावत-सारा. ४३९।

मनावतिं—क्रि. स. स्त्री. [हिं. मनाना] प्रार्थना या स्तुति करती हैं। उ.—ब्रज-जुवती स्यामहिं डर लावतिं। बारंबार निरखि कोमल तनु कर जोरहिं बिधि कौं जु मनावतिं—३९०।

मनावति—क्रि. स. स्त्री. [हिं. मनाना] (१) स्तुति या प्रार्थना करती है। उ.—कबहुँक कुल देवता मनावति—१०-११५। (२) मनोरथ पूर्ण करने के लिए प्रार्थना करती है। उ.—(क) यह कहि कहि देवता मनावति। (ख) जोरि कर बिधि सों मनावति असीसै दै नाम—२५६५।

मनावन—संज्ञा पुं. [हिं. मनाना] (१) मनाने की क्रिया या भाव। (२) रूठे हुए को प्रसन्न करने की क्रिया या भाव; मनाने के लिए। उ.—(क) स्याम मनावन मोहिं पठाई—२०२२। (३) स्तुति या प्रार्थना करने की क्रिया या भाव।

मनावहिं—क्रि. स. [हिं. मनाना] मीठी-मीठी बातें कहकर रूठे हुए को मनाते हैं। उ.—हम नाहिन कमला सी भोरी करि चातुरी मनावहिं—२९८५।

मनावहु—क्रि. स. [हिं. मनाना] मनोरथ पूर्ण करने के लिए देवी-देवता की प्रार्थना करो। उ.—वह देवता मनावहु सब मिलि तुरत कमल जा देइ पठाइ--५३१।

मनावैं—क्रि. स. [हिं. मनाना] स्तुति या प्रार्थना करती हैं। उ.—ब्रज जुवती हरि चरन मनावैं--६३१।

मनावै—क्रि. स. [हिं मनाना] (१) मनोरथ पूर्ण करने के लिए देवी-देवता की प्रार्थना या स्तुति करती है। उ.—(क) सूरदास ऐसे प्रभु तजि कै घर-घर देव मनावै—१-३१। (ख) कबहिं घुटुरुवनि चलहिंगे कहि-बिधिहिं मनावै—१०-७४। (२) कामना करता है। उ.—ऐसौ को ठाकुर जन-कारन दुख सहि भलौ मनावै—१-१२२।

मनाही—संज्ञा स्त्री. [हिं. मना] न करने की आज्ञा।

मनि—संज्ञा स्त्री. [सं. मणि] (१) मणि, रत्न। (२) सर्प के मस्तक से प्राप्त (कल्पित) मणि। उ.—निरखति रहौं फनिग की मनि ज्यौं—१०-२९६।

मनिआ—संज्ञा स्त्री. [हिं. मनिका] (१) माला का दाना, गुरिया। (२) कंठी, माला। उ.—हौं करि रही कंठ में मनिआ निर्गुन कहा रसहिं ते काज—३३५२।

मनिका—संज्ञा स्त्री. [सं. मणि] माला का दाना, गुरिया।

मनिधर—संज्ञा स्त्री. [सं. मणिधर] साँप, सर्प। उ.—मानौं मनिधर मनि ज्यौं छाँड़चौ फन तर रहत दुराए—६७५।

मनिमय—वि. [सं. मणि+हिं. मय] (१) मणियों से युक्त। (२) जिसमें मणियाँ जड़ी हों। उ.—मनिमय भूमि नंद के आलय—१०-१२१।

मनियाँ, मनिया—संज्ञा स्त्री. [सं. माणिक्य] (१) कंठी या माला में पिरोया जानेवाला दाना। उ.—अपने हाथ पोहि पहिरावत कान्ह कनक के मनियाँ—२८७९। (२) मोती या गजमोती आदि जो कठुला आदि में पिरोया जाय। उ.—कठुला कंठ मंजु गज-मनियाँ—१०-१०६। (३) कंठी, माला। उ.—हौं करि रही कंठ में मनियाँ (मनिआ) निर्गुन कहा रसहिं ते काज—३३५२।

मनियार, मनियारा, मनियारो, मनियारौ--वि. [सं. मणि+आर] (१) चमकीला। (२) सुहावना, शोभायुक्त।

मनिहार—संज्ञा पुं. [सं. मणिकार, प्रा० मनियार] चूड़ी बनाने-बेचने वाला।

मनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मान=अभिमान] घमंड, गर्व।

संज्ञा स्त्री. [सं. मणि] (१) मणि, रत्न। उ.—कहा काँच संग्रह के कीने हरि जो अमोल मनी—८९४। (२) सर्प के मस्तक की मणि। उ.—खाइ न सकै खरचि नहिं जानै ज्यौं भुवंग-सिर रहत मनी—१-३९। (३) श्रेष्ठतम व्यक्ति। उ.—तिहूँ लोक के धनी मनी तुमही को सो है—१० उ०-८।

मनीषा—संज्ञा स्त्री. [सं.] बुद्धि।

मनीषि, मनीषी—वि. [सं. मनीषि] (१) पंडित, ज्ञानी। (२) बुद्धिमान।

मनु—संज्ञा पुं. [सं.] (१) ब्रह्मा के 'स्वायम्' आदि वे चौदह पुत्र जिनसे 'मानव' जाति का आरंभ माना जाता है। उ.—(क) पुनि दच्छादि प्रजापति भए। स्वयंभूव सो आदि मनु जए—३-८। (ख) स्वायंभू मनु के सुत दोइ—४-८। (२) चौदह की संख्या।

अव्य० [हिं. मानना] मानो, जैसे। उ.—(क) मनु संचित भू-भार उतारन चपल भए अकुलाए—१-२७३। (ख) मनु मदन धनु-सर सँधाने—१-३०७।

मनुआँ, मनुआ—संज्ञा पुं. [हिं. मन] मन।

संज्ञा पुं. [हिं. मानव] मनुष्य।

मनुज—संज्ञा पुं. [सं.] मनुष्य।

मनुजात—वि. [सं.] 'मनु' से उत्पन्न।

संज्ञा पुं.—आदमी, मनुष्य।

मनुजाद—वि. [सं.] मनुष्य को खानेवाला।

संज्ञा पुं. [सं.] राक्षस।

मनुरंजन—वि. [हिं. मनोरंजन] मनोरंजन करनेवाला। उ.—जगहित जनक-सुता मनुरंजन—९८२।

मनुश्रेष्ठ—संज्ञा पुं. [सं.] विष्णु।

मनुष—संज्ञा पुं. [सं. मनुष्य] (१) मनुष्य। उ.—कह्यौ तिन तुम्हैं हम मनुष जानत नहीं। (२) (स्त्री का) पति।

मनुषी—संज्ञा स्त्री. [सं. मनुष्य] स्त्री, नारी।

मनुष्य—संज्ञा पुं. [सं.] आदमी। उ.—अबकी बेर मनुष्य देह धरि कियौ न कछु उपाइ—१-१५५।

मनुष्यता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) मनुष्य होने का भाव। (२) दया, करुणा। (३) सभ्यता, शिष्टता।

मनुष्यत्व—संज्ञा पुं. [सं.] मनुष्य होने का भाव।

मनुसा—संज्ञा पुं. [सं. मनुष्य] मनुष्य।

मनुसाइ, मनुसाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. मानुस+आई] (१) पुरुषार्थ, पराक्रम। (२) मनुष्यता, शिष्टता।

मनुस्मृति—संज्ञा स्त्री. [सं.] हिंदुओं का एक प्रसिद्ध धर्म-शास्त्र जिसके रचयिता 'मनु' माने जाते हैं।

मनुहार—संज्ञा स्त्री. [हिं. मान+हरना] (१) अप्रसन्नता या मान दूर करने के लिए की गयी खुशामद या विनय। उ.—(क) तुम्हरैं हेत लियौ अवतार। अब तुम जाइ करौ मनुहार—७-२। (ख) ससि कौं देखि आर हरि टानी करि मनुहार मनावति-सारा. ४३९। (ग) करि मनुहार, कोसिबै कैं डर भरि-भरि देति जसौदा मात—१०-३३१। (२) विनय, प्रार्थना। (३) आदर-सत्कार। उ.—बिदा करे निज लोक कौं इहि बिधि करि मनुहार—४९२।

मनुहारना, मनुहारनो—क्रि. स. [हिं. मान+हरना] (१) मनाना, खुशामद करना। (२) विनय या प्रार्थना करना। (३) आदर-सत्कार करना।

मनुहारि, मनुहारी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मनुहार] (१) मनावन, खुशामद।

मुहा०—करि मनुहारि (मनुहारी)—(१) मीठी बातें कह कहकर, खुशामद करके, मनाकर। उ.—(क) करि मनुहारि कलेऊ दीन्हौ—१०-१६३। (ख) करि मनुहारि उठाइ गोद लै बरजति सुत कौं मात—१०-३२६। करति मनुहारि—बिनती या प्रार्थना करती है। उ.—सबैं करति मनुहारि ऊधौ, कहियौ हो जैसे गोकुल आवैं। करी (कीन्ही) मनुहारी—बिनती-प्रार्थना की। उ.—(क) चलियै बिप्र जहाँ जग-बेदी बहुत करी मनुहारी—८-१४। (ख) उन सबकी कीन्ही मनुहारी—१० उ०-१०५।

मनैं—संज्ञा पुं. सवि. [हिं. मन+ऐ] मन में। उ.—यह हित मनैं कहत सूरज प्रभु इहि कृति को फल तुरत चखैहौं—७-५।

मनैहैं—क्रि. स. [हिं. मनाना] (१) मनाकर, बिनती-प्रार्थना

करके। उ.—जिन पुत्रनिहिं बहुत प्रतिपाल्यौ देवी-देव मनैहैं—१-८६। (२) मनायेंगे, बिनती-प्रार्थना करेंगे। उ.—मेरे मारत काहि मनैहैं—१०२४।

मनों—अव्य० [हिं. मानना] मानो, जैसे।

मनोकामना—संज्ञा स्त्री. [हिं. मन + कामना] इच्छा।

मनोगत—वि. [सं.] मन का (विचार आदि)।

मनोगति—संज्ञा स्त्री. [सं.] इच्छा, अभिलाषा।

मनोज—संज्ञा पुं. [सं.] कामदेव। उ.—सकल सुख की सींव कोटि मनोज सोभा हरनि—१०-१०९।

मनोज्ञ—वि. [सं.] सुंदर, मनोहर।

मनोज्ञता—संज्ञा स्त्री. [सं.] सुंदरता, मनोहरता।

मनोनीत—वि. [सं.] (१) मन के अनुकूल। (२) चुना हुआ।

मनोभव—संज्ञा पुं. [सं.] कामदेव।

मनोभाव—संज्ञा पुं. [सं.] मन का भाव।

मनोभिराम—वि. [सं.] सुंदर, मनोहर।

मनोमालिन्य—संज्ञा पुं. [सं.] मनमुटाव, बैर।

मनोयोग—संज्ञा पुं. [सं.] चित्त-वृत्ति का निरोध।

मनोरंजक—वि. [सं.] मन प्रसन्नकारी।

मनोरंजन—संज्ञा पुं. [सं.] मन-बहलाव, मनोविनोद।

मनोरथ—संज्ञा पुं. [सं.] इच्छा, अभिलाषा।

मनोरथदाता—वि. [सं.] इच्छा पूरी करनेवाला। उ.—मननानाथ मनोरथदाता हौ प्रभु दीनदयाल—१-१८९।

मनोरथपूरन—वि. [सं. मनोरथ + पूर्ण] इच्छा पूरी करने वाला। उ.—मनसानाथ मनोरथ पूरन सुख-निधान जाकी मौज धनी—१-३९।

मनोरम—वि. [सं.] सुंदर, मनोहर।

मनोरा—संज्ञा पुं. [सं. मनोहर] चित्र जो कार्तिक में गोबर से दीवार पर बनाकर पूजे जाते हैं।

यौ०—मनोरा झूमक—एक गीत जो फागुन में गाया जाता है और जिसके अंत में 'मनोरा झूमक' पद रहता है। उ.—गोकुल सकल ग्वालिनी हो घर-घर खेलैं फागु मनोरा झूमक री—२४०१।

मनोराज, मनोराज्य—संज्ञा पुं. [सं. मनोराज्य] (१) मन की कल्पना। (२) मनमौजीपन।

मनोविकार—संज्ञा पुं. [सं.] वह विचार या भाव जो मन की अवस्था-विशेष में उत्पन्न हो।

मनोविज्ञान—संज्ञा पुं. [सं.] वह शास्त्र जिसमें मन की वृत्तियों का विवेचन हो।

मनोवृत्ति—संज्ञा स्त्री. [सं.] मन की वृत्ति।

मनोवेग—संज्ञा पुं. [सं.] मन में उत्पन्न भाव।

मनोसर—संज्ञा पुं. [सं. मन] मनोविकार।

मनोहर—वि. [सं.] मन हरनेवाला, सुंदर। उ.—(क) परम पंकज अति मनोहर सकल सुख के करन—१-३०८। (ख) तुम बिछुरत घनस्याम मनोहर हम अबला सरधाते—पृ० ४६०।

मनोहरता, मनोहरताई—संज्ञा स्त्री. [सं. मनोहरता] मनोहर होने का भाव, सुंदरता।

मनोहारि, मनोहारी—वि. [सं. मनोहारिन्] सुंदर।

मनौ—अव्य० [हिं. मानना] मानो, जैसे। उ.—सूरदास भगवन-भजन बिनु मनौ ऊँट-बृष-भैंसौ—२-१४।

मनौति, मनौती—संज्ञा स्त्री. [हिं. मानना + औती] (१) अप्रसन्न को मनाना। (२) कामना पूर्ण होने पर पुण्य कार्य-विशेष करने का संकल्प देवी-देवता के समक्ष करना, मानता, मन्नत।

मनौवल—संज्ञा पुं. [हिं. मनाना] रूठे हुए को मनाने का भाव या कार्य।

मन्नत—संज्ञा स्त्री. [हिं. मनाना] मानता, मनौती।

मन्मथ—संज्ञा पुं. [सं.] कामदेव। उ.—(क) सखी संग की निरखति यह छवि भई ब्याकुल मन्मथ की ढाढ़ी—७३६। (ख) अबला कहा जोग मत जानैं मन्मथ ब्यथा बियोगी—३४८२।

मन्वंतर—संज्ञा पुं. [सं.] इकहत्तर चतुर्युगी का काल जो ब्रह्मा के एक दिन के चौदहवें भाग के बराबर होता है। उ.—(क) करौ मन्वंतर लौं तुम राज—७-२। (ख) मन्वंतर लौं कियौ जेहि राज—११-३।

मम—सर्व० [सं. 'अहं' का षष्ठी एक०] मेरा, मेरी। उ.—महाराज, तुम तौ हौ साधु। मम कन्या तैं भयौ अपराध—९-३।

ममता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) 'अपना' समझने का भाव। (२) मोह, लोभ। उ.—(क) हिंसा-मद ममता-रस भूल्यौ आसाहीं लपटानौ—१-४७। (ख) ममता घटा, मोह की बूँदैं—१-२०९।

ममत्व—संज्ञा पुं. [सं.] **मोह-ममता का भाव ।** उ.—(क) सुत-कलत्र कौं अपनौं जानै अरु तिनसौं ममत्व बहु ठानै —३-१३ । (ख) रिषभ ममत्व देह कौ त्याग--५-२ ।

ममाखी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मधुमक्खी] **मधुमक्खी ।**

ममिया—वि. [हिं. मामा + इया] **'मामा' के स्थान या संबंध का ।**

ममोला—संज्ञा पुं. [हिं. मन+मोल ?] **उत्साह, उमंग ।**

मयंक—संज्ञा पुं. [सं. मृगांक] **चंद्रमा** । उ.—मुख-मयंक मधु पियत करत कसि ललना तऊ न अघाति--१९२३ ।

मयंद—संज्ञा पुं. [सं.मृगेंद्र] (१) **सिंह** । (२) **राम की सेना का एक बानर अधिनायक ।**

मय—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **एक प्रसिद्ध दानव जो बड़ा शिल्पी था** । उ.—मय मायामय कोट सँवारौ—७-७ ।

अव्य.—**युक्त, सहित** । उ.—खोवा मय मधुर मिठाई—१०-१८३ ।

मयगल—संज्ञा पुं. [सं.मंदकल, प्रा० मयगल] **मस्त हाथी ।**

मयत्रय, मयत्रेय—संज्ञा पुं. [सं.] **एक ऋषि जो पराशर के शिष्य थे और जिनसे विष्णु पुराण कहा गया था ।** उ.--कहौ मयत्रेय सौं समुझाइ, यह तुम बिदुरहिं कहियौ जाइ—३-४ ।

मयन—संज्ञा पुं. [सं. मदन] **कामदेव ।**

मयना—संज्ञा स्त्री. [हिं. मैना] **मैना ।**

मयमंत, मयमत्त—वि. [सं. मदमत्त] **मस्त, मदमत्त ।** उ.—त्रिया-चरित् मयमंत (मतिमंत) न समुझत—९-३१ ।

मया—संज्ञा स्त्री. [सं. माया] (१) **भ्रमजाल, माया** । (२) **संसार, जगत** । (३) **जीवन** । (४) **मोह-ममता, स्नेह** । उ.—(क) बाबा नंद झखत किहि कारन यह कहि मया मोह अरुझाई—५३१ । (ख) हम पर बबा मया करि रहियौ सुत अपनौ जिय जान—२६५८ । (ग) हौं तौ धाइ तिहारे सुत की मया करत ही रहियौ—२७०७ । (५) **दया, कृपा** । उ.— (क) गुरुजन बिच मैं आँगन ठाढ़ी अति हित दरसन दियौ मया करि—१४६१ । (ख) कहियौं मृगी मया करि हमसौं कहियौं मधुप मराल—१८०८ । (ग) धन्य स्याम बृंदाबन कौ सुख संत मया तैं जान्यौ—१८५७ ।

मयार—वि. [सं. मायालु] **दयालु, कृपालु ।**

मयारि, मयारी—संज्ञा स्त्री. [देश०] **वह डंडा जिस पर हिंडोले की रस्सी लटकायी जाती है ।** उ.—(क) कंचन खंभ मयारि मरुवा डाड़ी खचि हीरा बिच लाल प्रवाल —१०-८४ । (ख) खंभ जंबुनदि सुबिद्रुम रची रुचिर मयारि—२२८९ ।

मयी—अव्य. [हिं. मय] **युक्त, सहित ।**

मयूख—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **किरण** । (२) **प्रकाश ।**

मयूर—संज्ञा पुं. [सं.] **मोर** । उ.—सोभित सुमन मयूर-चंद्रिका नील नलिन तनु स्याम—१०-१५४ ।

मयूष—संज्ञा पुं. [सं. मयूख] **किरण, रश्मि** । उ.—लागत चंद-मयूष सु तौ तनु लता-भवन रंध्रनि मग आये—१५६२ ।

मयौ—अव्य. [हिं. मय] **युक्त, सहित** । उ.—बारंबार नंद कैं आँगन लोटत द्विज आनंद मयौ—१०-२५० ।

मरंद—संज्ञा पुं. [सं. मकरंद, प्रा० मरंद] **मकरंद ।**

मरई—क्रि. अ. [हिं. मरना] **मरता है** । उ.—याहि मारि तोहिं और बिबाहौं अग्र-सोच क्यौं मरई--१०-४ ।

मरक—संज्ञा पुं. [सं.] **मृत्यु, मरण ।**

संज्ञा स्त्री. [हिं. मड़क] (१) **संकेत** (२) **गूढ़ार्थ, गूढ़ उद्देश्य, विशेष आशय ।**

मरकट—संज्ञा पुं. [सं. मर्कट] **बंदर** । उ.—खर कौं कहा अरगजा लेपन मरकट भूषन अंग—१-३३२ ।

मरकत—संज्ञा पुं. [सं.] **पन्ना** । उ.— (क) यौं लपटाइ रहे उर उर ज्यौं मरकत मनि कंचन मैं जरिया—६८८ । (ख) करौं न अंजन धरौं न मरकत मृगमद तनु न लगाऊँ—२१५० ।

मरकना, मरकनो—क्रि. अ. [अनु.] (१) **दबकर टूटना, दबना** । (२) **मुड़ना, मुड़कना ।**

मरकहा—वि. [हिं. मारना] **सींग से मारनेवाला ।**

मरकाना, मरकानो—क्रि. स. [हिं. मरकना] (१) **दबाकर तोड़ना** । (२) **मोड़ना, मरोड़ना ।**

मरगजना, मरगजनो—क्रि. स. [हिं. मलना+गींजना] **मल-मसल कर विकृत कर देना ।**

मरगजा—वि. [हिं. मलना+गींजना] **दला-मला, मसला या गींजा हुआ ।**

मरगजी—वि. स्त्री. [हिं. मरगजा] **दली-मली, मसली या मींजी हुई।** उ.—(क) अंग मरगजी पटोरी राजति—१२३२। (ख) नागरि अंग मरगजी सारी—१५६७। (ग) सोधे अरगजी अरु मरगजी सारी—१५८२।

मरगजे, मरगजै—वि. [हिं. मरगजा] **दला-मला, मसला या मींजा हुआ।** उ.—(क) सूरदास प्रभु प्यारी राजत आवत भ्राजत बने हैं मरगजे बागे—पृ. ३१५ (४९)। (ख) सिथिल अंग मरगजे अंबर अतिहि रूप भरे—१९२१। (ग) हरबराइ उठि आइ प्रात तें बिथुरी अलक अरु बसन मरगजै—११८३।

मरघट—संज्ञा पुं. [हिं. मरना + घाट] **वह घाट या स्थान जहाँ मुर्दे फूँके जाते हों, श्मशान, मसान।**

मरज—संज्ञा पुं. [अ. मर्ज़] (१) **रोग।** (२) **बुरी लत।**

मरजाद, मरजादा—संज्ञा स्त्री. [सं. मर्यादा] (१) **सीमा, हद।** उ.—(क) सौ जोजन मरजाद सिंधु की पल मैं राम बिलोयौ—१-४३। (ख) मनु मरजाद उलंघि अधिक बल उमँगि चली अति सुंदरताई—६१६। (२) **प्रतिष्ठा, आदर।** उ.—आइ सृगाल सिंह बलि चाहत यह मरजाद जात प्रभु तेरी—९-९३। (३) **रीति, बिधि।** उ.—कलि-मरजाद जाइ नहिं कही—१-२३०।

मरजिया—वि. [हिं. मरना+जीना] (१) **जो मरने से बचा हो।** (२) **जो मरने के समीप हो, मरणासन्न।** (३) **जो मरने को उतारू हो।** (४) **अधमरा।**

संज्ञा पुं.—**गोताखोर।**

मरजी—संज्ञा स्त्री. [अ. मरज़ी] (१) **इच्छा।** (२) **आज्ञा, स्वीकृति।** (३) **प्रसन्नता।**

मरजीवा—संज्ञा पुं. [हिं. मरजिया] **गोताखोर।**

मरण—संज्ञा पुं. [सं.] **मृत्यु, मौत।**

मरत—क्रि. अ. [हिं. मरना] **मरता है।**

प्र०—मरत हौं—**मरता हूँ।** उ.—बिनती करत मरत हौं लाज—१-९६।

वि.—**मरता हुआ, मरते समय।** उ.—मरत असुर चिकार पारची—४२७।

संज्ञा पुं. [सं. मृत्यु] **मौत, मरण, मृत्यु।**

मरतबा—संज्ञा पुं. [अ. मर्तबः] (१) **पद।** (२) **बार।**

मरतो, मरतौ—क्रि. अ. [हिं. मरना] **मरता, मृत्यु को प्राप्त होता।** उ.—पुनि जीतौ पुनि मरतौ—१-२०३।

मरद—संज्ञा पुं. [फ़ा. मर्द] (१) **आदमी।** (२) **वीर।**

मरदई—संज्ञा स्त्री. [हिं. मरद+ई] (१) **मनुष्यता।** (२) **वीरता, बहादुरी।**

मरदन—संज्ञा पुं. [सं. मर्दन] **नाश करनेवाले।** उ.—अघ मरदन बक बदन बिदारन—९५४।

मरदना, मरदनो—क्रि. स. [सं. मर्दन] (१) **मसलना।** (२) **नाश करना।** (३) **माँड़ना, गूँधना।**

मरदनिया—वि. [हिं. मरदना] **तेल मलने वाला।**

मरदानगी—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] (१) **वीरता।** (२) **साहस।**

मरदाना—वि. [फ़ा.] (१) **पुरुष संबंधी।** (२) **पुरुष जैसा।** (२) **वीरों जैसा, वीरोचित।**

क्रि. अ. [हिं. मरद] **साहस करना।**

मरदि—क्रि. स. [हिं. मरदना] **मसलकर, मर्दन करके।** उ.—मुष्ट कौ गर्दि मरदि कै चानूर चुरकुट करयौ—२६०९।

मरन—संज्ञा पुं. [सं. मरण] **मौत, मृत्यु।** उ.—तात मरन सिय हरन राम बन-बपु धरि बिपति भरै—१-२६४।

मरना, मरनौ—क्रि. अ. [सं. मरण] (१) **मृत्यु होना।** (२) **बहुत दुख सहना।**

मुहा०—(किसी के लिए) मरना—**बहुत दुख सहना।** (किसी पर) मरना—**आसक्त होना।** मरना-पचना—**बहुत दुख सहना।** (किसी) बात पर (के लिए) मरना—**किसी कारण बहुत दुख सहना।**

(३) **मुरझाना, मुरझाना।** (४) **अत्यधिक लज्जा या संकोच होना।** (५) **सजीवता या तेजी न रह जाना।**

मुहा०—पानी मरना—**पानी का दीवार या नींव आदि में धँसना।** (२) **दोष या कलंक आना।**

(६) **खेल में गोटी या गुइयाँ का पिटना या हारना।** (७) **वेग का दबना या शांत होना।** (८) **जलना, डाह करना** (९) **पछताना।** (१०) **पराजित होना।**

संज्ञा पुं.—**मरने की क्रिया या भाव, मरण।** उ.—तातैं साध-संग नित करना। जातैं मिटै जन्म अरु मरना—३-१३।

मरनि, मरनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मरना] (१) मौत, मृत्यु।

प्र०—मति भई मरनी—मरने की इच्छा हुई। उ.—सूर प्रभु के बचन सुनत, उरगिनि कह्यौ, जाहि अब क्यौं न, मति भई मरनी—५५१।

(२) दुख, कष्ट। (३) मृत्यु का शोक। (४) मृत्यु पर किया जानेवाला क्रिया-कर्म।

मरभुक्खा—वि. [हिं. मरना+भूखा] (१) भूख का मारा हुआ। (२) कंगाल।

मरबे, मरबो—संज्ञा पुं. [हिं. मरना] मरना, मृत्यु। उ.—अपने मरबे ते न डरत है पावक पैठि जरै-२८०८।

मरम—संज्ञा पुं. [सं. मर्म] भेद, रहस्य, तत्व। उ.—(क) मैं मतिहीन मरम नहिं जान्यौ परयौ अधिक करि दौर—१-४६। (ख) खोजत नाल किती जुग गयौ। तौहू मैं कछु मरम न लयौ—२-३७।

मरमना, मरमनो—क्रि. अ. [सं. मर्म] तत्व या रहस्य जानना-समझना।

मरमर—संज्ञा पुं. [अनु.] 'मर मर' शब्द।

मरमराना, मरमरानो—क्रि. अ. [अनु.] (१) 'मर-मर' शब्द करना। (२) 'मर-मर' शब्द करके दबना।

मरम्मत—संज्ञा स्त्री. [अ.] टूटी-फूटी चीज को ठीक करने की क्रिया या भाव।

मरयाद, मरयादा—संज्ञा स्त्री. [सं. मर्यादा] मर्यादा।

मरवाना, मरवानो—क्रि. स. [हिं. मारना] (१) मारने को प्रवृत्त करना। (२) वध कराना।

मरसिया—संज्ञा पुं. [अ.] शोक-काव्य।

मरहट—संज्ञा पुं. [हिं. मरघट] मसान, श्मशान।

संज्ञा स्त्री. [देश०] मोठ (अनाज)।

मरहम—संज्ञा पुं. [अ.] दवा की तरह घाव पर लगाया जानेवाला गाढ़ा लेप।

मरहिंगी—क्रि. अ. [हिं. मरना] मर जायँगी। उ.—जादवन को प्रलय सुनि वे मरहिंगी अकुलाइ—११-४।

मराई—संज्ञा स्त्री. [हिं. मराना] 'मराने' की क्रिया।

प्र०—डारहु मराई—मरवा डालो। उ.—प्रथमहिं कमल कंस कौं दीजै डारहु हमहिं मराई—५३८।

मराना—क्रि. स. [हिं. मारना] मारने को प्रवृत्त करना।

मरायल—वि. [हिं. मारना+आयल] (१) जो मारा-पीटा गया हो। (२) शक्ति या सत्वहीन। (३) घाटा, हानि।

मराल—संज्ञा पुं. [सं.] हंस। उ.—(क) मनौ मधुर मराल-छौना किंकिनी कल राव—१०-२०७। (ख) मनौ मधुर मराल छौना बोलि बनै सिहात—१०-१८४।

मरिंद—संज्ञा पुं. [सं. मकरंद, प्रा. मरंद] मकरंद।

मरि—क्रि. अ. [हिं. मरना] मर कर।

प्र०—मरि जैहौं—मर जाऊँगा। उ.—मनौं हौं ऐसे ही मरि जैहौं—२५५०।

मरिऐ—क्रि. अ. [हिं. मरना] मरता हूँ। उ.—इहिं लाजनि मरिऐ सदा, सब कोउ कहत तुम्हारी (हो)—१-४४।

मरिबो, मरिबौ—संज्ञा पुं. [हिं. मरना] मरना, मृत्यु, मरण। उ.—(क) सप्तम दिन मरिबौ निरधार—१-२९०। (ख) एक दाइँ मरिबो नंदनंदन के काजनि २८७२।

मरियत—क्रि. अ. [हिं. मरना] मरता हूँ। उ.—(क) मरियत लाज पाँव पतितनि मैं हौं अब कहौ घटि कातैं—१-१३७। (ख) इनि बातनि के मारे मरियत—३२०२।

मरियल—वि. [हिं मरना] बहुत दुबला-पतला।

मरियै—क्रि. अ. [हिं. मरना] मृत्यु को प्राप्त होइए।

मुहा०—लाजन मरियै—अत्यंत ही लज्जित होइए। उ.—करियै कहा लाजन मरियै जब अपनी जाँघ उघारी—१-१७३।

मरिहैं—क्रि. अ. [हिं. मरना] मरेंगे, मृत्यु को प्राप्त होंगे। उ.—मो देखत लछिमन क्यौं मरिहैं मोकौं आज्ञा दीजै—९-१४८।

मरिहै—क्रि. अ. [हिं. मरना] मरेगा, मरेगी। उ.—भऐं अपमान उहाँ तू मरिहै—४-५।

मरिहौं—क्रि. अ. [हिं. मरना] मरूँगा। उ.—जौ मरिहौं तौ सुरपुर जैहौं—६-५।

मरी—वि. [हिं. मरना] मरी हुई, मृतक समान। उ.—ऐसौ चरित तुरतही कीन्हौं कुँवरि हमारी मरी जिवाई—७६१।

मरीचि—संज्ञा पुं. [सं.] (१) एक ऋषि जो ब्रह्मा के मानसिक पुत्र और सप्तर्षियों में एक माने गये हैं। उ.—

ब्रह्म सुमिरन करि हरि नाम। प्रगटे रिषय सप्त अभिराम। भृगु, मरीचि, अंगिरा बसिष्ठ। अत्रि, पुलह, पुलस्त्य अति सिष्ठ—३-८। (२) एक ऋषि जो कश्यप के पिता थे। उ.—रिषि मरीचि कश्यप उपजायौ—३-९।

संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) किरण। (२) कांति,ज्योति। (३) मृगमरीचिका।

मरीचिका—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) मृगतृष्णा। (२) किरण।

मरीचिजल—संज्ञा पुं. [सं.] मृगतृष्णा।

मरीची—वि. [सं. मरीचिन्] जिसमें किरणें हों।

मरीज—वि. [अ. मरीज़] रोगी, बीमार।

मरु—संज्ञा पुं. [सं.] (१) रेगिस्तान। (२) 'मरुआ' पौधा।

मरुआ—संज्ञा पुं. [सं. मरुव] (१) एक पौधा। उ.—खूझा मरुआ कुद सौं कहै गाद पसारी—१८२२। (२) हिंडोले को लटकाने की लकड़ी। उ.—कंचन खंभ मयारि मरुआ (मरुवा) डाँड़ी खचित हीरा बिच लाल प्रबाल—१०-८४।

मरुत, मरुत्—संज्ञा पुं. [सं. मरुत्] (१) एक देवगण। (२) वायु।

मरुत्सुत—संज्ञा पुं. [सं.] (१) हनुमान। (२) भीम।

मरुथल—संज्ञा पुं. [सं.मरुस्थल] रेगिस्तान।

मरुधर—संज्ञा पुं. [सं.] मारवाड़ देश।

मरुभूमि—संज्ञा स्त्री. [सं.] रेगिस्तान।

मरुरना, मरुरनो—क्रि. अ. [हिं. मरोरना] ऐंठना, बल खाना।

मरुव, मरुवा, मरुवो, मरुवौ—संज्ञा पुं. [सं. मरुव] (१) एक पौधा। उ.—फूले बेल निवारी फूल मरुवो मोगरो सेवती—२४०५। (२) लकड़ी जिसमें हिंडोला लटकाया जाता है। उ.—कंचन के खंभ मयारि मरुवा डाँड़ी खचित हीरा बिच लाल प्रबाल—१०-८४।

मरुस्थल—संज्ञा पुं. [सं.] रेगिस्तान।

मरूँगौ—क्रि. अ. [हिं. मरना] मृत्यु को प्राप्त होऊँगा। उ.—रामचंद्र के हाथ मरूँगौ परम पुरुष फल जान्यौ—सारा० २६३।

मरू—वि. [सं. मेरु या मरु] कठिन, दुरूह।

मुहा०—मरू करि (करि कै)—बड़ी कठिनता से।

मरूर, मरूरा, मरूरो, मरूरौ—संज्ञा पुं. [हिं. मरोड़] ऐंठन, मरोड़, बल।

मुहा०—मरूरा (मरूरो या मरूरौ) देना—ऐंठना, उमेठना। दियौ मरूरा—ऐंठ, उमेठ या मरोड़ दिया। उ.—मुख पर पवन परस्पर सुखवत गहे पानि पिय जूरो। बूझति जानि मन्मथ चिनगी फिरि मानो दियौ मूरूरा—२२७५।

मरैं—क्रि. अ. [हिं. मरना] मृत्यु को प्राप्त हों। उ.—मरैं नहिं देवता—८-८।

मरै—क्रि. अ. [हिं. मरना] मृत्यु को प्राप्त हो। उ.—अति प्रचंड पौरुष बल पाएँ केहरि भूख मरै—१-१०५। (२) दुख या कष्ट सहे। उ.—याहि लागि को मरै हमारे बृंदाबन चरनन सौं ठेली—३१४४।

मरोड़, मरोर—संज्ञा पुं. [हिं. मरोड़ना] (१) ऐंठने या उमेठने की क्रिया या भाव।

मुहा०—मरोड़ खाना—चक्कर खाना। मन में मरोड़ करना—कपट या दुराव करना। मरोड़ की बात—छल कपट या घुमाव फिराव की बात।

(२) ऐंठन, बल। (३) क्षोभ, व्यथा।

मुहा०—मरोड़ खाना—उलझन में पड़ना।

(४) पेट में ऐंठन होना। (५) गर्व। (६) क्रोध।

मुहा०—मरोड़ गहना—क्रोध करना।

मरोड़ना, मरोरना, मरोरनो—क्रि. स. [हिं. मोड़ना] (१) ऐंठना, उमेठना।

मुहा०—अंग मरोड़ना—अँगड़ाई लेना। दृग या भौंह मरोड़ना—(१) आँख से इशारा करना। (२) नाक-भौं चढ़ाना।

(२) ऐंठकर तोड़ देना या नष्ट कर देना। (३) पीड़ा या दुख देना। (४) मींजना, मसलना।

मुहा०—हाथ मरोड़ना—हाथ मलना या पछताना।

मरोड़ा, मरोरा—संज्ञा पुं. [हिं. मरोड़ना] (१) ऐंठन। (२) पेट की पीड़ा जिसमें ऐंठन सी जान पड़ती है।

संज्ञा स्त्री. [हिं. मरोड़ना] (१) ऐंठन। (२) गुत्थी।

मरोड़त, मरोरत—क्रि. स. [हिं. मरोड़ना] ऐंठता है।

मुहा०—भौंह मरोरत—नाक-भौं चढ़ाता है।

उ.—बदन सकोरत भौंह मरोरत नैननि मैं कछु टोना—१०३७।

मरोड़ि, मरोरि—क्रि. स. [हिं. मरोड़ना] **ऐंठ या उमेठकर।** उ.—(क) खींचि मरोरि दियौ कागासुर मेरैं ठिग फटकारी—१०-६०। (ख) बाँह मरोरि जाहुगे कैसे मैं तुमको नीके करि चीन्हे—१५०७।

मरोड़ी, मरोरी—क्रि. स. [हिं. मरोड़ना] **ऐंठ या उमेठ दी।** उ.—गुदी चाँपि लै जीभ मरोरी—१०-५७।

संज्ञा स्त्री.—**ऐंठन, घुमाव, बल।**

मुहा०—करत मरोरी—**खींचातानी करता है।** उ.—नख शिख लौं चित चोर सकल अँग चीन्हें पर कत करत मरोरी—१५०६।

मरोरै—क्रि. स. [हिं. मरोड़ना] **ऐंठता-उमेठता है।**

मुहा०—भौंह मरोरै—**आँख से कनखी मारता है।** उ.—भौंह मरोर मटकि कै री जमुना रोकत घाट—२४१३।

मरोड़्यो, मरोड़्यौ, मरोर्‌यो, मरोर्‌यौ—क्रि. स. [हिं. मरोड़ना] **ऐंठा, उमेठा।**

मुहा०—भौंह मरोर्‌यो—**नाक-भौं चढ़ायी।** उ.—अधर कंप रिस भौंह मरोर्‌यो मन ही मन गहरानी—१८६५।

मर्कट—संज्ञा पुं. [सं.] **बानर, बंदर।**

मर्कत—संज्ञा पुं. [सं. मरकत] **पन्ना।**

मर्तबा—संज्ञा पुं. [अ.] (१) **पद।** (२) **बार, दफा।**

मर्त्य—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **मनुष्य।** (२) **भूलोक।**

मर्त्यलोक—संज्ञा पुं. [सं.] **पृथ्वी।**

मर्द—संज्ञा पुं. [फ़ा.] (१) **आदमी।** (२) **साहसी आदमी।** (३) **नर।** (४) **पति।**

मर्दन—संज्ञा पुं. [सं. मर्द्दन] (१) **कुचलना, रौंदना।** (२) **मलना, रगड़ना।** उ.—(क) तेल लगाइ कियौ रुचि मर्दन—१-५२। (ख) आदर बहुत कियौ जादव पति मर्दन करि अन्हवायो—१० उ०-६५। (३) **शरीर में तेल, उबटन आदि मलना या लगाना।** उ.—(क) अति सुगंध मर्दन अँग-अँग ठनि बनि-बनि भूषन भेषति। (ख) अँग मर्दन करिबे कौ लागी उबटन तेल धरी—पृ.३३९ (८६)। (४) **द्वंद्व युद्ध में परस्पर घस्सा लगाना।** (५) **नाश।** उ.—अघ-मर्दन विधि गर्बहत करत न लागी बार—४३७। (६) **पीसना, घोटना।**

वि.—**नाश या संहार करने वाला।**

मर्दना, मर्दनो—क्रि. स. [सं. मर्द्दन] (१) **मालिश करना, मलना।** (२) **उबटन तेल आदि मलना।** (३) **तोड़ना-फोड़ना।** (४) **रौंदना, कुचलना।** (५) **नाश करना।**

मर्दाना—वि. [फ़ा.] (१) **वीर।** (२) **वीरोचित।**

मर्दित—वि. [सं. मर्द्दित] (१) **मला-मसला हुआ।** (२) **नष्ट किया हुआ।**

मर्दुमी—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] **पौरुष।**

मर्दुमशुमारी—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] **जन-गणना।**

मर्द्यौ—क्रि. स. [हिं. मर्दना] **नाश किया, मिटाया।** उ.—गिरि कर धारि इन्द्र मद मर्द्यौ दासनि सुख उपजाए—१-२७।

मर्म—संज्ञा पुं. [सं. मर्म्म] (१) **रहस्य, तत्व, भेद।** उ.—(क) प्रेम के सिंधु कौ मर्म जान्यौ नहीं, सूर कहा भयौ देह बोरैं—१-२२२। (ख) ताकौ कछू न पायौ मर्म—१२१२। (२) **शरीर का वह स्थान जहाँ चोट पहुँचने से अधिक पीड़ा होती है।**

मर्मज्ञ—वि. [सं.] (१) **भेद या रहस्य का जाननेवाला।** (२) **गूढ़ाशय या तत्व समझनेवाला।**

मर्मभिद्—वि. [सं.] **हृदय पर आघात पहुँचानेवाला।**

मर्मभेदी—वि. [सं. मर्मभेदिन्] **हृदय पर आघात करने या चोट पहुँचानेवाला।**

मर्मबचन, मर्मवचन—संज्ञा पुं. [सं. मर्म+वचन] **हृदय पर आघात पहुँचाने वाली बात।**

मर्मस्थल, मर्मस्थान—संज्ञा पुं. [सं.] **हृदय, कंठ आदि कोमल अंग जहाँ चोट लगने से प्राणी मर तक सकता है।**

मर्मस्पर्शी—वि. [सं. मर्मस्पर्शिन्] **हृदय को छूनेवाला, मार्मिक।**

मर्मांतक—वि. [सं.] **हृदय में चुभनेवाली।**

मर्मी—वि. [हिं. मर्म] **रहस्य जाननेवाला।**

मर्याद, मर्यादा—संज्ञा स्त्री. [सं. मर्य्यादा] (१) **सीमा, हद।** उ.—(क) मनहु प्रेम समुद्र सूर सुख लै उपटित मर्याद—२४०७। (ख) मनहुँ सूर दोउ सुभग सरोवर

उमँगि चले मर्यादा डारि—२७९५। (२) **नीति, व्यवस्था**। उ.—(क) सूर स्याम मिलि लोक बेद की मर्यादा निदरी—पृ० ३३६ (५०)। (ख) पय पीवत जिन हती पूतना स्नुति-मर्यादा फोरी—२८६३। (३) **मान, प्रतिष्ठा**। उ.—मदन जाहु मर्यादा जैहै कह्यौ न काहे मानति—पृ. ३१७ (६२)।

मर्यादित—वि. [सं.] **मर्यादा के अनुकूल**।

मर्षण, मर्षन—संज्ञा पुं. [सं. मर्षण] **रगड़, घर्षण**।

वि.—(१) **नाशक**। (२) **दूर करनेवाले**।

मर्षत—क्रि. स. [हिं. मर्षना] **मला, लेप किया**। उ.—जातुधानि-कुच-पर मर्षत तब तहाँ पूतना पाई—१-२१५।

मर्षना, मर्षनो—क्रि. स. [सं. मर्षण] **मलना, लेप करना**।

मलंग, मलंगा—संज्ञा पुं. [फ़ा. मलंग] **मुसलमान साधुओं का एक वर्ग**।

मल—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **मैल, कीट**। (२) **शरीर का विकार**। उ.—राख्यौ हो जठर महिं स्रोनित सौं सानि। जहाँ न काहू कौ गम, दुसह दारुन तम, सकल बिधि अगम खल मल खानि—१-७७। (३) **विष्टा**। उ.—रुधिर मेद मल-मूत्र कठिन कुच उदर-गंध गंधात—२ २४। (४) **पाप**। (५) **प्रकृति-दोष**।

मलकना, मलकनो—क्रि. अ. [हिं. मलकाना] (१) **हिलना-डोलना**। (२) **इठलाना, इतराना**।

मलकाना, मलकानो—क्रि. स. [अनु.] (१) **हिलाना-डोलाना**। (२) **मटकाना, चमकाना**।

क्रि. अ.—**गढ़गढ़कर बातें करना**।

मलखंभ, मलखम—संज्ञा पुं. [सं. मल्ल+हिं. खंभा, हिं. मलखम] **डंडा जिस पर चढ़ और उतर कर कसरत की जाती है**।

मलगजा—वि. [हिं. मलना+गींजना] **मला-दला हुआ**।

मलन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **मसलना। लेप करना**।

मलना, मलनो—क्रि. स. [सं. मलन] (१) **मींजना, मसलना, रगड़ना**।

मुहा०—दलना-मलना—(१) **पीसकर चूर्ण करना**। (२) **रगड़ना, मसलना**। हाथ मलना—(१) **पछताना**। (२) **क्रोध प्रकट करना**।

(२) **तेल आदि की मालिश करना**। (३) **दबाकर मसलना**। (४) **ऐंठना, मरोड़ना**। (५) **क्रोध या आवेश में हाथ से रगड़ना**।

मलवा—संज्ञा पुं. [सं. मल] **कूड़ा-करकट**।

मलमल—संज्ञा स्त्री. [सं. मलमल्लक] **एक तरह का बढ़िया महीन कपड़ा**।

मलमलाना, मलमलानो—क्रि. स. [हिं. मलना] (१) **स्पर्श कराना**। (२) **बार-बार खोलना-मूँदना**। (३) **पुनः पुनः आलिंगन करना**।

मलमास—संज्ञा पुं. [सं.] **वह मास जिसमें संक्रांति न पड़े; इसे 'अधिक मास' भी कहते हैं**।

मलय—संज्ञा पुं. [सं. मलय=पर्वत] (१) **एक पर्वत जो पश्चिमी घाट में है और जहाँ चंदन बहुत होता है**। (२) **चंदन, सफेद चंदन**। उ.—जद्यपि मलय बृच्छ जड़ काटै कर कुठार पकरै। तऊ सुभाव न सीतल छाँड़े, रिपु-तन-ताप हरै—१-११७।

वि.—(१) **सुगंधित**। उ.—निदत मूढ़ मलय चंदन कौं, राख अंग लपटावै—२-१३। (२) **दक्षिणी (वायु)**।

मलयगिरि, मलयगिरी—संज्ञा पुं. [सं. मलयगिरि] (१) **पश्चिमी घाट का वह पर्वत जहाँ चंदन अधिक होता है**। (२) **मलयगिरि का चंदन**।

मलयज—संज्ञा पुं. [सं.] **चंदन**।

मलयाचल—संज्ञा पुं. [सं.] **मलय पर्वत जो पश्चिमी घाट में है और जहाँ चंदन बहुत होता है**।

मलयानिल—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **मलय पर्वत से आने वाली वायु**। (२) **सुगंधित वायु**। (३) **वासंती पवन**।

मलराना, मलरानो—क्रि. स. [हिं. मल्हाना] **पुचकारना, दुलारना**।

मलरुचि—वि. [सं.] (१) **मल या दोष में रुचि रखने वाला**। (२) **दोषी, पापी**।

मलवाना, मलवानो—क्रि. स. [हिं. मलना] **मलने को प्रवृत्त करना**।

मलाई—संज्ञा स्त्री. [देश.] (१) **दूध दही की साढ़ी**। उ.—साज्यौ दही अधिक सुखदाई। ता ऊपर पुनि मधुर मलाई—२३२१। (२) **सार, तत्व**।

संज्ञा स्त्री. [हिं मलना] मलने की क्रिया, भाव। या मजदूरी।

मलान—वि. [सं. म्लान] (१) मैला। (२) मुरझाया हुआ।

मलानि—संज्ञा स्त्री. [सं. म्लान] मलिनता।

मलार—संज्ञा पुं. [सं. मल्लार] एक राग। उ.—मुरली मलार बजावहिंगे—२८८९।

मलारि, मलारी—संज्ञा स्त्री. [सं. मल्लारी] 'बसंत' राग की एक रागिनी। उ.—गावत मलारी सुराग रागिनी गिरिधरन लाल छबि सोहनौ—२२८०।

मलाल—संज्ञा पुं. [अ.] (१) दुख। (२) उदासी।

मलाह—संज्ञा पुं. [हिं. मल्लाह] केवट।

मलिंद—संज्ञा पुं. [सं. मिलिंद] भौंरा।

मलि—क्रि. स. [हिं. मलना] (१) रगड़-रगड़कर। उ.—(क) तेल लगाइ कियौ रुचि मर्दन बस्तर मलि मलि धोए—१-५२। (ख) हंस उज्जल पंख निर्मल अंग मलि मलि न्हाहिं—१-३३८। (२) तेल आदि मलकर।

मलिक—संज्ञा पुं. [अ.] (१) राजा। (२) स्वामी।

मलिका—संज्ञा स्त्री. [अ.] (१) रानी। (२) स्वामिनी।

संज्ञा स्त्री. [सं. मल्लिका] एक तरह का 'बेला'।

मलिच्छ, मलिच्छ—संज्ञा पुं. [सं. म्लेच्छ] म्लेच्छ।

वि.—गंदा, मलिन।

मलिन—वि. [सं.] (१) मैला, गंदा। (२) बुरा, खराब। उ.—पिउ पद-कमल कौ मकरंद। मलिन मति मन-मधुप परिहरि, बिषय नीरस मंद—९-१०। (३) मटमैले या धूमिल रंग का। (४) पापी। उ.—भजन बिनु जीवत जैसैं प्रेत। मलिन मंदमति डोलत घर-घर उदर भरन कैं हेत—२-१५। (५) धीमा, फीका। (६) खिन्न, उदास।

मलिनता—संज्ञा स्त्री. [सं.] 'मलिन' होने का भाव। उ.—प्राची अरुनानी धानि किरनि उज्यारी नभ छाई उडुगन चंद्रमा मलिनता लई—पृ. ३०० (८)।

मलिनाइ, मलिनाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. मलिन] मलिनता।

मलिनाना, मलिनानो—क्रि. अ. [हिं. मलिन] मैला होना।

मलीदा—संज्ञा पुं. [फ़ा.] चूरमा।

मलीन—वि. [सं. मलिन] (१) मैला, अस्वच्छ। (२) उदास। उ.—(क) दरस मलीन दीन दुरबल अति तिनकौं मैं दुखदानी—१-१२९। (ख) अति मलीन बृषभानुकुमारी—३४२५। (३) कांतिहीन। उ.—बिधु मलीन रबि प्रकास गावत नर-नारी—१०-२०२।

मलीनता—संज्ञा स्त्री. [सं. मलिनता] 'मलिन' होने का भाव, मैलापन।

मलूक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) एक कीड़ा। (२) एक पक्षी।

वि. [देश०] सुंदर, मनोहर।

मलेच्छ, मलेच्छ, मलेच्छ—संज्ञा पुं. [सं. म्लेच्छ] म्लेच्छ।

मलै—संज्ञा पुं. [सं. मलय] चंदन। उ.—(क) मिली कुबिजा मलै लैकै सो भई अरधंग—२६७२। (ख) मृग-मद मलै परस तनु तलफत जनु बिषम बिष पिए—३४५९।

मलोलना, मलोलनो—क्रि. अ. [हिं. मलोला] (१) दुखी होना। (२) पछताना।

मलोला—संज्ञा पुं. [अ. मलूल] (१) अरमान। (२) दुख।

मुहा०—मलोला (मलोले) आना—दुख या पछतावा होना। मलोला (मलोले) खाना—दुख सहना। दिल का मलोला (के मलोले) निकालना—बकझक कर दुख दूर करना।

मल्ल—संज्ञा पुं. [सं.] (१) एक प्राचीन जाति। (२) पहलवान। उ.—(क) रजक मल्ल चानूर दवानल दुख-भंजन सुखदाई—१-१५८। (ख) कुवलिया मल्ल मुष्टिक चानूर से कियो मैं कर्म यह अति उदासा—२५५१। (३) एक प्राचीन देश का नाम। (४) दीप।

मल्लक्रीड़ा—संज्ञा स्त्री. [सं.] कुश्ती।

मल्लजुद्ध, मल्लयुद्ध—संज्ञा पुं. [सं. मल्लयुद्ध] कुश्ती।

मल्लशाला—संज्ञा स्त्री. [सं.] अखाड़ा।

मल्लार—संज्ञा पु. [सं.] 'मलार' राग।

मल्लारि, मल्लारी—संज्ञा स्त्री. [सं. मल्लारी] बसंत राग की एक रागिनी।

मल्लाह—संज्ञा पुं. [अ.] केवट, धीवर, माझी।

मल्लाही—वि. [फ़ा.] मल्लाह संबंधी।

मल्लिका—संज्ञा स्त्री. [सं.] 'बेला' फूल का एक प्रकार। उ.—जमुना पुलिन मल्लिका मनोहर सरद सुहाई जामिनी—१७३४।

मल्हराना, मल्हरानो—क्रि. स. [सं. मल्ह = गोस्तन] **चुमकारना, पुचकारना।**

मल्हरावति—क्रि. स. [हिं. मल्हराना] **चुमकारती-पुचकारती है।** उ.—सूरदास-प्रभु सोए कन्हैया हलरावति मल्हरावति है—१०-७३।

मल्हाना, मल्हानो—क्रि. स. [हिं. मल्हराना] **चुमकारना, पुचकारना।**

मल्हावति—क्रि. स. [हिं. मल्हाना] **चुमकारती-पुचकारती है।** उ.—बालकेलि गावति मल्हावति सुप्रेम भर—१०-१५१।

मल्हावै—क्रि. स. [हिं. मल्हाना] **चुमकारती-पुचकारती है।** उ.—जसोदा हरि पालनैं झुलावै। हलरावै, दुलराइ मल्हावै जोइ-सोइ कछु गावै—१०-४३।

मल्हार—संज्ञा पुं. [हिं. मलार] **'मलार' राग।**

मल्हारना, मल्हारनो—क्रि. स. [हिं. मल्हाना] **चुमकारना।**

मवाद—संज्ञा पुं. [अ.] (१) **सामान।** (२) **पीब।** (३) **दिल का गुबार।**

मवास—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **रक्षा का स्थान, शरण।**

मुहा०—मवास करना—**निवास करना।**

(२) **किला, दुर्ग, गढ़।** (३) **पेड़ जो दुर्ग के प्राकार पर होते हैं।**

मवासी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मवास] **छोटा गढ़, गढ़ी।**

मुहा०—मवासी तोड़ना—(१) **किला तोड़ना।** (२) **जीतना, विजय पाना।**

संज्ञा पुं.—(१) **किलेदार, गढ़पति।** (२) **प्रधान, अधिनायक।** उ.—गोरस चुराइ खाइ बदन दुराइ राखै मन न धरत बृंदाबन कौ मवासी—१०४४।

मवासे—संज्ञा पुं. [सं. मवास] **किले के प्राकार पर लगे वृक्ष।** उ.—जहाँ तहाँ होरी जरै हरि होरी है। मनहुँ मवासे आगि अहो हरि होरी है—२४२३।

मवेशी—संज्ञा पुं. [अ. मवाशी] **पशु, ढोर।**

मशक—संज्ञा पुं. [सं.] **मच्छड़।**

संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] **चमड़े का बड़ा थैला।**

मशक्कत—संज्ञा स्त्री. [अ. मशक्कत] **परिश्रम।**

मशविरा—संज्ञा पुं. [अ.] **सलाह।**

मशहूर—वि. [अ.] **प्रसिद्ध।**

मशान—संज्ञा पुं. [सं. श्मशान] **मरघट, मसान।** उ.—भूमि मशान बिदित ए गोकुल मनहु धाइ धाइ खाइ—२७००।

मशाल—संज्ञा पुं. [अ.] **जलाने की मोटी बत्ती।**

मशालची—संज्ञा पुं. [फ़ा.] **मशाल जलानेवाला।**

मश्क़—संज्ञा पुं. [अ.] **अभ्यास।**

मष—संज्ञा पुं. [सं. मख] **यज्ञ।** उ.—(क) देवराज मष भंग जानि कै बरष्यौ ब्रज पर आई—१-१२२। (ख) सगरराज मष पूरन कियौ—९-९।

मष्ट—वि. [सं. मष्ठ, प्रा. मष्ट = मटठ] **उदासीन, मौन।**

मुहा०—मष्ट करना—**चुप रहना, मुँह न खोलना।** मष्ट करि (करु)—**चुप रह, बोल मत, मुँह मत खोल।** उ.—(क) मष्ट करु, हँसैंगे लोग, अँकवारि भरि भुजा पाई कहाँ स्याम मेरैं—१०-३०७। (ख) सुनिहैं लोग मष्ट अजहूँ करि, तुमहिं कहाँ की लाज—७७५। मष्ट करो (करौ)—**चुप रहो, बोलो मत।** उ.—अबला कहा दशा दिगंबर, मष्ट करौ पहिचाने—३००६। मष्ट धारना—**चुप्पी साधना।** रहौ मष्ट धारे—**चुप रहो, मौन साधो।** उ.—कहा पिय बहुत सुनिहै बात पौरिया, जाय कैहै, रहौ मष्ट धारे—२६२४। मष्ट मारना—**चुप रहना।**

मस—संज्ञा स्त्री. [सं. मसि] **स्याही, रोशनाई।**

संज्ञा पुं. [सं. मशक] **मच्छड़।**

संज्ञा स्त्री. [सं. श्मश्रु] **मूँछ निकलने के पहले की रोमावली।**

मुहा०—मस भीजना (भीजना)—(१) **मूछ की रेखा दिखाई पड़ना।** (२) **युवावस्था आना।**

मसक—संज्ञा पुं. [सं. मशक] **मच्छड़।**

संज्ञा स्त्री. [फ़ा. मशक] **चमड़े की 'मशक'।** उ.—छूछी मसक पवन पानी ज्यौं तैसेई जन्म विकारी हो।

संज्ञा स्त्री. [अनु.] **मसकने की क्रिया या भाव।**

मसकत—संज्ञा स्त्री. [हिं. मशक्कत] **श्रम, परिश्रम।** उ.—तुम कब मोसौं पतित उधारयौ। काहे को प्रभु बिरद बुलावत बिन मसकत कौ तारयौ—१-१३२।

मसकना, मसकनो—क्रि. स. [अनु.] (१) **खिचाव या**

—दबाव से कपड़े के तंतु तोड़ना। (२) जोर से दबाना। (३) दबाकर फाड़ना।

क्रि. अ.—(१) खिचाव या दबाव से कपड़े के तंतु टूटना। (२) दुखी या चिंतित होना।

मसकरा—वि. [हिं. मसखरा] हँसोड़।

मसकला—संज्ञा पुं. [अ. मस्कल] (१) धातु चमकाने का एक औजार। (२) धातु चमकाने की क्रिया।

मसकि—क्रि. स. [हिं. मसकना] दबाकर। उ.—चरन मसकि धरनी दली उरग गयौ अकुलाइ—५१९। उ.—लंपट ढीठ, गुमानी टूँडक महा मसखरा रूखा—१-१८६।

मसकीन—वि. [अ. मिसकीन] (१) दीन, दरिद्र। (२) साधु। (३) सुशील। (४) भोला।

मसखरा—वि. [अ. मसख़रा] हँसोड़, ठट्ठेबाज।

मसखरापन—संज्ञा पुं. [हिं. मसखरा+पन] ठठोली।

मसखरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मसखरा+ई] हँसी, ठठोली।

मसखवा—वि. [हिं. मांस+खाना] मांस खाने वाला।

मसजिद—संज्ञा स्त्री. [फा. मस्जिद] मुसलमानों का नमाज पढ़ने का स्थान।

मसनंद, मसनद—संज्ञा स्त्री. [अ. मसनद] (१) बड़ा तकिया (२) अमीरों के बैठने की गद्दी।

मसना, मसनौ—क्रि. स. [हिं. मसलना] गूँधना।

मसमुंद—वि. [हिं. मस+मूँदना] धक्कम-धक्का।

मसयार, मसयारा—संज्ञा पुं. [हिं. मशाल] (१) मशाल। (२) मशालची।

मसरना, मसरनौ—क्रि. स. [हिं. मसलना] मसलना।

मसल—संज्ञा स्त्री. [अ.] कहावत, लोकोक्ति।

मसलन—क्रि. वि. [अ. मसलन्] यथा, जैसे।

मसलना, मसलनौ—क्रि. स. [हिं. मलना] (१) रगड़ना, मलना। (२) जोर से दबाना। (३) आटा गूँधना।

मसला—संज्ञा पुं. [अ. मसल] (१) कहावत। (२) विषय।

मसवासी—वि. [सं. मास+वासी] (१) एक स्थान पर एक मास रहने वाला (साधु)। (२) एक व्यक्ति के पास एक मास रहनेवाली (वेश्या)।

मसविदा—संज्ञा पुं. [अ. मुसव्विदा] (१) लेख का पहला या कच्चा रूप। (२) युक्ति।

मसहरी—संज्ञा स्त्री. [सं. मशक+हिं. हरना] मच्छरों से बचने के लिए पलँग के चारों ओर लटकायी जाने वाली जाली (जालीदार कपड़ा)।

मसहार—संज्ञा पुं. [हिं. मांस+आहार] मांसाहारी।

मसहूर—वि. [अ. मशहूर] प्रसिद्ध, विख्यात।

मसा—संज्ञा पुं. [सं. मांस+कील] शरीर पर उभरा हुआ मूंग, सरसों या बेर के बराबर दाना।

संज्ञा पुं. [सं. मशक] मच्छड़।

मसान—संज्ञा पुं. [सं. श्मशान] मरघट।

मुहा०—मसान जगाना—श्मशान पर बैठकर शव या मुरदे की सिद्धि करना। मसान जगायो (जगायौ)—श्मशान पर शव की सिद्धि की या करने लगे। उ.—हम तौ जरि-बरि भस्म भए तुम आनि मसान जगायौ—६०६३। मसान पड़ना—बहुत सन्नाटा हो जाना।

मसानिया—वि. [हिं. मसान] (१) मसान-संबंधी। (२) मसान पर रहनेवाला।

मसानी—संज्ञा स्त्री. [सं. श्मशानी] श्मशान वासिनी डाकिनी, पिशाचिनी आदि।

संज्ञा स्त्री. [सं. मसि+फ़ा. दानी] दावात। उ.—पुहुमि पत्र करि सिंधु मसानी गिरि मसि कौं लै डारै—१-१८३।

मसाल—संज्ञा स्त्री. [अ. मशाल] मशाल।

मसालची—संज्ञा पुं. [फ़ा. मशालची] मशालची।

मसाला—संज्ञा पुं. [फ़ा. मसालह] (१) सामग्री, सामान। (२) साधन। (३) तेल। (४) हींग, मिर्च, धनिया आदि।

मसि—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) लिखने की स्याही। उ.—(क) कागद धरनि करै द्रुम लेखनि जल-सायर मसि घोरै—१-१२५। (ख) लोचन-जल कागद मसि मिलिकै ह्वै गई स्यामस्याम की पाती—२९७७। (२) काजल। (३) कालिख।

मसिदानी—संज्ञा स्त्री. [सं. मसि+फ़ा. दानी] दावात।

मसिपात्र—संज्ञा पुं. [सं.] दावात।

मसिबुन्दा—संज्ञा पुं. [सं. मसिबिंदु] काजल का टीका या दिठौना जो नजर से बचाने के लिए बच्चों के मुख पर

लगाया जाता है। उ.—उर बघनहा कंठ कठुला झँडूले बार। बेनी लटकन मसिबुन्दा मुनिमनहार।

मसिमुख—वि. [सं.] काले मुँह वाला, कलंकी।

मसियाना, मसियानो—क्रि. अ. [देश.] सब भर जाना।

मसिबिंदु—संज्ञा पुं. [सं.] काजल का टीका या डिठौना जो बच्चों को नजर से बचाने के लिए उनके मुख पर लगाया जाता है।

मसी—संज्ञा स्त्री. [सं. मसि] (१) स्याही। (२) कालिख।

मसीत, मसीद—संज्ञा स्त्री. [हिं. मसजिद] मसजिद।

मसीह, मसीहा—संज्ञा पुं. [अं.] 'ईसा' का एक नाम।

मसू—संज्ञा स्त्री. [हिं. मरू] कठिनाई।

मुहा०—मसू करके—बड़ी कठिनाई से।

मसूड़ा—संज्ञा पुं. [सं. श्मश्रु] दाँतों के ऊपर-नीचे का मांस।

मसूर—संज्ञा पुं. [सं.] एक अनाज। उ.—मूँग मसूर उरद चनदारी—३९६।

मसूरा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) वेश्या। (२) मसूर की बरी।

मसूरी—संज्ञा स्त्री. [सं.] 'मसूर' नाम का अन्न। उ.—अरु तैसियै गाल मसूरी—१०-१८३।

मसूस, मसूसन—संज्ञा स्त्री. [हिं. मसूसना] कुढ़न। उ.—कीजै कहा चाव अपनी कत इहाँ मसूसन मरिए—२२७५।

मसूसना, मसूसनो—क्रि. अ. [हिं. मसोसना] (१) ऐंठना, उमेंठना। (२) निचोड़ना। (३) मनोवेग को दबाना। (४) कुढ़ना, खीझना।

मसृण, मसृन—वि. [सं. मसृण] चिकना, मुलायम।

मसोसना, मसोसनो—क्रि. अ. [फ़ा. अफसोस ?] कुढ़ना, खीझना।

मसोसा—संज्ञा पुं. [हिं. मसोसना] दुख, कष्ट।

मस्त—वि. [फा.] (१) मतवाला। (२) सदा निश्चिंत रहने वाला। (३) यौवन मद से भरा हुआ। (४) जिसमें मद हो। (५) अभिमानी।

मस्तक—संज्ञा पुं. [सं.] सिर। उ.—रावन के दस मस्तक छेदे सर गहि सारँगपानि—१-१३५।

मस्ताना, मस्तानो—वि. [फ़ा. मस्ताना] (१) मस्त। (२) मस्त-जैसा।

क्रि. अ.—मस्ती पर आना, मस्त होना।

मस्तिष्क—संज्ञा पुं. [सं.] बुद्धि का स्थान, दिमाग।

मस्ती—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] मतवालापन।

मुहा०—मस्ती उतरना (झड़ना)—मस्ती दूर होना। मस्ती उतारना (झाड़ना)—मस्ती दूर करना।

(२) भोग की प्रबल कामना। (३) हाथी आदि का मद।

महँ—अव्य. [सं. मध्य] में। उ.—घुटुरुनि चलत अजिर महँ बिहरत—१०-९७।

महँई—वि. [सं. महा] भारी, महान।

अव्य. [हिं. महँ] में।

महँगा—वि. [सं. महार्घ] अधिक मूल्य का। उ.—पहिरि बिबिध पट मोलन महँगा—२४०२।

महँगाइ, महँगाई, महँगी—संज्ञा स्त्री. [हिं. महँगा] (१) महँगे होने का भाव। (२) अकाल।

महंत—संज्ञा पुं. [सं. महत् = बड़ा] मठ का मुखिया।

वि.—प्रधान, मुखिया। उ.—सदा प्रबीन हमारे तुम हौ तुमतैं नहीं महंत—२९२१।

महंताई, महंती—संज्ञा स्त्री. [हिं. महंत] 'महंत' का भाव या पद।

मह—वि. [सं. महत्] (१) अति, बहुत। (२) श्रेष्ठ।

महक—संज्ञा स्त्री. [हिं. गमक] गंध, बास।

महकना, महकनो—क्रि. अ. [हिं. महक] गंध देना।

महकमा—संज्ञा पुं. [अ.] विभाग।

महकान—संज्ञा पुं. [हिं. महक] गंध, बास।

महज—वि. [अ. महज] (१) शुद्ध। (२) केवल, सिर्फ।

महत—संज्ञा पुं. [सं. महत्व] गौरव, मान, महत्व। उ.—(क) ऐसौ को अपने ठाकुर कौं इहि बिधि महत घटावै—१-१९२। (ख) बचन कठोर कहत कहि दाहत अपनो महत गवाँवत—३००८।

महतरिया—संज्ञा स्त्री. [हिं. महतारी] माता, मैया। उ.—आए हरि यह बात सुनतहीं धाइ लए जसुमति महतरिया—१०-२४६।

महत्ता—संज्ञा स्त्री. [सं. महत्ता] गर्व, घमंड।

महताब—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] चाँदनी।

महतारी—संज्ञा स्त्री. [सं. माता] माता, मैया। उ.—महतारी सुत दोउवै मग रोकत जाइ—१०७०।

महति, महती—संज्ञा स्त्री. [सं. महत्ता] **मान, प्रतिष्ठा, महत्ता** । उ.—मातु पितु गुरु जननि जान्यो भली खाई महति—११८९ ।

वि.—**बड़ी, बहुत, अधिक** ।

महतु—संज्ञा पुं. [सं. महत्व] **महिमा, बड़ाई** । उ.—बृंदाबन ब्रज को महतु कापै बरन्यौ जाइ।

महतो—संज्ञा पुं. [हिं. महत्ता] **सम्मानसूचक संबोधन** ।

महत्—वि. [सं.] (१) **बड़ा** । (२) **सर्वश्रेष्ठ** ।

महत्त—संज्ञा स्त्री. [सं. महत्ता] **महिमा, बड़ाई** । उ.—जो कोउ काज करै बिन बूझे पेलि महत्त हरी री—पृ. ३२७ (६७)।

महत्तत्व—संज्ञा पुं. [सं.] **पचीस तत्वों में से तीसरा जिससे अहंकार की उत्पत्ति होती है** । उ.—त्रिगुन प्रकृति तैं महत्तत्व महत्तत्व तैं अहंकार—२-३६ ।

महत्तम—वि. [सं.] **सबसे श्रेष्ठ** ।

महत्तर—वि. [सं.] **दो पदार्थों में श्रेष्ठ** ।

महत्ता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) **बड़ाई** । (२) **श्रेष्ठता** ।

महत्व—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **बड़ाई** । (२) **श्रेष्ठता** ।

महन—संज्ञा पुं. [सं. मथन] **मथने की क्रिया या भाव** ।

महना, महनो—क्रि. स. [हिं. मथना] **मथना, बिलोना** ।

संज्ञा पुं.—**मथानी, रई** ।

महनिया—संज्ञा पुं. [हिं. मथनिया] **मथनेवाला** ।

महनीय—वि. [सं.] **पूज्य, पूजनीय** ।

महनु—संज्ञा पुं. [सं. मथन] (१) **मथनेवाला** । (२) **नाश करनेवाला, बिनाशक** ।

महफिल—संज्ञा स्त्री. [अ. महफ़िल] (१) **सभा, समाज** । (२) **नाच-रंग या मनोविनोद का स्थान** ।

महबूब—संज्ञा पुं. [अ.] **प्रेम-पात्र** ।

महबूबा—संज्ञा स्त्री. [अ.] **प्रेमिका** ।

महभारथ—संज्ञा पुं. [सं. महाभारत] **महाभारत का युद्ध** । उ.—जाकैं संग सेत बँध कीन्हौं अरु जीत्यौ महभारथ —१-२८७ ।

महमंत—वि. [सं. महा+मत्त] **उन्मत्त, मदमत्त** ।

महमद—संज्ञा पुं. [अ. मुहम्मद] **मुहम्मद** ।

महमदी—वि. [अ. मुहम्मदी] **मुहम्मद का अनुयायी** ।

महमह—क्रि. वि. [हिं. महकना] **सुगंध के साथ** ।

महमहा—वि. [हिं. महमह] **खुशबूदार, सुगंधित** ।

महमहाना, महमहानो—क्रि. अ. [हिं. महमह] **महकना** ।

महमा—संज्ञा स्त्री. [सं. महिमा] (१) **बड़ाई** । (२) **श्रेष्ठता** ।

महमान—संज्ञा पुं. [फ़ा. मेहमान] **अतिथि** ।

महमाना, महमानो—क्रि. अ. [हिं. महमह] **महक देना** ।

महमानी—संज्ञा स्त्री. [फ़ा. मेहमानी] **आतिथ्य** ।

महमाय—संज्ञा स्त्री. [सं. महामाया] **पार्वती** ।

महर—संज्ञा पुं. [सं. महत्] (१) **एक आदरसूचक शब्द या संबोधन** । (२) **श्रीकृष्ण के पालक नंद जिनके लिए सम्मान सूचक शब्द 'महर' का प्रयोग किया जाता है** । उ.—पहुँचे जाइ महर मंदिर मैं मनहिं न संका कीनी—१०-४ । (ख) माखन-मधु-मिष्टान्न महर लै दियौ अक्रूर के हाथ—३५३४ । (३) **एक पक्षी** । (४) **कहार, महरा** ।

वि. [फ़ा. मेहर=दया] **दयालु, दयावान्** ।

वि. [हिं. महक] **सुगन्धित** ।

महरम—संज्ञा पुं. [अ.] **भेद का जानकार** ।

संज्ञा स्त्री.—**अँगिया, अँगिया की कटोरी** ।

महरा—संज्ञा पुं. [हिं. महत्ता] **कहार** ।

वि.—(१) **बड़ा** । (२) **श्रेष्ठ** ।

महराइ, महराई—संज्ञा पुं. [सं. महाराज] **महाराज** । उ.—राजा सौं अर्जुन सिर नाइ । कह्यौ, सुनौ बिनती महराइ—१-२८६ ।

संज्ञा स्त्री. [हिं. महरि] **श्रेष्ठता, प्रधानता** ।

महराज—संज्ञा पुं. [सं. महाराज] **महाराज** ।

महराणा, महराना—संज्ञा पुं. [सं. महाराणा] **महाराणा** ।

महरान, महराना, महराने—संज्ञा पुं. [हिं. महर+आना] **'महरों' के रहने का स्थान** । उ.—(क गोकुल मैं आनंद होत है मंगल धुनि महराने टोल—१०-९४ । (ख) तुमको लाज होत की हमको बात परै जो कहुँ महराने—११३६ ।

महराब—संज्ञा स्त्री. [अ. मेहराब] **मेहराब** ।

महरि—संज्ञा स्त्री. [हिं. महर] (१) **स्त्रियों के लिए एक आदरसूचक संबोधन** । (२) **यशोदा जिनके लिए आदरसूचक 'महरि' का प्रयोग बराबर किया गया है** ।

उ.—(क) जागी महरि पुत्र-मुख देख्यौ, आनंद तूर बजायौ—१०-४। (ख) महरि पुत्र कहि सोर लगायो तरु ज्यों धरनि लुटाइ—२५३३। (३) घरवाली, गृहस्वामिनी। (४) 'ग्वालिन' नामक पक्षी।

महरी—संज्ञा स्त्री. [देश.] 'ग्वालिन' नामक पक्षी।
संज्ञा स्त्री. [हिं. महरा] कहारिन।

महरेटा—संज्ञा पुं. [हिं. महर+एटा] (१) महर का पुत्र। (२) श्रीकृष्ण जो नंदमहर के पुत्र थे।

महरेटी, महरैटी—संज्ञा स्त्री. [हिं. महरेटा] (१) महर की पुत्री। (२) राधा जो वृषभानु महर की पुत्री थी।

महर्लोक—संज्ञा पुं. [सं.] भू, भुव आदि चौदह लोक।

महर्षि—संज्ञा पुं. [सं. महा+ऋषि] बड़ा ऋषि।

महल—संज्ञा पुं. [अ.] राजप्रासाद। उ.—सुनत बुलाइ महल ही लावै सुफलक-सुत गयौ धाइ—२४६५। (२) रनिवास, अंतःपुर।

महलसरा—संज्ञा स्त्री. [अ. महल+फा. सरा] रनिवास।

महलियाँ—संज्ञा स्त्री. [अ. महल] सुन्दर छोटा महल, महल जैसी सुन्दर कुटी। उ.—एक अनूपम माल बनावति एक परस्पर बेनी गूँथति भ्राजत कुंज-महलियाँ—२०७२।

महसिल—संज्ञा पुं. [अ. मुहस्सिल] कर उगाहनेवाला।

महसूल—संज्ञा पुं. [अ.] (१) कर, लगान। (२) भाड़ा।

महसूस—वि. [अ.] अनुभूत।

महसूसना, महसूसनो—क्रि. स. [हिं. महसूस] अनुभव करना।

महाँ—अव्य. [हिं. महँ] में।
वि. [हिं. महा] (१) बड़ा। (२) श्रेष्ठ।

महा—वि. [सं.] (१) बहुत अधिक। (२) बहुत बड़ा। उ.—कोटिक करै एक नहिं मानै सूर महा कृतघन कौं—१-९। (३) सबसे बढ़कर।

महाअरंभ—वि. [सं. महा+रंभ=शोर] बहुत अधिक शोर, कोलाहल या हलचल।

महाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. मथना+आई] मथने का काम, भाव या मजदूरी।

महाउत—संज्ञा पुं. [हिं. महावत] महावत।

महाउर—संज्ञा पुं. [हिं. महावर] महावर। उ.—(क) कहाँ महाउर पाग रँगाई यह सोभा इक न्यारी—१९९१। (ख) चंचल अंचल करहिं दुरावति रूप-रासि अति मानहु मान महाउर धोए—२११२।

महाकल्प—संज्ञा पुं. [सं.] वह समय जिसमें एक ब्रह्मा की आयु पूरी होती है।

महाकाल—संज्ञा पुं. [सं.] शिव का वह स्वरूप जिससे वे सृष्टि का अंत करते हैं। (२) शिव के एक पुत्र का नाम।

महाकाली—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) महाकाल-रूप शिव की पत्नी जिसके पाँच मुख और आठ भुजाएँ मानी गयी हैं। (२) दुर्गा की एक मूर्ति।

महाकाव्य—संज्ञा पुं. [सं.] (१) वह सर्गबद्ध प्रबंध काव्य जिसमें सभी रसों, ऋतुओं और प्राकृतिक दृश्यों का वर्णन हो। (२) स्थायी महत्व का श्रेष्ठ काव्य।

महाजन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) श्रेष्ठ व्यक्ति। (२) धनी। (३) रुपये-पैसे का लेन-देन करने वाला। (४) बनिया। (५) भलामानुस, सदाचारी व्यक्ति।

महाजनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. महाजन] (१) रुपये के लेन-देन का काम। (२) एक लिपि।

महाजल—संज्ञा पुं. [सं.] समुद्र। उ.—मलय तनु मिलि लसति सोभा महाजल गभीर।

महाजाननिराइ—संज्ञा पुं. [सं. महा+ज्ञान+राय] अत्यंत चतुर श्रीकृष्ण। उ.—सूर प्रभु बस किये नागरि महाजाननिराइ—१७७३।

महातत्व—संज्ञा पुं. [सं. महत्तत्व] पचीस तत्वों में तीसरा जिससे अहंकार की उत्पत्ति होती है। उ.—त्रिगुन तत्व ते महातत्व, महातत्व ते अहंकार। मन इंद्रिय सब्दादि पंचौ ताते किए बिस्तार।

महातम—संज्ञा पुं. [सं. माहात्म्य] (१) महिमा, बड़ाई। उ.—(क) सब सुख निधि हरि नाम महातम पायौ है नाहिन पहिचानत। (ख) कमलनैन कौं छाँड़ि महातम और देव कौं ध्यावै—१-१६८।

महातल—संज्ञा पुं. [सं.] चौदह भुवनों में पाँचवाँ जो पृथ्वी के नीचे है। उ.—अतल बितल अरु सुतल तलातल और महातल जान। पाताल और रसातल मिलि सातों भुवन प्रमान—सारा. ३१।

महात्मा—वि. [सं. महात्मन्] (१) जिसका आशय, आचरण आदि उच्च हो। (२) बड़ा साधु।

महादंड—संज्ञा पुं. [सं.] यम का दंड।

महादंडधारी—संज्ञा पुं. [सं. महादंडधारिन्] यमराज।

महादेव—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बड़ा देवता। (२) शिव जी। उ.—ब्रह्मा महादेव तैं को बड़ तिनकी सेवा कछु न सुधारी—१-३४।

महादेवी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) दुर्गा। (२) पटरानी।

महाधन—वि. [सं.] (१) बहुत मूल्यवान। उ.—तहँ राजत निज बीर शेषनाग ताकें तर कूरम बरात महाधन धीर—सारा. ३२। (२) बहुत धनी।

महान—वि. [सं. महान्] बहुत बड़ा। उ.—ब्रज-जन-मन कौं महान संतन सुख दिए—४५०।

महानाभ—संज्ञा पुं. [सं.] एक मंत्र जिससे शत्रु के शस्त्र व्यर्थ किये जाते हैं।

महानिद्रा—संज्ञा पुं. [सं.] मृत्यु, मरण।

महानिधान—संज्ञा पुं. [सं.] धातुभेदी पारा।

महानिधि—संज्ञा स्त्री. [सं.] अपार निधि। उ.—हरि सीता लै चल्यौ डरत जिय मानौं रंक महानिधि पाई—९-५९।

महानिर्वाण—संज्ञा पुं. [सं.] परिनिर्वाण जिसके अधिकार केवल बुद्ध गण माने जाते हैं।

महानुभाव—संज्ञा पुं. [सं.] उच्चाशय वाला व्यक्ति। उ.—महानुभाव निकट नहिं परसे जान्यौ न कृत विधात्र—१-२१६।

महानुभावता—संज्ञा स्त्री. [सं.] बड़प्पन।

महान—वि. [सं.] बहुत बड़ा।

महापद्म—संज्ञा पुं. [सं.] नौ निधियों में एक।

महापात्र—संज्ञा पुं. [सं.] महा ब्राह्मण जो मृतक-कर्म का दान लेता है।

महापुरुष—संज्ञा पुं. [सं.] श्रेष्ठ व्यक्ति। उ.—महापुरुष सब बैठे देखत केस गहत धरहरि न करी—१-२४९।

महाप्रतिहार—संज्ञा पुं. [सं.] नगर या राजप्रासाद के रक्षकों या प्रतिहारों का प्रधान।

महाप्रभु—संज्ञा पुं. [सं.] वल्लभाचार्य जी की एक उपाधि।

महाप्रलय—संज्ञा पुं. [सं.] वह काल जब सारी सृष्टि का विनाश होकर केवल जल ही रह जाता है। उ.—अरु पुनि महाप्रलय जब होइ। मुक्ति स्थान पाइहै सोइ—४-९।

महाप्रसाद—संज्ञा पुं. [सं.] (१) जगन्नाथ जी का चढ़ा हुआ भात। (२) मांस (व्यंग्य)।

महाप्राण—संज्ञा पुं. [सं.] देवनागरी वर्णमाला के प्रत्येक वर्ग का दूसरा और चौथा वर्ण (ख, घ, छ, झ, ठ, ढ, थ, ध, फ और भ) जिसके उच्चारण में प्राणवायु का विशेष व्यवहार किया जाता है।

महाबल—वि. [सं.] बहुत बली। उ.—अर्जुन भीम महाबल जोधा—१-२५४।

संज्ञा पुं.—बहुत वीर पुरुष। उ.—धरि अवतार महाबल काऊ एकहिं कर मेरौ गर्व हरयौ—१०-५९।

महाबलि—संज्ञा पुं. [सं.] (१) आकाश। (२) मन।

महाबाहु—वि. [सं.] (१) लंबी भुजावाला। (२) वीर।

संज्ञा पुं.—एक राक्षस।

महाब्राह्मण—संज्ञा पुं. [सं.] वह ब्राह्मण जो मृतक-कर्म का दान ले।

महाभाग—वि. [सं.] भाग्यवान, सौभाग्यशाली।

महाभागवत—संज्ञा पुं. [सं.] (१) परम भक्त। (२) परम वैष्णव। (३) श्रीमद्भागवत महापुराण।

महाभारत—संज्ञा पुं. [सं.] (१) एक प्राचीन भारतीय महाकाव्य। (२) कौरवों-पांडवों का महायुद्ध। (३) कोई महायुद्ध।

महाभूत—संज्ञा पुं. [सं.] पंचतत्व—पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश।

महामति—वि. [सं.] बहुत बुद्धिमान।

महामना—वि. [सं. महामनस्] अत्यंत उदार।

महामनि—संज्ञा स्त्री. [सं. महा+मणि] श्रेष्ठ मणि। उ.—सम करि गनै महामनि काँचै—२-११।

महामाइ, महामाई—संज्ञा स्त्री. [सं. महा+हिं. माई] (१) दुर्गा। (२) काली।

महामात्य—संज्ञा पुं. [सं.] प्रधानमन्त्री।

महामाया—संज्ञा स्त्री. [सं.] दुर्गा।

महामारी—संज्ञा स्त्री. [सं.] भीषण संक्रामक रोग।

महाय—वि. [सं. महा] बहुत, अधिक ।
महायात्रा—संज्ञा स्त्री. [सं.] मृत्यु, मरण ।
महादान—संज्ञा पुं. [सं.] बौद्धों के तीन संप्रदायों में एक ।
महारंभ—वि. [सं.] जिसका प्रारम्भ कठिनता से हो ।
महारथ, महारथि, महारथी—संज्ञा पुं. [सं. महारथ] बहुत बीर योद्धा । उ.—स्यंदन खंडि महारथि खंडौं कपि-ध्वज सहित गिराऊँ—१-२७० ।
महारस—संज्ञा पुं. [सं.] बहुत अधिक रस या आनन्द । उ.—मदनदूत मोंहि बात सुनाई इनमैं भरचौ महारस भारो—११२२ ।
महाराज—संज्ञा पुं. [सं.] (१) राजाओं का भी राजा । उ.—लीजै पार उतारि सूर कौं महाराज ब्रजराज—१-१०८ । (२) आचार्य आदि पूज्य व्यक्तियों के लिए आदरसूचक संबोधन ।
महाराणा—संज्ञा पुं. [सं. महा + हिं. राणा] मेवाड़, चित्तौड़ और उदयपुर के राजाओं की उपाधि ।
महारावल—संज्ञा पुं. [सं. महा + हिं. रावल] जैसलमेर, डूँगरपुर आदि राज्यों के राजाओं की उपाधि ।
महाराष्ट्र—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बड़ा राष्ट्र । (२) दक्षिण का एक प्रदेश । (३) दक्षिणी महाराष्ट्र का निवासी ।
महालक्ष्मी—संज्ञा स्त्री. [सं.] नारायण की एक शक्ति ।
महावट—संज्ञा स्त्री. [हिं. माह = माघ + वट] माघ-पूस या जाड़े की वर्षा ।
महावत—संज्ञा पुं. [हिं. महामात्र] हाथीवान । उ.—(क) मानहुँ चंद महावत मुख पर अंकुस बेसरि लावै—८७६ । (ख) माथे नहीं महावत सतगुरु अंकुस ग्यान कर टूटौ—३४०१ ।
महावर—संज्ञा पुं. [सं. महावर्ण] लाख से बना लाल रंग जिससे सौभाग्यवती स्त्रियाँ पैर रँगती-रँगाती हैं, यावक । उ.—नाइनि बोलहु नवरंगी (हो) ल्याउ महावर वेग—१०-४० ।
महावरा—संज्ञा पुं. [अ.] (१) मुहावरा । (२) अभ्यास ।
महावरी—संज्ञा पुं. [हिं. महावर] 'महावर' की टिकिया जिससे सौभाग्यवती स्त्रियाँ पैर रँगती-रँगाती हैं ।
महावीर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) हनुमान । (२) जैनियों के चौबीसवें और अंतिम जिन या तीर्थंकर जिन्होंने ईसा से ५२७ वर्ष पूर्व निर्वाण प्राप्त किया था ।
वि.—बहुत वीर ।
महाशय—संज्ञा पुं. [सं.] महात्मा, सज्जन ।
महिं—अव्य. [हिं. महँ] में । उ.—राख्यौ हो जठर महिं स्रोनित सौं सानि—१-७६ ।
महि—संज्ञा स्त्री. [सं.] पृथ्वी । उ.—(क) डोलत महि अधीर भयौ फनिपति—९-२६ । (ख) गरू भए महि मैं बैठाए—१०-७८ ।
महिआँ—अव्य. [हिं. महँ] में । उ.—(क) और कौन समान त्रिभुवन सकल गुन जेहि महिआँ—१७०२ । (ख) कहत-सुनत समुझत मन महिआँ ऊधौ बचन तुम्हारे—३०३६ ।
महिख—संज्ञा पुं. [सं. महिष] भैंसा ।
महिदेव—संज्ञा पुं. [सं.] ब्राह्मण ।
महिधर—संज्ञा पुं. [सं. महीधर] (१) पर्वत । (२) शेष ।
महिपाल—संज्ञा पुं. [सं. महीपाल] राजा ।
महिमा—संज्ञा स्त्री. [सं. महिमन्] (१) महत्व, प्रताप । उ.—(क) जासु महिमा प्रगटि केवट धोइ पग सिर धरन—१-३०८ । (ख) सुक की महिमा सुक ही जानै—१-३४१ । (ग) तैं सिव की महिमा नहिं लही—४-५ । (२) आठ सिद्धियों में एक ।
महियाँ—अव्य [हिं. महँ] में । उ.—(क) बिहरति फिरति सकल बन महियाँ—६१२ । (ख) सूरदास प्रभु तुमरे दास को आनँद होत ब्रज महियाँ—१००१ । (ग) खेलत हँसत गए बन महियाँ—२३६७ । (घ) कबहुँ कहत वा मुरली महियाँ लै लै बोलत हमरौ नाउँ—३४४८ ।
महिरावण, महिरावन—संज्ञा पुं. [सं. महिरावण] रावण का एक पुत्र जो पाताल में रहता था । उ.—तुम्हैं मारि महिरावन मारैं देहिं बिभीषन राई—९-१४० ।
महिला—संज्ञा स्त्री. [सं.] भले घर की स्त्री ।
महिष—संज्ञा पुं. [सं.] (१) भैंसा । (२) एक राक्षस जिसे दुर्गा ने मारा था ।
महिषमर्दिनी—संज्ञा स्त्री. [सं.] दुर्गा ।
महिषासुर—संज्ञा पुं. [सं.] एक राक्षस जिसे दुर्गा ने मारा था ।

महिषी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) **भैंस**। (२) **रानी**।

महिषेश—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **महिषासुर**। (२) **यमराज**।

महिसुत—संज्ञा पुं. [सं. महीसुत] **पृथ्वी का पुत्र मंगल ग्रह**। उ.—महिसुत गति तजि जलसुत गति लै सिंधु-सुता-पति भवन न भावै—२२४५।

महिसुर—संज्ञा पुं. [सं. महीसुर] **ब्राह्मण**।

मही—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) **पृथ्वी**। उ.—जज्ञ मैं करत तब मेघ बरसत मही—४-११। (२) **मिट्टी**।

संज्ञा पुं. [हिं. महना] **मठा, छाँछ**। उ.—(क) ऐसी तू है चतुर बिबेकी पय तजि पियत मही। (ख) छिरकि लरिकनि मही सौं भरि ग्वाल दए चलाइ—१०-२८९। (ग) खाटी मही कहा रुचि मानै सूर खवैया घी को—३२५१।

महीदेव—संज्ञा पुं. [सं.] **ब्राह्मण**।

महीधर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **पर्वत**। (२) **शेषनाग**।

महीन—वि. [सं. महा+हिं. झीन] (१) **पतला, झीना**।

मुहा०—महीन काम—**बहुत कारीगरी का काम**।

(२) **कोमल, धीमा, मंद**।

महीना—संज्ञा पुं. [सं. मास] (१) **मास**। (२) **मासिक वेतन**। (३) **स्त्री का मासिक धर्म**।

महीप, महीपति, महीपाल—संज्ञा पुं. [सं.] **राजा**। उ.—मागधपति बहु जीति महीपति कछु जिय मैं गरबाए—१-१०९।

महीपुत्र, महीसुत—संज्ञा पुं. [सं.] **मंगलग्रह**। उ.—भाग्य-भवन मैं मकर महीसुत बहु ऐस्वर्य बढ़ैहैं—१०-८६।

महीसुर—संज्ञा पुं. [सं.] **ब्राह्मण**।

महीसूनु—संज्ञा पुं. [सं. मही+सुवन] **मंगल ग्रह**।

महुँ—अव्य. [हिं. महँ] **में**।

महुअर, महुअरि, महुअरी—संज्ञा पुं. स्त्री. [सं. मधुकर, प्रा. महुअर] **एक बाजा**। उ.—डफ बाँसुरी अरु महुअरि बाजत ताल मृदंग—२३९९।

महुआ—संज्ञा पुं. [सं. मधूक, प्रा. महुअ] **एक वृक्ष**।

महुछौ, महुछ्छौ—संज्ञा पुं. [सं. महोत्सव, प्रा० महोच्छव] **महोत्सव**।

महुवरि—संज्ञा स्त्री. [हिं. महुअर] **'महुअर' बाजा**। उ.—सूर स्याम जानि चतुराई जेहि अभ्यास महुवरि को।

महुवा—संज्ञा पुं. [हिं. महुआ] **'महुआ' वृक्ष**।

महूँख—संज्ञा पुं. [सं. मधूक] **'महुआ' वृक्ष**।

महूम—संज्ञा स्त्री. [अ. मुहिम] (१) **लड़ाई, युद्ध**। (२) **चढ़ाई, अभियान**।

महूरत, महूरति—संज्ञा पुं. स्त्री. [सं. मुहूर्त्त] **शुभ कार्य का समय**।

महेंद्र—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **इन्द्र**। (२) **विष्णु**।

महेर, महेरा—संज्ञा पुं. [देश.] **झगड़ा, बखेड़ा**।

संज्ञा पुं. [हिं. मही+एरा] **दही में चावल या आटा पकाकर बनाया जाने वाला एक व्यंजन**।

महेरि, महेरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. महेरा] **'महेरा' व्यंजन**। उ.—मधुर महेरि सो गोपन प्यारी।

वि. [हिं. महेर] **अड़चन डालने वाला**।

महेला—वि. [देश.] **सुन्दर, मनोहर**।

महेश, महेस—संज्ञा पुं. [सं. महेश] **शिव**।

महेश्वर, महेसुर, महेस्वर—संज्ञा पुं. [सं. महेश्वर] **शिव**।

महोख, महोखा—संज्ञा पुं. [सं. मधूक] **एक पक्षी**।

महोच्छव, महोछ, महोछा, महोत्सव—संज्ञा पुं. [सं. महोत्सव] **बड़ा उत्सव**। उ.—बरस दिवस को महा महोत्सव को आवै को कौन सुनाई—९१३।

महोदधि—संज्ञा पुं. [सं.] **सागर, समुद्र**।

महोदय—संज्ञा पुं. [सं.] **महाशय, महानुभाव**।

महोल, महोला—संज्ञा पुं. [अ. मुहेल] (१) **हीला, बहाना**। (२) **धोखा, चकमा**।

मह्यो, मह्यौ—संज्ञा पुं. स्त्री. [हिं. मही] **छाँछ, मठा**। उ.—(क) प्रगट प्रताप ज्ञान गुरु गम तैं दधि मथि घृत लै तज्यौ मह्यौ—२-८। (ख) मैं मतिहीन मर्म नहिं जान्यौ भूलो मथत मह्यौ—२८९४।

माँ—संज्ञा स्त्री. [सं. माता] **जननी**। उ.—(क) दोउ भैया जेंवत माँ आगे। (ख) परसुराम सौं यौं कही माँ कौ बेगि सँहार—९-१४।

अव्य. [सं. मध्य] **में**।

माँखण, माखन—संज्ञा पुं. [हिं. माखन] **मक्खन**।

माँखना, माँखनो - क्रि. अ. [हिं. माखना] क्रोध करना।

माँखी—संज्ञा स्त्री. [हिं मक्खी] मक्खी।

माँग - संज्ञा स्त्री. [हिं. माँगना] (१) माँगने की क्रिया या भाव। (२) खपत, चाह।

संज्ञा स्त्री. [सं. मार्ग ?] सिर के बालों को काढ़कर निकाली गयी रेखा, सीमंत।

यौ०—माँग-चोटी—केश शृंगार। माँगजली—विधवा।

मुहा०—माँग-कोख से सुखी रहना (जुड़ाना)—स्त्री का सौभाग्य और संतानवती होना। माँग-पट्टी करना—केशों का शृंगार करना। माँग पारना (बाँधना)—बाल सँवारना।

माँग-टीका—संज्ञा पुं. [हिं. माँग+टीका] माँग का एक गहना।

माँगत—क्रि. स. [हिं. माँगना] याचना करता है। उ.—(क) माँगत है सूर त्याग जिहिं तन-मन-राता—१-१२३। (ख) उलटे न्याउ सूर के प्रभु के बहे जात माँगत उतराई—३०५८।

माँगन—संज्ञा पुं [हिं. माँगना] (१) माँगने की क्रिया या भाव। (२) माँगने के लिए। उ.—(क) हरि कह्यौ जज्ञ करत तहँ बाम्हन। जाहु उनहिं ढिग भोजन माँगन—८९६। (ख) परमहंस बिहंग देखतहिं आवत भिक्षा माँगन—३००१।

संज्ञा पुं. [हिं. मंगन] भिखारी, भिक्षुक।

माँगना, माँगनो—क्रि. स. [सं. मार्गण=याचना] (१) याचना करना। (२) इच्छा पूरी करने को कहना।

माँगफूल—संज्ञा पुं. [हिं. माँग+फूल] माँग का एक गहना।

मांगल गीत—संज्ञा पुं. [सं. मांगल्य गीत] शुभ अवसर पर गाया जानेवाला गीत।

मांगलिक—वि. [सं.] शुभ मंगलकारी।

मांगल्य—वि. [सं.] शुभ, मंगलकारक।

माँगा—संज्ञा पुं. [हिं. माँगना] मँगनी।

क्रि. स.—माँग की।

माँगि—क्रि. स. [हिं. माँगना] माँगकर।

प्र०—माँगि पठैहै—मँगवा भेजेगा। उ.—जब चहिहै तब माँगि पठैहै जो कोउ आवत जातो—३१२२।

माँगे—वि. [हिं. माँगना] माँगा हुआ। उ.—मुँह माँगे फल जो तुम पावहु तौ तुम माँगहु मोहिं—९१५।

संज्ञा पुं.—माँगने का भाव, मँगनी।

माँगै—क्रि. स. [हिं. माँगना] कामना पूरी करने के लिए याचना करता है। उ.—भक्त अनन्य कछु नहिं माँगै—३-१३।

माँग्यो, माँग्यौ—क्रि. स. [हिं. माँगना] माँगा है, याचना की। उ.—(क) राजा जल ता रिषि सौं माँग्यौ—१-२९० (ख) मोहन माँग्यौ अपनो रूप—३१८२।

वि.—माँगा हुआ। उ.—जो तुम मुँह माँग्यौ फल पावहु—१०१६।

माँचना, माँचनो—क्रि. अ. [हिं. मचना] (१) शुरू या आरंभ होना। (२) प्रसिद्ध होना।

माँचा—संज्ञा पुं. [सं. मंच, हिं. मंझा] (१) पलँग। (२) मचान।

माँची—क्रि. अ. [हिं. माँचना] आरंभ हुई।

माँछ—संज्ञा स्त्री. [सं. मत्स्य] मछली।

माँछना, माँछनो—क्रि. अ. [सं मध्य ?] धँसना।

माँछर, माँछरी, माँछल, माँछली—संज्ञा स्त्री. [सं. मत्स्य] मछली।

माँछी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मक्खी] मक्खी।

माँजना, माँजनो—क्रि. स. [सं. मज्जन] रगड़ रगड़कर शरीर के अंगों का मैल छुड़ाना।

क्रि. अ.—(१) अभ्यास करना। (२) दोहराना।

माँजर—संज्ञा स्त्री. [हिं. पंजर] हड्डियों की ठठरी।

माँजा—संज्ञा पुं. [देश.] पहली वर्षा का फेन जो मछली के लिए मादक माना जाता है।

माँझ—अव्य. [सं. मध्य] में, भीतर, बीच। उ.—(क) सभा माँझ द्रौपदि पति राखी—१-११३। (ख) गोकुल माँझ जोग बिस्तारचौ—२९८२। (ग) सो यह परम उदार मधुप ब्रज बीथिन माँझ बहायौ—२९९८। (घ) जो पै हृदय माँझ हरी—३२००।

संज्ञा पुं.—अंतर, फर्क।

माँझा—संज्ञा पुं. [सं. मध्य] (१) पगड़ी का एक आभू-

वण। (२) वे पीले कपड़े जो वर-वधू को विवाह के दो-तीन दिन पहले हल्दी चढ़ाने पर पहनाये जाते हैं।

संज्ञा पुं. [हिं. माँजना] (१) पतंग की डोरी को पैना बनाने के लिए चढ़ाया जानेवाला कलफ। (२) डोरी जिस पर यह कलफ चढ़ा हो।

माँझिल—क्रि. वि. [सं. मध्य] बीच का।

माँझी—संज्ञा पुं. [सं. मध्य, हिं. माँझ ?] (१) नाव खेनेवाला। (२) झगड़े का बीच-बचाव करनेवाला।

माँट—संज्ञा पुं. [सं. मट्टक] (१) मटका, कुंडा। उ.—मानौ नील माँट महँ बोरे लै जमुना जु पखारे। (२) अटा, अटारी।

माँठ—संज्ञा पुं. [सं. मट्टक] मटका, कुंडा।

माँठी—संज्ञा स्त्री. [देश.] एक तरह की चूड़ी।

माँड़—संज्ञा पुं. [सं. मंड] पकाये हुए चावल या भात का लसदार पानी।

संज्ञा स्त्री. [हिं. माँड़ना] माड़ने की क्रिया या भाव।

संज्ञा पुं. [देश.] एक राग।

माँड़ति—क्रि. स. [सं. मंडन] मचाती या ठानती है। उ.—सुनहु सूर हम सों हठ माँड़ति कौन नफा करि लैहौ—१११८।

माँड़ना—क्रि. स. [सं. मंडन] (१) मलना-मसलना। (२) सानना, गूँधना। (३) पोतना, लेपना। (४) रचना, सजाना। (५) मचाना, ठानना। (६) 'बाल' में से अनाज के दाने झाड़ना।

क्रि. अ.—चलना, गमन करना।

माँड़नि, माँड़नी—संज्ञा स्त्री. [सं. मंडन] गोट, किनारी। उ.—अँगिया नील माँड़नी राती निरखत नैन चुराई—१७३९। (ख) नील कंचुकी माँड़नि लाल। भुजन नवै आभूषन माल—१८२०।

माँड़नो—क्रि. स. [सं. मंडन] (१) मलना, मसलना। (२) सानना-गूँधना। (३) पोतना, लेपना। (४) रचना, सजाना। (५) 'बाल' से अन्न के दाने झाड़ना। (६) मचाना, ठानना।

माँड़हि—क्रि. स. [हिं. माँड़ना] (१) पोतती या लगाती है। उ.—एक मुख माँड़हि कुमकुमा मिलि झूमक हो—२४१०। (२) मचाता या ठानता है। उ.—और मंत्र कछु उर जनि आनौ आजु सुकपि रन माँड़हि।

माँड़ि—क्रि. स. [हिं. माड़ना] किसी अन्न की 'बाल' से दाने झाड़कर। उ.—माँड़ि माँड़ि खरिहान क्रोध को पोता भजन भरावै—१-१४२।

माँड़ी—क्रि. स. [हिं. माँड़ना] मचायी, ठानी। उ.—रुद्र भगवान अरु बान सांबुक भिरे राम कुंभाउ माँड़ी लराई—१० उ०-३५।

माँड़ौगी—क्रि. स. [हिं. माँड़ना] ठानूँगी, मचाऊँगी। उ.—सुन री कुल की कानि ललन सों मैं झगरी माँड़ौगी—१५११।

माँडलिक—संज्ञा पुं. [सं.] मंडल विशेष का शासक।

माँड़व—संज्ञा पुं. [सं. मंडप] विवाहादि शुभ कार्यों के लिए छाया जानेवाला मंडप।

संज्ञा पुं. [सं. माण्डव्य] एक ऋषि जिन्हें बाल्यावस्था के अपराध के कारण यमराज ने शूली पर चढ़वाया था। इस पर ऋषि ने यमराज को शूद्र हो जाने का शाप दिया था; फलस्वरूप यमराज दासी के गर्भ से पांडु के यहाँ जन्मे और 'विदुर' कहलाये। उ.—माँडव रिषि जब सूली दयौ। तब सो काठ हरौ ह्वै गयौ। माँडव धर्मराज पै आयौ। क्रोधवंत यह बचन सुनायौ। ....। दासी पुत्र होहु तुम जाइ। सूर बिदुर भयौ सो इहिं भाइ—३-५।

मांडवी—संज्ञा स्त्री. [सं.] राजा जनक के भाई कुशध्वज की पुत्री जो भरत को ब्याही थी।

मांडव्य—संज्ञा पुं. [सं.] एक प्राचीन ऋषि।

माँड़ा—संज्ञा पुं. [सं. मंडप] मंडप, मँडवा।

संज्ञा पुं. [हिं. माँडना=गूँथना] (१) मैदे की पतली रोटी जो घी में पकायी जाती है। (२) पूरी, पराठा।

क्रि. स. भूत.—(१) गूँधा, साना। (२) पोता, लगाया। (३) रचा, सजाया। (४) मचाया, ठाना।

माँड़ी—संज्ञा स्त्री. [सं. मंड] भात का पसावन, माँड़।

माड़े—संज्ञा पुं. [हिं. माड़] मैदे की पतली पूरी, लुचई। उ.—काको भूख गयी बयारि भखि बिना दूध-घृत-माड़े।

माँड़ो, माँड़ौ—संज्ञा पुं. [सं. मंडप] विवाह का मंडप।

माँड्यो, माँड्यौ—क्रि. स. [हिं. माड़ना] लीपा, पोता, सजाया। उ.—खेलत मैं बालक-बत छाँड्यो। एक कहत अंगन दधि माड्यो—१०५१।

संज्ञा पुं [सं. मंडप] विवाह का मंडप, मँड़वा। उ.—आए नाथ द्वारका नीके रच्यो माँड्यो छाय। ब्याह केलि विधि रची सकल सुख सौंज गनी नहिं जाय।

माँढ़ा—संज्ञा पुं [हिं. माँड़ना] विवाह-मंडप।

माँत—वि. [सं. मत्त] (१) उन्मत्त। (२) दीवाना।

वि. [सं. मंद] (१) उदास (२) पराजित।

माँतना, माँतनो—क्रि अ. [सं. मत्त + हिं. ना] (१) उन्मत्त या बेसुध होना। (२) दीवाना होना।

माँता, माँती—वि. [सं. मत्त] उन्मत्त, दीवाना।

माँथ—संज्ञा पुं. [सं. मस्तक] माथा, मस्तक।

माँथबंधन—संज्ञा पुं. [हिं. माथा + बंधन] (१) परांदा, चोटी, चँवरी। (२) साफा, पगड़ी।

माँद—वि. [सं. मंद] (१) श्रीहीन, फीका। (२) पराजित।

संज्ञा स्त्री. [देश.] हिंसक जंतु की गुफा, खोह।

माँदगी—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] (१) रोग। (२) थकावट।

माँदर—संज्ञा पुं. [हिं. मर्दल] 'मर्दल' नामक मृदंग।

माँदा—वि. [फा. मांदः] (१) थका हुआ। (२) बीमार।

मांधाता—संज्ञा पुं [सं मांधातृ] एक सूर्यवंशी चक्रवर्ती राजा जिसके पचास कन्याएँ थीं। उ.—कह्यौ मांधाता सों जाइ। पुत्री एक देहु मोहि राइ ९-२।

माँपना, माँपनो—क्रि. अ. [हिं. माँतना] नशे में चूर होना।

क्रि. स. [हिं. मापना] नाप करना या लेना।

माँयँ—अव्य. [सं. मध्य, हिं. माँझ] में, बीच।

संज्ञा स्त्री. [सं. माता] माता।

मांस—संज्ञा पुं. [सं.] शरीर का गोश्त।

संज्ञा पुं. [सं. मास] महीना।

मांसभक्षी—वि. [सं. मांसभक्षिन्] मांस खानेवाला।

मांसल—वि. [सं.] (१) मांस से युक्त। (२) मोटा, पुष्ट।

मांसलता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) 'मांसल' होने का भाव। (२) पुष्टता और स्थूलता।

मांसाहारी—वि. [सं. मांसाहारिन्] मांस खानेवाला।

माँसी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मौसी] मौसी।

माँसु, माँसू—संज्ञा पुं. [सं. मांस] मांस, गोश्त।

माँह, माँहा, माँहिं, माँहीं, माहें, माहैं—अव्य. [सं मध्य] में, बीच, भीतर, अंदर।

मा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) लक्ष्मी। (२) माता।

माइँ, माईं—संज्ञा स्त्री. [सं. मातृ] छोटा पूआ जिससे विवाहादि शुभ अवसरों पर कुलदेवी का पूजन किया जाता है।

मुहा०—माइँ (माइँन या माईं) में थापना—पितरों के समान आदर करना। माइँन मैं थपिहौं पितरौं के समान आदर करूँगी (करूँगा)। उ.—जब लौं हौं जीवौं जीवन भर सदा नाम तव जपिहौं। दधि-ओदन दोना भरि दैहौं अरु भाइँन (पाठां-भाइनि—भाई) मैं थपिहौं—९-१६४।

संज्ञा स्त्री. [अनु.] पुत्री, कन्या।

संज्ञा स्त्री. [हिं. मामा] मामा की स्त्री, मामी।

माइ—संज्ञा स्त्री. [सं. मातृ] (१) माता। उ.—कबहुँक लछिमन पाइ सुमित्रा माइ-माइ कहि मोहि सुनैहै—९-८१। (२) वृद्धा के लिए आदरसूचक संबोधन।

माइका—संज्ञा पुं. [सं. मातृ+गृह] स्त्री के माता-पिता का घर, नैहर।

माई—संज्ञा स्त्री. [सं. मातृ] (१) माता, जननी।

यौ०—माई का लाल—(१) उदार स्वभाव वाला। (२) वीर बली।

(२) सखी अथवा बूढ़ी स्त्री के लिए आदरसूचक संबोधन। उ.—(क) जसुमति माई कहा सुत सिखयौ हमकौ जैसे हाल कियौ—८१०। (ख) सखि बोलावति टेरि टेरि आवहु री माई—२४१९। (ग) कोऊ माई आवत है तन स्याम—२९५८। (घ) सुंदर स्याम कान्ह लिखि पठई आइ सुनो री माई—२९०६।

माख—संज्ञा पुं. [सं. मक्ष] (१) अप्रसन्नता। (२) पछतावा।

माखन—संज्ञा पुं [हिं. मक्खन] नवनीत, मक्खन। उ.—(क) कहियौ मधुप बारि मथि माखन काढ़ि जो भरी कमोरी—३०२८। (ख) हम अहीर माखन दधि बेचैं सबन टेक पकरी—३१०४। (ग) कागर लिखि-लिखि जोग पठावत बिसरी माखन चोरी—३१११।

माखनचोर—संज्ञा पुं. [हिं. माखन + चोर] **श्रीकृष्ण।**

माखना, माखनो—क्रि. अ. [हिं. माख] **अप्रसन्न होना।**

माखा—संज्ञा पुं. [हिं. माख] (१) **अप्रसन्नता।** (२) **पछतावा।**

संज्ञा पुं. [हिं. माखी] (१) **बड़ी मक्खी।** (२) **नर मक्खी।**

माखी, माखो—संज्ञा स्त्री. [सं. माक्षिक] (१) **मक्खी।** उ.—ज्यौं माखी मृगमद मंडित तन परिहरि पूय परै —१-१९८। (२) **शहद की मक्खी।** उ.—अब तो हैं हम निपट अनाथ। जैसे मधु तोरे की माखी त्यौं हम बिन ब्रजनाथ—२६९३।

मागध—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **भाट, चारण।** (२) **जरासंध का एक नाम।** उ.—(क) मागध हत्यौ, मुक्त नृप कीन्हें —१-१७। (ख) मागध मगध देस तैं आयौ लीन्हें फौज अपार।

वि. [सं. मगध] **मगध देश का।**

मागधपति—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **मगध का राजा।** (२) **जरासंध।** उ.—मागधपति बहु जीति महीपति कछु जिय मैं घबराए—१-१०९।

मागधी—संज्ञा स्त्री. [सं.] **मगध की प्राचीन प्राकृत भाषा।**

माघ—संज्ञा पुं. [सं.] (१) **पूस के बाद का महीना।** उ.—माघ तुषार जुवति अकुलाहीं ह्याँ कहुँ नंद सुवन तौ नाहीं—१९९। (२) **संस्कृत का एक प्रसिद्ध कवि।**

संज्ञा पुं. [सं. माध्य] **कुंद का फूल।**

माघी—संज्ञा स्त्री. [सं. माघ + हिं. ई] **माघ की पूर्णिमा।**

वि.—**माघ मास से संबंधित, माघ का।**

माच—संज्ञा पुं. [हिं. मचान] **मचान, मंच।** उ.—तुरत माच ते धरनि गिरायो—२६३१।

संज्ञा पुं. [सं.] **मार्ग, रास्ता।**

माचना, माचनो—क्रि. स. [हिं. मचाना] (१) **शोर-गुल के साथ कार्यारंभ करना।** (२) **फैलाना, छा देना।**

माचल—वि. [हिं. मचलना] **हठी, जिद्दी।** उ.—महा माचल मारिबे की सकुच नाहिन मोहिं—१-१०६।

माचा—संज्ञा पुं. [सं. मंच] (१) **पीढ़ा।** (२) **मचान।**

माची—संज्ञा स्त्री. [सं. मंच] **पीढ़ी, मचिया।**

माछ, माछर, माछा—संज्ञा पुं. [सं. मत्स्य] **मछली।**

संज्ञा पुं. [हिं. मच्छड़] **मच्छड़।**

माछी—संज्ञा स्त्री. [सं. मत्स्य] **मछली।**

संज्ञा स्त्री. [सं. मक्षिका] **मक्खी।**

माजरा—संज्ञा पुं. [अ.] (१) **वृत्तांत।** (२) **घटना।**

माट—संज्ञा पुं. [हिं. मटका] **मटका जिसमें दही आदि रखा जाता है।** उ.—सिर दधि-माखन के माट गावत गीत नए।

माटी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मिट्टी] (१) **मिट्टी।** उ.—(क) उन तौ वह कीन्ही तब हमसौं ए रतन छँड़ाइ गहावत माटी—३०५६। (ख) माटी मैं ज्यौं कंचन परै—७-२१। (२) **शरीर।** (३) **मृत शरीर, शव।** (४) **पाँच तत्वों में 'पृथ्वी' नामक तत्व।** (५) **धूल।**

माठी—संज्ञा पुं. [हिं. मीठा] **मैदे की छोटी पकी हुई टिकिया को शकर में पाग कर बनायी गयी मिठाई।**

संज्ञा पुं. [हिं. मटकी] **मटकी, छोटा मटका।**

माठा—संज्ञा पुं. [हिं. मठा] **छाँछ, मठा।**

वि. [हिं.] **कंजूस, कृपण।**

माठी—संज्ञा स्त्री. [देश.] **एक तरह की कपास।** उ.—बेगि चलि सजि श्रृंगार काढ़ि माठी सगबगी आइकै साज—२२०२।

माड़—संज्ञा पुं. [हिं. माँड़] **भात का पसेव, माँड़।**

माड़ति, माड़ती—क्रि. स. [हिं. माड़ना] **हाथ से मलती-मसलती है।** उ.—कोउ काजर कोउ बदन बाड़ती हर्षहिं करहिं कलोल २४२७।

माड़ना, माड़नो—क्रि. अ. [हिं. माँड़ना] **ठानना, मचाना।**

क्रि. स. [सं. मंडन] (१) **मंडित या भूषित करना।** (२) **पहनना, धारण करना।** (३) **आदर करना।**

क्रि. स. [सं. मर्दन] (१) **पैर या हाथ से मलना-मसलना।** (२) **घूमना, फिरना।**

माड़व—संज्ञा पुं. [सं. मंडप] **मंडप।**

माड़ी—क्रि. अ. [हिं. माड़ना] **ठानी, मचायी।** उ.—सुमति सुन्दरी परस प्रियारस लंपट माड़ी आरि—१३५२।

माड़ो, माड़ौ—क्रि. अ. [हिं. माड़ना] **ठानो, मचाओ।** उ.—हमहिं मूरख बदति आपु ए ढंग सदति पाइ अब मदति हठ करहिं माड़ौ—१२६९।

क्रि. स.—मलो, मसलो, मर्दन करो। उ.—एक कहै प्रिय को मुख माड़ौ। एक कहैं फगुवा लै छाँड़ौ —२४१५।

माढ़ी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मढ़ी] मढ़ी। उ.—अँगिया बनी कुचन सो माढ़ी।

संज्ञा पुं.—[सं. मंडप] (१) मंच। (२) मचिया।

माणिक, माणिक्य—संज्ञा पुं. [सं. माणिक्य] एक लाल रत्न, 'लाल', पद्मराग, चुन्नी।

वि.—सर्वश्रेष्ठ, परम आदरणीय।

मातंग—संज्ञा पुं. [सं.] (१) हाथी। (२) चांडाल। (३) एक ऋषि जो पर्वत पर मौन रहा करते थे जिससे उसका नाम 'ऋष्यमूक' पड़ गया था।

मात—संज्ञा स्त्री. [हिं. माता] माँ, जननी। उ.—(क) मात-पितु के बंद छोरे बासुदेव कुमार—२९७५। (ख) मात-पिता हित प्रीति निगम पंथ तजि दुख-सुख भ्रम नाख्यो—३०१४।

संज्ञा स्त्री. [अ.] हार, पराजय।

वि.—हारा हुआ, पराजित।

वि. [सं. मत्त] मतवाला।

क्रि. अ. [हिं. मातना] मतवाला होकर। उ.—उमँगि अंगन मात कोऊ बिरध तरुन अरु बाल—२९५४।

मातना, मातना—क्रि. अ. [सं. मत्त] मस्त होना।

मातनि—संज्ञा स्त्री. सवि. [हिं. माता+नि] माता से। उ.—निसि दिन स्रम-सेवा कराइ उठि अंत मिले पित-मातनि—३०२५।

मातम—संज्ञा पुं. [अ.] (१) शोक। (२) मृत्यु-शोक।

मातलि—संज्ञा पुं. [सं.] इंद्र का सारथी।

मातलिसूत—संज्ञा पुं. [सं.] इंद्र।

माता—संज्ञा स्त्री. [सं. मातृ] (१) जननी। उ.—माता-पिता-बंधु-सुत तौ लगि जौ लगि जिहिं कौ काम—१-७६। (२) पूज्या स्त्री। (३) लक्ष्मी। (४) शीतला, चेचक।

वि. [सं. मत्त] मतवाला, मदमस्त।

मातामह—संज्ञा पुं. [सं.] नाना।

माती—वि. स्त्री. [हिं. माता = मत्त] मतवाली, मदमस्त। उ.—(क) वे यौवन मद की सब माती कहाँ मेरो तनक कन्हाई—८६७। (ख) मुख मृदु बचन बिना सींचे अब जिवहिं प्रेम-रस-माती—२९८०।

मातु—संज्ञा स्त्री. [हिं. माता] माँ, जननी। उ.—(क) जनम-कष्ट तैं मातु दुखित भई—१-२९१। (ख) ताके बीच बिघ्न करिबे को मातु-पिता पचि हारे—३०३६।

मातुल—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मामा। उ.—मातुल को देखि हरि कह्यो यों बिहँसि करि पंथ ते टारि गज को महावत २५९५। (२) धतूरा। उ.—दुइ मृनाल मातुल उभै द्वै कदलीखंभ बिन पात—१६८२।

मातुला, मातुलानी, मातुलि, मातुली—संज्ञा स्त्री. [सं.] मामी।

मातूल—संज्ञा पुं. [सं. मातुल] (१) मामा। (२) धतूरा। उ.—कमलपत्र मातूल चढ़ावैं। नयन मूँदि यह ध्यान लगावैं।

मातृ—संज्ञा स्त्री. [सं.] माता, जननी।

मातृक—वि. [सं.] माता-संबंधी, माता का।

मातृत्व—संज्ञा पुं. [सं.] माता होने का भाव।

मातृभाषा—संज्ञा स्त्री. [सं.] भाषा जो बालक अपनी माता से सीखता है।

माते—वि. बहु. [हिं. माता = मतवाला] मतवाले। उ.—हो हो हो हो लै लै बोलैं। गोरस कैरी माते डोलैं—२४३८।

मातो, मातौ—वि. [हिं. माता = मतवाला] मतवाला, मदमस्त। उ.—मेरे जानि गह्यो चाहत हौं फेरिकि मैगल मातो—३१३२।

मात्र—अव्य. [सं.] भर, सिर्फ, केवल। उ.—जात बिलै ह्वै छिनक मात्र मैं उघरत नैन किवार—२-३१।

मात्रा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) परिमाण। (२) बारह खड़ी' में स्वर-सूचक रेखा जो व्यंजन में लगती है। (३) निश्चित अंश।

मात्रिक—वि. [सं.] (१) मात्रा-संबंधी। (२) जो मात्रा के अनुसार हो।

माथ, माथा—संज्ञा पुं. [सं. मस्तक, हिं. माथा] (१) मस्तक, भाल।

मुहा०—माथा कूटना—सिर पीटकर शोक मनाना। माथा घिसना—(१) नम्रता दिखाना। (२) खुशामद करना। माथा खपाना (खाली करना)—बहुत सोचना-विचारना। माथा झुकाना (टेकना या नवाना)—(१) नम्रता या अधीनता दिखाना। (२) सविनय प्रणाम करना। माथा ठनकना—भावी दुख, दुर्घटना आदि को पहले से ही आशंका होना। माथा धुनना या पीटना—सिर पीटकर शोक मनाना। माथ धरना—अनुकूल आचरण के लिए करना। माथ धरि—अनुकूल आचरण के लिए स्वीकार करके। उ.—तात बचन रघुनाथ माथ धरि जब बन गौनि कियौ—९-४६।

यौ०—माथा-पच्ची या पिट्टन—बहुत बकना या समझाना।

(२) किसी चीज का अगला या ऊपरी भाग।

माथे, माथै—क्रि. वि. [हिं. माथा] (१) सिर या मस्तक। उ.—(क) माथे मोर मुकुट—२९५१। (ख) ते अब कहत जटा माथे पर बदलो नाम कन्हाई—३१०६।

मुहा०—माथे चढ़ाना या धरना—सादर स्वीकार करना। माथे धरौ—सादर-सविनय स्वीकार करो। उ.—मम आयसु तुम माथे धरौ। छल बल तजि मम कारज करौ। माथे टीका होना—अधिकता या विशेषता होना। माथे पड़ना—भार या दायित्व आ जाना। माथे पर चढ़ना—दुलार के कारण धृष्ट हो जाना। माथे पर बल पड़ना—मुख पर असंतोष या अप्रसन्नता के चिह्न दिखायी देना। माथे भाग होना—भाग्यवान होना। जाके माथे भागु—जो भाग्यवान है। उ.—ऊधौ जाके माथे भागु—३०९५। माथे मढ़ना—जबरदस्ती देना। माथे मानना—सादर स्वीकार करना। माथे मानि—सादर स्वीकार करके। माथे मानी—शिरोधार्य की। उ.—सूरदास प्रभु के जिय भावै आयसु माथे मान—३२५०। माथे मारना—उपेक्षा या तिरस्कार के साथ कुछ देना।

(२) भरोसे, सहारे।

माथौ, माथौ—संज्ञा पुं. [हिं. माथा] सिर, मस्तक। उ.—सूर बाट जो माथौ दीजै चलत आपनी गोहीं—३०५६।

मुहा०—माथौ नायौ—(१) सविनय प्रणाम किया। उ.—जामवंत अंगद हनू उठि माथौ नायौ—९-७२। (२) सर झुकाकर अर्थात् सविनय स्वीकार किया। उ.—सबै भाव मिलि सौं मून पायौ। तब रिषि चरननि माथौ नायौ—६-७।

माद—संज्ञा पुं. [सं. मद] (१) गर्व। (२) नशा।

मादक—वि. [सं.] जिससे नशा हो, नशीला।

मादकता—संज्ञा स्त्री. [सं.] नशीलापन।

मादन—वि. [सं.] (१) मादक। (२) मस्त करनेवाला।

संज्ञा पुं.—कामदेव के पाँच बाणों में एक।

मादर, मादरिया—संज्ञा स्त्री. [फ़ा. मादर] माता।

मादा, मादिन, मादिनि, मादी, मादीन—संज्ञा स्त्री. [फ़ा. मादा] स्त्री वर्ग का प्राणी।

मादूदा—संज्ञा पुं. [अ.] (१) मूल तत्व। (२) योग्यता, क्षमता। (३) मवाद, पीक।

माद्रि, माद्री—संज्ञा स्त्री. [सं. माद्री] राजा पांडु की पत्नी जो नकुल और सहदेव की माता थी।

माधव—संज्ञा पुं. [सं.] (१) विष्णु अथवा उनके रामकृष्ण अवतार। उ.—तुम मो से अपराधी माधव केतिक स्वर्ग पठाये हो—१-७। (२) वैशाख महीना। (३) बसंत ऋतु। (४) एक राग।

माधवी—संज्ञा पुं. [सं.] (१) एक लता। (२) एक रागिनी।

माधुरई, माधुरई—संज्ञा स्त्री. [सं. माधुरी] मिठास।

माधुरता—संज्ञा स्त्री. [सं. मधुरता] मिठास।

माधुरि, मधुरिया, माधुरी—संज्ञा स्त्री. [सं. माधुरी] (१) मिठास। (२) शोभा, सुंदरता। उ.—(क) सूर निरखि यह रूप माधुरी नारि करत मन डौ—२५९७। (ख) अंग अंग प्रति अमित माधुरी—६६३। (३) मदिरा, मद्य।

माधुर्य—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मधुरता। (२) सुंदरता। (३) मिठास। (४) काव्य का एक गुण जिसमें मधुर वर्णों की योजना रहती है।

माधैया, माधो, माधोया, माधौ—संज्ञा पुं. [सं. माधव] श्रीकृष्ण। उ.—(क) हरि हित मेरो माधैया। देहरी

चढ़त परत गिरि कर पल्लव जो गहत है री मैया। (ख) माधौ जू, मन मायाबस कीन्हौ—१-४६। (ग) दुसह सँदेस सुनत माधो को गोपी-जन बिलखानौ—२९८८। (घ) बरु माधौ मधुबन ही रहते कत जसुदा के आए—३०१९।

माध्यम—संज्ञा पुं. [सं.] साधन, उपाय।

माध्व—संज्ञा पुं. [सं.] वैष्णवों के चार मुख्य संप्रदायों में एक जिसके प्रवर्तक मध्वाचार्य थे।

माध्वी—संज्ञा स्त्री. [सं.] शराब, मदिरा।

मान—संज्ञा पु. [सं.] (१) किसी पदार्थ का भार, तौल आदि। (२) नापने-तौलने आदि का पैमाना। (३) गर्व, अहंकार। उ.—काको मान-परेखो कीजै बँधी प्रेम की डोरी—३१११।

मुहा०—मान मथना—गर्व चूर करना। मान मथि—गर्व चूर करके उ.—इन जरासंध मदअंध मम मान मथि बाँधि बिनु काज बल इहाँ आने।

(४) सम्मान, प्रतिष्ठा। उ.—भोजन करत माँगि घर उनकें राज-मान मद टारत—१-१२।

मुहा०—मान रखना—सम्मान करना।

(५) रूठना, अप्रसन्न होना। उ.—हठ करि मान कियौ जब भामिनि तब गहि पाइ परे—६८९।

मुहा० मान मनाना रूठे हुए को मनाना। मान मोरना—मान छोड़ देना, प्रसन्न हो जाना।

(६) सामर्थ्य, शक्ति। (७) विराम (संगीतशास्त्र)।

मानगृह—संज्ञा पुं [सं.] रूठकर बैठने का स्थान, कोपभवन। उ.—बैठी जाय एकांत भवन में जहाँ मानगृह चार।

मानचित्र—संज्ञा पुं. [सं.] नक्शा, स्थान-चित्र।

मानत—क्रि. अ. [हिं. मानना] समझता है। उ.—कोटि स्वर्ग सम सुखउ न मानत हरि समीप समता नहि पावत—३१४२।

मुहा०—मन मानत—समझता है। उ.—क्यौं मन मानत है इन बातन—३०२५।

क्रि. स.—(१) सम्मान या प्रतिष्ठा करता है। उ.—मानत गिरि निदत सुरपति को—१०२९। (२) समझता या स्वीकार करता है। उ.—(क) तिनका सौं अपने जन को गुन मानत मेरु समान—१-८। (ख) सूरदास ए हटक न मानत लोचन हठी हमारे—३०३६। (ग) राजिव रवि को दोष न मानत ससि सौं सहज उदास—३२१९।

मानता—संज्ञा स्त्री. [हिं. मन्नत] मनौती, मन्नत।

मानति—क्रि. अ. [हिं. मानना] समझती या स्वीकार करती है। उ.—जानति हौं तुम मानति नाहीं, तुमहूँ स्याम सँघाती—२९८१।

मानना, माननो—क्रि. अ. [सं.] (१) स्वीकार या अंगीकार होना। (२) मान लेना, कल्पना करना। (३) ध्यान में लाना, समझना। (४) अनुकूल होना, ठीक मार्ग पर आना।

क्रि. स.—(१) स्वीकार या अंगीकार करना। (२) आदर-सम्मान के योग्य समझना। (३) दक्ष या पारंगत समझना। (४) श्रद्धा या विश्वास करना। (५) मनौती करना। (६) ध्यान में लाना, समझना। (७) मानकर वैसा कार्य करना। (८) अनुरक्त होना।

माननीय—वि. [सं.] मान्य, पूज्य, आदरणीय।

मानमंदिर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) कोपभवन। (२) वेधशाला।

मानमनौती—संज्ञा स्त्री. [हिं. मान+मनौती (१) मानता, मनौती। (२) रूठने और मनाने की क्रिया या भाव।

मानमरोर—संज्ञा स्त्री. [हिं. मान+मरोड़] मन-मुटाव।

मानमोचन संज्ञा पुं. [सं.] रूठे हुए को मनाना।

मानव—संज्ञा पुं. [सं.] मनुष्य, मनुज।

मानवता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) मनुष्य होने की अवस्था भाव या गुण, मनुष्यता। (२) मनुष्य-जाति।

मानवी—संज्ञा स्त्री. [सं.] स्त्री, नारी।

मानवी, मानवीय—वि. [सं. मानवीय] मानव-संबंधी।

मानस—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मन, हृदय। (२) मानसरोवर। (३) मनुष्य। (४) दूत, चर।

वि.—(१) मन से उत्पन्न। (२) मन में सोचा हुआ।

क्रि. वि.—मन या हृदय के द्वारा।

मानसपूजा—संज्ञा स्त्री. [सं.] पूजा के दो प्रकारों में एक, पूजा जो मन में ही की जाय।

मानसर, मानसरोवर, मानससर,—संज्ञा पुं. [सं. मानसरोवर] हिमालय के उत्तरी भाग में स्थित एक

झील। उ.—मानसरोवर छाँड़ि हंस तट काग-सरोवर न्हावैं—२-१३।

मानसिक—वि. [सं.] मन-संबंधी।

मानसी—संज्ञा स्त्री. [सं.] पूजा जो मन ही मन में की जाय, मानसपूजा।

वि. (१) जो मन में ही की जाय। (२) मन की।

मानसी गंगा—संज्ञा स्त्री. [सं.] गोवर्धन पर्वत पर स्थित एक सरोवर।

मानसी सेवा—संज्ञा स्त्री. [सं.] सेवा जो मन ही मन में की जाय। उ.—मनसा और मानसी सेवा, दोउ अगाध करि जानौ—१-२११।

मानहानि—संज्ञा स्त्री. [सं.] अपमान, अप्रतिष्ठा।

मानहि—क्रि. स. [हिं. मानना] समझे। उ.—राम प्रकार कहा हचि मानहि जो गोपाल उपासी—३१०९।

मानहिंगो—क्रि. स. [हिं. मानना] समझेंगे, स्वीकार करेंगे। उ.—मानहिंगो उपकार रावरो करो कृपा बलबीर—७९२।

मानहुँ—अव्य. [हिं. मानों] मानों। उ.—मानहुँ बहुरि बिचारि कछू मन सुफलकसुत आयौ ब्रज आज—२९६८।

मानहु—क्रि. स. [हिं. मानना] (१) समझो। उ.—मैं कहौं सो सत्य मानहु—३११९। (२) दक्ष या पारंगत समझना। उ.—मुँह माँगे फल जो तुम पावहु तौ तुम मानहु मोहिं—९१५।

मानहुगे—क्रि. अ. [हिं. मानना] ध्यान में लाओगे। उ.—मेरे कहे बिलग मानहुगे कोटि कुटिल लै जोरै—३१७६।

माना—क्रि. स. [हिं. मापना] (१) नापना, तौलना। (२) जाँचना, परीक्षा करना।

क्रि. अ. [हिं. समाना] समाना, अमाना।

संज्ञा पुं. [हिं. मान] (१) गर्व, अहंकार। (२) प्रतिष्ठा, सम्मान। (३) मान, रूठना।

क्रि. अ. [हिं. मानना] समझ लिया।

वाक्य—मान लिया कि।

मानापमान—संज्ञा पुं. [सं. मान+अपमान] आदर और अनादर। उ.—मानापमान परम परितोषन सुस्थल थिति मन राख्यौ—३०१४।

मानि—क्रि. स. [हिं. मानना] (१) समझकर। उ.—सो सुहृद मानि ईस्वर अंतर जानि—१-७७। (२) स्वीकार करके। उ.—अपनो चूक मानि उर अंतर अब लागो दुख पावन—३११६।

प्र०—मानि लई—स्वीकार कर ली। उ.—(क) बहुत भाव करि भोजन अर्प्यौ, इह सब मानि लई मैं तेरी—९३५। (ख) सेवा मानि लई हरि तेरी—१४५७।

मानिक—संज्ञा पुं. [सं. माणिक्य] पद्मराग, माणिक्य। उ.—मनि मानिक पटंबर अंबर लेत न बनत बिभूत—१०-३६।

मानिनि, मानिनी—वि. स्त्री. [सं. मानिनी] (१) गर्व या अभिमान से युक्त। (२) रूठनेवाली।

संज्ञा स्त्री.—वह नायिका जो नायक के अपराध पर रूठ जाय। उ.—मधुबन की मानिनी मनोहर तहीं जाहु जहाँ भाए हो—२९८३।

मानिये, मानियै—क्रि. स. [हिं. मानना] ध्यान दीजिए। उ.—लोकलाज, कुलकानि मनियै डरियै बंधु पिता महतारी—१२२९।

मानी—वि. [सं. मानिन्] (१) घमंडी, अहंकारी। (२) बड़ा, श्रेष्ठ, मानवाला। उ.—ऐसौ सूरदास जन हरि कौ सब अधमनि मैं मानी—१-१२९।

संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) घड़ा, कुंभ। (२) चक्की के ऊपरी पाट की लकड़ी जिसके छेद में कीली रहती है। (३) छेद।

क्रि. स. भूत. [हिं. मानना] (१) स्वीकार या अंगीकार की। उ.—मानी हार बिमुख दुरजोधन जाके जोधा हे सौ भाई—१-२४। (ख) सूर स्याम को बेगि मिलावहु हारि आपनी मानी—१६६६। (२) अनुकूल आचरण के लिए स्वीकार की। उ.—(क) अब तौ यहै बात मन मानी—१-८७। (ख) स्याम कही सोई सब मानी। पूजा की बिधि हम अब जानी—१०२७।

मुहा०—आयसु माथे मानी—आज्ञा शिरोधार्य

की। उ.—सूरदास प्रभु के जिय भावै आयसु माथे मानी—३२४९।

(३) स्वीकार या ग्रहण कर ली। उ.—स्याम कहत, पूजा गिरि मानी—९३३।

संज्ञा पुं. [सं. मान] नायक जो नायिका से अपमानित होकर खीझ गया हो।

संज्ञा स्त्री. [अ.] (१) अर्थ। (२) तत्व। (३) हेतु।

मानु—संज्ञा पुं. [सं. मान] रूठना। उ.—सूर स्याम सों मानु करै किन काहे बृथा मरै री—१६५७।

मानुख, मानुष, मानुस—संज्ञा पुं. [सं. मानुष] मनुष्य। उ.—मानुष जनम पोत नकली ज्यौं मानत भजन-बिना निस्तार। १-४१।

वि.—मनुष्य का, मनुष्य संबंधी।

मानुखी, मानुषी, मानुसी—संज्ञा स्त्री. [सं. मानुषी] स्त्री, नारी।

वि. [सं. मानुषीय] मनुष्य का, मनुष्य-संबंधी। उ.—आपुनी कल्यान करि लैं मानुषी तन पाइ—१-३१५।

माने—क्रि. स. [हिं. मानना] (१) समझे। (२) श्रद्धापूर्वक स्वीकार किये। (३) दक्ष, कुशल या पारंगत समझे।

मु०—रैहौ माने—श्रद्धा-सम्मान का पात्र समझे या मानते रहना। उ.—(क) बड़ो देव गिरिराज गोबर्धन रैहौ तुम माने—९३३। (ख) कान्ह तुम्हारो मोको जानै। इनको रैहो तुम सब माने—१०३३।

संज्ञा पुं. [अ. मानी] अर्थ, तात्पर्य।

मानैं—क्रि. स. [हिं. मानना] दक्ष या पारंगत समझती हैं। (२) आदर का पात्र समझती हैं। उ.—एक ही संग भई सबै जोबन नई, अब होहु गुरू हम तुमहिं मानैं—१२६८।

मानै—क्रि. स. [हिं. मानना] (१) समझता या ध्यान में लाता है। उ.—(क) कोटिक करै एक नहिं मानै सूर महा कृतघन कौं—१-९। (ख) सीत-उश्न सुख-दुख नहिं मानै—२ ११।

मुहा०—मनमानै—मन समझ सकता या धैर्य रख सकता है। उ.—मधुकर, कहि कैसे मन मानै—३१३६। रुचि मानै—आनंद या स्वाद ले सकता है, पसंद कर सकता है। उ.—खाटी मही कहा रुचि मानै सूर खवैया घी को—३२५१।

(२) दक्ष या पारंगत समझता है। (३) आदर या सम्मान का पात्र समझता है। उ.—(क) और न काहू को वह मानै कछु सकुचत बल भैया—८६२। (ख)—सूरदास इह सब कोउ जानै, जो जाकौ सो ताकौ मानै—१०४२। (४) विश्वास करता है।

मानो, मानौं, सानौं—अव्य. [हिं. मानना] जैसे। उ.—(क) मानौं मृगी बन जरति ब्याकुल तुरत बरष्यो नीर—२९५५। (ख) मानौं भरे दोउ एकहिं साँचे—३०५१। (ग) मध्य द्रुम है फूल मानो कवच कंचन चीर—३१८०।

क्रि. स. [हिं. मानना] मानता या मानती हूँ। उ.—या पै नेकु बिलग जिनि मानौं अँखियाँ नाहिन हाथ—३२५८।

मानौंगी—क्रि. स. [हिं. मानना] समझूँगी, ध्यान दूँगी, परवाह करूँगी। उ.—अब तो हौं बसी री माई नहिं मानौंगी त्रास—१२०४।

मानौ—अव्य. [हिं. मानो] जैसे। उ.—मानौ बग बगदाई प्रथम दिसि आठ-सात-दस नाखैं—१-६०।

क्रि. स. [हिं. मानना] श्रद्धापूर्वक विश्वास करो। उ.—जो चाहौ ब्रज की कुसलाई तौ गोबर्धन मानौ—९१५।

मान्य—वि. [सं.] (१) मानने या स्वीकारने योग्य। (२) आदर-सम्मान के योग्य, पूज्य। उ.-तुमरे मान्य बसुदेव-देवकी जीव दान इहि दीजे १०-४। (३) प्रार्थनीय।

मान्यता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) मान्य होने की क्रिया या भाव। (२) अस्तित्व या अधिकार की स्वीकृति।

मान्यो, मान्यौ—क्रि. स. [हिं. मानना] (१) समझा, स्वीकार किया। उ.—तुमरो दरसन पाइ आपनो जन्म सुफल करि मान्यो—२९७१। (२) संबंध-विशेष की दृष्टि से देखा। उ.—आगै मैं तुमको सुत मान्यो। (३) तदनुकूल आचरण के लिए शिरोधार्य किया। उ.—(क) पाप-उजीर कह्यौ सोइ मान्यौ

धर्म सुफल लूट्यौ—१-६४। (ख) अपजस अति नकीब कहि टेरयौ सब सिर आयसु मान्यौ—१-१४१।

मुहा०—मन मान्यौ—प्रेम हुआ है। उ.—नंदलाल सों मेरो मन मान्यौ कहा करैगो कोई री—१२०३।

मापत—क्रि. स. [हिं. मापना] नापते (ही या समय)। उ.—जै जैकार भयौ भुव मापत तीनि पैंड़ भइ सारी—८-१४।

मापना, मापनो—क्रि. स. [सं. मापन] नाप लेना।

क्रि. अ. [सं. मत्त] मतवाला होना।

माफ—वि. [अ. माफ़] जो क्षमा कर दिया गया हो।

मुहा०—माफ करना—क्षमा करना। माफ कीजै—क्षमा कीजिए। उ.—सूरदास की बीनती दस्तक कीजै माफ—१-१४३।

माफिक—वि. [अ. मुआफिक] (१) अनुकूल। (२) योग्य।

माफी—संज्ञा स्त्री. [अ. माफ़ी] (१) क्षमा। (२) भूमि जो कर-रहित दी गयी हो।

माम—संज्ञा पुं. [सं. माम्] (१) अहंकार। (२) शक्ति।

मामता—संज्ञा स्त्री. [सं. ममता] मोह, अपनापन।

मामलत, मामलति—संज्ञा स्त्री. [अ. मुआमिलत] (१) (२) व्यवहार की बात। (२) विवाद का विषय।

मामला—संज्ञा पुं. [अ. मुआमिला] (१) काम-धंधा। (२) व्यवहार। (३) विवाद का विषय।

मामा—संज्ञा पुं. [अनु.] माता का भाई।

संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] (१) माता। (२) दासी।

मामी—संज्ञा स्त्री. [सं. मा (निषेध)] दोष या आरोप पर ध्यान न देने का भाव।

मामी पीना—दोष या आरोप पर ध्यान नहीं देती है। मामी पीवत या पीवै—दोष या आरोप पर ध्यान नहीं देता या देती है। उ.—(क) अहो जसोदा महरि पूत की मामी पीवै—१०६२। (ख) सूर इते पर खुनसनि मरियत ऊधौ पीवत मामी—३०७९।

मामूली—वि. [अ.] (१) नियमित। (२) साधारण।

माय—संज्ञा स्त्री. [सं. मातृ] (१) माँ, माता। उ.—जसुमति माय लाल अपने को शुभ दिन डोल झुलायो। (२) किसी बूढ़ी या पूजनीया स्त्री के लिए आदर सूचक संबोधन।

संज्ञा स्त्री. [सं. माया] माया।

अव्य. [सं. मध्य] में, माहिं। उ.—बरुन कुबेर अग्नि जम मारुत स्व बस किये छिन माय।

क्रि. अ. [हिं. समाना] समाता है। उ.—सो सुख दुहूँ के उर न माय—२३२८।

मायक—संज्ञा पुं. [सं.] माया रचनेवाला, मायावी।

मायका—संज्ञा पुं. [सं. मातृ+का] नैहर, पीहर।

मायन—संज्ञा पुं. [सं. मातृका+आनयन] (१) वह दिन जब विवाह आदि में मातृ-पूजन और पितृ-निमंत्रण होता है। (२) उस दिन का पूजन तथा कार्य।

मायनी—वि. [सं. मायाविनी] ठगिनी, कपटिन।

मायल—वि. [फ़ा.] (१) प्रवृत्त। (२) मिश्रित।

माया—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) धन-संपत्ति। (२) अज्ञानता, अविद्या। उ.—(क) हरि, तुव माया को न बिगोयौ—१-४३। (ख) तुम्हारी माया महाप्रबल जिहिं सब जग बस कीन्हौ हो—१-४४। (३) छल-कपट। उ.—धरि कै कपट भेष भिक्षुक को दसकंधर तहँ आयौ। हरि लीन्हीं छिन में माया करि अपने रथ बैठायौ। (४) सृष्टि की उत्पत्ति का कारण, प्रकृति। उ.—माया माहिं नित्य लै पावै। माया हरि पद माहिं समावै। (५) ईश्वर की शक्ति। उ.—रावन सौं नृप जात न जान्यौ माया बिषम सीस पर नाची—१-१८। (६) जादू, इंद्रजाल। (७) देव-लीला।

संज्ञा स्त्री. [हिं. माता] माँ, जननी।

संज्ञा स्त्री. [हिं. ममता] (१) मोह-ममता, आत्मीयता का भाव। उ.—गोकुल रहौ जाहु जनि मथुरा झूठो माया मोह—३०६८।

मायापति—संज्ञा पुं. [सं.] ईश्वर।

मायावाद—संज्ञा पुं. [सं.] दृश्य जगत को असत्य और अनित्य मानने का सिद्धांत।

मायावादी—संज्ञा पुं. [सं. मायावादिन्] 'मायावाद' में विश्वास रखने वाला।

मायाविनि, मायाविनी—वि. [सं.] ठगिनी।

मायावी—संज्ञा पुं. [सं. मायाविन्] कपटी, छलिया।

मायिक—वि. [सं.] (१) बनावटी। (२) मायावी।

मायूस—वि. [फ़ा.] निराश, खिन्न।

मायूसी—संज्ञा पुं. [फा.] निराशा, खिन्नता।

मार—संज्ञा पुं. [सं.] कामदेव। उ.—प्रबल सत्र आहि यह मार। यातैं संतौ चलौ सँभार—१-२२९।

संज्ञा स्त्री. [हिं. मारना] (१) मारने की क्रिया या भाव। उ.—नर-बपु धारि नाहिं जन हरि कौं जम की मार सो खैहै—१-८६। (२) चोट। (३) मार-पीट। (४) युद्ध।

अव्य.—बहुत, अत्यंत। उ.—सुनत द्वारावती मार उत्सव भयौ।

संज्ञा स्त्री. [हिं. माला] माला, समूह। उ.—दहिनावर्त देत मनो ध्रुव को मिलि नक्षत्र की मार—२०६२।

मारक—वि. [सं.] (१) मार डालने वाला, संहारक। (२) प्रभाव नष्ट करनेवाला।

मारग—संज्ञा पुं. [सं. मार्ग] (१) राह, रास्ता। उ.—(क) कुसुमित धर्म-कर्म को मारग जउ कोउ करत बनाई—१-९३। (ख) एक कहत मारग नहिं पावनि—१०५११। (२) कर्म, प्रकार। उ.—ताप मारग जिते सबै कीन्हें तिते बच्यौ नहिं कोउ जहँ सुरति मेरे—१-११०।

मुहा०—मारग मारना—राह में किसी को लूट लेना। मारग लगना—चला जाना।

मारगन—संज्ञा पुं. [सं. मार्गण] तीर, बाण।

मारण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मार डालना। (२) एक तांत्रिक प्रयोग जो इस विश्वास से किया जाता है कि लक्षित व्यक्ति मर जायगा।

मारत—क्रि. अ. [हिं. मारना] मारता है। उ.—औरन को सरबसु तैं मारत आपुन भए अभंगी—२९९७।

मारन—संज्ञा पुं. [हिं. मारना] मारने की क्रिया या भाव, मारने के लिए। उ.—(क) सिव-बिरंचि मारन कौं धाए यह गति काहू देव न पाई—१-३। (ख) भव भय हरन असुर मारन हित काल मधुपुरी आयो—२९९९।

मारना, मारनो—क्रि. स. [सं. मारण] (१) प्राण लेना, वध करना। (२) पीटना, आघात करना। (३) ठोंकना। (४) सताना, दुख देना। (५) पछाड़ना, हराना। (६) बंद करना। (७) शस्त्र फेंकना। (८) आवेग या मनोविकार को रोकना। (९) शिकार करना। (१०) किसी वस्तु को यों फेंकना कि वह दूसरी से टकरा जाय।

मुहा०—दे मारना—(१) पटकना। (२) पछाड़ना।

(११) छिपा लेना, गुप्त रखना। (१२) संचालित करना।

मुहा०—गाल मारना—बढ़-बढ़कर बातें करना। कुछ पढ़कर मारना—मंत्र पढ़कर कोई चीज किसी लक्ष्य पर फेंकना। जादू मारना—मंत्र-तंत्र करना। डींग मारना—बड़ी-बड़ी बातें करना, शेखी बघारना। मंत्र मारना—जादू करना।

(१३) धातु आदि को जलाकर उसकी भस्म तैयार करना। (१४) अनुचित रूप से हथिया लेना। (१५) करना, लगाना। (१६) खेल आदि में जीतना। (१७) प्रभाव कम करना। (१८) निर्जीव-सा कर देना। (१९) काटना, डसना। (२०) लगाना।

मारपेच—संज्ञा पुं. [हिं. मारना+पेच] धूर्तता।

मारफत—अव्य. [अ. मार्फत] द्वारा, जरिए से।

मारा—वि. [हिं. मारना] जो मार डाला गया हो।

मुहा०—मारा मारा फिरना—व्यर्थ घूमना।

संज्ञा पुं. [सं. मार=काम] कामदेव

मारामार—क्रि. वि. [हिं. मारना] बहुत शीघ्रता से।

मारि—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) मारना। (२) मरी (रोग)।

क्रि. स.—मारकर, वध करके। उ.—(क) कंस मारि राजा करैं आनहु सिर नावैं—१-४। (ख) कंस नृप को मारि, छोरयौ आपनो पितु मातु—२९७४।

मारित—वि. [सं.] जो मार डाला गया हो।

मारिबे, मारिबै—संज्ञा पुं. [हिं. मारना] मारे जाने की। उ.—महा माचल मारिबे की सकुच नाहिंन मोहि—१-१०६।

मारिबोइ, मारिबोई, मारिबौइ, मारिबौई—संज्ञा पुं. [हिं. मारना] मारा-पीटा ही। उ.—तब तू मारि-बोई करति १-२६६९।

मारियो, मारियौ—क्रि. स. [हिं. मारना] दंड देने के लिए (तुम) मारना-पीटना। उ.—मेरी सौं तुम याहि मारियो जबहीं पावौ घात—१०-३३०।

मारिष—संज्ञा पुं. [सं.] (१) नाटक का सूत्रधार । (२) नाटक में किसी प्रतिष्ठित व्यक्ति के लिए सम्मान सूचक संबोधन ।

मारी—संज्ञा स्त्री. [हिं मारना] भयानक संक्रामक रोग ।

क्रि. स.—वध किया । उ.—जिन पय पियत पूतना मारी—३२५० ।

संज्ञा पुं. [सं. मारिन्] हत्या करनेवाला, घातक ।

मारीच—संज्ञा पु. [सं.] एक राक्षस जिसने सोने का मृग बनकर राम और सीता को धोखा दिया था । उ.—मृग-स्वरूप मारीच धरयौ तब फेरि चल्यौ बारक जो दिखाई—९-५९ ।

मारु—संज्ञा पुं. [सं. मार] कामदेव ।

मारुत—संज्ञा पुं. [सं.] वायु, पवन । उ.—(क) अब तौ है मरुत को महिमा का सम मूठ नहैं ३०६५ । (ख) देत मदन मारुत मिलि दसौ दिसि दुहाई—६५० ।

मारुततनय, मारुतनंदन, मारुतसुत, मारुतसुवन—संज्ञा पुं. [सं. मारुत+तनय, नंदन, सुत, सुवन] (१) हनुमान । उ.—भयभीत भयौ देखि मारुतसुत दियौ महाबल ईस—९ ७५ । (२) भीम ।

मारुति—संज्ञा पुं. [सं.] (१) हनुमान । (२) भीम ।

मारू—संज्ञा पुं. [हिं. मारना] (१) एक राग जो युद्ध के समय गाया जाता है । उ. दादुर मोर चातक पिक के जन सब मिलि मारू गायो—२८४० । (२) बहुत बड़ा नगाड़ा या धौंसा ।

संज्ञा पुं. [सं. मारु] मरुदेश का निवासी ।

वि. [हिं. मारना] (१) मारनेवाला । (२) बेधनेवाला, कटीला ।

मारे—अव्य. [हिं. मारना] कारण से ।

क्रि. स.—मारता है ।

प्र०—डारत मारे—मारे या बध किये डालता है । उ.—प्रेम-प्रीति की व्यथा तप्त तनु सो मोंहि डारत मारे—३२५४ ।

मारेहु—क्रि. स. [हिं. मारना] मारे-पीटे जाने पर भी । उ.—सूर स्याम को सिखवन हारा मारेहु लाज न आवत - ८६५ ।

मारैं—क्रि. स. [हिं. मारना] मारे या बधे जाने पर भी । उ.—श्रीभगवान कृपा जिहिं करै । सूर सो मारैं काके मरै—१-२८९ ।

मारौं—क्रि. स. [हिं. मारना] बध करूँ, प्राण हरूँ । उ.—राखौं नहीं काहु, सब मारौं—१०४३ ।

मारौ—क्रि. स. [हिं. मारना] बध करो, प्राण हरो । उ.—अस्वत्थामा न जब लगि मारौ, तब लगि अन्न न मुख मैं डारौ —१-२८८ ।

यौ०—करम को मारौ—अभागा, भाग्यहीन । उ.—तौ कहौ कहाँ जाइ करुनामय कृपिन करम कौ मारौ—१-१५७ ।

मार्कंड, मार्कंडेय—संज्ञा पुं. [सं. मार्कंडेय] 'मृकंड ऋषि' के पुत्र जो तप बल से अमर माने जाते हैं ।

मुहा०—मार्कंडेय की आयु—दीर्घायु ।

मार्ग—संज्ञा पुं. [सं.] (१) रास्ता । (२) अगहन मास ।

मार्गण, मार्गन—संज्ञा पुं. [सं. मार्गण] तीर, बाण ।

मार्गशिर, मार्गशिरस्, मार्गशीर्ष—संज्ञा पुं. [सं. मार्गशीर्ष] अगहन का महीना ।

मार्गी—वि. [सं. मार्गिन्] मार्ग पर चलनेवाला ।

मार्जन—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) स्वच्छ करना । (२) सफाई, स्वच्छता ।

मार्जना, मार्जनो—क्रि. स. [सं. मार्जन] स्वच्छ करना ।

मार्जार—संज्ञा पु. [सं.] नर बिल्ली, बिलार ।

मार्जारी—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) बिल्ली । (२) कस्तूरी ।

मार्जित—वि. [सं.] स्वच्छ किया हुआ, शोधित ।

मार्तंड—संज्ञा पु. [सं.] (१) सूर्य । (२) आक वृक्ष ।

मार्मिक—वि. [सं.] मर्मस्थान पर प्रभाव डालनेवाला ।

मार्मिकता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) मार्मिक होने का भाव । (२) मर्म तक पहुँचने की योग्यता ।

मार्यौ, मार्‍यौ—क्रि. स. [हिं. मारना] मारा, बध किया । उ.—(क) धाइ चक्र लै ताहि उबार्‍यौ, मार्‍यौ ग्राह बिहंगा—१-२१ । (ख) को नृप भयो कंस किन मार्‍यौ—३०७९ ।

माल—संज्ञा पुं. [सं. मल्ल] कुश्ती लड़नेवाला, मल्ल ।

संज्ञा स्त्री. [सं. माला] (१) हार, माला । उ.—रुचिर पान करि आंत माल धरि जय जय सब्द पुकारी । (२) पंक्ति, पाँती ।

संज्ञा पुं. [अ.] (१) धन-संपत्ति । उ.—अल्प चोर बहु माल लुभान संगी सबन धराए ।

मुहा०—माल उड़ाना—(१) धन का अपव्यय करना । (२) किसी की धन-संपत्ति मार लेना । माल काटना (चीरना)—(१) किसी के धन से मौज करना । (२) किसी का धन हड़प लेना । माल मारना—दूसरे का धन दबा लेना ।

(२) सामान, सामग्री । उ.—तुम जानत मैं हूँ कछु जानत जो जो माल तुम्हारे—११०६ ।

यौ०—मालटाल या माल-मता—माल असबाब ।

(३) बिक्री की वस्तु । (४) सुस्वादु भोजन ।

मुहा०—माल उड़ाना—सुस्वादु भोजन करना ।

मालका—संज्ञा स्त्री. [सं.] माला, हार ।

मालकोश, मालकोस—संज्ञा पु. [सं. मालकोश] एक राग ।

मालगुजारी—संज्ञा स्त्री [फ़ा.] कर, लगान ।

मालति, मालती—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) सफेद फूल की एक लता । उ.—(क) त्यागे फिरत सकल कुसुमावलि मालति भौंर लए—२९११ । (ख) फूली माधवी मालती बेलि फूले ही मधुप करत हैं केलि—२४०७ । (२) चाँदनी, चंद्रिका ।

मालदार—वि. [फ़ा.] धनी, संपन्न ।

मालन—संज्ञा स्त्री. [हिं. मालिन] माली की स्त्री ।

मालपुआ, मालपूआ, मालपूवा—संज्ञा पुं. [सं. पूप, हिं. मालपूआ] एक पकवान ।

मालव—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मालवा देश । (२) एक राग ।

वि.—मालव देश या जाति का ।

मालवाई—संज्ञा पुं. [सं. मालव] एक राग । उ.—मालवाई राग गौरा अरु आसावरि राग—२२७९ ।

माला—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) पंक्ति, पाँती । (२) हार, माला । उ.—(क) तव सुमिरन-छल दुर्मर के हित माला तिलक बनाई—१-२०७ । (ख) केसरि को तिलक मोतिन की माला बृन्दावन को वासी-३०३० ।

मुहा०—माला जपना (फेरना)—जप या भजन करना । जपति फिरी तेरे गुनन की माला—गुणों का स्मरण करती या उनको गाती फिरी । उ.—कुंज कुंज जपति फिरी तेरे गुनन की माला—१८१७ ।

(३) समूह, झुंड ।

मालामाल—वि. [फ़ा.] बहुत धनी और संपन्न ।

मालिक—संज्ञा पुं. [अ.] (१) ईश्वर । (२) स्वामी । (३) स्त्री का पति ।

मालिका—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) पंक्ति । (२) माला । उ.—सूरदास कुसुमनि सुर बरसत कर संपुट करि मालिका—८०९ । (३) गले का एक आभूषण । (४) मालिन जाति की स्त्री ।

मालिन, मालिनि, मालिनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. माली] 'माली' जाति की स्त्री । उ.—लछिमन-सी जहँ मालिनि बोलै । बंदनमाल बाँधत डोलै—१०-३२ ।

मालिन्य—संज्ञा पुं. [सं.] मलिनता, मैलापन ।

मालिश—संज्ञा स्त्री. [फ़ा.] मलने की क्रिया या भाव ।

माली—संज्ञा पुं. [सं. मालिन्, प्रा. मालिय] (१) बाग के पौधों की देख-रेख और सिंचाई करनेवाला । उ.—कीन्हौ मधुबन चार चहूँ दिसि मालो जाइ पुकारयौ—९-१०३ । (२) फूल लगाने-बेचनेवाला ।

वि.—जो माला पहने हो ।

वि. [फ़ा. माल] धन-संबंधी, आर्थिक ।

मालूम—वि. [अ.] जाना हुआ, ज्ञात ।

मालूर—संज्ञा पुं. [सं.] बेल का पेड़ या फल । उ.—(क) कमल-पत्र मालूर-पत्र फल नाना सुमन सुबास—७६६ । (ख) कमल-पत्र मालूर चढ़ावैं—७९९ ।

माल्य—संज्ञा पुं. [सं.] (१) फूल । (२) माला ।

माल्यवंत, माल्यवान—संज्ञा पुं. [सं. माल्यवान्] एक राक्षस जिसके भाई सुमाली की कन्या कैकसी रावण की माता थी ।

माल्ह—संज्ञा पुं. [सं. माला] (१) माला । (२) पंक्ति ।

मावत—संज्ञा पुं. [हिं. महावत] महावत । उ.—दियौ पठाइ स्याम निज पुर को मावत सह गजराज ।

मावली—संज्ञा पुं. [देश.] दक्षिण की एक वीर जाति ।

मावस—संज्ञा स्त्री. [हिं. अमावस] अमावस ।

मावा—संज्ञा पुं. [हिं. माँड] (१) माँड़ । (२) सार, तत्त । (३) चंदन का इत्र ।

माशा—संज्ञा पुं. [सं. माष] एक मान जो तोले का बारहवाँ भाग होता है।

माशूक—संज्ञा पुं. [अ. माशूक़] प्रेमपात्र।

माष—संज्ञा पुं. [सं.] (१) उड़द। (२) मसा।

संज्ञा स्त्री. [हिं. माख] (१) क्रोध। (२) गर्व।

माषना, माषनो—क्रि. स. [हिं. माखना] अप्रसन्न होना।

माषि, माषी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मक्खी] मक्खी। उ.—राति ज्यों अक्रूर दिन अलि मदन दह मधु माषि—३०४८।

मास—संज्ञा पुं. [सं.] महीना। उ.—(क) महा कष्ट दस मास गर्भ बसि अधोमुख सीस रहाई—१-३१८। (ख) आठ मास चंदन दियौ—१०-४०। (ग) चारि मास बर्षा के लीन्हे मुनिहु रहत इक ठौर—३०९०।

संज्ञा पुं. [सं. मांस] मांस।

मासना, मासनो—क्रि. अ. [हिं. मींसना] मिलना।

क्रि. स.—मिलाना, मिश्रित करना।

मासर—संज्ञा पुं. [हिं. मौसा] मौसी का पति।

मासिक—वि. [सं.] (१) मास-संबंधी। (२) मास में एक बार होने वाला।

मासी—संज्ञा स्त्री. [सं. मातृष्वसा, पा. मातुच्छा, प्रा. माउच्छा] माता की बहिन, मौसी। उ.—कहा कहत मासी के आगैं जानत नानी-नानन।

माहँ—अव्य. [सं. मध्य, प्रा. मज्झ] में, बीच, भीतर। उ.—(क) हित करि मिलैं लेहु गोकुलपति अपने गोधन माहँ—१५१। (ख) सूर उहै निज रूप स्याम को है मन माहँ समान्यौ—३१२७।

माह—संज्ञा पुं. [सं. माघ, प्रा. माह] माघ (मास)।

संज्ञा पुं. [फा.] मास, महीना।

माहत—संज्ञा स्त्री. [सं. महत्व] बड़ाई, महत्व।

माहना, माहनौ—क्रि. अ. [हिं. उमाहना] उमड़ना।

माहली—संज्ञा पुं. [हिं. महल] अंतःपुर का सेवक।

माहवार—क्रि. वि. [फ़ा.] प्रतिमास।

वि.—हर महीने का, मासिक।

माहीँ—अव्य. [हिं. महँ] में, मध्य, भीतर।

माहिं—अव्य. [सं. मध्य, प्रा. मज्झ] (१) में भीतर। उ.—(क) बरुन-पास तैं ब्रजपतिहिं छन माहिं छुड़ावै—१-४। (ख) चरन-सरोवर माहिं मीन मन रहत एक रस रीति—३२२९। (२) अधिकरण कारकीय चिन्ह, में, पर। उ.—तब मन माहिं आनि बैराग—६-४।

माहिआँ—अव्य. [हिं. माहिं] में, पर। उ.—और कौन स्याम त्रिभुवन मैं सकल गुन जेहि माहिआँ—१७०२।

माहिर—वि. [अ.] (१) कुशल। (२) जानकार।

माहिला—संज्ञा पुं. [अ. मल्लाह] माँझी, केवट।

माहिष्मती—संज्ञा स्त्री. [सं.] दक्षिण भारत का एक प्राचीन नगर।

माहीं—अव्य. [हिं. माहिं] में, भीतर। उ.—बैस संधि मुख तजी सूर हरि गए मधुपुरी माहीं—३२४४।

माहुर—संज्ञा पुं. [सं. मधुर, प्रा. महुर = विष] विष।

मिंडना, मिंडनो—क्रि. अ. [हिं. मींडना] (१) मीड़ा या मिलाया जाना। (२) सटाया या चिपकाया जाना। (३) साथ लगना या होना।

मिंड़ाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. मींड़ना] मींजने की क्रिया, भाव या मजदूरी।

मिंत—संज्ञा पुं. [सं. मित्र] सखा, मित्र।

मिचकना, मिचकनो—क्रि. अ. [हिं. मिचना] (१) आँख खुलना और बंद होना। (२) पलक झपकना।

मिचकाना, मिचकानो—क्रि. स. [हिं. मींचना] (१) आँख खोलना और बंद करना। (२) पलक झपकाना।

मिचकी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मिचकना] (१) आँख मिचकाने की क्रिया। (२) आँख का संकेत।

मिचना, मिचनो—क्रि. अ. [हिं. मींचना] आँख बंद होना।

मुहा०—आँख मिचना—मर जाना।

मिचलाना, मिचलानो—क्रि. अ. [हिं. मचलाना] कै, मतली या उबकाई आना।

मिचली—संज्ञा स्त्री. [हिं. मिचलाना] मतली।

मिचवाना, मिचवानो—क्रि. स. [हिं. मिचाना] आँख बंद करने या कराने को प्रवृत्त करना।

मिचौनी, मिचौली—संज्ञा स्त्री. [हिं. मींचना] आँख मींचने की क्रिया या भाव।

यौ०—आँख मिचौनी—बालकों का एक खेल जिसमें एक की आँख मूँदी जाती है और बाकी लड़के

इधर-उधर छिपते हैं।

मिचौहाँ—वि. [हिं. मिचना] **मुँदने या बंद होनेवाला।**

मिजाज-संज्ञा पुं [अ. मिज़ाज](१) **स्वभाव।** (२)**तबियत।**

मुहा० – मिजाज खराब होना (बिगड़ना)—(१) **अप्रसन्नता होना।** (२) **चित्त स्वस्थ न होना।** मिजाज खराब करना (बिगाड़ना)—**अप्रसन्न करना।** मिजाज में आना—**समझ में आना।** मिजाज ठीक (सीधा) होना—(१) **दंड आदि मिलने पर सुधार जाना।** (२) **प्रसन्न होना।**

(४) **घमंड, अभिमान।**

मुहा०—मिज ज (मे)आना (होना)—**घमंड करना, नखरे दिखाना।** मिजाज न मिलना—**घमंड के मारे बात भी न करना।**

मिटत—क्रि. अ. [हिं. मिटना] **दूर होता है, नष्ट हो सकता है।** उ.—ये उतपात मिटत इनहीं पैं—६००।

मिटन—संज्ञा पुं. [हिं. मिटना] **मिटने की क्रिया।**

प्र०—न मिटन पाई—**चिन्ह बना रहा।** उ.—झाईं न मिटन पाई—८-५।

मिटना, मिटनो—क्रि. अ. [सं. मृष्ट, प्रा० मिट्ट] (१) **अंकित चिह्न का दूर हो जाना।** (२) **नष्ट हो जाना।** (३) **खराब हो जाना।** (४) **रद्द हो जाना।**

मिटाइ—क्रि. स. [हिं. मिटाना] **कुप्रभाव आदि दूर करके।** उ.—आइ अजर निकसी नँदरानी बहुरी दोष मिटाइ—५४०।

मिटाइए—क्रि. स. [हिं. मिटाना] **दूर कीजिए।** उ.—या लक के उपहास आपुन ताहि बरजि मिटाइए—१० उ०-२४।

मिटाई—क्रि. स. [हिं. मिटाना] **दूर की।**

प्र०—डारौ मिटाई—**दूर कर दो।** उ.—कृपा करि रारि डारौ मिटाई—८-९।

मिटाऊँ—क्रि. स. [हिं. मिटाना] (१) **दूर कर दूँ, निकाल डालूँ।** उ.—अपने जिय की खुटक मिटाऊँ—२४५९। (२) **रद्द कर दूँ।** उ.—मुनिवर साप मिटाऊँ—३८२।

मिटाना, मिटानो—क्रि. स. [हिं. मिटना] (१) **चिह्न आदि दूर करना।** (२) **न रहने देना।** (३) **चौपट करना।** (४) **रद्द करना।**

मिटायो, मिटायौ—क्रि. स. [हिं. मिटाना] **रद्द किया, न माना।**

प्र०—न जात मिटायौ—**मानना या स्वीकारना पड़ता है।** उ.—यह उपकार न जात मिटायौ—४-९।

मिटारो—क्रि. स. [हिं. मिटाना] **नष्ट या दूर किया।** उ.—सूर सुभेंटि सुदामा हरि दुख दरिद्र मिटारो—१० उ०-७७।

मिटावति—क्रि. स. [हिं. मिटाना] **नष्ट या दूर करती है।** उ.—बालक को यह दोष मिटावति—१०१०।

मिटावन—संज्ञा पुं. [हिं. मिटाना] **मिटाने की क्रिया।**

यौ०—मिटावन लायक—**दूर करने में समर्थ।** उ.—तुम बिन ऐसौ कौन नंद-सुत यह दुख दुसह मिटावन लायक—९५४।

मिटावना, मिटावनो—क्रि. स. [हिं. मिटाना] (१) **चिह्न आदि दूर करना।** (२) **न रहने देना।** (३) **नष्ट करना।** (४) **रद्द करना।**

मिटावहि—क्रि. स. [हिं. मिटाना] **दूर करता है।**

मुहा०—नाउँ मिटावहि—**चिह्न आदि भी न रहने दे।** उ.—इन्द्रहिं पेलि करी गिरि पूजा सलिल बरषि ब्रज नाउँ मिटावहि—९४७।

मिटावहु—क्रि. स. [हिं. मिटाना] **दूर करो।** उ.—कहा करत ए बोलत नाहीं पिय, यह खेल मिटावहु—पृ. ३१२ (१३)।

मिटि—क्रि. अ. [हिं. मिटना] **दूर होकर।**

प्र०—जाहि मिटि—**दूर हो जाय।** उ.—सूर हरि कौ सुजस गावौ जाहि मिटि भव-भार—१-२९४।

मिटिया-संज्ञा स्त्री. [हिं. मिट्टी] (१)**मटकी।** (२) **मिट्टी।**

मिटियाना, मिटियानो—क्रि. स. [हिं. मिट्टी+आना] **मिट्टी लगाकर साफ करना।**

मिटी—क्रि. अ. [हिं. मिटना] (१) **दूर हो गयी।** उ.—नैननि की मिटी प्यास—८-५। (२) **रह न गयी।** उ.—मिटी सब लीला—३४३७।

मिटै—क्रि. अ. [हिं. मिटना] **दूर या नष्ट हो।** उ.-और भजे तें काम सरै नहिं, मिटै न भव-जंजार—१-६८।

मिट्टी—संज्ञा स्त्री. [सं. मृत्तिका, प्रा. मिट्टिआ] (१) **भूमि।** (२) **धूल।**

मुहा०—मिट्टी करना--चौपट या बरबाद करना। मिट्टी के मोल—बहुत सस्ता। मिट्टी डालना—(१) छोड़ देना। (२) दोष को छिपाना। मिट्टी देना—कब्र में गाड़ना। मिट्टी छूने (पकड़ने) से सोना होना—साधारण काम में भी बहुत लाभ होना। मिट्टी में मिलना—नष्ट होना। मिट्टी में मिलाना नष्ट कर देना। मिट्टी होना—(१) मैला हो जाना। (२) नष्ट होना। (३) स्वाद या आनंद रहित होना।

यौ०—मिट्टी का पुतला (की सूरत)—मानव शरीर। मिट्टी के माधव—भोंदू। मिट्टी खराब होना—दुर्दशा होना।

(३) मृत शरीर, शव।

मुहा०—मिट्टी ठिकाने लगना—शव की अंतिम क्रिया हो जाना। मिट्टी ठिकाने लगाना—शव की अंतिम क्रिया करना।

(४) शरीर की बनावट या गठन।

मुहा०—मिट्टी ढल जाना—अधिक आयु या रोग के कारण शरीर की गठन या बनावट बिगड़ जाना।

मिट्ठा—वि. [हिं. मीठा] जिसमें मिठास हो।

मिट्ठी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मीठा] बच्चे का चुंबन।

मिट्ठू—वि. [हिं. मीठा] मीठा बोलनेवाला।

मुहा०—अपने मुँह मियाँ-मिट्ठू बनना—अपनी बड़ाई स्वयं करना।

मिट्यो, मिट्यौ—क्रि. अ. भूत [हिं. मिटना] (१) नष्ट हो गया, दूर हो गया। उ.—आनँद मिट्यौ—३४-३७। (२) मर गया। उ.—कहा बापुरो कंस मिट्यो तब मन संस करत है जो को—२५५६।

मिठ—वि. [हिं. मीठा] 'मीठा' का संक्षिप्त रूप जो प्रायः किसी शब्द के पूर्व, यौगिक रूप बनाने को जुड़ता है।

मिठबोला—वि. [हिं. मीठा+बोलना] मधुरभाषी।

मिठलोना—वि. [हिं. मीठा=कम+लोन] जिसमें नमक कम हो।

मिठाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. मीठा+आई] (१) मिठास, माधुरी। (२) खाने की मीठी चीज, वह जिसमें मीठा पड़ा हो। उ.—(क) खोवामय मधुर मिठाई—१०-१८३। (ख) मानहुँ मूक मिठाई के गुन कहि न सकत मुख, सीस डुलावत—६४८। (ग) दई कोटि कलस भरि बाहन बहुत मिठाई पान हो—२४४९।

मिठाना, मिठानो—क्रि. अ. [हिं. मीठा] मीठा होना।

मिठास—संज्ञा स्त्री. [हिं. मीठा+आस] (१) मीठे होने का भाव, मीठापन। (२) मीठी चीज, मिठाई। उ.—बहिरो तान स्वाद कहा जानै गूँगो खात मिठास—३३३६।

मिठौना—वि. [हिं. मीठा] मीठा।

मिठौरि, मिठौरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मीठा+बरी] उड़द या चने की बरी या बड़ियाँ।

मितंग—संज्ञा पुं. [सं. मितंगम्] हाथी।

मित—वि. [सं.] (१) जो सीमा में हो। (२) थोड़ा।

मितभाषी—वि. [सं. मितभाषिन्] कम बोलनेवाला।

मितव्यय—संज्ञा पुं. [सं.] कम खर्च करना।

मितव्ययी—वि. [सं. मितव्ययिन्] कम खर्चनेवाला।

मिताई—संज्ञा स्त्री. [हिं. मीत+आई] मित्रता। उ.—(क) हमसौं-तुमसौं बाल मिताई—१-२९८। (ख) हम अहीरि मतिहीन बावरी हठकतहू हठि करहिं मिताई—३११८। (ग) मुख देखे को कौन मिताई—३३१०।

मिति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) सीमा, हद। उ.—(क) तुम गुन की जैद मिति नाहिन, हौं अब कोटि बिचरतौ—१-२०३। (ख) इत लोभी उत रूप परम निधि कोउ न रहत मिति मानि—१४३०। (२) परिमाण। (३) काल की अवधि।

मिती—संज्ञा स्त्री. [सं. मिति] (१) तिथि, तारीख। (२) सीमा, हद। उ.—रहत अवज्ञा होइ गुसाईं चलत न दुखहि मिती—१० उ.—१०३। (३) दिन, दिवस। (४) समय की अवधि।

मित्र, मित्त, मित्तर—संज्ञा पुं. [सं. मित्र] (१) दोस्त, सखा। (२) सूर्य।

मित्रता--संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) दोस्ती। (२) मित्र का धर्म।

मित्रपन—संज्ञा पुं. [सं. मित्र+हिं. पन] मित्रता।

मित्रबिंदा, मित्रविंदा—संज्ञा स्त्री. [सं.] श्रीकृष्ण की एक पत्नी। उ.—हरहिं मित्रबिंदा चित ध्यायो—१० उ०-२८।

मित्राइ, मित्राई—संज्ञा स्त्री. [सं. मित्र+हिं. आई] मित्रता, मित्र का धर्म, मित्रता का निर्वाह। उ.—(क) हमसौं तुमसौं बाल-मिताई। हमसौं कछु न भई मिताई—१-२८९। (ख) देखि माधौ की मित्राई—२७१८।

मिथि, मिथिल—संज्ञा पुं. [सं.] राजा जनक का एक नाम। उ.—दीनो दान बहुत द्विजन कौं राजा मिथिल-नरेस—सारा. २३४।

मिथिला—संज्ञा स्त्री. [सं.] वर्तमान तिरहुत जहाँ प्राचीन काल में राजा जनक का राज्य था।

मिथुन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) स्त्री-पुरुष का युग्म। (२) संयोग, समागम। (३) एक राशि।

मिथ्या—वि. [सं.] (१) झूठ, असत्य। उ.—मिथ्या बाद विवाद छाँड़ि दै—१-३१२। (२) सार या आधार हीन, जिसमें वास्तविकता या स्थायित्व न हो। उ.—बल विद्या धन धाम रूप गुन और सकल मिथ्या सौंजाई—१-२४।

मिथ्याचार—संज्ञा पुं. [सं.] कपटपूर्ण व्यवहार।

मिथ्याध्यवसिति—संज्ञा स्त्री. [सं.] एक काव्यालंकार।

मिथ्यावाद, मिथ्यावाद—संज्ञा पुं. [सं. मिथ्या+वाद] संसार को असत्य समझने का सिद्धांत। उ.—मिथ्या बाद उपाधि रहित ह्वै बिमल बिमल जस गावत—२-१७।

मिथ्याबादी, मिथ्यावादी—वि. [सं. मिथ्यावादिन्] झूठा।

मिथ्याभास—संज्ञा पुं. [सं] आभास जो वास्तविक स्थिति के विरुद्ध हो।

मिदुराना, मिदुरानो—क्रि. अ. [सं. मृदु] मृदु, मधुर या कोमल हो जाना।

मिनकना, मिनकनो—क्रि. अ. [अनु. मिनमिन] (किसी के) दबाव में आकर बहुत धीरे से बोलना।

मिनती—संज्ञा स्त्री. [हिं. बिनती] विनय, प्रार्थना।

मिनमिन—क्रि. वि. [अनु.] नाक से निकलने वाले धीमे या महीन स्वर में।

मिनमिना—वि. [अनु.] नाक से धीमें या महीन स्वर में बोलनेवाला।

मिनमिनाना, मिनमिनानो—क्रि. अ. [अनु.] नाक से धीमे स्वर में बोलना।

मिन्नत—संज्ञा स्त्री. [अ.] (१) प्रार्थना। (२) दीनता।

मिमियाना, मिमियानो—क्रि. अ. [अनु.] बकरी की तरह बोलना।

मियाँ—संज्ञा पुं [फ़ा.] (१) स्वामी। (२) पति। (३) महाशय। (४) मुसलमान।

मियाँ-मिट्ठू—संज्ञा पुं. [फ़ा. मियाँ+हिं. मिट्ठू] (१) मिठबोला। (२) अपनी बड़ाई स्वयं करनेवाला।

मुहा०—अपने मुँह मियाँ मिट्ठू बनना—स्वयं अपनी बड़ाई करना।

(३) मूर्ख व्यक्ति। (४) तोता।

मुहा०—मियाँ मिट्ठू बनना—बिना समझे रटना।

मियाँ मिट्ठू बनाना—बिना समझाए रटाना।

मियाद—संज्ञा स्त्री. [अ. मीयाद] निश्चित अवधि।

मिरग—संज्ञा पुं. [स. मृग] हिरन, मृग। उ.—कहैं मिरग सौं नारा—१-२२१।

मिरगछाला—संज्ञा स्त्री. [सं. मृगछाला] हिरन की खाल।

मिरगी—संज्ञा स्त्री. [सं. मृगी] एक मानसिक रोग।

मिरच, मिरचा, मिरची, मिरिच, मिरिचा, मिर्च—संज्ञा पुं., स्त्री. [सं. मरिच] (१) लाल मिर्च। उ.—(क) तिहि सोंठ-मिरिच रुचि नाई—१०-१८३। (ख) बरा कौर मेलत मुख भीतर मिरिच दसन टकटौरे। तीछन लागी नैन भरि आए रोवत बाहर दौरे—१०-२२४। (ग) हींग मिरच पीपरि अजवाइन ये सब बनिज कहावैं—११०८। (२) काली मिर्च।

मिरजई—संज्ञा स्त्री. [फ़ा. मिरज़ा] बंददार बास्कट।

मिरजा—संज्ञा पुं. [अ. मिरज़ा] 'शहजादों' की उपाधि।

मिरदंग, मिर्दंग—संज्ञा पुं. [सं. मृदंग] मृदंग।

मिरदंगी मिर्दंगी—संज्ञा स्त्री. [सं. मृदंग] छोटा मृदंग।

मिलना, मिलनो—क्रि. स. [हिं. मिलाना] मिलाना।

मिलक—संज्ञा स्त्री. [अ. मिल्क] (१) जमीदारी। (२) जागीर। उ.—ब्रज की भूमि इंद्र तैं मानौ मदन मिलक (मिलिक) करि पाई—२८३६।

मिलकना, मिलकनो—क्रि. अ. [देश.] जलना।

मिलकी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मिलक] (१) जमीदार। (२) धनी।

मिलते—क्रि. स. [हिं. मिलना] **दर्शन देते**। उ.—मनसा करि सुमिरत है जब-जब, मिलते तब तबहीं—१-२८३।

मिलन—क्रि. स. [सं.] **मिलाप, भेंट**। उ.—मिलन आस तनु प्रान रहत है दिन दस मारग चैहौं—२५५०।

मुहा॰—मिलन कहियौ—**बराबर वालियों से सप्रेम प्रणाम-नमस्कार आदि कहना, प्रणाम नमस्कार-सूचक मिलना या भेंटना कहना**। उ.—या घर प्यारी आवति रहियो। महरि हमारी बात चलावति ? मिलन हमारी कहियौ—७२७।

प्र॰—मिलन गए—**मिलने, भेंटने या दर्शन करने गये**। उ.—जिनकौं मिलन गए पति तेरे सो ठाकुर थे बिदित तुम्हारे—१-२४१। मिलन न पाई—**मिल-भेंट न सकी, दर्शन न कर सकी**। उ.—नंदनंदन के चलत सखी हे तिनको मिलन न पाई—२५६८।

मिलनसार—वि.—[हिं. मिलन + सार] **हेलमेल या प्रेम-व्यवहार रखने वाला**।

मिलनसारी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मिलनसारी] **हेलमेल या प्रेम का व्यवहार**।

मिलना, मिलनो—क्रि. अ. [सं. मिलन] (१) **मिश्रित होना**। (२) **दो पदार्थों का अंतर मिटकर एक होना**। (३) **सम्मिलित होना**। (४) **जुड़ना, चिपकना**। (५) **गुण, आकृति आदि समान होना**। (६) **भेंटना, छाती से लगाना**। (७) **भेंट या मुलाकात होना**। (८) **मेल-मिलाप होना**। (९) **पक्ष-विशेष में हो जाना**। (१०) **लाभ होना**। (११) **पता या खोज लगाना**। (१२) **सुर ठीक होना**।

क्रि. स. [देश.] **दूध दुहना**।

मिलनि, मिलनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मिलन] (१) **विवाह की एक रीति जिसमें विवाह के पूर्व अथवा पश्चात कन्या के संकट संबंधियों से गले मिलते और नकद भेंट देते हैं**। (२) **मिलने की क्रिया या भाव, भेंट, मिलन**। उ.—(क) धन्य यह मिलनि धन्य यह बठनि धन्य अनुराग नहीं यह थोरी—पृ॰ ३१० (४)। (ख) वह हिलनि-मिलनि-खिलन की तेरे प्रेम प्रीति जनाई—२१०७। (३) **प्रेम-पूर्ण संबंध या व्यवहार, मिलना-जुलना**। उ.—जब बारे तब वैसी मिलनी की बड़े भए इहै देखो—३१००।

मिलवत—क्रि. स. [हिं. मिलाना] (१) **मिश्रित या सम्मिलित करते हो**। उ.—मिलवत कहाँ कहाँ की बातैं हँसत कहति अति उर सकुचाई—११६३। (२) **मिलते-जुलते हो**।

मुहा॰—मुँह ही की हमसों मिलवत—**मिलने-भेंटने की कोरी बातें ही करते हो, हमसे मिलने-जुलने की केवल बातें करते हो (हृदय से वैसा नहीं चाहते), मुँह से तो हमसे मिलने-जुलने की बात करते हो (पर मन कहीं और है)**। उ.—मुँह ही की हमसों मिलावत जिय बसत जहाँ मन मोहनि—२०१४।

मिलवति—क्रि. स. [हिं. मिलाना] (१) **मिश्रित या सम्मिलित करती है**। (२)**इधर-उधर की बातें जोड़ती है**। उ.—मैं जानति उनके ढंग नीके बातैं मिलवति जोरि—८६७। (२) (**इधर की उधर**) **लगाती है**। उ.—उतकी इत इत की उत मिलवति समुझति नाहिन प्रीति-रीति—२०४६।

मिलवना, मिलवनो—क्रि. स. [हिं. मिलाना] **मिलाना**।

मिलवाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. मिलवाना] **मिलवाने की क्रिया, भाव या मजदूरी**।

मिलवाना, मिलवानो—क्रि. स. [हिं. मिलाना] (१) **मिलने को प्रवृत्त करना**। (२) **भेंट या परिचय करना**। (३) **मेल कराना**।

मिलाइ—क्रि. स. [हिं. मिलाना] **मिश्रित करके, घोलकर**। उ.-सलिल कौं सब रंग तजि कै एक रंग मिलाइ-१-७०।

मिलाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. मिलाना] **मिलाने की क्रिया, भाव या मजदूरी**।

मिलान—संज्ञा पुं. [हिं. मिलाना] (१) **मिलाने की क्रिया**। (२) **समता, तुलना**। (३) **ठीक होने की जाँच**।

मिलाना, मिलानो—क्रि. स. [सं. मिलन] (१) **मिश्रित करना**। (२) **अंतर मिटाकर एक करना**। (३) **सम्मिलित करना**। (४) **जोड़ना, चिपकाना**। (५) **ठीक होने की जाँच करना**। (६) **भेंट या परिचय करना**। (७) **मेल या संधि करना**। (८) **पक्ष-विशेष में करना**। (९) **सुर ठीक करना**।

मिलाप—संज्ञा पुं. [हिं. मिलाना] (१) **मिलने की क्रिया**

या भाव। (२) मेल, मित्रता। (३) भेंट, मुलाकात। उ.—रानी सौं मिलाप तहँ भयौ—४-१२।

मिलाव—संज्ञा पुं. [हिं. मिलाना] (१) मिलावट। (२) मिलाप।

मिलावट—संज्ञा स्त्री. [हिं. मिलाना] (१) मिलाये जाने की क्रिया या भाव। (२) अच्छी में बुरी का मेल।

मिलावत—क्रि. स. [हिं. मिलावना] अच्छी चीज में बुरी या एक में दूसरी मिलाता है। उ.—देखौ आइ पूत के करतब दूध मिलावत पानी—१०-३३७।

मिलावना, मिलावनो—क्रि. स. [हिं. मिलाना] मिलाना।

मिलावै—क्रि. स. [हिं. मिलावना] भेंट करा दे। उ.—ऐसो कोऊ नाहिनै सजनी जो मोहनै मिलावै—२७४५।

मिलाहीं—क्रि. स. [हिं. मिलना] मिलते हैं, भेंटते या छाती से लगाते हैं। उ.—बरषत मेह मेदनी के हित प्रीतम हरषि मिलाहीं—२१९४।

मिलिंद—संज्ञा पुं. [सं.] भौंरा, भ्रमर।

मिलि—क्रि. स. [हिं. मिलना] मिलकर, संगति करके। उ.—धन-मद-मूढ़नि अभिमानिनि मिलि लोभ लिए दुर्बचन सहै—१-५३।

मिलिक—संज्ञा स्त्री. [अ. मिल्क] (१) जमींदार। (२) जागीर। उ.—इह ब्रज भूमि सकल सुर-संपति सो मदन मिलिक करि पाई—२८३६।

मिलित—वि. [सं.] मिला हुआ, युक्त।

मिलिबे, मिलिबो, मिलिबौ—संज्ञा पुं. [हिं. मिलना] मिलने की क्रिया या भाव। उ.—मिलिबे की तरसनि—१०-९६।

मिलिहौ—क्रि. स. [हिं. मिलना] मिलोगे, दर्शन करोगे। उ.—जीते जनम विरोध करि मोकौं मिलिहौ आई—३-११।

मिलीं—क्रि. स. [हिं. मिलना] संयुक्त हुईं, एक हो गयीं। उ.—मुक्तामाल मिलीं मानौ द्वै सुरसरि एकै संग—६२८।

मिलै—क्रि. स. [हिं. मिलाना] (१) मिश्रित करके। उ.—बेसन मिलै सरस मैदा सौं अति कोमल पूरी है भारी—१०-२४१। (२) स्वर ठीक करके, सुर मिलाकर। उ.—गौरी राग मिलै सुर गावत—५०६।

मिलोना, मिलोनो—क्रि. स. [हिं. मिलाना]। मिलाना।

क्रि. स. [देश.] दूध दुहना।

मिलौनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मिलना] (१) मिलाने की क्रिया या भाव, मिलावट। (२) मिलाने के बदले में मिला हुआ धन।

मिल्यो, मिल्यौ—क्रि. स. [हिं. मिलना] मिला, प्राप्त हुआ। उ.—जिहिं तन हरि भजिबौ न कियौ।....। तिन्हैं न मिल्यौ हियौ—२-१६।

मिश्र—वि. [सं.] (१) मिश्रित। (२) श्रेष्ठ।

संज्ञा पुं.—ब्राह्मणों का एक वर्ग।

मिश्रण—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मेल, मिलावट। (२) कई चीजों का मिला हुआ घोल।

मिश्रित—वि. [सं.] मिलाया हुआ।

मिश्री—संज्ञा स्त्री. [हिं. मिसरी] दोबारा साफ करके जमायी गयी चीनी। उ.—मिश्री सानि चटावै—१०-८४।

मिष—संज्ञा पुं. [सं.] (१) छल-कपट। (२) हीला-बहाना।

मिष्ट—वि. [सं.] मीठा, मधुर। उ.—अगनित तरु-फल सुगंध मृदुल मिष्ट खाटे—९-९६।

मिष्टभाषी—वि. [सं. मिष्टभाषिन्] मिठबोला।

मिष्टान्न, मिष्ठान्न—संज्ञा पुं. [सं. मिष्टान्न] मिठाई। उ.—माखन मधु मिष्टान्न महर लै दियौ अक्रूर के हाथ—२५३४।

मिस—संज्ञा पुं. [सं. मिष] (१) हीला, बहाना। उ.—(क) दधि-मिस आपु बँधायौ दाँवरि—१-२५। (ख) मिस दिगबिजय चहूँ दिसि गयौ—१-२९०। (ग) आवति सूर उरहने के मिस—१०-३११। (२) नकल, स्वाँग।

मिसकना, मिसकनो—क्रि. अ. [अनु.] धीरे बोलना।

मिसकी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मिसकना] (१) धीरे बोलने की क्रिया। (२) धीमे स्वर से गाना।

मिसकीन—वि. [अ. मिस्कीन] दीन, निर्धन।

मिसकीनता—संज्ञा स्त्री. [हिं. मिसकीन] दीनता, गरीबी।

मिसना, मिसनो—क्रि. अ. [सं. मिश्रण] मिश्रित होना।

क्रि. अ. [हिं. मीसना] मीसा जाना।

मिसरा—संज्ञा पुं. [अ. मिसरअ] कविता का एक चरण।

मिसरी—संज्ञा स्त्री. [देश.] दोबारा साफ करके जमाई गयी चीनी, मिश्री।

मिसहा—वि. [हिं. मिस] (१) बहानेबाज। (२) कपटी।

मिसाल—संज्ञा स्त्री. [अ.] (१) उपमा। (२) नमूना।

मिसि—संज्ञा पुं. [सं. मिष] बहाना। उ.—सुंदर स्याम पाहुने के मिसि मिलि न जाहु दिन चार—२७६९।

मिसिरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मिसरी] दोबारा साफ करके जमायी गयी चीनी। उ.—(क) सद दधि-माखन धौं आनी। ता पर मधु मिसिरी सानी—१०-१८३। (ख) दूध औट्यौ आनि, अधिक मिसिरी सानि—४४०।

मिसिल—वि. [अ. मिस्ल] समान, तुल्य।

मिसी—संज्ञा पु. [हिं. मिस] बहाना, हीला।

मिस्री—संज्ञा स्त्री. [हिं. मिसरी] मिसरी।

मिस्रित—वि. [सं. मिश्रित] मिला हुआ।

प्र०—मिस्रित करि—मिलाकर। उ.—(क) मिस्री दधि-माखन मिस्रित करि मुख नावत छबि घनिया—१०-२३८। (ख) घृत मिष्टान्न खीर मिस्रित करि परसि कृष्न हित धाम लगायौ—१०-२४८।

मिस्सा—संज्ञा पुं. [हिं. मीसना] कई दालों का मिला हुआ आटा।

यौ०—मिस्सा-कुस्सा—मोटा अनाज।

मिस्सी—संज्ञा स्त्री. [फ़ा. मिस्सी=तांबे का] एक मंजन जिससे दांत काले होकर सुंदर लगते हैं।

मुहा०—मिस्सी-काजल करना—शृंगार करना।

मिह्चना, मिह्चनो—क्रि. स. [हिं. मींचना] मूँदना।

मिहर—संज्ञा स्त्री. [अ. मेह्र] कृपा, दया।

मिहानी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मथानी] मथानी।

मींगी—संज्ञा स्त्री. [सं. मुद्‌ग] बीज की भीतरी गिरी।

मींजत—क्रि. स. [हिं. मींजना] मलता-मसलता है, मलते-मसलते (ही)। उ.—मींजत पीठि प्रीति अति बाढ़ी—७९९।

मींजना, मींजनो—क्रि. स. [हिं मींजना] (१) हाथ से मलना-मसलना। (२)कुचलना, दलना, मर्दन करना।

मींजि—क्रि. स. [हिं. मींजना] मल या मसलकर।

मुहा०—मींजि कर—हाथ मल-मलकर, बहुत दुखी होकर। उ.—यह सुनत जल नैन ढारत मींजि कर पछितांहि—२६७२।

मींजी—क्रि. स. [हिं. मींजना] हाथ से मली-मसली। उ.—कालिह धोखैं कान्ह मेरी पीठि मींजी आइ—७८०।

मींड़—संज्ञा स्त्री. [सं० मीड़म्] संगीत में एक स्वर से दूसरे पर इस कौशल से जाना कि स्वरों का संबंध तो स्पष्ट हो परंतु कोई व्यवधान न जान पड़े।

मींडत—क्रि. स. [हिं. मींडना] मलता-मसलता है। उ.—हम अस्नान करति जल-भीतर मींडत पीठि कन्हाई—७७०।

मींड़ना, मींड़नो—क्रि.स. [हिं. मींड़ना] मलना, मसलना।

मीच—संज्ञा स्त्री. [हिं. मीचु] मौत, मृत्यु। उ.-(क) ताकैं मूँड़ चढ़ी नाचति है मीचति नीच नटी—१-९८। (ख) सिर पर मीच, नीच नहिं चितवत—१-१४९।

मीचना, मीचनो—क्रि. स. [हिं. मूँदना] आँख मूँदना।

मीचि—क्रि. स. [हिं. मीचना] (आँख) मूँद या बंद कर। उ.—कह्यौ, आँखि अब मीचि तू—८-१६।

मीचु—संज्ञा स्त्री. [सं. मृत्यु, प्रा० मिच्चु] मौत, मृत्यु। उ.—जो पै यह कियो चाहत है मीचु, बिरह सर घात—२५०२।

मीचत—क्रि. स. [हिं. मीचना] मीचता है, मीचते (ही), मीचते (हुए)। उ.—ठाढ़ी कुँअरि राधिका लोचन मीचत तहँ हरि आए—६७५।

मीचै—क्रि. स. [हिं. मीचना] बंद करता है। उ.—हौं यह जानति बानि स्याम की अँखियाँ मीचै बदन चलावै—१०-२३१।

मीजत—क्रि. स. [हिं. मीजना] मलता-मसलता है। उ.—फिरि देखैं तौ कुँवर कन्हाई मीजत रुचि सौं पीठि—७६८।

मीजना मीजनो—क्रि. स. [हिं. मींजना] मलना, मसलना।

मीजान—संज्ञा पुं. [अ.] संख्याओं का योग।

मीठा—वि. [सं मिष्ट, प्रा० मिट्ट] (१) मधुर। (२) स्वादिष्ट। (३) धीमा, मंद। (४) मामूली, साधारण। (५) हलका, मंद। (६) बहुत सीधा। (७) प्रिय, रुचिकर।

संज्ञा पुं.—(१) मिठाई। (२) गुड़।

मीठि, मीठो—वि. [हिं. मीठा] मधुर।

यौ०—कटु-मीठि—कड़ुआ और मीठा, बुरा और भला। उ.—सूर स्याम सुंदर रस अटके नहिं जानत कटु-मीठि—पृ. ३३४ (३६)।

मीठी छुरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मीठी+छुरी] (१) ऊपर से मित्र, भीतर से शत्रु। (२) कपटी, कुटिल।

मीठी मार—संज्ञा स्त्री. [हिं. मीठी+मार] ऐसी चोट जो ऊपर से तो दिखायी न दे पर भीतर पीड़ा पहुँचाये।

मीठे—वि. [हिं. मीठा] (१) प्रिय, रुचिकर। उ.—सूरदास-प्रभु-हरि गुन मीठे नित प्रति सुनियत कान—१-१६९। (२) जिनमें मिठास हो, मधुर। उ.—सबरी कटुक बेर तजि मीठे चाखि गोद भरि लाई—१-१३।

प्र०—जूठो खइए मीठे कारन—कोई अनुचित काम तभी किया जाय जब उससे कम से कम कोई स्वार्थ या लाभ तो होता हो। उ.—जूठो खइए मीठे कारण आगुहि खात लड़ात—पृ० ३३१ (६)।

मीठैं तेल—संज्ञा पुं. सवि. [हिं. मीठा+तेल] मीठे तेल में, तिल के तेल में। उ.—मीठैं तेल चना की भाजो—३९६।

मीड़त—क्रि. स. [हिं. मींड़ना] मलता-मसलता है।

मुहा०—कर या हाथ मीड़त—हाथ मलता या पछताता है। उ.—(क) हरि बिनु को पुरवै मो स्वारथ। मीड़त हाथ सीस धुनि ढोरत रुदन करत नृप, पारथ—१-२८७। (ख) मीड़त हाथ सकल गोकुलजन बिरह बिकल बेहाल—२५३६। (ग) सूरदास प्रभु तुमहिं मिलन को कर मीड़त पछितात—३३५०।

पलक मीड़त रही—दूर तक देखने के लिए आँख या पलक मलकर तैयार होने के यत्न में लगी रही। उ.—जौ लगि पानि पलक मीड़त रही तौ लगि चलि गए दूरि—२६९३।

मीड़ति—क्रि. स. स्त्री. [हिं. मींड़ना] मलती है। उ.—कर मीड़ति पछिताति मनहिं मन क्रम क्रम करि समुझावै—३०९८।

मीड़ना, मीड़नो—क्रि. स. [हिं. मींड़ना] (१) मलना, मसलना। (२) कुचलना, दलना, मर्दन करना।

मीड़ैं—क्रि. स. [हिं. मीड़ना] मलते-मसलते हैं। उ.—ताहि कोऊ उपचार न लागत कर मीड़ैं सहचरि पछिताइ—७४८।

मीत—संज्ञा पुं. [सं. मित्र] (१) मित्र, सखा। उ.—(क) गोबिंद गाढ़े दिन के मीत—१-३१। (ख) सखीरी, काके मीत अहीर—२६८६। (ग) मधुकर काके मीत भए—२९९२। (२) प्रेमी।

मीतता—संज्ञा स्त्री. [हिं. मीत+ता] मित्रता।

मीता, मीते—संज्ञा पुं. [हिं. मीत] (१) मित्र, सखा। उ.—सूरदास प्रभु बहुरि कृपा करि मिलहु सुदामा मीते—२८९३। (१) प्रिय, प्रियतम। उ.—तिनको कहा परखो कीजै कुबिजा के मीता को—३३७६।

मीन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मछली। उ.—(ग) मीन बियोग न सहि सकै (रे) नीर न पूछै बात—१-३२५। (२) बारहवीं और अंतिम राशि। (३) बारहवाँ और अंतिम लग्न।

मीनकेत, मीनकेतन, मीनकेतु—संज्ञा पुं. [सं. मीन+केतन, केतु] कामदेव जिसकी ध्वजा पर मीन अंकित कही गयी है। उ.—मीनकेत अंबुज आनंदित ताते ताहिन लहियत—२८५६।

मीनता—संज्ञा स्त्री. [सं. मीन+ता] 'मीन' का गुण, या स्वभाव, मीनपन। उ.—सूरदास मीनता कछूक जल भरि कबहूँ न छाँड़त—२७७७।

मीन-मार्ग—संज्ञा पुं. [सं.] हठ-योग की साधना का रूप जो (जल में मछली के मार्ग के समान) गुप्त रहता है।

मीन-मेख, मीन-मेष-संज्ञा पुं [सं. मीन+मेष (राशियाँ)] (१) आगा-पीछा, सोच-विचार। (२) छोटे-मोटे दोष निकालना।

मीना—संज्ञा पुं. [फ़ा.] (१) रंगीन पत्थर। (२) एक नीला पत्थर। (३) कीमिया। (४) सोने के आभूषण आदि पर किया जानेवाला रंगीन काम।

मीनाक्ष—वि. [सं.] मछली जैसे सुंदर नेत्रवाला।

मीनाक्षी—वि. स्त्री. [सं.] जिसके नेत्र मछली-जैसे हों।

मीनालय—संज्ञा पुं. [सं.] समुद्र।

मीन्ही—संज्ञा स्त्री. [सं. मीन] मीन, मछली। उ.—सूर स्याम के रंगहि राची टरत नहीं जल तें ज्यौं मीन्ही—१८३६।

मीमांसक—वि. [सं.] (१) मीमांसा करनेवाला। (२) मीमांसा शास्त्र का ज्ञाता।

मीमांसा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) तत्व का विवेचन या

निर्णय। (२) भारतीय छह दर्शनों में दो जो 'पूर्व' और 'उत्तर' मीमांसा कहलाते हैं।

मीर—संज्ञा पुं. [फ़ा.] (१) प्रधान नेता। (२) धर्माचार्य।

मीरग, मीरगा—संज्ञा पुं. [सं. मृग] हिरन।

मीलन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बंद करना, मूँदना। (२) संकुचित करना।

मीलित—वि. [सं.] (१) बंद किया हुआ। (२) सिकोड़ा या संकुचित किया हुआ।

संज्ञा पुं.—एक अलंकार।

मुँगरा—संज्ञा पुं. [हिं. मोगरा] नमकीन बूँदी।

मुँगैछी, मुँगौछी, मुँगौरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मूँग+बरी] मूँग की बरी।

मुंचना, मुंचनो—क्रि. अ. [सं. मोचन] मुक्त होना।

क्रि. स.—मुक्त करना।

मुंज—संज्ञा पुं. [सं.] मूँज।

मुंड—संज्ञा पुं. [सं.] (१) सिर। (२) कटा हुआ सिर। (३) शुंभ दैत्य का सेनापति।

वि.—(१) मुँड़े हुए सिर वाला। (२) नीच।

मुंडन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) सिर को मूँड़ने की क्रिया। (२) द्विजातियों में बालक का एक संस्कार जो सामान्यतया पाँचवें वर्ष किया जाता है।

मुँडना, मुँडनो—क्रि. अ. [सं. मुंडन] (१) सिर के बालों का मूँड़ा जाना। (२) लूटा या ठगा जाना। (३) हानि उठाना।

मुंडमाल, मुंडमाला—संज्ञा स्त्री. [सं. मुंडमाला] कटे हुए सिरों की माला जो शिव या काली के गले में रहती है। उ.—मुंडमाल सिव-ग्रीवा कैसी....। मुंडमाल कैसो तव ग्रीवा—१-२२६।

मुंडमालिनि, मुंडमालिनी—संज्ञा स्त्री. [सं.] देवी काली।

मुंडमाली—संज्ञा पुं. [सं. मुंडमालिन्] शिव जी।

मुंडली—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुंडा] जिसका सिर मुँड़ा हो। उ.—मुंडली पाटो पारन चहै।

मुंडा—वि. [सं. मुंड] (१) जिसका सिर मुँड़ा हो। (२) जिस (पशु) के सींग न हों।

संज्ञा स्त्री.—एक लिपि जिसमें मात्राएँ आदि नहीं होतीं।

मुँडाइ, मुँड़ाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुँड़ना] मूँड़ने की क्रिया, भाव या मजदूरी।

मुँडाना, मुँड़ानो—क्रि. स. [सं. मुंडन] मुंडन कराना।

क्रि. अ.—(१) मूँड़ा जाना। (२) धोखे में धन गँवाना, ठगा जाना।

मुँड़ासा—संज्ञा पुं. [हिं. मूँड़] साफा, पगड़ी।

मुंडित—वि. [सं.] मुड़ा हुआ।

मुंड़िया—संज्ञा स्त्री. [हिं. मूँड़] सिर, मूँड़।

संज्ञा पुं. [हिं. मूँड़ना] वह जो सिर मुँड़ाकर किसी जोगी का चेला बन गया हो। उ.—जिनके जोग जोग यह ऊधी ते मुँड़िया बसैं कासी।

मुंडी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मूँड़ना] (१) स्त्री जिसका सर मुड़ा हो। (२) विधवा।

संज्ञा पुं.—साधु जिसका सर मुँड़ा हो।

मुँडेरि, मुँड़ेरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुँडेरा] दीवार का ऊपरी भाग जो छत से कुछ उठा रहता है।

मुँडेरा—संज्ञा पुं. [हिं. मूँड़] दीवार का वह ऊपरी भाग जो छत से कुछ उठा रहता है।

मुंडो—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुंडी] (१) स्त्री जिसका सर मुँड़ा हो। (२) विधवा, राँड़।

मुँदना, मुँदनो—क्रि. अ. [सं. मुद्रण] (१) बंद होना। (२) छिपना, लुप्त होना। (३) (छेद आदि) भर जाना।

मुंदरा—संज्ञा पुं. [सं. मुद्रा] (१) कुंडल जो जोगी कान में पहनते हैं। (२) कान का एक आभूषण।

मुँदरिया, मुँदरी—संज्ञा स्त्री. [सं. मुद्रा] (१) उँगली में पहनने का छल्ला। (२) अँगूठी। उ.—(क) आशा होइ, देउँ कर मुंदरी, कहौं सँदेसौ पति को—९-८४। (ख) लाख मुँदरिया जाइगी कान्ह तुम्हारो मोल—११२७। (ग) हाथ पहुँचो बीर कानन जरित मुँदरी भ्राजई—१० उ०-२४।

मुँदाई—क्रि. स. [हिं. मुँदाना] बंद करवायी। उ.—हरि तब अपनी आँखि मुँदाई—१०-२४०।

मुँदाए—क्रि. स. [हिं. मुँदाना] बंद कराये। उ.—नैंकु धीरज धरौ, जियहिं कोउ जिनि डरौ, कहा इहिं सरौ, लोचन मुँदाए—५९६।

मुंशी—संज्ञा पुं. [अ.] (१) लेखक। (२) मुहर्रिर।

मुँह—संज्ञा पुं. [सं. मुख] (१) मुख का विवर।

मुँह आना—मुँह में छाले पड़ना। (१) मुँह का कच्चा—जिसकी बात का विश्वास न हो। (२) जो किसी बात को गुप्त न रखकर सबसे कह देता हो। मुँह का कड़ा—उद्दंडता पूर्वक बातें करनेवाला। मुँह किलना—मुँह से बात या बोल न निकलना। मुँह कीलना—मुँह से बात न निकालने देना। मुँह की बात छिनना—जो बात स्वयं कहने जा रहे हों, वही दूसरे के द्वारा कही जाना। मुँह की बात छीनना—जो दूसरा कहने को हो, वही स्वयं कह देना। मुँह की मक्खी न उड़ा सकना—बहुत ही दुर्बल या अपाहिज होना। मुँह की मिलाना—मुँह देखी या चापलूसी की बातें करना। मुँह मिलवत (हौ)—मुँह देखी या चापलूसी की बातें करते हो। उ.—(क) मोसा तुम मुँह की मिलवत हौ भावति है वह प्यारी—१८६४। (ख) मुँह ही की हमसौं मिलवत, जिय बसत जहाँ मन मोहनि—२०१४। मुँह खराब करना—(१) स्वाद बिगाड़ना। (२) गंदी बात कहना। मुँह खराब होना—(१) स्वाद बिगड़ना। (२) गंदी बातें कही जाना। मुँह खुलना—(१) बोलना। (२) उद्दंडता की बात कहने का आदी होना। मुँह खुलवाना—(१) बोलने को प्रवृत्त करना। (२) कड़ी या उद्दंडता की बातें कहने को बाध्य करना। मुँह खोलकर रह जाना—कुछ कहने को होना, पर लज्जा, संकोच या भय से न कह पाना। मुँह खोलना—(१) बोलना। (२) बुरी या उद्दंडता-भरी बातें कहना। किसी के मुँह चढ़ना—(१) कोई बात हर समय याद आ जाना। (२) किसी के प्यार-दुलार के फलस्वरूप उद्दंड हो जाना। (किसी को) मुँह चढ़ाना—(१) अत्यधिक प्यार-दुलार से किसी को उद्दंड या धृष्ट करना। (२) बहुत प्रिय बनाना। मुँह चलना—(१) खाया जाना। (२) व्यर्थ की बातें या दुर्वचन कहा जाना। मुँह चलाना—(१) भोजन करना। (२) बोलना। (३) गाली देना। (४) काट लेना। मुँह चिढ़ाना—किसी की आकृति या उसके हाव-भाव की नकल बनाकर हँसी उड़ाना या उसको खिझाना। मुँह चूम कर छोड़ देना—लज्जित करके छोड़ देना। मुँह छूना—(१) ऊपरी मन से या नाम मात्र को करना। (२) दिखावटी बात करना। मुँह (कड़ुआ) जहर होना—मुँह में कड़ुआहट होना। मुँह जुठारना (जूठा करना)—बहुत ही कम खाना। मुँह जोड़ना (जोरना)—कानाफूसी करना। मुँह डालना—(किसी पशु आदि का) खाने के पदार्थ को एक-दो कौर खाकर जूठा कर देना। मुँह तक आना—कहने को होना। मुँह थकना—बहुत बोलने से थक जाना। मुँह थकाना—बहुत बोलकर जबान थका देना। मुँह देना—(१) (किसी पशु आदि का) खाद्य पदार्थ को एक-दो कौर खाकर जूठा कर देना। (२) बहुत लाड़-प्यार करना। मुँह न दीजिए—बहुत लाड़-प्यार न कीजिए। उ.—कबहूँ बालक मुँह न दीजिए मुँह न दीजिए नारि—१०९९। मुँह पकड़ना—कुछ बोलने न देना। मुँह पर न रखना—जरा भी न खाना। मुँह पर बात आना—(१) कुछ कहने की इच्छा होना। (२) सामने ही या उपस्थिति में कोई प्रसंग उठना या चर्चा चलना। (३) कुछ कहना। मुँह पर मोहर करना—बोलने न देना। मुँह पर लाना—(१) वर्णन करना। (२) कहने को होना। मुँह पर हाथ रखना—बोलने न देना। मुँह पसारकर दौड़ना—कुछ पाने के लालच में आगे बढ़ना। मुँह पसारकर रह जाना—(१) बहुत चकित या हक्का-बक्का रह जाना। (२) लज्जित होकर रह जाना। मुँह पाना—लाड़-प्यार पाना, पार्श्ववर्ती और प्रिय बनना। मुँह-पेट चलना—कै-दस्त होना। मुँह फटना—(१) मुँह का बहुत ज्यादा खुलना। (२) चूने आदि से मुँह कट जाना। मुँह फाड़कर कहना—बेहया बनकर कहना। मुँह फैलाना—(१) मुँह को बहुत खोलना। (२) जँभाई लेना। (३) अपनी ही भूल-चूक के होने पर भी निर्लज्जता से हँस देना। (४) भद्दे ढंग से हँसना। (५) अधिक प्राप्ति की इच्छा या हठ करना। मुँह फोड़कर कहना—निर्लज्ज बनाकर कहना। मुँह बंद करना—बोलने न देना। मुँह बंद कर लेना—कुछ न बोलना। मुँह बंद होना—चुप हो जाना। मुँह बाँधकर बैठना—कुछ न बोलना।

मुँह बाँधना (बाँध देना)—बोलने न देना। मुँह बाना—(१) मुँह को बहुत खोलना या फैलाना। (२) जम्हाई लेना। (३) अपनी भूल-चूक होने पर भी निर्लज्जता से हँस देना। (४) भद्दे ढंग से हँसना। (५) अधिक प्राप्ति के लिए इच्छा या हठ करना। फिरत रहत मुँह बाए—अधिकाधिक (धन की) प्राप्ति के चक्कर में फिरता रहता है। उ.—निसि दिन फिरत रहत मुँह बाए अहमिति जनम बिगोइसि—१-३३३। मुँह बिगड़ना—मुँह का स्वाद खराब होना। मुँह बिगाड़ना—मुँह का स्वाद खराब करना। मुँह भर आना—(१) किसी चीज को देखकर ललचा जाना। (२) जी मिचलाना। मुँह तक (भरकर)—(१) ऊपर तक, लबालब। (२) जितना जी चाहे। (३) भली भाँति। मुँह भर बोलना—प्यार-सम्मान से बात करना। मुँह भरना—(१) खिलाना। (२) रिश्वत देना। (३) बोलने से रोकना। मुँह मारना—(१) खाने की चीज में मुँह लगाकर जूठा कर देना। (२) दाँत से काट लेना। (किसी का) मुँह मारना—(१) बोलने न देना। (२) रिश्वत देना। (३) बढ़कर होना। मुँह मीठा करना—(१) मिठाई खिलाना। (२) कुछ देकर प्रसन्न होना। मुँह मीठा होना—(१) खाने को मिठाई मिलना। (२) लाभ या प्राप्ति होना। (३) मँगनी होना। (बात) मुँह में आना—कहने की इच्छा होना। मुँह में खून या लहू लगना—चाट या चस्का पड़ना। मुँह में जबान होना—कहने में समर्थ होना, कहने का साहस होना। मुँह में तिनका दबाना (लेना)—बहुत दीनता से बोलना। मुँह में पड़ना—खाने को मिलना। (बात का) मुँह में पड़ना—मुँह से कुछ कहा जाना। मुँह में पानी भर आना—(१) कोई आकर्षक, स्वादिष्ट या अच्छी चीज देखकर उसको पाने के लिए बहुत ललचाना। (२) ईर्ष्या होना। मुँह में बात करना (कहना या बोलना)—इतना धीरे बोलना कि किसी को सुनायी न देना। मुँह में लगाम देना—समझ-बूझकर बोलना। मुँह में लगाम न होना—बिना सोचे-समझे जो मुँह में आये कह डालना। मुँह लगाना—खाना, चखना। मुँह सँभालना—(१) सोच-समझकर मुँह से बात निकालना। (२) गाली-गलौच न करना। मुँह सीना—बिलकुल चुप रहना। मुँह सूखना—बहुत प्यास लगना। मुँह से दूध की बू आना (टपकना)—वयस्क का बालक-जैसा अनजान बनना। मुँह से निकालना—कहना। मुँह से फूटना—कहना (व्यंग्य या खिझलाहट)। मुँह से फूल झड़ना—(१) सुंदर और प्रिय बातें करना। (२) असुंदर और अप्रिय बात कहना (व्यंग्य या खिझलाहट)। मुँह से बात छीनना—जो दूसरा कहने जा रहा हो, वह स्वयं कह देना। मुँह से बात न निकालना—लज्जा, क्रोध या भय से कुछ बोल न सकना। मुँह से भाप (तक) न निकलना—भय के मारे चूँ तक न कर सकना। मुँह से लार गिरना (चूना, टपकना, बहना)—कोई सुंदर, स्वादिष्ट या आकर्षक वस्तु देखकर उसे पाने को बहुत लालायित होना। मुँह से लाल उगलना—(१) प्रिय और रुचिकर बात कहना। (२) अप्रिय और अरुचिकर बात कहना (व्यंग्य या खिझलाहट)।

(२) चेहरा, मुखमंडल।

मुहा०—अपना सा मुँह लेकर रह जाना—लज्जित होकर चुप या निश्चेष्ट हो जाना। इतना सा मुँह निकल आना—(१) बहुत सुस्त होना। (२) हानि, दुख, लज्जा आदि के कारण बहुत उदास होना। मुँह अँधेरे—बहुत सबेरे। (किसी के) मुँह आना—किसी से तर्क कुतर्क या गाली-गलौज करना। मुँह उजला होना—बात या इज्जत बनी रह जाना। मुँह उजाले (उठे)—बहुत सबेरे। मुँह उठना—किसी ओर चलने की इच्छा होना। मुँह उठाये चले जाना—बेधड़क चले जाना। मुँह उठाकर कहना—बिना सोचे-समझे बक देना। मुँह उतरना—(१) दुर्बलता या रोग से चेहरा सुस्त होना। (२) हानि या दुख से उदास हो जाना। (अपना) मुँह काला करना—अपनी बदनामी करना। (दूसरे का) मुँह काला करना—उपदेश दे कर त्यागना। मुँह की खाना—(१) दुर्दशा या बेइज्जती कराना। (२) मुँहतोड़ उत्तर सुनना। (३) लज्जित या शर्मिंदा होना। (४) धोखा खाना। (५) बुरी तरह पराजित होना। मुँह के बल गिरना—ठोकर खाना,

आघात सहना। मुंह खोलना-घूंघट या परदा हटाना। मुँह चढ़ाना—आकृति से अप्रसन्नता या असंतोष प्रकट करना। मुँह चाटना—खुशामद या चापलूसी करना। मुँह छिपाना—लज्जा के कारण किसी के सामने न आना। मुँह झटक जाना—रोग या दुर्बलता से चेहरा सुस्त होना। मुँह झुलसना—लपट या लू आदि से चेहरा बहुत मलिन हो जाना। मुँह झुलसाना—(१) लपट या आग से चेहरा फूँकना (गाली)। (२) शव का दाह-कर्म करना। (३) कुछ ले देकर झगड़ालू व्यक्ति से पीछा छुड़ाना। (अपना) मुँह टेढ़ा करना—अप्रसन्नता या असंतोष का भाव चेहरे पर लाना। (दूसरे का) मुँह टेढ़ा करना—(१) बहुत मारना-पीटना। (२) कटु बात कहना या उत्तर देना। मुँह ढाँकना—किसी संबंधी के मरने पर शोक करना। (किसी का) मुँह ताकना—(१) एकटक देखना। (२) कुछ पाने की आशा से देखना, आश्रित या सहारे होना। (३) विवशता से देखना। (४) चकित होकर देखना। मुँह ताकना—काम-काज छोड़कर चुपचाप बैठ रहना। मुँह तोड़कर जवाब देना—कटु या चुभती हुई बात कहना। मुँह तोड़ना—(१) बहुत मारना-पीटना। (२) कटु या चुभती हुई बात कहना। मुँह थुथाना—अप्रसन्न या असंतुष्ट होकर किसी से न बोलना। मुँह दिखाना—सामने आना। मुँह देखकर उठना—सोकर उठते ही किसी का दर्शन पाना। मुँह देखकर बात कहना—खुशामद करना। (किसी का) मुँह देखना—(१) किसी के सामने जाना। (२) चकित होकर देखना। (किसी का) मुँह देखकर—(१) किसी के सहारे या बल-बूते पर। (२) किसी को प्रसन्न या संतुष्ट करने के उद्देश्य से। मुँह धो रखना—प्राप्ति के संबंध में कोई आशा न रखना (व्यंग्य)। मुँह न देखना—घृणा या क्रोध के कारण कभी न मिलना-जुलना। मुँह न फेरना (मोड़ना)—(१) दृढ़ता के सामने डटे रहना। (२) अस्वीकार न करना। (इतना सा) मुँह निकल आना—(१) रोग या दुर्बलता से चेहरा सुस्त हो जाना। (२) हानि, दुख या अपमान से उदास हो जाना। मुँह पर—सामने ही। मुँह पर चढ़ना—सामना या मुकाबला करना। मुँह पर थूकना—बहुत अपमानित और लज्जित करना। मुँह पर नाक न होना—बहुत निर्लज्ज होना। मुँह पर पानी फिर जाना—(१) चेहरे पर रौनक या तेज आ जाना। (२) प्रसन्नता या संतोष का भाव प्रकट होना। मुँह पर फेंकना (फेंक मारना)—बहुत अप्रसन्न या असंतुष्ट होकर कोई चीज देना। मुँह पर से बरसना—आकृति से जान पड़ना या प्रकट होना। मुँह पर बसंत खिलना (फूलना)—(१) चेहरा पीला पड़ जाना। (२) भयभीत या उदास हो जाना। मुँह पर मारना (मार देना)—बहुत असंतुष्ट या अप्रसन्न होकर कोई चीज देना। मुँह दर मुँह—आमने-सामने। मुँह पर मुरदनी छाना (फिरना)—(१) चेहरा पीला पड़ जाना। (२) भयभीत, लज्जित या उदास होना। (३) अंत समय निकट होना। मुँह पर हवाई उड़ना (छूटना)—भय, लज्जा या अपमान से चेहरा बहुत उदास हो जाना। (किसी का) मुँह पाना—किसी को अपने अनुकूल समझना, सम्मान और प्रेम का व्यवहार पाना। मुँह पाइ—लाड़-प्यार और सम्मान पाकर, अनुकूल समझकर। उ.—नेक ही मुँह पाइ फूली अति गई इतराइ—२६८०। मुँह पावति—सम्मान और प्रेम का व्यवहार पाती है, अनुकूल समझती है। उ.—मुँह पावति तब ही लौं आवति और लावति मोहिं—७२३। मुँह पीट लेना—बहुत अधिक क्रोध, दुख, पराजय या असफलता की स्थिति में होना। मुँह फक होना—भय या आशंका से चेहरा बहुत उदास हो जाना। मुँह फिरना (फिर जाना)—सामने से हट या भाग जाना। मुँह फुलाकर बैठना (फुलाना)—असंतोष या अप्रसन्न होकर चुप बैठना। मुँह फूँकना—(१) मुँह में आग लगाना (गाली)। (२) शव का दाह-कर्म करना। (३) किसी झगड़ालू को कुछ ले देकर हटाना। मुँह फूलना—अप्रसन्नता या असंतोष होना। (किसी का) मुँह फेरना—पराजित कर देना। (अपना) मुँह फेरना—(१) उपेक्षा करना। (२) किसी की ओर से ध्यान हटा लेना। मुँह बन जाना (बनना)—चेहरे से असंतोष या अप्रसन्नता

प्रकट होना । मुँह बनवाना—किसी बड़े कार्य या बड़ी प्राप्ति की पात्रता अपने में लाना (व्यंग्य) । मुँह बनाना—आकृति से असंतोष सूचित करना। मुँह बिगाड़ना—(१) चेहरे (विशेषतः शव के चेहरे) की आकृति खराब होना। (२) चेहरे पर अप्रसन्नता या असंतोष का भाव आना। (दूसरे का मुँह बिगाड़ना)—बहुत मारना-पीटना । (अपना) मुँह बिगाड़ना—असंतोष या अप्रसन्नता का भाव झलकाना। मुँह बुरा बनाना—असंतोष या अप्रसन्नता सूचित करना। मुँह में कालिख पुतना (लगना)—बहुत बदनामी होना, कलंक लगना। मुँह में कालिख पोतना (लगाना)—कलंक लगाना, बहुत बदनामी करना। (अपना) मुँह मोड़ना—(१) उपेक्षा प्रकट करना। (२) किसी ओर से ध्यान हटा लेना। (३) अस्वीकार कर देना। दूसरे का मुँह मोड़ना—पराजित कर देना। (किसी के) मुँह लगना—(१) किसी का बहुत लाड़-प्यार देखकर शोख या उद्दंड हो जाना। (२) सवाल-जवाब या तर्क-कुतर्क करना। मुँह लगाना—(१) लाड़-प्यार करके शोख या उद्दंड बनाना। (२) ध्यान देना, सहर्ष स्वीकार करना। मुँह न लगाई—ध्यान भी न दिया, सर्वथा उपेक्षा की। उ.—अष्टसिद्धि बहुरी रहैं आई। रिषभदेव तै मुँह न लगाई—५-२। मुँह लपेटकर पड़ना (पड़ रहना)—बहुत दुखी हो जाना। मुँह लाल करना—(१) मुँह पर कई थप्पड़ या चाँटे मारना। (२) पान से सत्कार करना। मुँह लाल होना—क्रोध से चेहरा तमतमा आना। मुँह सफेद होना—भय या लज्जा से चेहरे का रंग उड़ जाना। मुँह सिकोड़ना—अप्रसन्नता या असंतोष प्रकट करना। (अपना) मुँह सुजाना—असंतोष या अप्रसन्नता सूचित करने के लिए मौन हो जाना। (किसी का) मुँह सुजाना—मुँह पर बहुत थप्पड़ मारना। मुँह सुर्ख होना—क्रोध से चेहरा उदास हो जाना। मुँह सूखना—भय, लज्जा या अपमान से चेहरा उदास हो जाना।

(४) किसी वस्तु का ऊपरी खुला हुआ भाग। (५) छेद, सूराख। (६) लिहाज, मुरव्वत।

मुहा०—मुँह करना—लिहाज या मुरव्वत करना। मुँह देखे का—ऊपरी मन का, दिखावटी। मुँह पर जाना—लिहाज या मुरव्वत करना। मुँह मुलाहजे का—जान-पहचान का। मुँह रखना—लिहाज या मुरव्वत करना।

(७) योग्यता, सामर्थ्य।

मुहा०—(अपना) मुँह तो देखो—अपनी योग्यता या पात्रता का ध्यान तो रखो (व्यंग्य)। मुँह देखकर बात करना—योग्यता या पात्रता समझकर वैसी ही बात करना।

(८) हिम्मत, साहस।

मुहा०—मुँह पड़ना—हिम्मत या साहस होना।

(९) ऊपर की सतह या किनारा।

मुहा०—मुँह तक आना (भरना)—लबालब भरना।

लोकोक्ति—छोटे मुँह बड़ी बात कहत (कहौ)—अपनी अवस्था, स्थिति या योग्यता को भुलाकर लंबी-चौड़ी बातें करता है। उ.—(क) छोटे मुँह बड़ी बात कहत, अबहीं मरि जैहै—५८९। (ख) छोटे मुँह बड़ी बात कहौ किनि आपु सँभरे—१०१६।

मुँहअखरी—वि. [हिं. मुँह+अक्षर] जबानी, मौखिक।

मुँहचोर—वि. [हिं. मुँह+चोर] सामने न आनेवाला।

मुँहछुआई—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुँह+छूना] ऊपर मन से या केवल नाम को कुछ कहना।

मुँहछुट—वि. [हिं. मुँह+छूटना] जो मन में आ जाय वही बेसमझे-बूझे कह डालने वाला।

मुँहजोर—वि. [हिं. मुँह + जोर] (१) बकवादी। (२) मुँहफट। (३) शीघ्र ही वश में न आनेवाला, उद्दंड।

मुँहजोरी—वि. [हिं. मुँहजोर] 'मुँहजोर' होने का भाव।

मुँहदिखराई, मुँहदिखरावनी, मुँहदिखाई, मुँहदेखनी, मुँहदेखरावनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुँह+दिखाई] नयी वधू का मुँह देखने की क्रिया, भाव या उसके फलस्वरूप दिया जानेवाला धन।

मुँहदेखा—वि. [हिं. मुँह+देखना] जो हृदय से न हो, दिखावटी, ऊपरी भाव का।

मुँहपड़ा—वि. [हिं. मुँह+पड़ना] प्रसिद्ध।

मुँहफट—वि. [हिं. मुँह + फटना] **बेसमझे-बूझे जो भी मन में आ जाय, कह देनेवाला ।**

मुँहबोला—वि. [हिं. मुँह + बोलना] **जिससे रक्त का नहीं; केवल वचन या बात का संबंध हो ।**

मुँहभराई—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुँह + भरना] (१) **मुँह भरने की क्रिया, भाव या पारिश्रमिक । (२) रिश्वत, घूस ।**

मुँहमाँगा—वि. [हिं. मुँह + माँगना] **मनचाहा ।**

मुँहमाँगे—वि. बहु. [हिं. मुँहमाँगा] **इच्छा के अनुकूल ।** उ.—तो देखत बलि खाइगो, मुँहमाँगे फल देइ-९०८ ।

मुँहमाग्यो, मुँहमाग्यौ—वि. [हिं. मुँहमाँगा] **मनचाहा, इच्छानुकूल ।** उ.—(क) जो तुम मुँहमाँग्यौ फल पावहु—१०१६ । (ख) आजु हरि पायौ है मुँह माग्यो—१९७२ ।

मुँहा-चाही—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुँह + चाहना] **दिखा-देखी ।**

मुँहामुँह—क्रि. वि. [हिं. मुँह + मुँह] **लबालब, भरपूर ।**

मुँहासा—संज्ञा पुं. [हिं. मुँह + आसा] **मुँह पर युवावस्था में निकलनेवाली फुंसियाँ ।**

मुअना, मुअनो—क्रि. अ. [हिं. मरना] **मरना, मृत होना ।**

मुई—क्रि. अ. [हिं. मुअना] **नष्ट हो गयी, रह न गयी ।** उ.—हरि-दरसन की साध मुई—१४३३ ।

मुए—क्रि. अ. [हिं. मुअना] **मर गये ।** उ.—(क) बूड़ि मुए, कै कहुँ उठि गए—१-२८४ । (ख) अर्जुन कह्यौ, सबै लरि मुए—१-२८८ ।

मुएँ—क्रि. अ. [हिं. मुअना] **मरने (पर), मर जाने (से) ।** उ.—उनके मुएँ हिऐं सुख होइ—१-२८९ ।

मुकट—संज्ञा पुं. [सं. मुकुट] **मुकुट ।**

मुकटा—संज्ञा पुं. [देश.] **रेशमी धोती ।**

मुकतई—संज्ञा स्त्री. [सं. मुक्त] (१) **मुक्ति, मोक्ष ।** (२) **छुटकारा ।**

मुकता—संज्ञा पुं. [सं. मुक्ता] **मोती ।**

वि. [हिं. अ + मुकना] **बहुत, अधिक, पर्याप्त ।**

मुकताइ, मुकताई—संज्ञा स्त्री. [सं. मुक्ति] (१) **मुक्त होने का भाव ।** (२) **मुक्ति पाने की पात्रता ।**

मुकताफल, मुकताहल—संज्ञा पुं. [सं. मुक्ताफल] **मोती ।** उ.—सूरदास मुकताहल भोगी हंस ज्वारि को चुनही—३०१३ ।

मुकति—संज्ञा स्त्री. [सं. मुक्ति] (१) **मुक्ति, मोक्ष ।** (२) **छुटकारा ।**

मुकदमा—संज्ञा पुं. [अ. मुकद्दमा] **अभियोग ।**

मुकना, मुकनो—संज्ञा पुं. [हिं. मकुना] (१) **हाथी जिसके दाँत न हों ।** (२) **पुरुष जिसके मूँछ न हो ।**

क्रि. अ. [सं. मुक्त] **मुक्त होना ।**

मुकरना—क्रि. अ. [सं. मा = न, नहीं + करना] **कही हुई बात या काम से हट जाना, नटना ।**

वि.—**कुछ कहकर मुकर जानेवाला ।**

मुकरनी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुकरना] (१) **मुकरने या नटने की क्रिया ।** (२) **चार चरणों की एक कविता जिसके तीन चरणों का आशय दो जगह घट सकता है और चौथे चरण में किसी अन्य आशय को सूचित करके या अन्य पदार्थ का नाम लेकर, कही हुई बात से जैसे 'मुकरा' जाता है ।**

मुकरनो—क्रि. अ. [हिं. मुकरना] **कही हुई बात या काम से हट जाना ।**

वि.—**कुछ कहकर मुकर जाने वाला ।**

मुकरवा—वि. [हिं. मुकरना] **कहकर मुकर या नट जाने वाला ।** उ.—लोभी, लौंद, मुकरवा, झगरू, बड़ौ पढ़ैलौ, लूटा—१-१८६ ।

मुकराए—क्रि. स. [हिं. मुकराना] **मुक्त करवा दिया ।** उ.—(क) हमैं नंदनंदन मोल लिए । जम के फंद काटि मुकराए, अभय अजाद किए—१-१७१ । (ख) अस्वत्थामा कौं गहि ल्याए । द्रौपदि, सीस मूँड़ि मुकराए—१-२८९ ।

मुकराना, मुकरानो—क्रि. स. [हिं. मुकरना] **मुकरने को प्रवृत्त करना ।**

क्रि. स. [सं. मुक्त + हिं. करना] **मुक्त करना ।**

मुकरायो, मुकरायौ—क्रि. स. [हिं. मुकराना = मुक्त करना] **मुक्त कराया, छुटकारा दिलाया ।** उ.—(क) ग्राह गहे गजपति मुकरायौ, हाथ चक्र लै धायौ—१-१० । (ख) बरुन पास ब्रजपति मुकरायो—१-१७ ।

मुकरावन—वि. [हिं. मुकराना = मुक्त कराना] **मुक्त कराने वाले ।** उ.—गजहित धावन, जन-मुकरावन, बेद बिमल जस गावत—८-४ ।

मुकरि, मुकरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुकरना, मुकरी] चार चरण की एक कविता जिसके प्रथम तीन चरणों के दो आशय होते हैं और चौथे चरण में एक का नाम लेकर दूसरे से जैसे मुकरा जाता है।

मुकर्रर—वि. [अ. मुक़र्रर] (१) निश्चित। (२) नियुक्त।

मुकलाना, मुकलानो—क्रि. स. [सं. मुक्त या मुकलित ?] (१) खोलना। (२) छोड़ना।

मुकाना, मुकानो—क्रि. स. [सं. मुक्त] (१) मुक्त कराना, छुड़ाना। (२) समाप्त या खत्म कराना।

क्रि. अ.—(१) छूटना। (२) समाप्त होना।

मुकाबला—संज्ञा पुं. [अ. मुक़ाबला] (१) मुठभेड़। (२) बराबरी। (३) तुलना। (४) मिलान। (५) लड़ाई।

मुकाम—संज्ञा पुं. [अ. मुक़ाम] (१) पड़ाव। (२) ठहरना।

मुकित—वि. [सं. मुक्त] स्वतंत्र, मुक्त।

मुकियाना, मुकियानो—क्रि. स. [हिं. मुक्की+इयाना] (१) हलके हलके मुक्के या घूँसे लगाकर शरीर के अंगों की शिथिलता दूर करना। (२) आटा गूँधकर मुक्कियों से दबाना। (३) घूँसे मारना।

मुकुंद—संज्ञा पुं. [सं.] मुक्तिदाता विष्णु। उ.—सूरदास प्रभु सब सुख-दाता दीनानाथ मुकुंद मुरारी—१-२२।

वि.—मुक्ति देनेवाले।

मुकु—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मुक्ति। (२) छुटकारा।

मुकुट—संज्ञा पुं. [सं.] राजाओं का शिरोभूषण। उ.—(क) कुंडल-मुकुट प्रभा न्यारी—१-६९। (ख) मुकुट कुंडल पीत पट छबि अनुज भ्राता स्याम—२५६५।

मुकुटी—वि. [सं. मुकुटिन्] जो मुकुट पहने हो।

मुकुटेश्वर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) एक शिवलिंग। (२) एक तीर्थ।

मुकुता—वि. [सं. मुक्त] स्वतंत्र, मुक्त।

मुकुता—संज्ञा पुं. [सं. मुक्ता] मोती। उ.—निरखि कोमल चारु मूरति हृदय मुकुता-दाम—२५६५।

संज्ञा स्त्री.—राधा की एक सखी का नाम। उ.—कहि राधा किन हार चोरायो। .... । अमला अबला कंजा मुकुता हीरा नीला प्यारी—१५८०।

मुकुति—संज्ञा स्त्री. [सं. मुक्ति] (१) मुक्ति, मोक्ष। (२) छुटकारा।

मुकुर—संज्ञा पुं. [सं.] आइना, दर्पण।

मुकुल—संज्ञा पुं. [सं.] कली।

मुकुलना, मुकुलनो, मुकुलाना, मुकुलानो—क्रि. अ. [हिं. मुकुल] (१) (कली का) खिलना। (२) बिखरना, छितरना।

मुकुलित—क्रि. अ. [हिं. मुकुलना] खिलता है।

प्र०—मुकुलित भए—खिल गये। उ.—मुकुलित भए कमल-जाल—६१९।

वि. [सं.] (१) जिसमें कलियाँ आयी हों। (२) खिला हुआ। (३) कुछ कुछ खुलता हुआ। उ.—मुकुलित कुसुम नैन निद्रा तजि रूप-सुधा सियराइ—२८११। (४) झपकता हुआ (नेत्र)। (५) बिखरा या खुला हुआ। (क) मुकुलित कच तन घन कि ओट ह्वै अँसुवन चीर निचोवति—१८००। (ख) मुकुलित केस सुदेस देखिअत नील बसन लपटाए—१० उ०-३८। (६) खिलती या बढ़ती हुई (आयु)। उ.—मुकुलित वय नव किसोर—२३६२।

मुकुली—वि. [सं. मुकुलिन्] जिसमें कलियाँ आयी हों।

मुकुले—क्रि. अ. [हिं. मुकुलना] खिले, विकसित हुए। उ.—मुकुले कमल—१६०८।

मुकेरना, मुकेरनो—क्रि. स. [देश.] नियंत्रण में रखना।

मुकेरैं—क्रि. स. [हिं. मुकेरना] रोके, नियंत्रित किये। उ.—मन बस होत नाहिनैं मेरौं। ...... । कहा करौं यह चरचौ बहुत दिन अंकुस बिना मुकेरैं—१-२०६।

मुक्का—संज्ञा पुं. [सं. मुष्टिका] घूँसा।

मुहा०—मुक्का (सा) लगना—हृदय पर किसी अप्रिय बात या कार्य का आघात लगना।

मुक्की—संज्ञा पुं. [हिं. मुक्का] (१) घूँसा। (२) गूँधे हुए आटे को मुट्ठियों से दबाना।

मुक्त—वि. [सं.] (१) जिसे मुक्ति या मोक्ष मिल गयी हो। (२) बंधन से छूटा हुआ। उ.—मागध हत्यौ मुक्त नृप कीन्है—१-१७।

संज्ञा पुं. [सं. मुक्ता] मोती। उ.—कोटि मुक्त वारौं मुसुकनि पर—३१५४।

मुक्तकंठ—वि. [सं.] (१) चिल्लाकर बोलनेवाला। (२) निसंकोच कहनेवाला। (२) शुद्ध हृदय से कहनेवाला।

मुक्तक—संज्ञा पुं. [सं.] (१) एक अस्त्र। (२) स्फुट या उद्भट काव्य जो प्रसंग से पूर्ण हो।

मुक्तता—संज्ञा स्त्री. [सं.] मुक्त होने का भाव।

मुक्तहस्त—वि. [सं.] खुले हाथ से देनेवाला, बहुत उदार और बड़ा दानी।

मुक्ता—संज्ञा स्त्री. [सं.] मोती।

मुक्ताहल—संज्ञा पुं. [सं.] मोती।

मुक्तामाल, मुक्तामाला—संज्ञा स्त्री. [सं. मुक्ता+माला] मोती की माला। उ.—कंठ मुक्तामाल—१-३०७।

मुक्तावन—वि. [सं. मुक्त] मुक्त करनेवाले। उ.—भक्त हेत देह धरन, पुहुमी की भार हरन जनम जनम मुक्तावन—१०-२५१।

मुक्तावलि, मुक्तावली—संज्ञा स्त्री. [सं. मुक्ता+अवलि] मोती की माला। उ.—कंचन मुकुट कंठ मुक्तावलि मोर पंख छबि छावै—१५४९।

मुक्ताहल—संज्ञा पुं. [सं. मुक्ताफल] मोती। उ.—भूरी के पातन के बदले को मुक्ताहल दैहै—३१०५।

मुक्ति—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) बंधन आदि से छूटने की क्रिया या भाव। (२) दायित्व आदि से छूटने की क्रिया या भाव। (३) जन्म-मरण से छूटने का भाव, मोक्ष। उ.—अद्भुत राम-नाम के अंक। धर्म-अँकुर के पावन द्वै दल मुक्ति-बधू ताटंक—१-९०।

मुक्तिछेत्र, मुक्तिछेत्र—संज्ञा पुं. [सं. मुक्तिक्षेत्र] काशी, वाराणसी।

वि.—जहाँ मुक्ति प्राप्त हो सके। उ.—बन बारा-नसि मुक्तिक्षेत्र है—१-३४०।

मुक्तेश्वर—संज्ञा पुं. [सं.] एक शिवलिंग।

मुख—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मुँह, आनन।

मुहा०—अपने ही मुख बड़े कहाना—अपनी प्रशंसा स्वयं करना। अपने ही मुख बड़े कहावत—अपनी बड़ाई आप ही करते हो, अपने मुँह ही मियाँ मिट्ठू बनते हो। उ.—अपने ही मुख बड़े कहावत हमहूँ जानति तुमकौं—२४९५। जीवत मुख चितए—मुख देखकर ही जीवित रहता है। उ.—चिरंजीव रहौ सूर नंद-सुत जीवत-मुख चितए—३१४१। मुख जोना—आश्रित या सहारे होना। बिषयिनि के मुख जोए—विलास-वासना में ही लिप्त रहा। उ.—तिलक बनाइ चले स्वामी ह्वै बिषयिनि के मुख जोए—१-५२। मुख जोवै—मुँह ताकता है। उ.—समुझि समुझि गृह आरति अपनी धर्मपुत्र मुख जोवै—१-२५९। (किसी के) मुख न समाना—रोक न पाना, किसी का मुख बंद न कर पाना। काहू मुख न समाउँ—किसी का मुख बंद नहीं कर पाती। उ.—सुनि न जात घर घर को घेरा काहू मुख न समाउँ—१२-२२। मुख मोड़ना (मोरना)—मुँह फेर लेना, पूर्व संबंध की जरा भी परवाह न करके बिलकुल ध्यान हटा लेना। मोरि रहै मुख—मुख मोड़ लेती है, पूर्व संबंध को बिलकुल भुलाकर सर्वथा उपेक्षा करती है। उ.—चलत न काऊ संग चलै, मोरि रहै मुख नारि—२-२९। मोरि मुख—संबंध को सर्वथा भुलाकर, उपेक्षा करके। उ.—चलत रही चित चोरि, मोरि मुख, एक न पग पहुँचायौ—२-३०। अब न बनै मुख मोरै—अब उपेक्षा नहीं कर सकते, अब उपेक्षा करने से काम नहीं बन सकता। उ.—जुग-जुग बिरद यहै चलि आयौ, सत्य कहत अब हो रे। सूरदास प्रभु पछिले खेवा अब न बनै मुख मोरे—४८८। मुख सँभाल कर बोलना—परिस्थिति और व्यक्ति देखकर उचित बात करना। मुख सँभारि बोलत नहिं बात—परिस्थिति और व्यक्ति देखकर उचित बात नहीं करती, मर्यादा और शिष्टाचार का ध्यान रखकर नहीं बोलती। उ.—ये सब ढीठ गरब गोरस कैं, मुख सँभारि बोलति नहिं बात—१०-३०८।

(२) द्वार, दरवाजा। (३) नाटक की एक संधि। (४) आदि, आरंभ। (५) किसी वस्तु के आगे या पहले आनेवाली वस्तु।

वि.—मुख्य, प्रधान।

मुखड़ा,—संज्ञा पुं. [सं. मुख+हिं. ड़ा] मुख, आनन।

मुखपट—संज्ञा पुं. [सं.] घूँघट, अवगुंठन।

मुखबंध, मुखबंधन—संज्ञा पुं. [सं.] ग्रंथ की भूमिका।

मुखभूषण, मुखभूषन—संज्ञा पुं. [सं. मुखभूषण] पान।

मुखमाँगा, मुखमाँगो—वि. [सं. मुख+हिं. माँगना] जो माँगा गया हो, इच्छित, अभीष्ट। उ.—मुखमाँगो

पैंहौ सूरज प्रभु साहुहिं आनि दिखावहु—३३४०।

मुखर—वि. [सं.] (१) अप्रिय या कटु भाषी। (२) बोलने वाला, बोलता हुआ।

मुखरना, मुखरनो—क्रि. स. [सं. मुखर] बोलना।

मुखरा—संज्ञा पुं. [हिं. मुखड़ा] मुख, आनन।

मुखरित—वि. [सं. मुखर] बोलती या बजती हुई। उ.—कटि पट पीत मेखला मुखरित, पाइनि नूपुर सोहै—४५१।

प्र०— मुखरित है—(स्वर) निकलता है, बोलता है। उ.—मनु मधुकर बैठयौ अंबुज पर मुखरित है सुर भीनौ—सारा० १०५५।

मुखवासिनी—संज्ञा स्त्री. [सं.] सरस्वती।

मुखस्थ—वि. [सं.] जो कंठ हो, कंठस्थ।

मुखाग्र—वि. [सं.] जो कंठ हो, कंठस्थ।

मुखापेक्षी—वि. [सं. मुखापेक्षिन्] दूसरों के सहारे या आश्रित रहनेवाला, पराश्रित।

मुखारी—संज्ञा स्त्री. [सं. मुख] मुख-शुद्धि के लिए दतौन आदि करने की क्रिया। उ.—(क) दतवनि लै दोउनि करी मुखारी—४०७। (ख) करी मुखारी अतुरई—१५४०।

मुखिया—संज्ञा पुं. [सं. मुख्य+इया] (१) नेता, प्रधान, अगुआ। (२) वल्लभ-संप्रदायी मंदिरों में पूजन करने और भोग लगानेवाला व्यक्ति।

मुख्य—वि. [सं.] प्रधान, श्रेष्ठ।

मुख्यता—संज्ञा स्त्री. [सं.] प्रधानता, श्रेष्ठता।

मुगदर, मुग्दर—संज्ञा पुं. [सं. मुग्दर] लकड़ी की 'जोड़ी' जिसे घुमाकर व्यायाम किया जाता है।

मुगध—वि. [सं. मुग्ध] (१) मोह या भ्रम में पड़ा हुआ। (२) आसक्त, मोहित। उ.—वै किसोर कमनीय मुगध मैं लुबधत हूँ न डरी—१४५०।

मुगल—संज्ञा पुं. [फ़ा. मुगल] मुसलमानों का एक वर्ग।

मुगलई, मुगलाई—वि. [हिं. मुगल] मुगल-जैसा।

मुगलानी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुगल] मुगल स्त्री।

मुगुध—वि. [सं.] मोह या भ्रम में पड़ा हुआ, मूढ़। उ.—सुनु री ग्वारि मुगुध गँवारि—११९१।

मुग्घम—वि. [देश.] जो (बात) धीरे या संकेत से कही जाय, जो (काम) कम खर्च में चुपचाप कर लिया जाय।

मुग्ध—वि. [सं.] (१) भ्रम या मोह में पड़ा हुआ, मूढ़। उ.—(क) मूरख मुग्ध अजान मूढ़मति नाहीं कोऊ तेरौ—१—३१९। (ख) ऐसे प्रिय सौं मान करति है तो सौ मुग्ध न दूजी—२२७५। (२) सुंदर। (३) नया। (४) आसक्त, मोहित।

मुग्धकर—वि. [सं.] मुग्ध करनेवाला, मोहक।

मुग्धता—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) मूढ़ता। (२) सुंदरता। (३) मोहित या आसक्त होने का भाव।

मुग्धा—संज्ञा स्त्री. [सं.] नायिका जो युवती तो हो पर जिसमें काम-चेष्टा न हो।

मुचकुन्द, मुचुकुन्द—संज्ञा पुं. [सं. मुचुकुंद] मांधाता का पुत्र जो देवताओं से गहरी निद्रा का वर माँगकर बहुत समय तक एक गुफा में सोता रहा। जब श्री कृष्ण का पीछा करता हुआ, जरासंध का सहायक कालयवन वहाँ आया, तब श्रीकृष्ण उसे अपना पीताम्बर उढ़ाकर चले गये। कालयवन ने सोते हुए मुचुकुंद को श्री कृष्ण समझ कर लात मारी। निद्रा से इस प्रकार जगाये जाने से क्रुद्ध होकर मुचुकुंद ने इस प्रकार कालयवन को देखा कि वह वहीं भस्म हो गया। उ.—कालजवन मुचुकुंदहि सौं हरि भसम करायौ—ना० ४९८१।

मुचना, मुचनो—क्रि. स. [सं. मोचन] मुक्त होना।

क्रि. अ. [हिं. मोच] अंग में मोच आना।

मुचाई—क्रि. स. [हिं. मूँदना] (आँख) बंद करवायी।

संज्ञा स्त्री.—(आँख) मुँदाने की क्रिया।

यौ०—आँखि मुचाई—आँख मूँदने का खेल, आँख मिचौनी। उ.—इहँ हरि खेलत आँख मुचाई—३४०९।

मुछन्दर—वि. [हिं. मूँछ] बड़ी बड़ी मूँछोंवाला।

मुजरा—संज्ञा पुं. [अ.] (१) धन जो किसी धनराशि से काट लिया गया हो। (२) बड़े को किया गया अभिवादन। (३) वेश्या का गान जिसमें वह नृत्य न करे।

मुजरिम—संज्ञा पुं. [अ.] अभियुक्त, अपराधी।

मुझ—सर्व. [हिं. मुझे] 'मैं' का रूप जो कर्त्ता और संबंध के अतिरिक्त अन्य कारकों में विभक्ति लगाने के पूर्व दिया जाता है।

मुझे—सर्व. [सं. मह्यम्, प्रा० मज्झम] 'मैं' का वह रूप जो उसे कर्म और संप्रदान कारकों में प्राप्त होता है।

मुटका—संज्ञा पुं. [हिं. मोटा] एक तरह की रेशमी धोती।
वि. [हिं. मोटा] मोटा-ताजा।

मुटाई—संज्ञा स्त्री. [हिं. मोटा + ई] (१) मोटापन। (२) घमंड, अहंकार।
मुहा०—मुटाई चढ़ना—धन आदि का घमंड होना। मुटाई झाड़ना—घमंड दूर करना।

मुटाना, मुटानो—क्रि. अ. [हिं. मोटा + आना] (१) मोटा या स्थूल होना। (२) घमंडी होना।

मुटिया—संज्ञा पुं. [हिं. मोट] बोझा ढोनेवाला।

मुट्ठा—संज्ञा पुं. [हिं. मूठ] (१) उतना पूला जो मुट्ठी में आ सके। (२) चंगुल भर वस्तु। (३) छड़ी आदि का मुट्ठी से पकड़ा जानेवाला भाग।

मुट्ठी—संज्ञा स्त्री. [सं. मुष्टिका, प्रा० मुट्ठिआ] (१) बंद या बँधी हुई हथेली। (२) उतनी चीज जो हथेली बंद करने पर आ सके। उ.—मुट्ठी एक प्रथम जब लीन्हें खान लगे जदुनाथ—सारा. ८१५।
मुहा०—मुट्ठी में—वश या अधिकार में। मुट्ठी गरम करना—(१) धन देना। (२) रिश्वत देना। मुट्ठी बंद या बँधी होना—भेद या रहस्य प्रकट न होना। मुट्ठी में रखा होना—पास या समीप होना।

मुठभेड़—संज्ञा स्त्री. [हिं. मूठ + भिड़ना] (१) टक्कर, भिड़ंत। (२) भेंट, सामना।

मुठि, मुठिका—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुट्ठी] (१) मुट्ठी। (२) घूँसा, मुक्का।

मुठिया—संज्ञा स्त्री. [सं. मुष्टिका] (१) दस्ता, बेंट। (२) छड़ी आदि का हाथ में पकड़ा जानेवाला भाग।

मुठियाना, मुठियानो—क्रि. स. [हिं. मुट्ठी] मुट्ठी में लेकर धीरे धीरे दबाना।

मुठी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुट्ठी] मुट्ठी। उ.—मुठी भरि लियौ सब नाइ मुख हीं दियौ सूर प्रभु पियौ दव ब्रज जन बचायौ—५९६।

मुड़क—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुरकना] मुड़कने या मुरकने की क्रिया या भाव।

मुड़कना, मुड़कनो—क्रि. अ. [हिं. मुड़ना] (१) झुकना, मुड़ना। (२) फिर या घूम जाना। (३) वापस होना। (४) अंग का मोच खाना। (५) रुकना, हिचकना। (६) चौपट होना।

मुड़ना, मुड़नो—क्रि. अ. [सं. मुरण] (१) झुकना, घुमाव लेना। (२) फिर या घूम जाना। (३) किसी अन्य दिशा की ओर बढ़ना। (४) लौटना।
क्रि. अ. [हिं. मुँड़ना] (१) मूँड़ा जाना। (२) ठगा जाना।

मुडला, मुड़ला—वि. पुं. [हिं. मुंडा, मुँडला] जिसके सिर पर बाल न हों, मुंडा।

मुडली, मुड़ली—वि. स्त्री. [हिं. मुडला] जिस (स्त्री) के सिर पर बाल न हों, मुंडी। उ.—मुडली पटिया पारि सँवारै कोढ़ी लावै केसरि—३०२६।

मुडवाना, मुडवानो, मुड़वाना, मुड़वानो—क्रि. स. [हिं. मूँड़ना] (१) बाल मूँड़ने को प्रवृत्त करना। (२) ठगने को प्रवृत्त करना।
क्रि. स. [हिं. मुड़ना] मुड़ने, झुकने, घूमने या लौटने को प्रवृत्त करना।

मुड़वारी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मूँड़ + वारी] (१) दीवाल का सिरा, मुंडेरी। (२) सिर की दिशा, सिरहाना।

मुड़हर—संज्ञा पुं. [हिं. मूँड़ + हर] साड़ी या दुपट्टे का वह भाग जो सिर पर रहता है।

मुडाना, मुडानो, मुड़ाना, मुड़ानो—क्रि. स. [सं. मुंडन] सिर के सब बाल साफ करा देना।

मुडिया—संज्ञा पुं. [हिं. मूँड़ना] वह (साधु, सन्यासी या जोगी) जिसका सिर मुंडा हुआ हो। उ.—यह निर्गुन लै ताहि सुनावहु जे मुडिया बसैं कासी—३१०८।

मुहतरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मोती + सं. श्री] मोती की कंठी या माला। उ.—ग्रीव मुतसिरी तोरि कै अँचरा सों बाँध्यौ—१५४१।

मुतियनि—संज्ञा पुं. सवि. बहु. [हिं. मोती] मोतियों से। उ.—नंदन आँगन लिपाइ मुतियनि चौकें पुराइ-१०-९५।

मुतिलाड़ू—संज्ञा पुं. [हिं. मोती + लड्डू] मोतीचूर का लड्डू। उ.—मुतिलाड़ू हैं अति मीठे।

मुतिहरा, मुतेहरा—संज्ञा पुं. [हिं. मोती + हार] कलाई का एक गहना।

मुत्तिय, मुत्ती—संज्ञा स्त्री. [सं. मुक्ता] मोती ।

मुद—संज्ञा पुं. [सं.] हर्ष, प्रसन्नता ।

मुदगर—संज्ञा पुं. [हिं. मुगदर] (१) मुगदर । (२) एक प्राचीन अस्त्र जिसके सिरे पर गोल पत्थर लगा होता था । उ.—मुसल मुदगर हनत—१-१२० ।

मुदना, मुदनो—क्रि. अ. [सं. मोद] प्रसन्न होना ।

मुदर्रिस—संज्ञा पुं. [अ.] पाठशाला का अध्यापक ।

मुदवंत—वि. [सं. मोद+हिं. वंत] प्रसन्न, हर्षित ।

मुदा—संज्ञा स्त्री. [सं.] प्रसन्नता, हर्ष ।

अव्य०—[अ० मुद्आ] (१) तात्पर्य यह कि । (२) लेकिन, परंतु ।

मुदाम—क्रि. वि. [फ़ा.] (१) सदा । (२) निरंतर ।

मुदामी—वि. [फ़ा.] सब कालों में बना रहनेवाला ।

मुदित—वि. [सं.] प्रसन्न आनंदित । उ.—सेमर-फूल सुरँग अति निरखत मुदित होत खगभूप—१-१०२ ।

मुदिता—संज्ञा स्त्री [सं.] वह परकीया नायिका जो पर पुरुष-प्रीति की आकस्मिक प्राप्ति से सुखी हो । (२) प्रसन्नता ।

वि. स्त्री.—आनंदिता, प्रसन्नमना ।

मुदिर—संज्ञा पुं. [सं.] बादल, मेघ ।

मुद्गर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) कसरत करने की 'जोड़ी' । (२) एक प्राचीन अस्त्र जिसके सिरे पर गोल पत्थर लगा होता था ।

मुद्दई—संज्ञा वि. [अ०] (१) दावा करनेवाला । (२) शत्रु, बैरी ।

मुद्दत—संज्ञा स्त्री. [अ.] (१) अवधि । (२) बहुत दिन ।

मुद्ध—वि. [सं. मुग्ध] (१) मूढ़ । (२) आसक्त ।

मुद्रण—संज्ञा पुं. [सं.] छपाई ।

मुद्रांक—संज्ञा पुं. [सं.] चिन्ह जो मुद्रा पर हो ।

मुद्रांकन—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मु ा अंकित करने का काम । (२) छापने का काम ।

मुद्रांकित—वि. [सं.] (१) जिस पर मुद्रा अंकित हो । (२) जिस (वैष्णव) के शरीर पर विष्णु के विभिन्न आयुध अंकित हों ।

मुद्रा—संज्ञा स्त्री. [सं.] (१) नाम की छाप या मोहर । (२) सिक्का । (३) अँगूठी, मुद्रिका । उ.—बनचर कौन देस तैं आयो । कहँ वै राम कहाँ वै लछिमन क्यौं करि मुद्रा पायौ—९-८८ । (४) काँच या स्फटिक का बना एक आभूषण जिसे गोरखपंथी साधु कान की लौ के बीच में छेद करके पहनते हैं । उ.—(क) सृंगी मुद्रा कनक खपर लै करिहौं जोगिन भेस—२७५४ । (ख) मुद्रा भस्म बिषान त्वचा मृग ब्रज जुवतिन मन भाए—२९९१ । (ग) मुद्रा न्याय अंग अंग भूषन पति ब्रत तैं न टरौं—३०२७ । (५) हाथ, पाँव, मुख आदि की कोई स्थिति । (६) मुख की आकृति । (७) विष्णु के आयुधों के चिन्ह जो वैष्णव अपने शरीर पर गुदवाता है । (८) हठ योग का विशेष अंग-विन्यास । (९) एक काव्यालंकार ।

मुद्राचक—संज्ञा स्त्री. [सं.] विष्णु के आयुधों के चिन्ह जो वैष्णव बाहु तथा अन्य अंगों पर गुदवाते हैं । यह मुद्रा दो प्रकार की होती है—शीतल और तप्त । शीतल मुद्रा चंदन आदि से की जाती है ; पर तप्त मुद्रा तपे हुए ठप्पों से सामान्यतया द्वारका में दागी जाती है । उ.—मूँड़्यौ मूँड़, कंठ बन माला मुद्रा-चक्र दियै—१-१७१ ।

मुद्रा कान्हड़ा—संज्ञा पुं. [सं.] एक राग ।

मुद्रा टोरी—संज्ञा स्त्री. [सं.] एक रागिनी ।

मुद्रावलि, मुद्रावली—संज्ञा स्त्री. [सं. मुद्रा+अवलि] (१) कमर का एक आभूषण । उ.—खसि मुद्रावलि चरन अरुझी गिरी धरनि बलहीन—३४५१ । (२) चिन्ह, मुद्रा । उ.—राजति रुचिर कपोल महावर रद मुद्रावलि नाह दई री—२११५ ।

मुद्रिक, मुद्रिका—संज्ञा स्त्री. [सं. मुद्रिका] (१) अँगूठी । उ.—(क) कनक बलय मुद्रिका मोदप्रद—१-६९ । (ख) अब परतीति भई मन मोरैं संग मुद्रिका लाए—९-९० । (२) कुश की अँगूठी जिसे अनामिका में पहन कर पितृ-कार्य या तर्पण किया जाता है, पवित्री, पैंती । (३) मुद्रा, सिक्का ।

मुद्रित—वि. [सं.] (१) अंकित किया हुआ । (२) मुँदा हुआ, बंद । उ.—(क) निसि मुद्रित प्रातहिं ए बिगसत, ए बिगसत दिनराति—१३४९ । (ख) नैन

मुद्रित सकुच जैसे उदय ससि जलजात—३१३० ।
(२) छोड़ा या त्यागा हुआ ।

मुधा—क्रि. वि. [सं.] व्यर्थ, वृथा ।
वि.—(१) व्यर्थ का । (२) मिथ्या ।
संज्ञा पुं.—वह जो सत्य न हो, असत्य ।

मुनक्का—संज्ञा स्त्री. [अ. मुनक्का] एक तरह की बड़ी किशमिश या सूखा हुआ अंगूर ।

मुनरा—संज्ञा पुं. [सं. मुद्रा] कान का एक गहना ।

मुनरी—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुँदरी] अँगूठी, मुँदरी ।

मुनादी—संज्ञा स्त्री. [अ.] घोषणा, ढिंढोरा, डुग्गी ।

मुनाफा—संज्ञा पुं. [अ. मुनाफ़ा] लाभ, नफा ।

मुनार, मुनारा—संज्ञा पुं. [हिं. मीनार] मीनार ।

मुनासिब—वि. [अ.] उचित ।

मुनिंद्र—संज्ञा पुं. [सं. मुनि + इंद्र] मुनियों में श्रेष्ठ ।

मुनि—संज्ञा पुं. [सं.] (१) मननशील महात्मा, त्यागी, तपस्वी । उ.—मुनि सराप तैं भए जमलतरु—१-७ । (२) सात की संख्या ।

मुनिजनियाँ—संज्ञा पुं. बहु. [सं. मुनि + जन] अनेक मुनि । उ.—सूर स्याम की अदभुत लीला नहिं जानत मुनिजनियाँ—१०-८३ ।

मुनियाँ—संज्ञा स्त्री. [देश.] 'लाल' पक्षी की मादा ।

मुनींद्र—संज्ञा पुं. [सं.] मुनियों में श्रेष्ठ ।

मुनी—संज्ञा पुं. [सं. मुनि] तपस्वी महात्मा ।

मुनीब, मुनीम—संज्ञा पुं. [अ. मुनीब] (१) नायब, सहायक । (२) हिसाब-किताब लिखनेवाला ।

मुनीश, मुनीश्वर, मुनीस, मुनीस्वर—संज्ञा पुं. [सं. मुनीश, मुनीश्वर] मुनियों में श्रेष्ठ ।

मुनैयनि—संज्ञा स्त्री. बहु. [हिं. मुनियाँ] 'लाल' पक्षी की मादाएँ । उ.—मनु लाल मुनैयनि पाँति पिंजरा तोरि चली—१०-२४ ।

मुन्ना, मुन्नू—संज्ञा पुं. [देश०] छोटों के लिए स्नेह सूचक शब्द या संबोधन ।

मुफ्त—वि. [अ. मुफ़्त] बिना दाम का ।

मुबारक—वि. [अ.] शुभ, मंगलमय ।

मुमकिन—वि. [अ.] जो हो सकता हो, संभव ।

मुमुक्षा—संज्ञा स्त्री. [सं.] मोक्ष की इच्छा ।

मुमुक्षु—वि. [सं.] मोक्ष की इच्छा रखनेवाला ।

मुयो, मुयौ—क्रि. अ. [हिं. मुवना] मर गया । उ.—मुयौ असुर सुर भए सुखारी—७-२ ।

मुरंडा, मुरंदा—संज्ञा पुं. [देश. मुरंदा] भुने हुए गेहूँ के दानों को गुड़ में मिलाकर बनाया गया लड्डू ।
वि.—सूखा हुआ ।
मुहा०—मुरंडा होना—सूखकर काँटा होना ।

मुर—संज्ञा पुं. [सं.] (१) बेठन । (२) एक दैत्य जिसे मारने से विष्णु 'मुरारि' कहलाये । उ.—मधु-कैटभ मथन मुर भौम केसी भिदन कंस कुल काल अनुसाल हारी—१० उ०-५० ।

मुरक—संज्ञा स्त्री. [हिं. मुरकना] मुड़ने-मुँड़कने की क्रिया या भाव ।

मुरकना, मुरकनो—क्रि. अ. [हिं. मुड़ना] (१) झुकना, मुड़ना । (२) घूम या फिर जाना । (३) वापस होना । (४) अंग का मोच खाना । (५) रुकने लगना, हिचकना । (५) नष्ट या चौपट होना ।

मुरकाना, मुरकानो—क्रि. स. [हिं. मुरकना] (१) झुकाना, मोड़ना । (२) फेरना, घुमाना । (३) वापस लौटाना । (४) अंग में मोच लाना । (५) रोकना, हिचकाना । (६) नष्ट या चौपट करना ।

मुरकी—क्रि. अ. [हिं. मुरकना] रुकी, हिचकने लगी । उ.—लोचन भरि भरि दोऊ माता कनछेदन देखत जिय मुरकी—१०-१८० ।
संज्ञा स्त्री.—कान में पहनने की बाली ।

मुरखाइ, मुरखाई—संज्ञा स्त्री. [सं. मूर्ख] मूर्खता ।

मुरगा—संज्ञा पुं. [फा. मुर्ग़] एक प्रसिद्ध पक्षी ।

मुरगाबी—संज्ञा स्त्री. [फा. मुरग़ाबी] एक पक्षी ।

मुरचंग, मुरचंगा—संज्ञा पुं. [हिं. मुहचंग] ताल देनें का एक बाजा, मुँहचंग ।

मुरचा—संज्ञा पुं. [हिं. मोरचा] (१) लोहे पर लगने वाला जंग, मोरचा । (२) दर्पण पर जमा हुआ मैल ।

मुरछना, मुरछनो—क्रि. अ. [सं. मूर्च्छन] (१) शिथिल होना । (२) अचेत, बेसुध या बेहोश होना ।

मुरछल, मुरछला—संज्ञा पुं. [हिं. मोरछल] मोर-पंख का बना हुआ चँवर ।

मुरछा—संज्ञा स्त्री. [सं. मूर्च्छा] **बेहोशी।**

मुरछाइ, मुरछाई—क्रि. अ. [हिं. मुरछाना] **मूर्छितहोकर।** उ.—सैन्य के लोग पुनि बहुत घायल किये लरचो ध्वजा धरि धर परचो मुरछाइ—१० उ.-५६।

मुरछाना, मुरछानो—क्रि. अ. [सं. मूर्च्छा] **अचेत होना।**

मुरछायो, मुरछायौ—क्रि. अ. [हिं. मुरछाना] **मूर्छित हुआ।** उ.—लगत त्रिसूल इन्द्र मुरछायौ—६-५।

मुरछावंत—वि. [सं. मूर्च्छा + वंत] **बेहोश, अचेत।**

मुरछि—क्रि. अ. [हिं. मुरछना] **मूर्छित होकर।** उ.—सुनि नंद ब्याकुल ह्वै परे मुरछि धरनी—२६६२।

मुरछित, मुरछी—वि. [सं. मूर्च्छित] **अचेत, बेहोश।** उ.—जो देखे द्रुम के तरे मुरछी सुकुमारी—१७९९।

मुरछे—वि. [सं. मूर्च्छित] **सुप्त, सोता हुआ।** उ.—इहि बिधि बचन सुनाय स्याम घन मुरछे मदन जगावते—२७३५।

मुरज—संज्ञा पुं. [सं.] **मृदंग, पखावज।** उ.—ताल मुरज रबाब बीना किन्नरी रस सार—१७४५।

मुरझना, मुरझनो—क्रि. अ. [सं. मूर्च्छन] (१) **अचेत होना।** (२) **कुम्हलाना।** (३) **उदास होना।**

मुरझाइ—क्रि. अ. [हिं. मुरझाना] (१) **मूर्छित होकर।** उ.—(क) आनि अँचयौ जल जमुन कौ तबहिं गए मुरझाइ—५०४। (ख) धरनि परी मुरझाइ जसोदा—५४४। (२) **खिन्न या उदास होकर।**

प्र०—रहे मुरझाइ—**अत्यन्त खिन्न या उदास हो गये हैं।** उ.—मदनगुपाल लाल के बिछुरे प्रान रहे मुरझाइ—३१५०।

मुरझाई—क्रि. अ. [हिं. मुरझाना] (१) **मूर्छित या मृत होकर।** उ.—पय सँग प्रान ऐंचि हरि लीनौ, जोजन एक परी मुरझाई—१०-५१। (२) **खिन्न या उदास होकर।**

प्र०—गईं मुरझाई—**बहुत खिन्न या उदास हो गयीं।** उ.—ब्रज जुवती अति गईं मुरझाई—११४३। गए मुरझाई—**बहुत खिन्न या उदास हो गये।** उ.—सुनत सूर यह बात चकित पिय अतिहिं गए मुरझाई—२०१९

मुरझात—क्रि. अ. [हिं. मुरझाना] **खिन्न या उदास होता है।** उ.—जहाँ खेलन कौ ठौर तुम्हारे, नंद देखि मुरझात—३४३३।

मुरझान—क्रि. अ. [हिं. मुरझाना] **मूर्छित हो गया।** सूर सकत जैसे लछिमन तन बिह्वल होइ मुरझान—२७८८।

मुरझाना—क्रि. अ. [सं. मूर्च्छन] (१) **मूर्छित होना।** (२) **कुम्हलाना, सूखने पर होना।** (३) **सुस्त होना।**

मुरझाने—क्रि. अ. [हिं. मुरझाना] **अचेत या बेसुध हो गये।** उ.—रति रन जुद्ध जाम तन नीके सेज परे उठि पुनि मुरझाने—१६०७।

मुरझानो—क्रि. अ. [सं. मूर्च्छन] (१) **अचेत या बेसुध होना।** (२) **कुम्हलाना।** (३) **उदास होना।**

मुरझायो, मुरझायौ—क्रि. अ. [हिं. मुरझाना] (१) **मूर्छित, अचेत या बेसुध हो गया।** उ.—लगत त्रिसूल इंद्र मुरझायौ—६-५। (२) **कुम्हला गया, सूख गया।** उ.—पौढ़ि रहे धरनी पर तिरछे बिलखि बदन मुरझायौ—३५६।

मुरझि—क्रि. अ. [हिं. मुरझना] **अचेत या बेसुध होकर।** उ.—सूरदास प्रभु पठै मधुपुरी मुरझि परीं ब्रजबाल—२५४०।

मुरझैया—क्रि. अ. [हिं. मुरझना] **अचेत या बेसुध होकर।** उ.—पुनि यह कहति मोहिं परमोधत धरनि गिरी मुरझैया—५६०।

मुरझ्यो, मुरझ्यौ—वि. [हिं. मुरझाना] **सोया हुआ, सुप्त।** उ.—अति बिपरीत भई सुनि सूर प्रभु मुरझ्यो मदन जगायो—१४६७।

मुरड़—संज्ञा पुं. [हिं.] **गर्व, अभिमान।**

मुरड़की—संज्ञा स्त्री. [हिं. मरोड़] **ऐंठन, मरोड़।**

मुरत—क्रि. अ. [हिं. मुड़ना] (१) **मुड़ता या हिलता-डोलता है।** उ.—इत-उत अंग मुरत झकझोरत—१०-३००। (२) **मुड़ता, हटता, फिरता या लौटता है।** उ.—(क) एक ते एक रनबीर जोधा प्रबल मुरत नहिं नेंक अति सबल जी के। (ख) रुकत न पौन महावत पै मुरत न अंकुस मोरे—२८१८।

मुरदर—संज्ञा पुं. [सं.] **श्रीकृष्ण।**

नवभारत प्रेस, नादान महल रोड, लखनऊ